10 + 2 पर आधारित
कक्षा XII के लिए

सीनियर

ायर सैकण्डरी

राजस्थान पास बुक्स

विशेष हिन्दी

राजस्थान पास बुक्स
सीनियर हायर सैकण्डरी

विशेष हिन्दी

(कक्षा XII के लिए)

[माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर द्वारा वर्ष 1990 एवं 1991 के लिए निर्धारित नवीन पाठ्यक्रम एवं नई शिक्षा नीति (10+2) पर आधारित कक्षा XII के विशेष हिन्दी के छात्र एवं छात्राओं के लिए एक अनुपम पुस्तक]

(बहुचयनात्मक, अतिलघु उत्तरात्मक, लघु उत्तरात्मक एवं निबन्धात्मक प्रश्नोत्तरों सहित)

लेखक
अनुभवी प्राध्यापक

परीक्षा उपयोगी एवं सम्भावित प्रश्नों का सम्पूर्ण हल

द्वितीय संस्करण
1990

मेहता बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स
पुस्तक प्रकाशक एवं विक्रेता
जयपुर

द्वितीय संस्करण : 1990

मूल्य : 24·00 रुपये मात्र

प्रकाशक : मेहता बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स

बिचून मार्केट, किशन पोल बाजार
जयपुर

प्रेमचन्द जैन द्वारा

प्रेम इलैक्ट्रिक प्रेस, 1/11 साहित्य कुंज, महात्मा गांधी मार्ग
आगरा-2 में मुद्रित।

भूमिका

'राजस्थान पास बुक्स सीनियर हायर सैकण्डरी विशेष हिन्दी' का द्वितीय संस्करण छात्रों एवं अध्यापक बन्धुओं के हाथों सौंपते हुए हमें अपार प्रसन्नता हो रही है। पुस्तक बोर्ड द्वारा निर्धारित नवीन पाठ्यक्रम एवं नई शिक्षा नीति (10+2) पर पूर्णतः आधारित है। पुस्तक की भाषा सरल, स्पष्ट एवं भावपूर्ण है जो विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तर के सर्वथा अनुकूल है।

प्रत्येक अध्याय की विषय-वस्तु को निबन्धात्मक, लघु उत्तरात्मक एवं वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तरों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक को पूर्णतः छात्रोपयोगी बनाने का प्रयत्न किया गया है।

पुस्तक की रचना कहाँ तक सफल रही यह तो विद्वान पाठक ही निर्णय करेंगे फिर भी हमारा विश्वास है कि पुस्तक का अध्ययन अवश्य ही छात्रोपयोगी होगा।

—लेखक

दो शब्द

'सीनियर हायर सैकण्डरी विशेष हिन्दी' विषय पर वैसे तो शिक्षा जगत में अनेकानेक पाठ्यपुस्तकें, सहायक पुस्तकें, प्रश्नोत्तरियाँ आदि उपलब्ध हैं किन्तु छात्रों को अपने विषय के सम्पूर्ण अध्ययन के लिए एक से अधिक पुस्तकों का सहयोग लेना पड़ता है, विद्यार्थियों की इसी समस्या को ध्यान में रखकर 'राजस्थान पास बुक्स सीनियर हायर सैकण्डरी विशेष हिन्दी' की रचना कक्षा XII के छात्रों के लिए कराई गई है। प्रस्तुत पुस्तक की कुछ प्रमुख विशेषतायें निम्नवत् हैं—

1. पुस्तक बोर्ड द्वारा निर्धारित नवीन पाठ्यक्रम एवं शिक्षानीति (10+2) पर पूर्णतः आधारित है।
2. प्रत्येक अध्याय की विषय सामग्री को विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तरानुकूल ही लिखा गया है।
3. पुस्तक की भाषा जटिल न होकर विषय पर केन्द्रित एवं सारगर्भित है जिससे छात्रों को विषय को समझने में सुविधा रहेगी।
4. प्रत्येक अध्याय को बहुचयनात्मक, अति लघु उत्तरात्मक, लघु उत्तरात्मक एवं निबन्धात्मक प्रश्नोत्तरों के रूप में प्रस्तुत किया गया है।
5. पुस्तक में विगत वर्षों में बोर्ड परीक्षा में पूछे गए वर्ष 1989 तक के प्रश्नों का समावेश तो उत्तर सहित कर ही दिया है साथ ही अन्य सम्भावित महत्वपूर्ण प्रश्नोत्तरों को भी स्थान दिया गया है।
6. पुस्तक को तैयार करने में मुद्रण की अति आधुनिक पद्धति का प्रयोग करके पुस्तक को आकर्षक बनाने का प्रयास किया है।

हमें पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत पुस्तक सीनियर हायर सैकण्डरी विशेष हिन्दी कक्षा XII के छात्रों के लिए परिपूर्ण होगी तथा विद्यार्थियों को परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त कराने में सहायक होगी।

विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाओं सहित।

प्रकाशक

विषय-सूची

अध्याय 1
कबीर

व्याख्यात्मक प्रश्न

1. जाके मुँह माथा नहीं नाहि रूप कुरूप ।
पुहुप बासते पातरा ऐसा तत्व अनूप ।।

संदर्भ एवं प्रसंग—प्रस्तुत साखी कबीर दास द्वारा रचित साखियों में से एक है और पाठ्यक्रम में निर्धारित पाठ्य पुस्तक 'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित है ।

प्रस्तुत साखी में कबीर द्वारा अपने आराध्य (ब्रह्म) के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है । कबीर निर्गुण तथा निर्विकार ब्रह्म के उपासक थे । उनका ब्रह्म निराकार ब्रह्म है, वह दर्शन व चिन्तन के धरातल पर न होकर अनुभव के धरातल पर भक्ति की लाठी के सहारे खड़े होने वाले ज्ञानी और भक्त का ब्रह्म है । स्पष्ट शब्दों में कबीर का ब्रह्म अनुभव गम्य है ।

व्याख्या—प्रस्तुत साखी में कबीर ब्रह्म को अनुभव गम्य बताते हुए कहते हैं कि जिसके न तो मुख है न मस्तक है जो सुन्दर असुन्दर की सीमा से दूर है। अर्थात् ब्रह्म आकार विहीन है । वह सुन्दर से सुन्दर और कुरूप से कुरूप है तथा सौन्दर्य के मान दण्डों से परे है । अभिप्राय यह है ईश्वर निर्गुण तथा निराकार है । वह अप्रतिम ब्रह्म इतना सूक्ष्म है कि पुष्प की गन्ध भी उसके सूक्ष्म क्षीण रूप को प्राप्त नहीं कर सकती । उस ब्रह्म की तुलना किसी से नहीं की जा सकती । वह अपना उपमान स्वयं है । उस निर्गुण परम ब्रह्म को अनुभव अद्भुत तत्व के रूप में अनुभव तो किया जा सकता है, परन्तु शब्दों की सीमा में बाँध कर उसकी अनुभूति को अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है ।

विशेष—(1) ईश्वर के निराकार स्वरूप को उसकी अद्वितीयता के साथ व्यक्त किया गया है ।

(2) 'पुहुप बाँस ते पातरा' कहकर ब्रह्म के सूक्ष्म और सर्वव्यापी स्वरूप को स्पष्ट किया गया है ।

2. जो कुछ..................................माँहि ।

3. जन्त्र मन्त्र..................................होय ।

संदर्भ एवं प्रसंग—प्रस्तुत साखियों के रचयिता महात्मा कबीर दास हैं । प्रस्तुत साखी पाठ्यक्रम में निर्धारित पाठ्य पुस्तक में निर्धारित पाठ्य पुस्तक प्राचीन काव्य कलाधर से संकलित है ।

प्रस्तुत साखी में कबीर ईश्वर की विशिष्टता, सर्वोपरिता और सृजन शक्ति की ओर संकेत कर रहे हैं ।

व्याख्या—कबीरदास जी कहते हैं कि हे ईश्वर तुम सर्वोच्च शक्तिमान असीम एवं अद्वितीय हो। इस संसार में जो भी कुछ होता है, वह तुम्हारे द्वारा ही किया हुआ है। अभिप्राय वह है कि मनुष्य जो कुछ भी कर्म करता है वह ईश्वर के द्वारा करवाये जाते हैं। उसमें मनुष्य का कुछ भी हाथ नहीं होता। कबीर दास जी कहते हैं कि मैं (कबीर) या जीव मात्र तुम्हारे हाथों की कठपुतलियाँ मात्र हैं, अर्थात् कुछ भी करने में सक्षम नहीं है। संसार का हर छोटा कार्य जो मनुष्य द्वारा संपादित किया जाता है। उसका श्रेय परमात्मा को ही है। इसका कारण यह है कि जब भी जीवात्मा कोई कार्य करता है तो उसके भीतर परमात्मा प्रविष्ट होकर उस कार्य को करा लेता है। आशय यह है कि मनुष्य सभी कार्य परमात्मा की प्रेरणा से करता है।

कबीर ने अपनी भक्ति व ज्ञान साधना में वाह्याडम्बरों का विरोध किया था। वे मन की पवित्रता पर जोर देते थे। अतः वह कहते हैं कि जंत्र-मंत्र आदि क्रियाएँ मिथ्या मात्र है यह साधन बाहरी दिखावा अथवा ढोंग मात्र हैं। अतः किसी भी व्यक्ति को इनके चक्र में नहीं फंसना चाहिए। इन मिथ्या साधनों को अपनाने से मनुष्य अपने मार्ग से भ्रमित होकर दुःखपूर्ण जीवन व्यतीत करता है इसका कारण यह है कि जीवन का मूल उद्देश्य सार तत्व को ग्रहण करना है। सारग्राही होकर ही मनुष्य दुःखपूर्ण जीवन से मुक्त हो सकता है जब तक मनुष्य सार तत्व को ग्रहण नहीं करता तब तक उसकी आत्मा सत् असत् का निर्णय करने में सक्षम नहीं हो पाती। कबीरदास जी कहते हैं कि कौआ विकृतियों से युक्त होता है और सार तत्व से दूर रहता है अतः वह जीव मुक्त हंस कभी नहीं हो सकता।

विशेष—प्रथम साखी में कबीर ने मनुष्य को निमित्त मात्र बतलाया है और परमात्मा को इस जगत का नियामक कहा है। इस साखी में भक्त की लघुता और विनय तथा ईश्वर की महत्ता व्यक्त हुयी है।

दूसरी साखी में कबीर ने वाह्याडम्बरों का विरोध किया है। भ्रम का विध्वंस आवश्यक बतलाया है।

अपनी बात को स्पष्ट करने लिए दूसरी पंक्ति में उन्होंने रूपक की सहायता ली है। कागा शब्द उन्होंने विकृत भ्रष्ट भ्रमित व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त किया है। हंस शुद्ध एवं आत्मावान के लिए।

4. ज्ञान..................................समाधि लगाय।

संदर्भ – पूर्ववत्।

प्रसंग—कबीर अन्तःसाधना के पक्षपाती थे और बाह्याडम्बरों के विरोधी थे। वे अन्तःकरण की शुद्धता के पक्षपाती थे। इसी भावना से प्रेरित होकर वे कहते हैं कि हे जीवात्मा तू अपने हृदय रूपी भवन में ज्ञान रूपी दीपक जलाकर प्रकाश करले। ज्ञान रूपी दीपक के प्रकाश से प्रकाशित हृदय में श्रेष्ठ नाम वाले ईश्वर का स्मरण कर। यही सहज समाधि है और वास्तविक ईश्वरोपासना है। भक्ति का सच्चा मार्ग यही है।

विशेष—ज्ञान दीप, भवन आदि अर्थगर्भित शब्दों का प्रयोग किया गया है। रूपक तथा अनुप्रास अंलकारों का प्रयोग किया गया है। 'भीतर भवन' शब्द का प्रयोग अंतरात्मा के लिए हुआ है।

5. देखा देखी..................................भुजंग।

संदर्भ—पूर्ववत्।

प्रसंग—कबीर भक्ति को अत: प्रेरणा का परिणाम मानते हैं। इसी आधार पर सच्चे भक्त व नकली भक्त में अन्तर बता रहे हैं।

व्याख्या—कबीर दास जी कहते हैं कि कोई व्यक्ति किसी की नकल से भक्ति के रंग में नहीं डूब सकता। भक्ति आंतरिक भाव है उसका सम्बन्ध शरीर से न होकर मन से है। अत: किसी की नकल से कोई सच्चा भक्त नहीं बन सकता। यदि ऐसा अनुकरण कर कोई भक्त बन भी जाए तो थोड़ा-सा व्यवधान या कष्ट आने पर अपनी भक्ति रूपी केंचुली को उसी प्रकार छोड़ देता है जिस प्रकार सर्प समय आने पर अपनी केंचुली का परित्याग कर देता है।

विशेष—उपमा का सुन्दर प्रयोग कर अपनी बात स्पष्ट करने में कवि सक्षम हुआ है।

6. सर्पंहि............................खाय।

संदर्भ—पूर्ववत्।

प्रसंग—कबीर दास जी कहते हैं कि जो माया के जाल में फंसे हुए हैं। उन्हें भक्ति की शिक्षा देना व्यर्थ है। क्योंकि उससे कोई लाभ नहीं है। इसका उदाहरण उन्होंने साँप के दूध पिलाने से दिया है कि जिस प्रकार सर्प को दूध पिलाना व्यर्थ है उसी प्रकार माया मोह के जाल में फंसे प्राणी को भक्ति भावना का पाठ पढ़ाना भी व्यर्थ है।

व्याख्या—प्रस्तुत साखी में कबीर दास जी कहते हैं कि—जिस प्रकार सर्प को दूध पिलाना व्यर्थ है, उसी प्रकार माया-मोह के जाल में फंसे आदमी को भक्ति-भावना का पाठ पढ़ाना व्यर्थ है। कारण यह है कि सर्प को दूध पिलाने पर वह मुख में जाकर विष बन जाता है। दूध जैसी पवित्र वस्तु भी अपवित्र और घातक हो जाती है। अर्थात् साँप के विष के साथ मिलकर दूध भी विष का गुण ग्रहण कर लेता है।

दूसरी पंक्ति में कबीरदास जी कहते हैं कि हमें आज तक ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता जो जान-बूझकर विष खाए अर्थात् कोई साधक ऐसा नहीं मिला जो जान-बूझकर विष खाए अर्थात् इस मायारूपी विषैली सर्पणी को खाकर नष्ट कर डालता।

विशेष—'साँप को दूध पिलाना' मुहावरे के उचित प्रयोग से साखी का भाव मार्मिकता से व्यक्त हुआ है।

7. बावी कूटें............................खाय।

सन्दर्भ—पूर्ववत्।

प्रसंग—प्रस्तुत साखी में कबीर ने कहा है कि विकृतियों रूपी वृक्ष की शाखाओं को नहीं काटना चाहिए अपितु उसकी जड़ को ही समाप्त कर देना चाहिए। इसी प्रसंग में वे कहते हैं—

व्याख्या—बाँबी को पीटने की अपेक्षा विषैले सर्प को ही नष्ट कर देना चाहिए, क्योंकि बाँबी में विष नहीं होता अपितु सर्प में विष होता है। वे कहते हैं कि बाँबी किसी को नहीं डसती, अपितु सर्प ही सबको खा जाता है। अत: उसी को नष्ट कर देना चाहिए।

कबीर मनुष्यों को समझाना चाहते हैं कि—हे मूर्ख भ्रमित जीव ! तू शरीर रूपी बाँबी को तो कूटता-पीटता रहता है परन्तु विषय वासनाओं रूपी सर्प को नष्ट नहीं करता जो विष फैलाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि शरीर को पीटने की अपेक्षा उसमें स्थित विषय वासनाओं को समूल नष्ट कर देना चाहिए।

विशेष—प्रस्तुत साखी में उपदेशात्मक शैली का प्रयोग हुआ है।

बाँबी शब्द का प्रयोग शरीर के लिए और साँप विषय वासनाओं के लिए प्रयुक्त हुआ है। प्रतीकात्मक शैली है।

8. मैं भंवरा..............................देय।

सन्दर्भ—पूर्ववत्।

प्रसंग—प्रस्तुत साखी में कबीर जीवात्मा को उपदेश दे रहे हैं और उसे सतर्क कर रहे हैं कि वह कहीं भटक न जाए।

व्याख्या—वह कहते हैं कि—हे जीवरूपी भ्रमर ! मैंने तुझे कई बार रोका-टोका है कि तू एकाग्र चित्त होकर जीवन व्यतीत कर इस माया जाल संसाररूपी उपवन में भटकता हुआ भ्रमर की तरह प्रत्येक पुष्प की गंध मत ले। यदि तू इस संसार रूपी उपवन में इसी प्रकार भटकता रहा अर्थात् रसगंध का लोभी बना रहा तो एक दिन तू किसी मोहक लता में ऐसा अटकेगा कि तेरा निकलना कठिन हो जाएगा। इस संसार में माया-मोह की किसी लता में फँसकर रह जाएगा। अनेकों प्रयासों के उपरान्त भी तेरा वहाँ से निकलना असंभव हो जाएगा और निकलने की अपेक्षा और अधिक उलझता जाएगा। परिणामस्वरूप तू तड़प-तड़पकर अपने प्राण दे बैठेगा।

आशय यह है कि माया की बेल में उलझकर रह जाएगा और जो तुझे वांछित था, वह तत्व तुझे प्राप्त नहीं हो सकेगा।

विशेष—जीव को भ्रमर कहा गया है। रूपक, अनुप्रास तथा पुनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—"माया महा ठगिनी हम जानी" पद का आशय अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—प्रस्तुत पद में कबीर ने माया ठगिया और छलिया रूप को विश्लेषित किया है। वह कहते हैं कि इसका प्रभाव इतना व्यापक है कि कोई भी उससे बच नहीं पाता। यह माया बहुत बड़ी ठग है और तीन गुणों वाली फाँस लेकर घूमती है। यही कारण हैं कि यह कभी किसी रूप में हमारे सामने आती है तो कभी किसी रूप में। यह देखने में बहुत मधुर लगती है. इसकी मधुर वाणी के प्रभाव में भोला जीव आसानी से फँस जाता है। यहाँ तक कि शिव, केशव, पण्डे, पुजारी, बड़े-बड़े योगी, राजा आदि भी उसके प्रभाव से बच नहीं पाये। यह अपने अनेक रूपों से मनुष्य को प्रभावित करती है। कभी लक्ष्मी के रूप में, कभी नारी के रूप में, कभी दरिद्रता के रूप में सामने आती है। यह नारी रूपी है यह सभी पर अपना प्रभाव जमा लेती है। इसकी कहानी अकथनीय है जिसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता।

प्रश्न 2—"हँसा करो पुरातन बात" में कबीर रूपक के द्वारा क्या स्पष्ट करना चाहते हैं?

उत्तर—प्रस्तुत पद में कबीर हंस के रूपक के द्वारा जीवात्मा को सम्बोधित कर रहे हैं। वह कहते हैं कि हंस रूपी जीव को सांसारिक माया मोह के चक्र को तोड़कर ईश्वर की भक्ति करते हुए परमधाम की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिए। परन्तु जीव यहाँ आकर लौकिक सुखों के चक्कर में पड़कर अपने जीवन का मूल उद्देश्य भूल जाता है। वह यह भूल जाता है कि सुख और शान्ति केवल इस लौकिक संसार में न होकर परमात्मा के

यहाँ है। वह कहते है कि हे ! जीवात्मा तू अभी भी जागृत हो जा और ईश्वर में ध्यान लगाकर भक्ति रूपी सुख को प्राप्त कर।

प्रस्तुत पद के द्वारा कबीर स्पष्ट करना चाहते हैं कि ब्रह्म और जीव में अभेद सम्बन्ध हैं अतः जीवात्मा सांसारिक विषयों में नहीं फंसना चाहिए। जीवात्मा को लौकिक सुख की बजाय अपने आलौकिक सुख को पाने की साधना करनी चाहिए। इसे कबीरदास ने हंस को जीवात्मा का प्रतीक मानकर रूपक के द्वारा अपनी बात कहने का प्रयत्न किया है।

प्रश्न 3—"पण्डित बाद बदंसो झूठा" पद में कबीर ने क्या भाव व्यक्त किए हैं। इस पद के लिखने में कवि का आशय क्या है ?

उत्तर—प्रस्तुत पद में कबीर ने बाह्याडम्बरों की खुलकर भर्त्सना की है और अन्तः-साधना पर बल दिया है कबीर ने अपने भाव इस प्रकार व्यक्त किए। कबीर के अनुसार जिह्वा पर राम का नाम ले लेने मात्र से मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। मिथ्याडम्बरों में उलझे हुए पण्डितों को भी उन्होंने सम्बोधित किया है कि तुम्हारा नमन व मंत्रोच्चार प्राणी मात्र के उद्धार के लिए काफी नहीं है। इस विषय में तुम्हारे तर्क-वितर्क सब मिथ्या हैं। नाम उच्चारण से यदि परमानन्द की प्राप्ति सम्भव होती तो खाँड शब्द कहने से मुँह मीठा हो हो जाता, अग्नि कहने से पैर जल जाते, पानी कहने से प्यास, भोजन का नाम लेने से भूख मिट जाती। राम का नाम लेने से इस जगत का उद्धार तब सम्भव था जबकि उपरोक्त असंभव वस्तुएँ सम्भव हो पातीं। तोते को कितना भी राम-नाम रटाया जाए, परन्तु जब वह पिंजड़े से निकलकर जंगल में चला जाता है तो वह राम का नाम भूल जाता है। यही दशा मनुष्य की है, इसी स्थित तक वह राम-नाम की महत्ता नहीं जान पाता तब तक उसका नमोच्चार व्यर्थ है।

पद के अन्त में कबीर ने उपदेश दिया है कि, हे पण्डितों ! यदि तुम्हारे हृदय में भगवान के प्रति सच्चा प्रेम उत्पन्न नहीं हुआ है तो निश्चय ही यमराज के दूत तुम्हें बाँध-कर यमपुरी ले जाएँगे और तुम आवागमन के चक्र में ही पड़े रहोगे।

कबीर ने प्रस्तुत पद में झूठे दिखावे वाली भक्ति की भर्त्सना की है। उनका आशय है कि भगवान को सच्चे प्रेम और विश्वास की आवश्यकता है न कि मिथ्याडम्बरों की। प्रस्तुत पद में कबीर मिथ्याडम्बरों तथा मिथ्याचिन्तन का विरोध करके सच्ची हरि भक्ति का प्रसार करने के प्रति आग्रही प्रतीत होते हैं।

प्रश्न 4—'झीनी-झीनी बीनी चन्दरिया' पद का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—प्रस्तुत पद में कबीर सांगरूपक के माध्यम से सृष्टा द्वारा रचे गये। इस मानव शरीर की आंतरिक संरचना का वर्णन किया है। प्रस्तुत पद में उन्होंने बतलाया है कि इस शरीर रूपी चादर को सुर, नर और मुनि सभी ओढ़-ओढ़कर अपवित्र करते हैं, परन्तु कबीर ने इसकी पवित्रता को कायम रखा है। वह कहते हैं कि शरीर रूपी चादर बहुत ही बारीकी से बुनी गयी है। इसका तानाबाना क्रमशः इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना का है। ताने बाने के रूप काम आने वाले इस धागे को सत्, रज्, तम् रूपी माल (रस्सी) को पंचतत्व रूपी पाँच खूँटियों और अष्टदल कमल की पंखुड़ियों वाले षडचक्र रूपी चरखे पर तैयार किया गया इस धागे से बुनी गयी शरीर रूपी चादर को सिलकर तैयार करने में विधाता को दस महीने का समय लगा है। विधाता द्वारा बुनी गयी यह शरीर रूपी चादर देव, मुनि, मानव आदि सभी ने धारण की और ओढ़-ओढ़कर गन्दी की। भाव यह है कि मायाजनित विकारों के वशवर्ती होकर शरीर रूपी चादर को अपवित्र कर दिया। परन्तु भगवान के भक्त कबीर ने इस चादर को ऐसे यत्न से ओढ़ा है कि उस पर तनिक भी मैल

नहीं लगा। इतना ही नहीं कबीरदास जी कहते हैं कि मैंने तो इसे जीवन के अन्तिम क्षणों तक पवित्र और स्वच्छ रखा है, वैसी ही जैसे जन्म के समय उन्हें यह मिली थी।

प्रस्तुत पद में कबीर की दार्शनिक भावना व्यक्त हुई है। लाक्षणिकता का प्रयोग भी इस पद में दृष्टिगोचर होता है।

प्रश्न 5—'संतो भाई आई ज्ञान की आँधी रे !' पद में कबीर ने जिस अर्थ की परिकल्पना की है उसको अभिव्यक्त कीजिए।

उत्तर—प्रस्तुत पद कबीरदास के बहुचर्चित एवं प्रसिद्ध पदों में से है। प्रस्तुत पद में कबीर ने दार्शनिक तत्व की परिकल्पना की है। इस पूरे पद के अर्थ के पीछे दार्शनिकता पुट लिए गूढ़ार्थ है। इसमें कबीर ने ज्ञान प्राप्ति के बाद की आनन्दमयी स्थिति का वर्णन किया है।

कबीरदास जी ने प्रस्तुत पद में कहा है कि, हे संतो ! ध्यान से सुनो और देखो कि परमात्मा के साक्षात्कार से ज्ञान की प्राप्ति हुई यह गुरु की कृपा से सम्भव हुआ। कबीरदास जी कहते हैं संतो ध्यान से सुनो ! परमात्मा के साक्षात्कार के पश्चात् ज्ञान की आँधी आ गयी और सर्वत्र ज्ञान ही ज्ञान दिखायी देने लगा है। इसी ज्ञान के कारण जीवात्मा का मन जिन माया के बन्धनों और भ्रम की टाटी से बँधा था। वह अब विमुक्त हो गया है। भाव यह है कि माया और भ्रम पूरी तरह से समाप्त हो चुके हैं। जिस प्रकार आँधी के आने पर छोटे-छोटे मकान और झोंपड़े जमीन पर गिर जाते हैं। उसी प्रकार ज्ञान अंधड़ से भ्रम के झौंपड़े और माया के महल धराशाही हो गए हैं। माया दुम दबाकर भाग गई है। ज्ञान की प्राप्ति के कारण ही मिथ्या प्रेम से उत्पन्न द्वैत भाव की भेदयुक्त थूनियाँ गिर पड़ी हैं और मोह की बल्ली टूट गयी है।

कबीरदास जी कहते हैं कि जब तक जीवात्मा को ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ था तब तक तक वह तृष्णाओं का छप्पर पृथ्वी पर गिर पड़ा है। ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् तृष्णाओं का छप्पर पृथ्वी पर गिर पड़ा है अर्थात् कुबुद्धि का नाश हो गया है। कवि कहता है कि तृष्णा के छप्पर को जीवात्मा ने अनेक प्रयत्न करके बाँधा था और उसे विश्वास था कि इस पर दानी कोई असर नहीं डालेगा परन्तु ज्ञान की प्राप्ति से परिणाम भी विपरीत हो गया।

ज्ञान की आँधी आने पर साधक के शरीर में स्थित पाप और कामनाओं का कूड़ा-करकट बाहर निकल जाता है। इस आँधी के पश्चात् प्रभु भक्ति के जिस जल की वर्षा हुई उससे ईश्वर भक्त भीग गये हैं। अन्त में कबीर कहते हैं कि ज्ञान रूपीं सूर्य के निकलने पर अज्ञानरूपी अंधकार हमेशा के लिए दूर हो गया।

उपरोक्त अर्थ में कबीर की दार्शनिक भावना स्पष्ट रूप से व्यक्त हुई है।

प्रश्न 6—कबीर का सुधारक रूप किन किन क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होता है ?

उत्तर—कबीर एक ज्ञानी सन्त तो थे ही साथ ही साथ समाज को उन्नत देखना चाहते थे। अतः सन्त होने के साथ ही साथ उन्होंने समाज को सुधारने तथा उसे एकता और मानवता का पाठ पढ़ाने का उपक्रम किया। वह आडम्बर विहीन जीवन के पक्षपाती थे। वह जीवन के किसी भी क्षेत्र में आडम्बर देखना नहीं चाहते थे। वह मानव के अन्तःकरण को पवित्रता और सदाचार से युक्त देखना चाहते थे। यही कारण है कि कबीर को जिस किसी क्षेत्र में बुराई नजर आयी उसे ही उन्होंने दूर करने का प्रयत्न किया। उनका सुधारक रूप निम्न क्षेत्रों में दिखाई देता है—

(1) **धार्मिक क्षेत्र में सुधारवाद**—कबीर के समय में समाज की धार्मिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। इसी से कबीर कहीं तो साधनात्मक उक्तियों का कथन करते हैं कहीं

विविध धर्मों के आडम्बरों या अन्धविश्वासों पर व्यंग्य प्रहार करते हैं कबीर धर्म के क्षेत्र में जप, तप, छापा, तिलक, मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा, माला फेरने आदि के विरोधी थे और उनका यही विरोधी दृष्टिकोण यत्र-तत्र उनकी साखियों में बिखरा पड़ा है। उन्होंने हिन्दू और मुस्लिम दोनों के मिथ्याडम्बरों का डटकर विरोध किया है। उनका धार्मिक आडम्बरों के प्रति विरोध साखियों में दृष्टिगोचर होता है। कुछ उदाहरणार्थ निम्नलिखित हैं—

1. पाहन पूजे हरि मिले तो मैं पूजूँ पहाड़……………।
2. कांकर पाथर जोरिके मसिजिद लई चुनाए……………।
3. पण्डितवाद बदै सों झूँठा……………इत्यादि।

(2) **सामाजिक क्षेत्र में सुधारवाद**—सामाजिक क्षेत्र में कबीर का सुधारक रूप क्रान्ति लेकर आया है। कबीर का सारा प्रयत्न लोक-कल्याण की भावना से प्रेरित था। कबीर जाँति-पाँति, भेदभाव आदि पर प्रहार किया है। जहाँ उन्होंने आडम्बरों के लिए मुसलमानों को फटकारा है। वहीं हिन्दूओं को भी फटकारा है। वह हिन्दू-मुस्लिम की एकता के पक्षपाती थे। दोनों धर्मों की कुरीतियों को दूर कर वह समता लाना चाहते थे। उनकी तीखी व सूक्ष्म दृष्टि से कोई बचा नहीं है उनकी निष्ठा सरल जीवन के प्रति थी।

भेदभाव पर प्रहार करते हुए उन्होंने कहा—

जो तू ब्राह्मन ब्राह्मनी जाया, आन बाट ह्वै क्यों नहीं आया।
जो तू तुरक तुरकनी जाया, भीतर खतना क्यों न कराया॥

(3) **दार्शनिक क्षेत्र में सुधारवाद**—भारतवर्ष में धर्म और दर्शन परस्पर सम्बन्धित रहे हैं। कबीर जीव और ब्रह्म में अभेदता के पक्षपाती थे। यही कारण है कि जो तर्क के आधार पर तत्व की द्वैतता सिद्ध करना चाहते हैं, उनकी बुद्धि स्थूल है। दूसरा सुधारवादी दृष्टिकोण उन्होंने उपासना के क्षेत्र में किया। हिन्दुओं में बहु ईश्वरवाद प्रचलित था कबीर ने कहा कि परमात्मा एक है। उसके अनेक रूप मनुष्यों द्वारा बनाए गए हैं। इस तरह एकेश्वरवाद की स्थापना कर उन्होंने हिन्दू-मुसलमानों को बिलकुल पास ला दिया।

कबीर आडम्बर विहीन जीवन को पसन्द करते थे उन्होंने अपने समय की युगीन परिस्थितियों को अच्छी तरह देखा था। यही कारण था कि वह उस समय के समाज में कुरीतियों को दूर कर सुधार लाना चाहते थे। उनका यह सुधारक का रूप उनके काव्य में वर्णित हुआ है। वह दृष्टिकोण से सुधारक आचरण से संत और हृदय से एकता के समर्थक थे।

प्रश्न 7—कबीर रहस्यवादी कवियों में आदि कवि माने जाते हैं। इस कथन की विवेचना करते हुए कबीर के रहस्यवाद को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर—कवि जब भावात्मक प्रसंगों में स्पष्टता कुछ व्यक्त नहीं कर पाता है वह केवल आध्यात्मिक अनुभूतियों का ही संकेत कर पाता है तब वह रहस्यवादी समझा जाता है। कवि अपनी साधना के बल पर अनुभूत सत्य को जब शब्दों में व्यक्त करता है तभी काव्य में रहस्यवाद का प्रवेश होता है।

कबीर के काव्य में ऐसे स्थलों की बहुत अधिकता है। उनके काव्य में रहस्यवाद मुख्यतः तीन रूपों में दृष्टिगोचर होता है। जब स्वयं को 'राम की बहुरिया' कहकर आत्मा परमात्मा के विरह मिलन की राग-रंजित छवियों का चित्रण किया है। तब उनका रहस्य-वाद भावात्मक बन गया है। भावात्मक रहस्यवाद के अन्तर्गत तीन स्थितियाँ कबीर के काव्य में दिखायी देती है :

(1) गुरु की प्रेरणा से ईश्वरोन्मुखता।

(2) आत्मा की परामात्मा से मिलन की छटपटाहट और

(3) आत्मा परमात्मा का चिरमिलन, चिरमिलन के बाद एकाकार और तादात्म्य की स्थिति आती है। कबीर के भावात्मक रहस्यवाद में अनुभूति परकता एवं प्रेम परकता का सम्मिलित रूप है।

जहाँ दर्शन के गूढ़ तत्वों के आधार पर अद्वैतवाद, जीवात्मा और परमात्मा की एकता के रूपक बांधे हैं, वहाँ कबीर का साधनात्मक रहस्यवादी रूप प्रकट होता है। साधनात्मक रहस्यवाद के अन्तर्गत योग साधना के आठों तत्वों का वर्णन कबीर के रहस्यवाद में मिलता है। इड़ा पिंगला सुषुम्ना नाड़ियों षड चक्रों में अनहद नाद व ब्रह्म रन्ध्र आदि का वर्णन पूरी तरह कबीर के काव्य में मिलता है। साधनात्मक रहस्यवाद में कबीर पर नाथ पंथियों के सिद्धान्तों तथा हठ योगियों का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। यही कारण है कि उनके काव्य में रहस्यवाद का साधनात्मक रूप अत्यन्त दुरुह दिखाई देता है।

कबीर के काव्य में रहस्यवाद का तीसरा रूप अभिव्यक्ति मूलक रहस्यवाद के रूप में दृष्टिगोचर होता है। यह रूप कबीर की उलटवासियों में देखने को मिलता है। इनकी उलटवासियों के गूढ़ार्थ को जानने के लिए पाठकों को काफी बौद्धिक व्यायाम करना पड़ता है।

इसके अतिरिक्त 'अण्डर हिल' ने रहस्यवाद के जिन सोपानों की चर्चा की है वे सभी इनके रहस्यबाद में दृष्टिगोचर होते हैं। यह सोपान इस प्रकार है :

1. **जिज्ञासा**—'मुआजीव जाय कहाँ समावै ?'
2. **आत्मा की जाग्रतावस्था**—"बलिहारी गुरु आपने धौ हांड़ी कै बार'
जिनमानुष ते देवता करत न लागीबार।"
3. **आत्म परिष्कार**—"आँखड़िया झाई पड़ी पथ निहारि निहारि।
जीभड़ियां छाला पड़या पीव पुकारि पुकारि॥"
4. **आंशिक अनुभूति**—'जानी रे जानी राजा राम की कहानी'
5. **विघ्न बाधाएँ**—कबीर मायापापिणी............।
6. **मिलनावस्था**—'कहे कबीर मोहि ब्याहि चले एक पुरुष अविनासी।'

संक्षेप में कबीर हिन्दी के प्रथम रहस्यवादी कवि है। उनके काव्य में प्रायः सभी प्रकार के रहस्यवाद का रूप देखने को मिल जाता है। प्रेमानुभूति की तीव्रता, मिलन की उत्कंठा, अद्वैत भावना आत्मा रूपी नायिका की तीव्र विरहानुभूति उनके रहस्यवादी काव्य की विशेषताएँ हैं।

प्रश्न 8—कबीर कवि ही नहीं अपने युग के समाज सुधारक भी थे। इस कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—कबीर का आविर्भाव जिस काल में हुआ था। अनेकों सम्प्रदाय उस समय अपना-अपना राग अलाप रहे थे। अपने-अपने मतों का प्रचार कर वह जनता को दिग्भ्रान्त करने में लगे हुए थे। अनेकों सामाजिक कुरीतियाँ एवं आडम्बर समाज में स्थान पाते जा रहे थे। उस समय के समाज को किसी ऐसे पथ प्रदर्शक की आवश्यकता थी जो समाज को सन्मार्ग दिखा सके समाज की कुरीतियों को दूरकर समाज की उन्नति कर सके। कबीर दास ने यही किया। यही कारण है कि उनको कवि से अधिक समाज सुधारक के रूप में जाना जाने लगा। उन्होंने अपनी अनगढ़ भाषा में उपदेशात्मकता का जो समावेश किया है वह लोक कल्याण का मार्ग दर्शक माना जा सकता है।

कबीर मूलतः सुधारवादी सन्त थे। उनके काव्य में प्रमुखतया खण्डन मण्डन की प्रवृत्ति अधिक दिखायी देती है। इस रूप में उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से तत्कालीन समाज में व्याप्त भेद भावों, पाखण्डों, आडम्बरों, अन्ध विश्वासों का जोरदार खण्डन किया। कबीर के काव्य में धर्म और समाज सुधार की भावना अन्यतम स्थान रखतीं है। उनको विस्तृत लोकानुभव भी था उन्होंने समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने का प्रयास किया। उनका समाज सुधार निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत देखा जा सकता है :

1. **मानव मात्र की एकता का उपदेश**—कबीर निर्गुण ब्रह्म के उपासक **थे वह** हिन्दु मुसलमान आदि सभी को एक ईश्वर की सन्तान मानते थे। वे समाज में जाति या वर्गगत् भेद रहने देना नहीं चाहते थे।

(1) साधो एक रूप सब मांही।
अपने मन विचार के देखो और दूसरो नाहीं।

(2) एक जाति से सब उत्पन्नां को ब्राह्मन को सूदा।

2. **मूर्ति पूजा का विरोध**—कबीर ने मूर्ति पूजा का डट कर विरोध किया। वह भगवान को पत्थर की प्रतिमा में न मानकर मन व शरीर में विद्यमान मानते थे। अतः मूर्ति पूजा का उन्होंने सदा विरोध किया।

पाहन पूजे हरि मिले तो में पूजूं पहार…………

3. **भेद-भाव का विरोध**—कबीर समाज में प्रचलित आपसी भेद-भाव को मिटाना चाहते थे। वे तत्कालीन समाज की विसंगतियाँ को दूर करना चाहते थे। तत्कालीन समाज में बहु देव वाद का प्रचलन था और जनता भक्ति तथा धर्म के नाम पर मानवता से हीन हो रही थी इसीलिए कबीर ने राम और रहीम को एक बताकर एकेश्वरवाद का प्रचार किया। समाज में अस्पृश्यता दूर करने के लिए अस्पृश्य समझे जाने वाले लोगों को हरिजन अर्थात् ईश्वर की सन्तान बताकर जातिगत भेदभाव को दूर करने का प्रयत्न किया। उन्होंने हिन्दू मुसलमानों को भी आपस भेद-भाव मानने पर फटकारा और समाज में समता लाने का प्रयास किया।

4. **बाह्याडम्बरों का विरोध**—कबीर ने समाज में फैले अन्ध विश्वासों एवं बाह्याडम्बरों पर सशक्त प्रहार किया उन्होंने भक्ति के नाम पर दिखावा करने वालों का तीव्र विरोध किया।

(1) काँकर पाथर जोरि कै…………

(2) माला फेरत जग मुआ…………।

इस प्रकार उन्होंने हिन्दू मुसलमान दोनों ही जातियों के अन्तर्गत फैले रूढ़ियों एवं कुसंगतियों को दूर करने का प्रयास किया।

5. **प्रचलित उपासना पद्धति का विरोध**—तत्कालीन समाज में अनेकों धर्म एवं सम्प्रदायों के मठाधीश अलग-अलग उपासना पद्धतियाँ अपना रहे थे। उनकी उपासना पद्धति कोरा दिखावा मात्र थी। कबीर ने उसका विरोध करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा कि उपासना का मर्म तो वही समझ सकता है जो सच्ची उपासना कर पाता है। मन को पवित्र रखने पर शुद्ध आचरण करने पर तथा वासना तृष्णा से मुक्त होने पर ईश्वर की उपासना आसानी से की जा सकती है।

'जब माला छापै तिलक सर न एको काम।'

6. **प्रचलित अन्ध-विश्वासों का खण्डन**—कबीर ने सामाजिक जीवन में प्रचलित अन्ध-विश्वासों का खुलकर विरोध किया। उन्होंने काशी में रहने पर स्वर्ग मिलता है और

मगहर में रहने पर नरक, ऐसे प्रचलित अन्ध विश्वासों का डट कर विरोध किया। इसी क्रम में उन्होंने सर मुड़ाने, तीर्थों पर जाना, मन्दिर और मस्जिद में जाकर प्रार्थना करना भी अनावश्यक बताया। उनके अनुसार ईश्वर आदमी के भीतर निवास करता है उसे इधर उधर ढूढ़ना व्यर्थ है। उनकी इस भावना की पुष्टि निम्न उदाहरणों से हो जाती है :

(1) 'मोकों कहा ढूढ़ता बन्दे, में तो तेरे पास'

(2) 'कस्तूरी कुण्डल बसै मृग ढूढ़े बन माहि'

(3) 'तीरथ तो सब पानी है होवे नहीं कछु अन्हाय।'

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि कबीर कवि ही नहीं अपितु समाज सुधारक भी थे उन्होंने अपने समय के समाज में जो भी बुराइयाँ देखी उनका विरोध ही नहीं किया वरन् उनको समूल नष्ट करने का प्रयास भी किया। इसी कारण उनका काव्य समाजोद्धार की भावना से ओत-प्रोत है।

प्रश्न 9—कबीर काव्य में उपलब्ध दार्शनिक चिन्तन की सोदाहरण विवेचना कीजिए।

उत्तर—कबीर ने अपने एक दोहे में स्वयं माना कि वह अनपढ़ थे—'मसि कागद् छुओं नहीं, अतः उन्होंने पुराण उपनिषद, दर्शन आदि पुस्तकें पढ़ी नहीं थी, परन्तु फिर भी उनके काव्य में आध्यात्मक और दर्शन सम्बन्धी सामग्री काफी मात्रा में उपलब्ध होती है। इसका कारण यही था कि उनका लौकिक ज्ञान बहुत विस्तृत था। उन पर नाथ पंथियों व हठयोग का गहरा प्रभाव था। इसी कारण उन्होंने ब्रह्म के निर्गुण एवं निराकार प्रतिपादित किया। कबीर के काव्य में दार्शनिक चिन्तन ज्ञानतत्व का विस्तृत वर्णन मिलता है। उन्होंने अपने दार्शनिक विचार गुरु कृपा, माया, ज्ञान, मोक्ष अद्वैत वाद एवं आध्यात्मिकता पर व्यक्त किये हैं। उनके दार्शनिक विचारों की संक्षिप्त रूप से समीक्षा प्रस्तुत है।

(1) **गुरुकृपा**—कबीर ने अपने साधना पद्धति में गुरु को सर्वाधिक महत्व प्रदान किया है। उनके अनुसार गुरु के द्वारा ही ईश्वर की प्राप्ति संभव है। गुरु के बिना ज्ञान की प्राप्ति संभव नहीं है—

यथा— गुरु की महिमा अनंत है अनंत किया उपकार।
लोचन अनंत उघाड़िया, अनंत दिखावण हार।

(2) **माया**—माया का अर्थ कबीर ने अज्ञान एवं भ्रम जाल से लिया है। उन्होंने समस्त संसार को माया जाल बताया है। उन्होंने कहा हैं कि इस धरती की सभी वस्तुओं लौकिक नश्वर एवं निरर्थक है। यह मनुष्य में लोभ, मोह, आसक्ति जैसी विसंगतियाँ उत्पन्न करते हैं। जिससे मनुष्य अज्ञान के अन्धकार में डूबता जाता है। इसी अन्धकार के कारण जीव अपने भीतर स्थित परमात्मा से साक्षात्कार नहीं कर पाता। कबीर ने माया को ठगिनी, डायन आदि नामों से अभिहित किया है 'माया महाठगिनी हम जानी।'

(3) **जगत्**—कबीर ने माया और जगत् को त्रिगुणात्मक जगत् कहा है और उनसे जीवात्मा के अज्ञान ग्रस्त होने का उल्लेख किया है। सत्व, रज, तम गुण जीव को अविवेक लोभ मोह आदि से ग्रस्त रखते हैं। उपकी तृष्णा इन्हीं के कारण बढ़ती है।

(4) **ईश्वरीय तत्व**—कबीर ने ईश्वर निराकार, निर्गुण और अरूप कहा है। उनके अनुसार ईश्वरीय तत्व का अनुभव ही किया जा सकता है उसका वर्णन संभव नहीं।

जाके मुंह माथा नहीं नाहीं रूप कुरूप।
पुहुप वास ते पातरा ऐसा तत्व अनूप।

(5) **ज्ञान साधना**—कबीर निर्गुण भक्ति की ज्ञानश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं । उनकी भक्ति ज्ञान पर आधारित थी उन्होंने अपने काव्य में ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' का भाव प्रकट किया है । उनके अनुसार जीव के ज्ञान साधना करने पर अज्ञान का अंधकार दूर होता है । अंहकार अहम् भाव, मोह, लोभ आदि का विनाश हो जाता है । परमात्मा की ज्योति से आविर्भूत हो जाता है ।

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहीं

कबीर ने ज्ञान के मार्ग को अगम, रपटीला एवं कठिन कहा है उनके अनुसार ज्ञान प्राप्त होना ही मुक्ति है ।

(7) **योग साधना**—कबीर पर नाथ पंथियों तथा हठयोग का प्रभाव था इसका कारण उन्होंने अपने काव्य में ब्रह्म रन्ध्र, सहस्त्र कमल, कुण्डलिनी, सुषुम्ना, नाड़ी आदि सांकेतिक प्रतीकों के द्वारा परिचय दिया है । योग साधना में उन्होंने योग की अनेक कठिन क्रियाओं का विवेचन किया है।

(7) **रहस्य भावना**—कबीर के काव्य में अमूर्त और निगूढ़ दार्शनिक तत्व और आध्यात्मिक अनुभूतियों का आधिक्य है । उन्होंने अपने काव्य में भावात्मक, साधनात्मक, अभिव्यक्तिमूलक रहस्यवादों का वर्णन किया है ।

(8) **अद्वैतवाद का समर्थन**—कबीर अद्वैतवाद के समर्थक कवि थे । उन्होंने एकेश्वरवाद में अपना विश्वास व्यक्त किया था । बहुदेववाद को उन्होंने कभी प्रश्रय नहीं दिया । वह जीवात्मा और परमात्मा में भी अभेद सम्बन्ध मानते थे । उनका कथन था कि अज्ञान के कारण जीवात्मा स्वयं को अलग समझने लगता है ।

"पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया विलाइ ।
जो कुछ था सोई भया, अब कहु कह्या न जाइ ।।"

(9) **मोक्ष**—कबीर के काव्य में माया, ईश्वर, अद्वैत आदि के साथ-साथ मोक्ष के सम्बन्ध में भी विशद विचार व्यक्त किए गये हैं । कबीर ने अपने काव्य मे मोक्ष की आनन्दावस्था का कहीं-वहीं अंलकारिक और सांकेतिक चित्रण किया है । कबीर के अनुसार माया मोह आदि के बन्धन काटे बिना मोक्ष की प्राप्ति असम्भव है । जब जीवात्मा को मोक्ष मिलता है, तो फिर संसार में नहीं आता, अर्थात् वह आवागमन के बन्धनों से छूट जाता है ।

कबीर काव्य का अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि उनका दार्शनिक चिन्तन अत्यन्त सशक्त है । उन्होंने प्रतीकों और रूपकों के माध्यम से दर्शन के गूढ़ तत्वों का जैसा वर्णन किया है वह अन्यत्र दुलर्भ है ।

प्रश्न 10—कबीर की साखियों एवं पदों के अन्तर्गत निरूपित कबीर काव्य सौन्दर्य की समीक्षा कीजिए ।

उत्तर—कबीर के काव्य का यदि समग्र रूप से अध्ययन करे तो कबीर के व्यक्तित्व के दो पक्ष हमारे समक्ष उभरकर आते हैं । एक सुधारक एवं धर्मोपदेष्टा का दूसरा विशुद्ध भक्त का । धर्मोपदेष्टा तथा सुधारक के रूप में हमें अपने काव्य में जहाँ वे पाखण्डों, आडम्बरों एवं अन्धविश्वासों का खण्डन-मण्डन करते दिखायी पड़ते हैं, वहाँ उनकी भाषा नीरस, शुष्क और कर्कश भाषा दिखायी देती है। वहाँ साहित्यिक सौन्दर्य का अभाव दिखाई देता है । इसका प्रमुख कारण यह है कि विशुद्ध रूप से कविता करना उनका लक्ष्य नहीं था । उन्होंने कविता को अपने भावों एवं विचारों को जनता तक पहुँचाने का साधन बनाया था । परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि कबीर में भावात्मकता थी ही नहीं: अपितु

आत्मा परमात्मा के मिलन की कल्पना में जब वह खो जाते थे। वहाँ रागात्मकता स्वयं उपस्थित हो जाती है। उनके काव्यगत सौन्दर्य का अध्ययन निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत कर सकते हैं।

(1) **बुद्धि तत्व**—कबीर के काव्य में सन्देश प्रधानता है। सामाजिक सुधारवादी भावना कबीर के काव्य में व्यक्त हुयी है। कबीर के काव्य में बुद्धि तत्व की प्रधानता अधिक रही है। बुराइयों के निराकरण और तार्किक प्रस्तुति में कबीर के बुद्धि वैभव को देखा जा सकता है। यह बुद्धि वैभव कबीर के काव्य का उल्लेखनीय संदर्भ है।

बौद्धिक तत्व के प्रबल होने के कारण कबीर के काव्य में कल्पना तत्व न्यून हो गया है। इसी न्यूनता के कारण उनके काव्य में चित्र अस्पष्ट एवं अधूरे हैं। कल्पना तत्व के न्यून होने के कारण उनके काव्य में न तो भावों की उर्वरता दिखायी देती है न ही प्राकृतिक छटा। उनके काव्य में कल्पना उपेक्षित रही है।

लौकिकराग सम्बन्धों की न्यूनता कबीर के काव्य में भले ही रही हो किन्तु आध्यात्मिक स्तर की भावुकता कबीर के काव्य में अवश्य मिलती है। जहाँ कबीर ने आत्म विभोर होकर अज्ञात प्रियतम के लिए अपनी व्यथा कथा को कहा है वहाँ रागतत्व अपनी पूर्ण तन्मयता और हृदयस्पर्शिता के साथ साकार हो उठा है। यही कारण है कि इस प्रकार के प्रसंग निरूपण में कबीर के पदों में मीरा के पदों की सी तन्मयता, सूर की सरलता है। कबीर की कविता में अनुभूति का वेग था। समर्पण जनित विश्वास था और विरहणी आत्मा की प्रतीक्षा में व्याकुलता मिलनोत्कंठा थी। ऐसे ही स्थलों पर उसमें कल्पना का भावुकता अनुभूति का पुट मिलता है।

भावनात्मक रहस्यवाद में हमें तीव्र विरहोत्कंठा कबीर के काव्य में देखने को मिलती है। कबीर के काव्य में प्रेम की पीर का वर्णन बड़ी सहृदयता और निर्मलता के साथ किया गया है। उन्होंने यह विरह की अकुलाहट स्थान-स्थान पर व्यक्त की है।

कबीर के काव्य में प्रेम भावना का मार्मिक चित्रण हुआ है। उनके प्रेम में ज्ञान की ज्योति और उत्सर्ग की प्रधानता है। कबीर के काव्य में उनकी समन्वयवादी प्रवृत्ति स्पष्टत: प्रकट हुयी है। कबीर के काव्य में एक ओर जहाँ हमें पखण्ड खण्डन एवं रूढ़ियों के प्रति विद्रोह दिखाई पड़ता है वही दूसरी ओर उनका काव्य विरह और मिलन की कोमल भावनाओं से अनुप्राणित है। एक ओर कबीर समाज सुधारक के रूप में हमारे सामने आते हैं तो दूसरी ओर एक अनन्य भक्त के रूप में। उनके काव्य में ज्ञान, भक्ति, नैतिक, व्यवहारिकता, दार्शनिकता एवं भावुकता आदि का अच्छा समन्वय दिखायी देता है। अत: भाव पक्ष की दृष्टि से कबीर का काव्य बेजोड़ है।

काव्य का कलापक्ष—कबीर के कला पक्ष में **भाषा-शैली** को प्रमुख और प्रथम स्थान प्राप्त है। कबीर की भाषा सादी अलंकार विहीन और अनगढ़ है. उसका व्याकरण की दृष्टि से अनगढ़ प्रयोग हुआ है, फिर भी उसमें अभिव्यक्ति की सहजता आश्चर्यजनक है। उसमें भावों का स्वाभाविक प्रवाह है। कबीर के काव्य में सभी प्रकार के शब्द मिल जाते है। अवधी, मगही, ब्रज भोजपुरी, अपभ्रंश आदि सभी का प्रयोग होने से उनकी भाषा बेमेल खिचड़ी कहलाती है। उसमें भावाभिव्यक्ति की तीव्रता एवं सशक्तता है तथा उसमें अपने काव्य को प्रहार के साथ व्यक्त करने कीं पूर्ण क्षमता है।

कबीर के काव्य में विविध शैलियों के दर्शन होते हैं। उन्होंने लोक जीवन की अभिव्यक्ति के लिए सरल प्रतीक शैली का प्रयोग किया है। अन्योक्ति शैली, व्यंग्य शैली, उलटबाँसी शैली, विरोधात्मक शैली, प्रबोधन शैली आदि कई शैलियों का प्रयोग किया। उलट बाँसी में कवि का चमत्कार है जिसके लिए वह अत्यन्त प्रसिद्ध हैं।

छन्द विधान—कबीर ने साखियों की रचना अधिकतर दोहा छन्द में की है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने काव्य में चौपाई, छप्पय, गीतिका, हरिपद, उल्लाला आदि का प्रयोग किया है। शब्दों का तोड़ मरोड़ होने पर यति गतिका पूरा ध्यान रखा गया।

अंलकार बिधान—कबीर के काव्य में यमक, उपमा, अनुप्रास; रूपक, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास जैसे अंलकार स्वतः ही आ गये हैं। इनकी अनेक साखियों में रूपक अंलकार का चमत्कारी प्रयोग हुआ है। इनके काव्य में अलंकारों का प्रयोग सहज एवं स्वाभाविक रूप से हुआ है। उन्होंने नवीन उपमानों का प्रयोग सफलतापूर्वक किया है।

प्रतीक विधान—कबीर के काव्य में अनेकों प्रतीकों का प्रयोग हुआ है। उन्होंने प्रतीकों को पारिभाषिक, संख्यात्मक तथा विशिष्ट रूपात्मक दृष्टि के अपनाये गये हैं।

संक्षेप में कह सकते हैं कबीर सच्चे सन्त एवं समाज सुधारक ही नहीं सच्चे कवि भी थे। उनके काव्य में भाव और कला का समुचित प्रसार दिखाई देता है। कबीर की भाषा अटपटी लग सकती है किन्तु भाव बड़े सटीक हैं।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—"कबीर भाषा के 'डिक्टेटर' थे।" इस कथन की विवेचना कीजिए।

उत्तर—कबीर की भाषा कौन सी थी? इसके विषय में समीक्षकों में मतभेद है। आज भी कुछ समीक्षक ऐसे हैं, जो कबीर की भाषाओं को अकाव्यात्मक और अटपटी मानते हैं। ऐसे विद्वानों की भी कोई कमी नहीं जो कबीर की भाषा को सफल भाषा मानते हुए कबीर को भाषा का डिक्टेटर मानते है। वह कबीर की भाषा को संप्रेषणीयता के गुण से युक्त मानते हैं।

डिक्टेटर से अभिप्राय तानाशाह से है, अतः पूरे कथन का अर्थ हुआ भाषा के तानाशाह। जो वर्ग उन्हें भाषा का तानाशाह या डिक्टेटर मानता है उनका इस कथन से अभिप्राय है कि कबीर को अपनी भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वह अपनी भाषा को अपने संकेतों पर नचाते थे। वे जब भी जैसा चाहते थे अपनी भाषा को तोड़-मरोड़ कर वैसी ही बना लेते थे। शब्द उनका संकेत पाने की प्रतीक्षा करते थे। भाषा-शैली का ऐसा स्वच्छन्द किन्तु सफल प्रयोग जैसा कबीर ने किया है वैसा अन्य किसी ने भी नहीं किया। उनकी भाषा में सहजता, सपाटता, सरलता, संप्रेषणीयता एवं व्यजंकता के साथ-साथ अर्थोद भावना की क्षमता शब्दगत औचित्य व शैलीगत सटीकता भी मिलती है। वह कथ्य का भार वहन करने में समर्थ और भावों तथा प्रसंगों के अनुसार नाचती दिखाई देती है। इसी कारण कुछ विद्वानों ने इन्हें भाषा का डिक्टेटर कहा है।

प्रश्न 2—कबीर की भक्ति भावना को संक्षेप में समझाइए?

उत्तर—कबीर निर्गुण भक्ति धारा के ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि थे। इसी कारण उन्होंने निर्गुण निराकार ब्रह्म की भक्ति को अपनाया। उनका मत था कि ईश्वर का साक्षात्कार तभी हो सकता है जबकि माया मोह का अन्धकार समाप्त हो जाए ज्ञान की ज्योति से हृदय आलोकित हो।

कबीर ने स्पष्ट शब्दों में कहा है जो यदि मन, हृदय, इन्द्रियाँ पवित्राचरण से युक्त हो तो वही ईश्वर की सच्ची भक्ति है।

कबीर ने भक्ति के क्षेत्र में नाम-स्मरण को बहुत महत्वपूर्ण बताया है। कबीर के अनुसार नाम स्मरण के लिए राम, रहीम आदि कोई भी प्रतीक अपनाया जा सकता है। कबीर ने गुरू की महिमा का भी गुणगान किया है। उचित भक्ति का मार्ग गुरू की कृपा के

बिना नहीं मिल सकता है। कबीर की भक्ति भावना में लौकिक उपादानों की अपेक्षा आध्यात्मिक तत्व प्रमुख है। कबीर ने भक्ति मार्ग को अत्यन्त दुर्लभ बतलाया है। जब भक्त साधना में ही निमग्न रहे और अहं भाव का परित्याग कर स्वयं ईश्वर को समर्पित करदे तभी सच्ची भक्ति हो सकती है। कबीर ने अनन्यता के भाव प्रकट कर भक्ति भावना की मार्मिक अभिव्यक्ति की है। कबीर ने स्वयं कहीं कहीं अंकिचन बताकर स्वयं को परमात्मा का सेवक बताया है। कबीर की भक्ति भावना एक उच्च कोटि के साधक की साधना परिलक्षित होती है।

प्रश्न 3—साखी शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए उसकी विशेषताओं के मुख्य बिन्दुओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—साखी शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के साक्षी शब्द से मानी जाती है। साक्षी का अभिप्राय गवाह से है जिसने किसी वस्तु या घटना को स्पष्ट रूप से देखा हो। साक्षी शब्द का अटपटा उच्चारण ही साखी है। साखी का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया गया है। इस शब्द के अनेकों अर्थ लिए जाते हैं। परन्तु जहाँ तक कबीर की साखियों का सम्बन्ध है उनका आशय सीख अथवा शिक्षा देने है। इसका मुख्य उद्देश्य ज्ञान प्रदान करना है। कबीर ग्रन्थावली में संकलित साखियों में नियम स्वभाव प्रेम पाखण्ड, गुरु की महिमा, परमात्मा का परिचय, सांसारिक विकृतियों से दूर करने की शिक्षा दी गयी है।

साखियों की कतिपय प्रमुख विशेषताएँ

(1) साखियों से **लौकिक व्यवहार** की शिक्षा मिलती है।
(2) साखियों में **समता** का उपदेश दिया गया है।
(3) साखियों में **समन्वयवादी** प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया गया है।
(4) **भ्रातृत्व की भावना** पर जोर दिया गया है।
(5) **करुणा एवं क्षमा के भावों** की आवश्यकता पर बल दिया गया है।
(6) **अहिंसा एवं त्याग** का पाठ पढ़ाया गया है।
(7) **पर निन्दा का विरोध** किया गया है।
(8) ब्रह्म के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए उसकी महत्ता का वर्णन किया गया है।
(9) **ईश्वर को सभी क्रियाओं** का नियन्ता बतलाया गया है।
(10) **बाह्याडम्बरों** का विरोध किया गया है।
(11) **संग्रह** को अनुचित कहा गया है।
(12) **कथनी करनी** की समानता पर बल दिया गया है।
(13) **धैर्य एवं एकनिष्ठता की** भावना को आवश्यक बतलाया है।
(14) मधुर भाषिता एवं सहन शीलता पर बल दिया गया है।
(15) **निष्कपट प्रवृत्ति** को उत्तम कहा गया है।
(16) सत्संगति का महत्व बतलाया गया है।
(17) आचरण की पवित्रता पर बल दिया गया है।

प्रश्न 4—कबीर की भाषा को पंचमेल खिचड़ी भाषा कहा गया है। इस कथन में क्या सत्यता है? यदि है तो उसका क्या कारण था?

उत्तर—कबीर की भाषा में अनेक प्रान्तीय भाषाओं के शब्द मिलते थे। कबीर उपदेशक पहले थे और कवि बाद में, वह जगह जगह घूम-घूम कर उपदेश देते थे। जगह-

जगह घूमने के कारण उन्होंने अलग-अलग प्रान्तों की भाषा के कुछ शब्दों को अपनी भाषा में मिला लिया था। जिससे उनके संदेश जन साधारण तक आसानी से पहुँच सके। कुछ प्रमुख शब्द जो अत्यधिक प्रचलित थे वे उपनी भाषा में स्थत: ही स्थान पा गये। यही कारण है कि उनकी भाषा को पंचमेल खिचड़ी भाषा के नाम से भी अभिहित किया जाता है। इनकी भाषा में अन्य भाषाओं के शब्द होने का दूसरा कारण यह भी दिखाई देता है कि कबीर अनपढ़ थे अतः उन्होंने अपने काव्य की रचना तो की परन्तु मौखिक रूप से उनके समर्थकों ने उनके मुख से निकली पंक्तियों को जिस रूप में ग्रहण किया, उसी रूप में उनका काव्य हमारे समक्ष है। यह भी एक प्रबल कारण है भाषा के मिली जुली होने का।

अतिलघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—कबीर भक्ति की किस शाखा के कवि थे ? तथा किस प्रकार के कवि थे ?

उत्तर—कबीर भक्ति के निर्गुण पंथी ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि थे। वे समाज सुधारक, युग प्रर्वतक सन्त कवि थे। ज्ञान मार्गी होने पर भी उन्होंने प्रेम के महत्व को स्वीकार किया। आडम्बरों का निरन्तर विरोध किया।

प्रश्न 2—कबीर ने गुरु का गुण गान क्यों किया है ?

उत्तर—कबीर गुरु को सर्वोपरि स्थान दिया है। उन्होंने गुरु की प्रतिष्ठा भगवान से भी ऊँचे पद पर की है। वह मानते थे कि गुरु ही ज्ञान के द्वारा अज्ञान के अन्धकार को दूर करता है। जिसके कारण मनुष्य के अन्तर चक्षु खुल जाते हैं और उसे प्रभु का साक्षात्कार हो जाता है। वह गुरु को परमात्मा तक पहुँचाने का माध्यम मानते थे। उनके मत में बिना गुरु के परमात्मा से साक्षात्कार सम्भव नहीं है इसलिए अपने काव्य में उन्होंने गुरु की महिमा का गुणगान किया है।

प्रश्न 3—कबीर ने एकेश्वरवाद के सम्बन्ध में अपने क्या विचार प्रस्तुत किए हैं ?

उत्तर—कबीर ऐकेश्वर वाद में विश्वास रखते थे। उनके अनुसार ब्रह्म एक ही है मत-मतान्तरों के जाल में फसे लोग उसके अनेक रूप बना देते हैं। राम, रहीम, शिव, अल्लाह सब एक ही हैं; हिन्दू; मुस्लिम आदि अलगाववादी भावनाएँ भ्रमपूर्ण हैं।

प्रश्न 4—'साहब मेरा एक है दूजा कहा न जाय।
दूजा साहेब जब कहूँ साहेब खरा रिसाय'।।

प्रस्तुत साखी में कबीर ने क्या भाव व्यक्त किया है ?

उत्तर—कबीरदास जी का अभिप्राय है कि ईश्वर एक है उसके दो रूप नहीं हैं। ईश्वरीय सत्ता को द्वैत मानने पर परमात्मा हमारे अज्ञान पर कुपित हो जाता है। इसीलिए एकेश्वरवाद की धारणा सत्य है।

प्रश्न 5—कबीर ने परमात्मा के तत्व को पहचानने की कौन सी विधि बताई है ?

उत्तर—कबीर दास जी के अनुसार माया, मोह, लोभ आदि दुर्गुणों का त्याग कर सद्गुणों को ग्रहण कर सच्ची भक्ति भावना रखने वाला व्यक्ति ही अपने हृदय को ज्ञान के प्रकाश से आलोकित कर स्वयं में विद्यमान परमात्मा तत्व को पहचान सकता है। अज्ञान के अन्धकार में परमात्मा का रूप स्पष्ट नहीं हो पाता।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—कबीर की भाषा किस प्रकार की है ?

(क) अवधी
(ख) ब्रज
(ग) मगही
(घ) सधुक्कड़ी
(च) खड़ी बोली।

प्रश्न 2—कबीर दास ने सर्वोपरि महिमा किसकी बताई है ?

(क) ब्रह्म की
(ख) गुरु की
(ग) मूर्ति पूजा की
(घ) मन्दिरों व मस्जिदों की
(च) सच्चे भक्त की ।

प्रश्न 3—कबीर के मत में कौन सा तथ्य सही है ?

(क) ईश्वर और अल्लाह अलग-अलग सत्ता है
(ख) राम रहीम अलग-अलग हैं
(ग) ईश्वर एक है
(घ) अल्लाह निर्गुण है
(ङ) ईश्वर और राम दो हैं
(च) ईश्वर के विभिन्न रूप हैं ।

प्रश्न 4—"प्रभुता को सब कोउ भजे प्रभु को भजै न कोय ।
कह कबीर प्रभु को भजे प्रभुता चेरी होय ।"

साखी में कबीर ने किसकी उपासना को श्रेष्ठ बताया है ?

(क) प्रभुता की
(ख) साधु की
(ग) मित्र की
(घ) प्रभु की
(ङ) गुरु की ।

प्रश्न 5—'भ्रम की टाटी सबै उडानी माया रहे न बांधी रे"
कबीर के अनुसार इनको उड़ा ले जाने वाली आंधी कौन-सी है ?

(क) ज्ञान की
(ख) भ्रम की
(ग) अज्ञान की
(घ) माया की
(ङ) लौकिक सुखों की ।

उत्तर माला

(1) घ, (2) ख, (3) ग, (4) घ, (5) क ।

अध्याय 2
जायसी

व्याख्यात्मक प्रश्न

1. सुनतहि राजा गा मुरझाई.........................अवस्था ।

प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण मलिक मोहम्मद जायसी द्वारा लिखित 'पदमावत' के 'प्रेम खण्ड' से उद्धृत है। प्रस्तावित पाठ्य पुस्तक 'प्राचीन काव्य कलाधर में संकलित अंश को प्रेम खण्ड शीर्षक के अन्तर्गत रखा गया है।

हीरामन तोता राजा रत्नसेन के सामने सिंहल द्वीप की राजकुमारी पदमावती के रूप सौन्दर्य का नख-शिख वर्णन करता है इसका रूप वर्णन सुनकर राजा के हृदय में पद्मावती के प्रति प्रेम जाग्रत हो जाता है। पद्मावती को देखने की उत्कृष्ट अभिलाषा एक प्रेम से व्याकुल होकर राजा रत्नसेन बेसुध हो जाता है । उसी प्रसंग का चित्रण इस पद्यांश में किया गया है ।

व्याख्या—हीरामन से पद्मावती का रूप वर्णन सुनते ही राजा रत्नसेन मूर्च्छित हो गया । जिस प्रकार कुमुदनी सूर्य के निकलने पर मुरझा जाती है । ठीक उसी प्रकार राजा का शरीर मुरझा गया । जिस प्रकार सूर्य के ऊपर कोई बदली आ जाती है तो वह निस्तेज हो जाता है उसी प्रकार सूर्य के समान तेज वाले राजा का मुख मण्डल मुरझा गया । जायसी कहते हैं प्रेम की पीड़ा को कोई अन्य नहीं जानता जिसके यह घाव लगा हो, वही इसके मर्म को जान सकता है; अर्थात् राजा रत्नसेन जिस प्रेम व्यथा से मूर्च्छित हो गया था, उसका वास्तविक अनुभव उसे ही हो रहा था । राजा रत्नसेन रानी पद्मावती के प्रेम रूपी सागर में डूब गया था, जिसमें प्रेम की लहरें एक के बाद एक उसे प्रताड़ित कर रही थीं अर्थात् पद्मावती की स्मृति रूपी लहरें प्रताड़ित कर रही थीं । जिसके कारण वह बेसुध हो गया था । वह पद्मावती के विरह रूपी भंवर में पड़कर चक्कर काटने लगा । उसके हृदय में पद्मावती की स्मृति की हिलोर उठ रही थी । क्षण क्षण में उसके प्राणों में हूक सी उठती थी । क्षण भर में उसकी सांस डूबने लगती थी तो दूसरे ही क्षण वह पागल के समान उठकर इधर उधर देखने लगता । क्षण भर में उसका शरीर पीला पड़ जाता था और क्षण भर में उसका मुख सफेद पड़ जाता था । क्षण भर के लिए उसकी चेतना वापस आती तो दूसरे ही क्षण वह पुनः बेसुध हो जाता था । जायसी कहते हैं प्रेम की यह अवस्था मरने से भी अधिक कठिन थी । ऐसी विरह अवस्था न तो प्राणों को जीवित ही रहने देती थी और न ही मरने देती थी । विरह व्यथा के कारण राजा रत्नसेन की अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गई थी ।

विशेष—(1) विप्रलम्भ शृंगार की दसवीं अवस्था मरण का वर्णन जिसमें विरही मिलन की अभिलाषा के कारण मृत्यु को भी प्राप्त नहीं कर पाता है ।

(2) प्रेम की विरहावस्था का मार्मिक वर्णन है । जायसी की भावुकता को देखा

जा सकता है। चौपाई छन्द का प्रयोग है। अवधी भाषा में लिखा गया है। विरह दशाओं का वर्णन है। रूपक अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

2. "जब भा चेत उठा बैरागा......................निसाया।"

प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण जायसी द्वारा रचित 'पद्मावत' के 'प्रेम खण्ड' से उदधृत हैं। राजा रत्नसेन से हीरामन तोते से पदमावती के रूप सौन्दर्य का वर्णन सुनकर बेसुध हो गया था प्रस्तुत पद्यांश में राजा होश में आकर अपनी व्यथा व्यक्त करता है।

व्याख्या—बिरह व्यथा से मूर्छित होने के बाद जब राजा को होश आता है तो उसके हृदय में वैराग्य की भावना जाग्रत हो जाती है। उस समय उसकी दशा किसी बावले व्यक्ति के समान थी जैसे बावला व्यक्ति सोकर उठा हो। होश में आने पर भी राजा रत्नसेन विरह व्यथा से अत्यन्त पीड़ित था। वह उस समय इस प्रकार रोने लगा जैसे जन्म लेते ही नवजात शिशु रोने लगता है। उस समय उसका सारा विवेक ज्ञान समाप्त हो गया था। अर्थात् बालक की तरह वह रोने लगा। कि हमारा ज्ञान कहाँ चला गया। रत्नसेन विलाप करने लगा कि मैं तो अमरपुर अर्थात् स्वर्गलोक में ठीक था। मैं इस मृत्यु लोक में कहाँ से आ गया इस मृत्यु लोक में जन्म देकर ईश्वर ने मेरे ऊपर कौन सा उपकार किया है। क्योंकि यहाँ तो भगवान ने मेरी शक्ति छीनकर मेरे प्राणों को भी हरण करलिया है अर्थात् मैं अब पदमावती रूपी परमात्मा के अधीन होगया हूँ। मैं उस अचेत अवस्था मे ही ठीक था क्योंकि उस दशा में मुझे प्रिया मिलन के सुख का अनुभव तो हो रहा था। विधाता ने मुझे उसी अवस्था में सोने क्यों नहीं दिया। अब होश आने पर मेरी आत्मा तो सिंहलद्वीप की राजकुमारी के पास है और मेरा शरीर यहाँ पर बिना आत्मा के सूना पड़ा है अर्थात् निर्जीव पड़ा है। मेरा यह शरीर बिना प्राणी के कब तक जीवित रह सकेगा। यदि प्राणी स्वाभाविक रूप से काल के द्वारा नष्ट हो जाय तो ठीक है पर प्राण विहीन यह शरीर भी कैसे रह सकता है? यदि मेरी मृत्यु हो जाए तो अच्छा है परन्तु यह स्थिति मैं बिलकुल सहन नहीं कर पा रहा हूँ कि प्राणों के बिना मेरा शरीर इस संसार में जीवित रहे। मेरे प्राण तो पदमावती के पास हैं और मैं यहाँ पड़ा हूँ इस स्थिति से तो मृत्यु ही अच्छी है।

विशेष—(1) जायसी ने इस पद्यांश में लौकिक प्रेम के साथ अलौकिक प्रेम की व्यंजना की है।

(2) सम्पूर्ण पद्यांश में पूर्वराग की स्थिति का वर्णन है।

(3) उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग है।

(4) विरह की उन्माद दशा का वर्णन किया है।

3. सुए कहा मन बूझहु राजा......................भावा॥ (पृष्ठ 50)

प्रसंग—यह अवतरण 'पदमावत्' के प्रेम खण्ड से अवतरित है। राजा रत्नसेन विरह व्यथा से व्याकुल होकर प्रलाप करने लगता है। तब सभी लोग उसे समझाने लगते हैं और प्रेम पंथ को कठिन बताकर राज सुख भोगने की सलाह देते हैं। उसी अवसर पर हीरामन तोता भी राजा को समझाता है।

व्याख्या—तोता राजा को समझाते हुए कहता है कि हे राजन तुम अपने मन को समझाओ सांत्वना दो। प्रेम करना अत्यन्त कठिन कार्य है। कमल रूपी पदमावती को प्राप्त करने के लिए तुम्हें कष्ट नहीं उठाना चाहिए। अतः तुम उसके प्रति आसक्ति छोड़ दो। तुम एक वैभवशाली राजा हो। अपने घर में तुम्हें हर प्रकार सुख वैभव प्राप्त है। तुम सदा सुख से रहते आए हो। यह कठिन कार्य तुम्हारे लिए नहीं है, क्योंकि कमल का रस पान करने के लिए बहुत कष्ट उठाने पड़ते हैं। भौंरा अपने प्राणों को संकट में डालकर

भी कमल के पराग के लिए उसके आस-पास घूमता रहता है। अपने प्राणों को भी वह कमल पर न्यौछावर कर देता है, परन्तु कमल के प्रति वह अपनी आसक्ति को नहीं छोड़ता है, सिंहल द्वीप के राजा का राज्य ऐसा है कि तुम यदि अपनी सारी सेना को भी अपने साथ ले जाओ तो भी उसे जीत नहीं सकते। इसलिए पदमावती को प्राप्त करने के मार्ग पर वहीं जा सकता है जो योगी यति मुनि और सन्यासी हो क्योंकि सिंहल द्वीप के महलों में योगी तपस्वी ही आसानी से प्रवेश कर सकते हो इसीलिए योगी बनकर तो तुम पदमावती को आसानी से प्राप्त कर सकते हैं किन्तु योगी बनने में सभी सुख वैभव का परित्याग करना पड़ता है, जो तुम्हारे जैसे वैभव शाली राजा के वंश की बात नहीं है। अर्थात् राज्य सुखों का उपभोग करने वाला योगियों का कठिन जीवन नहीं अपना सकता है। अतः बिना सुखोपयोग का त्याग किए बिना पद्मावती की प्राप्ति सम्भव नहीं है।

विशेष—जायसी ने लौकिक प्रेम से अलौकिक प्रेम की व्यंजना की है।

यदि हम इस पद्य खण्ड को प्रतीकों के माध्यम से देखें तो इसमें छिपा रहस्यवाद सामने आ जाएगा। तोता गुरू का प्रतीक है। रत्नसेन जीवन का और पद्मावती ब्रह्म का। अलौकिक अर्थ में इस जीवन से मोह छौडे बिना माया से मुख मोड़े बिना ब्रह्म की प्राप्ति सम्भव नही है। इसके लिए जीव को योगी की तरह साधना करनी पड़ती है। योग साधना के कठिन मार्ग पर चलकर आत्मा परमात्मा का मिलन हो जाता है।

तोते के कथन से भावी घटना का संकेत मिलता है।

रूपक और उत्प्रेक्षा के साथ अनुप्रास का स्वाभाविक प्रयोग किया गया है।

4. का भा जोग कथनि के कथे......................उजियारा। (पृ० 50)

अवहु............................पीर।

प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण जायसीकृत 'पद्मावत' के प्रेम खण्ड से उद्धृत है। प्रस्तुत अवतरण में जायसी हीरामन तोते के माध्यम से प्रेम की महत्ता और उसकी गरिमा और सर्वोच्चता का वर्णन कर रहे हैं।

व्याख्या—हीरामन तोता राजा से कहता है कि केवल कथा मात्र कह देने से कोई लाभ नहीं है। अर्थात् कहने और करने में बहुत अन्तर है। दही को मथे बिना घी नहीं निकलता है भाव यह है कि जब तक योग साधना नहीं की जाएगी तब तक उसका वर्णन करते रहने से क्या लाभ है। जब तक प्रेमी साधक अपने अस्तित्व को दूसरे में नहीं मिला देता तब तक वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता। विधाता ने प्रेम पर्वत को बड़ा कठिन और अगम्य बनाया है। इस पर्वत पर वही चढ़ सकता है जो सिर के बल चढ़ता है। अर्थात् इस प्रेम पर्वत की चढ़ाई बहुत असाधारण होती है। इस पर वही चढ़ सकता तो सांसारिकता का सर्वथा परित्याग कर दे।

हीरामन तोता कहता है कि प्रेम का मार्ग सूली की तरह है जिसमें स्थान स्थान पर सूली की नोंक मिलती है अर्थात् कष्ट मिलते हैं। इस सूली के मार्ग पर या तो चोर चढ़ सकता है या कोई सूरमा चढ़ सकता है। अभिप्राय यह है कि प्रेम का मार्ग सरल नहीं है। फिर तुम तो राजा हो तुम जोगी जैसे वस्त्र कैसे पहनोगे। इसके अतिरिक्त तुम्हारे शरीर रूपी घर में दस द्वार रूपी इन्द्रियाँ है जो तुम्हें निरन्तर व्यक्ति करते रहते हैं। काम क्रोध, तृष्णा, मोद, माया रूपी पाँच चोर कभी भी किसी भी दरवाजे तुम्हारे शरीर रूपी घर में प्रविष्ट हो सकते हैं। भाव यह है कि तुम कभी भी इनके वश में आ सकते हो अर्थात् यह चोर तुम्हारे शरीर रूपी घर को नहीं छोड़ेंगे इन चोरों ने तुम्हारे शरीर में बने हुए नौ छिद्रों (नव इन्द्रियों) को देखा हुआ है। ये इन छिद्रों के माध्यम से रात दिन इनमें

प्रवेश कर तुम्हें लूटते रहते हैं। तात्पर्य यह है कि मनुष्य इनके इशारों पर नाचता रहता है।

अतः हे मूर्ख राजा अब तो जाग जा, अब मोहनिद्रा को त्याग दे, क्योंकि अब अज्ञान रूपी रात्रि का अन्तिम प्रहर बीतने वाला है। ज्ञान रूपी सवेरा हो रहा है। जब कामना के चोर तुम्हारे धन को लूट लेंगे तब सिर्फ पछतावा ही रह जाएगा। अतः अब इन्द्रियों के वशीकरण को छोड़ दे।

विशेष—लौकिक प्रेम के द्वारा अलौकिक प्रेम की व्यंजना की गयी है। प्रेम मार्ग की दुरूहता का वर्णन है।

'तू राजा कम पहिरति कथा' में व्यंग्य का प्रयोग है।

5. बंधु मीत...............................सुआसा। (पृष्ठ 51)

प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण जायसी द्वारा लिखित पदमावत के प्रेम खण्ड से किया गया है।

हीरामन तोते की बात सुनकर राजा रत्नसेन राज वैभव छोड़कर योगी बनने को तैयार हो जाते हैं। राजा के इस निर्णय पर सब उन्हें बहुत समझाते हैं परन्तु उनकी बातों का राजा के ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता इसी प्रसंग का वर्णन जायसी ने इस अवतरण में किया है।

व्याख्या—जायसी कहते हैं किशना रत्नसेन को उनके मित्रों भाई बान्धवों ने बहुत समझाया परन्तु उनकी किसी भी बात का राजा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह अपनी प्रेमासक्ति पर अडिग रहा। जायसी कहते हैं कि एक बार जिसके हृदय में प्रेम की पीर उत्पन्न हो जाती है वह समाप्त नहीं होती अपितु लोगों के समझाने बुझाने पर वह और अधिक बढ़ती है। अमृत के समान बात भी उसको विष के समान प्रतीत होने लगी और प्रेम के वचन उसे मीठे प्रतीत होने लगे। राजा रत्नसेन विरह को विष के समान कष्ट-दायी मानती है। इसी कारण जिस किसी ने भी इस विष को पिया था, उससे वह प्रेम के माधुर्य का परिचय प्राप्त करता था।

आध्यात्मिक सन्दर्भ में विषय वासनाओं रूपी विष को मारकर परमात्मतत्व के प्रति लगन रखने वाले से वह प्रेमानन्द के सन्दर्भ में जानकारी हासिल करता है।

राजा रत्नसेन लोगों के समझाने बुझाने पर तर्क देकर कहता है कि भ्रतृहरि के पास जाकर पूछो कि उन्होंने राज्य के सुखोपभोग त्याग कर कठिन साधना क्यों अपनाई। शिव बड़े सिद्ध देवता माने जाते हैं। उन्होंने विष को अपने कंठ में क्यों रखा। भाव यह है कि लोकहित की आकांक्षा से शिव ने काल कूट विष पी लिया था। इसके पीछे मूल कारण था उनकी परमात्म तत्व में आसक्ति थी इसी कारण उन्होंने विष पान किया था। सूर्य निकलने से पूर्व यदि संजीवनी बूटी आ जाएगी। तो लक्ष्मण के प्राण बच जायेंगे ऐसी आशा राम को लक्ष्मण के शक्ति लगने पर हनुमान ने बंधाई थी, अर्थात् कार्य में सफलता मिलने की आशा यदि पहले से बंध जाए तो कार्य में अवश्य ही सफलता मिलती है।

विशेष—(1) लौकिक द्वारा अलौकिक अर्थ की व्यंजना की गयी है।

(2) तथ्य की पुष्टि हेतु लक्ष्मण, भृतृंहरि, शिव का वृतान्त सामाविष्ट किया गया है।

(3) रूपक एवं दृष्टान्त अलंकारों का प्रयोग किया गया है।

पद्मावती—गोरा-बादल खण्ड

6. सखिन्ह बुझाई दगध अपारा..............................रानी । (पृष्ठ 52)

का अस..............................काज ।

प्रसंग—यह अवतरण जायसी द्वारा रचित पदमावत् महाकाव्य के 'पदमावती गोरा बादल खण्ड' से उद्धृत है पद्मावती को प्राप्त करने के आशय से अलाउद्दीन ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया और भेद नीति का सहारा लेकर राजा रत्नसेन को कैद करके दिल्ली ले गया। तत्पश्चात् रानी पद्मावती ने गोरा और बादल नामक क्षत्रियों वीरों से राजा को किसी प्रकार छुड़ाकर लाने के लिए विनती की। इस अवतरण में उसी प्रसंग का चित्रण है।

व्याख्या—सखियों ने विरह की ज्वाला में जलती हुयी रानी पद्मावती को समझाया और उसके हृदय की अग्नि को शांत किया। सखियों की सलाह पर वह गोरा बादल नामक वीरों के द्वार पर गयी। पद्मावती ने अपने कमल से समान कोमल पाँव कभी जमींन पर नहीं रखे थे। इस कारण थोड़ा चलने पर उनके पाँव में छाले पड़ गये। जब उन दोनों वीरों को रानी के आने का समाचार मिला तो वह घर से निकल रानी के सामने खड़े हो गये रानी पद्मावती को अपने द्वार पर देखकर वह आश्चर्यचकित होकर काँप गये जैसे कोई आज तक नहीं कांपा। उन्होंने अपने केशों को खोलकर पद्मावती के पैरों में लगी धूल को झाड़ा और उनका सत्कार किया। उन्हें पदमावती जैसी पवित्र आत्मा अपने आप कैसे मिल सकती है। अपने इस सौभाग्य पर कि रानी स्वयं चलकर उनके पास आयी। वह आनन्द मग्न हो गया। उन्होंने शीघ्र ही पदमावती के लिए सोने की चौकी लाकर रखी, जिस पर विरह व्यथिता रानी ने आसन ग्रहण किया। दोनों चंवर डुलाने लगे और प्रार्थना करने लगे कि आप के सिर पर सदा छत्र बना रहे और राज्य सुख का आप उपभोग करती रहे। आज गंगा की धारा उल्टी वह रही है जो सेवक के घर रानी आयी है। अर्थात परम्परा यह है कि सेवक ही स्वामी के पास जाता है। इसके विपरीत आचरण के उल्टी गंगा बताया है। हमें आज्ञा मिले कि आज रानी को क्यों सेवकों के यहाँ आना पड़ा।

वह कहने लगे हे रानी तुमने ऐसा कष्ट किस लिए किया जो आपको शोभा नहीं देता। यदि आपको हमारी आवश्यकता थो तो हमें वहीं बुलवा लेती। स्वयं पधार कर आपने हमें लज्जित कर दिया है। अब शीघ्र आज्ञा दें कि हमें क्या सेवा करनी है। हमारे प्राण भी आपकी सेवा में प्रस्तुत है।

विशेष—(1) उपमा और रूपक अलंकारों का प्रयोग हुआ है।
(2) 'उल्टी गंगा बहना' मुहावरे का साभिप्राय प्रयोग हुआ है।
(3) गोरा बादल की चारित्रिक विशेषताओं का संकेत मिलता है।

7. तुम गोरा बादल खंभ दोऊ..............................मुकरावौ ।। (पृष्ठ 52)

प्रसंग—यह अवतरण पदमावती गोरा बादल खण्ड से उद्धृत है। रानी पद्मावती गोरा बादल के यहाँ जाकर उनसे राजा को छुड़ाकर लाने के लिए विनती करती है। उसी प्रसंग में वह आगे कहती है।

व्याख्या—रानी पद्मावती उन क्षत्रिय वीरों से कहती है कि तुम दोनों राज्य के दो स्तम्भ हो अर्थात् राज्य तुम्हारे बूते पर ही टिका हुआ है। युद्ध क्षेत्र में अर्जुन जैसा योद्धा उस समय में कोई नहीं था। इसी प्रकार इस राज्य योद्धाओं में तुम्हारी कोई समानता नहीं है। तुम दो योद्धाओं के समान कोई ऐसा समर्थ योद्धा नहीं है जो राज्य की रक्षा कर

सके । मेरे दुख का वृक्ष इस प्रकार विकास पाता जा रहा है कि उसे रोकना असंभव जान पड़ता है अर्थात् मेरा दुःख निरन्तर बढ़ता जा रहा है। उसकी जड़े पाताल तक और शाखाएँ आकाश तक फैल गयी है। यह बिरह व्यथा रूपी बेल खजूर की तरह बहुत बढ़ रही है। उसी दुःख के कारण जंगल के वृक्ष भी बहुत बढ़ गये है। ऐसे लग रहे कि वह नंगा सिर किए खड़े-खड़े रो रहे हैं। मेरे दुःख से समूची पृथ्वी पट गयी है दुख की वर्षा से समूद्र भर गये हैं। कौड़ी का हृदय भी फट गया है। खजूर की गुठली का भी हृदय विदीर्ण हो गया है परन्तु हृदय ही पत्थर का बना जो इतनी विरह व्यथा भोगने पर भी विदीर्ण नहीं हुआ।

पद्मावती कहती है अब मेरा मन कह रहा है जिस बन्दी गृह में मेरे पति को बन्दकर रखा है मैं वहाँ योगिनी बनकर जाऊँ और स्वयं बन्दी बनकर अपने प्रियतम को मुक्त कर जाऊँ और स्वयं बन्दी बनकर अपने प्रियतम को मुक्त कराऊँ। अर्थात् अनेकों कष्ट सहन करके भी आतम त्याग का मार्ग अपना कर भी प्रियतम को मुक्त कराना चाहती हूँ।

विशेष—पद्मावती के दुःख वृक्षों को भी दुःखी दिखाकर उन पर प्राण चेतना का आरोप किया है। अतः यहाँ मानवीकरण का प्रयोग हुआ है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा अलंकारों का चमत्कार इसमें हमें देखने को मिलता है।

8. **गोरा बादल दोऊ पसीजे**..............................**अंकुश**। (पृष्ठ 52-53)

प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण जायसी द्वारा रचित पद्मावत के 'पदमावती गोरा बादल' शीर्षक के खण्ड द्वारा उद्धृत है। रानी पद्मावती अपनी विरह व्यथा का निवेदन करके राजा रत्नसेन को छुड़ा लाने का निवेदन करती है। वह विरह व्यथा कहते-कहते बहुत व्यथित हो जाती है, तब गोरा बादल उसे सांत्वना देते हैं और कहते हैं कि राजा को किसी प्रकार खिलजी की कैद से छुड़ा लायेंगे।

व्याख्या—रानी पद्मावती की दुःखपूर्ण प्रार्थना सुनकर गोरा बादल उनके दुःख से द्रवित हो गया अर्थात् उनका हृदय करुणा से आर्त्त हो गया वे दोनों रक्त के आँसू बहाने लगे जिनसे उनके शरीर भीग गये तब उन्होंने रानी से निवेदन करते हुए कहाकि हम दोनों अवश्य राजा के पास जाएँगे और यहाँ की सारी बातें बताएँगे, आप योगिनी बनकर राजा को मिलने का प्रयास मत करो क्योंकि अलाऊद्दीन के आदमी आपको पकड़ लेंगे। आपने जो कुछ भी कहा है। उसे हमने अच्छी तरह समझ लिया है। यदि इतना सुनकर भी हम राजा के पास नहीं गये तो और आपको जाने दिया तो सारा कलंक हमारे माथे पर लगेगा। इसी कारण आपकी आज्ञा को मस्तक पर धारण करके अर्थात् सहर्ष स्वीकार करके वहाँ प्रस्थान करने के लिए हम तैयार हैं। हे रानी स्वामी के जीते जी तुम योगिनी किस प्रकार बन सकती हो। जब तक हम दोनों में प्राण रहेंगे तब तक युद्ध क्षेत्र में वीरता पूर्वक लड़ते रहेंगे। युद्ध क्षेत्र से हम भागेंगे नहीं अन्तिम सांस तक शत्रुओं का सामना करके हम राजा को छुड़ा लाएँगे। जब अगस्त्य नक्षत्र के उदित होगा तब हरित नक्षत्र के धन गर्जना करेंगे। अर्थात् अगस्त्य नक्षत्र के उदित होने पर जब शरत ऋतु प्रारम्भ होगी तब विजय प्रमाण के लिए हाथी गरजने लगेंगे। धरती पर जब जल बर्षण का वेग कम हो जाएगा, तब निश्चय हमारे राजा सकुशल घर लौट आएँगे।

गोरा और बादल पुनः प्रतिज्ञापूर्वक कहते हैं जब वर्षा ऋतु समाप्त हो जाएगी और अगस्त्य नक्षत्र दिखायी देगा अर्थात् शरद् ऋतु आरम्भ हो जाएगी तब घोड़ों की पीठ पर जीन पड़ेगी अर्थात् अलाउद्दीन खिलजी पर चढ़ाई करने के लिए घोड़े कसे जाएँगे। तब हम अलाउद्दीन रूपी राहू को मार डालेंगे और राजा रत्नसेन रूपी सूर्य को बन्धन से मुक्त

करेंगे तब आपके दुःख व्यथा का मूल अंकुर समाप्त हो जाएगा अर्थात् तत्पश्चात् कोई भी दुःख नहीं रहेगा।

विशेष—अगस्त्य नक्षत्र और हस्ति नक्षत्र शरद ऋतु के आरम्भ में दिखायी देते हैं। वर्षा काल में विजय प्रमाण नहीं किया जा सकता था क्योंकि प्राचीन काल में सीमित साधन थे। अतः इसी कारण गोरा बादल ने शरद ऋतु के प्रारम्भ में युद्ध प्रमाण की बात कही।

(1) रुधिर शब्द का प्रयोग मसनवी पद्धति में किया जाता है।
(2) पहली पंक्ति रोवत रुहिर..........में अतिश्योक्ति
हस्ति..........गाजा में श्लेष
बंधौ राहु..........रूपक अलंकार।

9. **राम.............................आंके ।।**

प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण जायसी द्वारा लिखित पद्मावत के पद्मावती गोरा-बादल खण्ड से उदधृत है। जब गोरा-बादल राजा रत्नसेन को बन्दी गृह से मुक्त कराकर लाने की प्रतिज्ञा करते हैं तब रानी पद्मावती उनके शौर्य की प्रशंसा करती है।

व्याख्या—रानी उन दोनों की प्रशंसा करते हुए कहती है कि तुम दोनों राक्षसों का संहार करने वाले राम और लक्ष्मण के समान प्रबल पराक्रमी हो। तुम दोनों पराक्रम में साक्षात द्रोणाचार्य और भीष्मपितामह हो। तुमको में सहदेव समझती हूँ। तुम ही युधिष्ठिर और दुर्योधन जैसे बलशाली हो। तुम दोनों नल और नील की तरह मुझे ढाढस देने वाले हो। सेतु बन्धन कर जैसे नल और नील राम की व्याकुलता को समाप्त कर ढांढस बधाया था। उसी प्रकार तुम अपने पराक्रम और शौर्य से मेरा ढांढस बंधा रहे हो तुम दोनों योद्धा परशुराम और राम के समान दृढ़ निश्चयी हो। उनके समान ही तुमने कठिन प्रतिज्ञा की है जिससे मेरे हृदय को पर्याप्त सन्तोष मिला है। तुम दोनों भरत और शत्रुघ्न की तरह मेरे हितचिन्तक पीर हो तथा तुम मेरे लिए चाणूर राक्षस का संहार करने वाले श्रीकृष्ण हो। तुम दोनों वीर प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध के समान वीर हो। वाणासुर का विनाश करने में इन दोनों राजाओं ने बड़े पराक्रम का परिचय दिया था। तुम्हें हर अभिमन्यु के समान वीर और उत्साही समझता है। तुम्हारे समान इस धरती पर ऐसा कोई भी बलशाली नहीं है, जो इस तरह का सम्मान पा सके। तुम हमीर और सत्यवादी हरिश्चन्द के समान हो, जिन्होने सत्य की रेखा खींची थी और सत्य निष्ठा के साथ अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया था।

पद्मावती के कथन का भाव यह है कि तुम दोनों वीर दृढ़ प्रतिज्ञ एवं पराक्रमी हो। तुम अपने पराक्रम से निश्चय ही राजा रत्नसेन को मुक्त कराने में सफल रहोगे। तुम्हारी सत्य निष्ठा और दृढ़ता पर मुझे किंचित्त भाग भी सन्देह नहीं है।

विशेष—पौराणिक एतिहासिक पात्रों का संकेत करके रूपकातिश्योक्ति तथा उपमा का सुन्दर प्रयोग किया गया है। प्रसिद्ध योद्धाओं को उपमान रूप में प्रस्तुत किया गया है।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—जायसी की प्रेम भावना पर निबन्ध लिखिए ?

उत्तर—जायसी सूफी मत के साधक थे। सूफी साधना में जीवात्मा और परमात्मा में भेद नहीं माना जाता। जायसी ने अपने काव्य में लौकिक प्रेम के द्वारा अलौकिक प्रेम की व्यंजना की है। उनके काव्य में सूफी प्रेम पद्धति का ही चित्रण हुआ है।

लौकिक प्रेम—पद्मावत का प्रेम लौकिक भाव भूमि पर है। पद्मावत में प्रेमी युगल रत्नसेन और पद्मावती हैं यों तो नागमती भी है। किन्तु उसका प्रेमपरिपुष्ट और ग्राहीस्थि है। वह पति परायण हिन्दू नारी है। जिसके साथ रतनसेन का सम्बन्ध प्रगाढ़ और आदर्श प्रेरित प्रतीत होता है। पद्मावती और रतनसेन के प्रेम में पर्याप्त सरलता और सहजता है। पद्मावती से रतनसेन पूर्वराग दिखाया गया है। उधर पद्मावती की भी रतनसेन के समान ही दशा रहती है। रत्नसेन अनेक बाधाओं के बाद पद्मावती को प्राप्त करता है, परन्तु इधर नागमती विरह व्यथा में डूब जाती है। सिंहलगढ़ से वापस आते समय जहाज को एक राक्षस नष्ट कर देता है। अतः दोनों का बिछोह हो जाता है। अनेक कठिनाइयों के बाद उनका पुर्नमिलन होता है। अलाउद्दीन रत्नसेन को बन्दी बना लेता है उस समय भी पद्मावती विरह उन्मना हो जाती है। गोरा-बादल के बुद्धिकौशल से रत्नसेन मुक्त होता है परन्तु देवपाल से युद्ध में वह वीर गति को प्राप्त होता हैं और दोनों रानियाँ उसके साथ सती हो जाती हैं। इस प्रकार जायसी ने पद्मावत में रत्नसेन और पद्मावती की विरह कथा को केन्द्र बिन्दु बनाकर लौकिक प्रेम का उदान्त चित्रण हैं।

आध्यात्मिक प्रेम—पद्मावत में आलौकिक या आध्यात्मिक प्रेम की व्यंजना बड़ी गहनता से चित्रित हुयी हैं। रतनसेन और पदमावती का प्रेम परमात्मा और जीवात्मा का प्रेम है इसका वर्णन जायसी ने विशदता से किया है। इनके प्रेम में दिव्यता और अलौकिकता भी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। यही कारण है कि उनका प्रेम पर्वत से अधिक उन्नत, स्वर्ग से भी अधिक दिव्य समुद्र से अगाध हैं। उसकी दीप्ति सूर्य और चन्द्र से भी अधिक है।

प्रतीकात्मकता—जायसी की प्रेम भावना की तीसरी विशेषता उसकी प्रतीकात्मक स्थिति हैं जायसी ने अपने प्रेम भाव की व्यंजना के लिए कतिपय प्रतीकों का सहारा भी लिया है। रतनसेन और पद्मावती क्रमशः जीवात्मा और परमात्मा है। सिंहलगढ़ भी परम धाम का प्रतीक है। नागमती माया का अलाउद्दीन खिलजी, राघव चेतन दुष्टता के प्रतीक है।

अनन्यता, वैराग्य एवं त्याग तपस्या—जायसी की प्रेम पद्धति में प्रेम की अन्यता, त्यागएवं तपस्या तथा वैराग्य का पुट है। पद्मावती रत्नसेन को छोड़कर कुछ नहीं चाहती और रतनसेन पद्मावती को छोड़ कर कुछ नहीं चाहता। दोनों एक दूसरे के अनन्य प्रेमी हैं। उसके प्रेम में त्याग भी है और तपस्या व वैराग्य भी है। जायसी प्रेम को योग की नहीं त्याग की वस्तु समझते हैं।

प्रेम में साधना का आधिक्य—जायसी प्रेम को साधना के मार्ग की तरह, दुष्कर एवं दुर्गम मानते थे। वह स्थान-स्थान पर कहते हैं—कहा है कि प्रेमी को प्रेम के लिए त्याग भी देना पड़ता है। प्रेम की साधना ने अनेक कष्ट हैं। यह कष्ट प्रिय प्राप्त के लिए प्रेमी को उठाने पड़ते हैं साथ ही प्रेमी साधक को अनेकों विघ्नों का सामना करना पड़ता हैं। प्रेम के पथ को उन्होंने सूली के समान बतलाया है।

फारसी की मसनवी पद्धति और प्रेम भावना—पद्मावत की प्रेम कथा फारसी पद्धति से प्रभावित है। यही कारण है कि पद्मावत में प्रेमी रतनसेन की आखों से रक्त के आंसू गिरते हैं। नागमती की आंखें भी रक्त और माँस से मिश्रित आँसू गिराती हैं। उसके रुदन से वीर बहूटियाँ रेंगने लगती हैं। परिणामतः समस्त सृष्टि भीग जाती है पलाश लाल हो जाते हैं, बिम्बा फल भी लाल हो जाते हैं और हड्डियाँ किंकरी नसें तांत हो जाती हैं।

(1) 'हाड़ भये सब किंकरी नसें भई सब तांति।'

(2) 'तस रोवै जस जरै जिउगरे रकत ओ मांसु।'

(3) 'रोवत रुहिर बूड़ि तन भीजै।'

उपरोक्त सभी वर्णन फारसी की मसनबी पद्धति के कारण आये हैं। भारतीय पद्धति में ऐसे वर्णन कहीं नहीं मिलते। भारतीय पद्धति की विशेषताएँ कहीं भी नहीं है। भारतीय पद्धति में ऐसे वर्णन व्याज्य माने जाते हैं।

पद्मावत का प्रेम आध्यात्मिक विचारों को प्रकट करने का माध्यम भी है। प्रेम कथा के बीच बीच में संसार की नश्वरता, शरीर की क्षणभंगुरता, साधना की जटिलता तथा ईश्वर प्रेम की सर्वश्रेष्ठता की ओर संकेत किया है। पद्मावत के बीच बीच में प्रेमवर्णन के लौकिक पक्ष से अलौकिक पक्ष की ओर संकेत कर दिया है, अपने काव्य में लौकिक प्रेम वर्णन द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की गम्भीर व्यंजना करना ही जायसी का मुख्य उद्देश्य था।

प्रश्न 2—जायसी का भाव पक्ष नहीं कला पक्ष भी अत्यधिक सशक्त है।" जायसी के कला पक्ष की विशषताओं का विवेचन कीजिए।

उत्तर—जायसी को भावुक हृदय के कारण जो अनुभूतियों का खजाना मिला था। उनकी अभिव्यक्ति को भी वे बड़े कौशल के साथ प्रस्तुत कर सके हैं। यही कारण है कि उनके भावपक्ष की तरह कलापक्ष भी बहुत पुष्ट एव प्रौढ़ है। कलापक्ष में उनकी भाषागत प्रौढ़ता, शैलीगत चारुता अंलकार प्रयोग सम्बन्धी स्वाभाविक और गहरी प्रतीक सृष्टि आदि को व्यक्त कर देता है। जायसी के कलापक्ष का अध्ययन करने के निम्न बिन्दुओं का विवेचन प्रस्तुत है।

भाषा शैली—जायसी ने अपने काव्य में प्रान्तीय भाषा अवधी को स्थान दिया है। चौपाई दोहा आदि के लिए अवधी सर्वाधिक उपयुक्त भाषा मानी जाती है। जायसी की भाषा में सुसंगठितता, सरलता, सुबोध, भाव मयता तथा विविध भावों को व्यक्त करने के गुण विद्यमान हैं। इसमें बोलचाल की भाषा का अधिक पुट है। ग्रामीण व ठेठ शब्दों का भी प्रयोग अधिक मात्रा में किया गया है। कहीं कहीं इनकी भाषा ग्रामीण शब्दों के अधिक प्रयोग के कारण दुरुह भी हो गयी हैं परन्तु कुछ अवगुणों के होने पर इनकी भाषा के गुणों को नकारा नहीं जा सकता। इनकी भाषा में भाव सम्प्रेषण और अभिव्यक्ति की भाषा वहुत अधिक है।

जायसी ने अपने पद्मावत काव्य में फारसी की मसनवी शैली का प्रयोग किया है। इसमें इनकी शैली के मुख्यतः तीन रूप दिखायी देते हैं। (1) संवादात्मक (2) वर्णनात्मक उपदेशात्मक पद्मावती में वर्णनों की प्रचुरता है। साथ ही समासोक्ति अन्योक्ति शैलियों का प्रयोग भी जायसी ने किया है। भाषा शैली की दृष्टि से जायसी का पदमावत अत्यन्त उत्कृष्ट ग्रन्थ है।

शब्द विधान—पद्मावत की भाषा लोक भाषा है। उसमें संस्कृत तत्सम और अर्द्ध तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक मात्रा में मिलता है। विदेशी और देशज शब्दों का प्रयोग भी उन्होंने किया है।

तत्सम शब्द—इन्द्र, इन्द्रासन, मसि, वियोगी, समीर इत्यादि।

तद्भव—इनके काव्य में तद्भव शब्दों का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है।

जैसे—सुआ, आगि, अछन, जीउ, सुलगाई, कंथा, मूरी, विसवासा, इत्यादि।

अर्द्ध तत्सम—कुछ के उदाहरण इस प्रकार है—परबोधन, अगिनि अवगुन, तिस्ना, पिरीत (प्रीति), जातरा (यात्रा) इत्यादि।

देशज—कसनी (चोली), कोउ (कौतुक) खूसट, लेखना इत्यादि।

विदेशी—सिरताज, मुचारक, सिराजी, सुलतान इत्यादि।

लोकोक्तियों तथा मुहावरों का प्रयोग—भाषा को अधिक गम्भीर बनाने के लिए जायसी ने लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग किया है। जिससे भाषा अधिक अर्थपूर्ण बन सकी है। इनके प्रयोग से भाषा में अर्थ गाम्भीर्य तो आता ही है साथ ही उसकी प्रभाव शीलता भी बढ़ जाती हैं कुछ कहावतों और मुहावरों से उदाहरण इस प्रकार है—

कसत कसौटी कंचन काया, हाथ झारि हो चले निराशा फाटेउ दिया इत्यादि।

इसी प्रकार लोकोक्तियों के उदाहरण भी दृष्टव्य है :

'प्रेमधाव दुःख जान व कोई, घर के भेदि लंक अस टूटी पै जो दई' लिखा को मेंटा, निकसे धी उन विना दधि मथे, जस गुरु खाई रहा होई गूँगा, सोंई सिगार कंत जेहि चाहा।

अलंकार योजना—अलंकारों के उचित प्रयोग से जायसी का काव्य अधिक सरस तथा भावमय बन पड़ा है जायसी के काव्य में रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, समासोक्ति रूपकातिश्योक्ति आदि अलंकारों की अनुपम छटा देखी जा सकती है। जायसी के काव्य में सादृश्य मूलक अलंकारों का अधिक प्रयोग हुआ है। जायसी के काव्य अलंकार बोझ के समान नहीं है। वह कृत्रिमता लिए हुए नहीं अपितु अपने स्वाभाविक रूप में है।

पद्मावत का पूरा कथानक रूपक तथा समासोक्ति पर आधारित है। कुछ उदाहरण इस प्रकार है :

उत्प्रेक्षा—सुनतहिं राजा गा मुरझाई। मानो लहरि सुरुजि कै आई॥

रूपक—सुनतहि सूर कँवल हिय जागा।

व्यतिरेक—कासरवरि तेहि देउमंयकू। चाँद कलंकी, वह निकलंकू।

जायसी द्वारा प्रयुक्त अलंकार सहज सुन्दर और भावपूर्ण दिखायो देते हैं। उनमें स्वाभाविकता का गुण विद्यमान है।

छन्द विधान—जायसी ने अपने काव्य दोहा चौपाई छन्दों का प्रयोग किया है। चौपाईयों में मात्राओं का ध्यान रखा गया है। प्रत्येक चौपाई के बाद एक दोहा है। इसी शैली में पूरा काव्य लिखा गया है।

रस-योजना—जायसी के पद्मावत में मुख्यतः श्रृंगार इसका चित्रण किया गया है। श्रृंगार के दोनों पक्षों का चित्रण किया गया है परन्तु संयोग श्रृंगार से अधिक विप्रलम्भ श्रृंगार की प्रधानता है। श्रृंगार के अतिरिक्त अन्य रसों के प्रति जायसी का प्रायः उपेक्षा भाव ही दिखायी देता है।

अन्य रसों को जायसी ने पूर्णतया तिरस्कृत कर दिया है। ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। हाँ अन्य रसों का प्रयोग काव्य में अधिक नहीं हुआ है। उन्होंने रौद्र, करुण, वीर, अद्भुत रसों का प्रयोग किया है, गोरा बादल प्रसंग में उन्होंने वात्सल्य का भी प्रयोग किया है परन्तु रस राजत्व उनके काव्य श्रृंगार को ही प्राप्त है।

अप्रस्तुत विधान—जायसी ने लौकिक और अलौकिक प्रेम का चित्रण करने के लिए अप्रस्तुत विधान की सशक्त अभिव्यंजना की है।

रामचन्द्र शुक्लजी का कथन है कि जायसी की अन्योक्तियों और समासोक्तियों में प्रस्तुत अप्रस्तुत का जैसा सुन्दर समन्वय देखा जाता है। वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। प्रस्तुत अप्रस्तुत के अच्छे समन्वय से काव्य सौन्दर्य में अभिवृद्धि हुई है।

इसके अतिरिक्त जायसी ने जिन प्रतीकों का प्रयोग किया है। भाव गाम्भीर्य की दृष्टि से वे भी अप्रतिम है। उनमें गहरे घाव करने की क्षमता है। भावों के सम्प्रेषण में सहायक है।

निष्कर्षत: जायसी के भाव पक्ष के समान ही कला पक्ष भी भी महत्वपूर्ण है। भाषा शैली, मुहावरे, लोकोक्ति अलंकार छन्द, प्रतीक आदि जायसी के कला पक्ष को निखारने से सहायक सिद्ध हुए है।

प्रश्न 3—जायसी के लौकिक प्रेम में आध्यात्मिक व्यंजना की गयी है। इस कथन की पुष्टि कीजिए।

उत्तर—पद्मावत में ऐसे अनेक स्थल है जहाँ लौकिक प्रसंगों के माध्यम से अलौकिक प्रेम की व्यंजना की गयी है। लौकिक प्रेम के माध्यम से आध्यामिकता की व्यंजना करना ही जायसी का मूल उद्देश्य था। अत: स्थान-स्थान पर उनकी आध्यात्मिकता स्पष्ट भी हुई है।

रूप वर्णन में आध्यात्मिकता—रूप वर्णन में जायसी ने आध्यात्मिकता की अभि-व्यंजना की है। उन्होंने पदमावती को अपार सुन्दरी बताया है। वह ब्रह्म का प्रतीक है। यही कारण है कि जायसी ने यहाँ तक कह दिया है कि रवि, शशि और नक्षत्रों को उसी से सौन्दर्य प्राप्त होता है।

रवि ससि नखत दिपहिं ओहि जोती।

जायसी ने उसके लौकिक रूप में अलौकिक छवि एवं दिव्यता का समावेश किया है। चाहे पद्मावती में मुख, नेत्रों, दन्तावलियों बरौनियों का सौन्दर्य ही क्यों न वर्णित हो। वह अपार्थिव सौन्दर्य की झलक देता है।

प्रकृति वर्णन आध्यात्मिकता—जायसी ने जो पद्मावत में प्रकृति वर्णन किया है। उसके अनेक प्रसंगों में आध्यात्मिक व्यंजनाएँ मिलती है। सृष्टि के अनेक पदार्थ, रूप रस गन्ध आदि जो विकास करते दिखाए गये हैं वे मानों अनन्त सौन्दर्य समागत की अभिलाषा से अभिप्रेरित है।

मान सरोवर वर्णन में आध्यात्मिकता—जायसी ने अपने पद्मावत काव्य में मान-सरोवर आदि का जो वर्णन किया है उसमें भी आध्यात्मिकता का समावेश कराया है। मान सरोवर पर पद्मावती अपनी रूप राशि खुले केशों के साथ आकर सरोवन के जल को को स्पर्श करती है तो मान सरोवर का उल्लसित होकर स्वयं को धन्य समझना भी आध्या-त्मिकता से भरपूर है।

मिलन प्रसंगों में आध्यात्मिकता—जायसी ने रतनसेन और पद्मावती के मिलन प्रसंगों में भी लौकिक से अलौकिक व्यंजनाएँ दी है। पदमावती और रतनसेन के मिलन को उन्होंने आत्मा और परमात्मा का मिलन बताया और कहीं-कहीं इन्होंने इस बात का संकेत भी कर दिया है।

सखियों का वार्तालाप प्रसंग—जायसी ने अपने पद्मावत काव्य में सखियों के वार्तालाप प्रसंग में भी लौकिक से अलौकिक व्यंजनाएँ की है। निम्न पंक्तियाँ उदाहरण स्वरूप दृष्टव्य है—

ऐ रानी ! मनु देखि बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी ॥
जौ लगि अहै पिता करि राजू। खेलितेहु जो खेलहु आजु ॥
पुनि सासुर हम गवनव काली। कित हम कित यह सखर पाली ॥
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलिके खेलव इक साथा ॥

उपरोक्त पंक्तियों में कवि ने संसार की क्षण भंगुरता का संकेत दिया है। साथ ही नैहर और ससुराल को परमात्मा का लोक कहा गया है।

विरह वर्णनों में आध्यात्मिकता—जायसी ने अपने विरह वर्णन में भी आध्यात्मिकता और अलौकिकता को संकेतित किया है। नागमती के विरह में सारी सृष्टि उसके आँसुओं में भीगी दिखाई देती तो पदमावती के वियोग में जंगल के पेड़ भी व्यथित है। प्रेम योगी रतनसेन द्वारा माया मोह आदि का त्यागकर परमात्मा स्वरूप पद्मावती के मिलन के लिये योगी बनकर अनेक कठिनाइयों को सहन करना भी आध्यात्मिक ही है।

इसी प्रकार जायसी ने कई लौकिक प्रसंगों को अलौकिकता का मोड़ दिया है।

'पिउ हिरदय मँह भेंट न होई' पंक्ति में रतनसेन के सन्दर्भ में तो अर्थ स्पष्ट है। तो साथ आध्यात्मिक अर्थ में भी स्पष्ट है कि भगवान हृदय में निवास करता है परन्तु उसे साक्षात्कार नहीं हो पाता है।

इसी प्रकार अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। जहाँ लौकिक प्रसंगों में आध्यात्मिकता की अभिव्यंजना हुई है।

प्रश्न 4—जायसी के रहस्यवाद पर एक निबन्ध लिखिए।

उत्तर—जायसी सूफी सन्त थे। सूफी शब्द इस्लाम में रहस्यवादा का पर्यायवाची माना जाता है। अत: जायसी की रचनाओं में रहस्यवाद की सहज, सरल और मार्मिक अभिव्यक्ति पायी जाती है। जायसी का पद्मावत रहस्यवादी काव्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। उन्होंने पद्मावत काव्य के नायक-नायिका रतनसेन और पद्मावती के माध्यम से रहस्य वाद की सर्जना की है जायसी विशिष्ट द्वैत और भारतीय दर्शन के अद्वैतवादी मतों से प्रभावित थे। इसी कारण उनके काव्य में रहस्यवादी भावों का प्रकाशन बड़ी सहजता और कुशलता से हुआ है। रतनसेन की आत्मा अर्थात् जीवात्मा और पद्मावती उनके काव्य में परमात्मा का स्वरूप हैं। इन दोनों के लौकिक प्रेम को जायसी ने अलौकिक भाव भूमि पर प्रस्तुत किया है। परिणामत: रहस्यात्मकता स्वत: ही आ गयी है। जायसी के काव्य में मुख्यत: दो प्रकार का रहस्यवाद है—भावनात्मक और साधनात्मक। परन्तु अधिकांशत: रहस्यवाद का भावात्मक रूप ही अधिक मिलता है।

इनके रहस्यवाद की विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) जायसी ने सम्पूर्ण संसार को ब्रह्ममय बताया है उन्होंने प्रेम द्वारा ईश्वर से अद्वैतता प्राप्त की है।

(2) जायसी के रहस्यवाद में रहस्यवाद के प्राय: सभी अंगों का विधान हुआ है। वे अद्वैतवादियों की भाँति एक ही सत्ता को सारे विश्व में व्याप्त मानते हैं। उनकी दृष्टि में सम्पूर्ण जगत उसी का प्रसार है।

(3) जायसी ने परमात्मा को एक ऐसी ज्योति माना है जिससे सभी ज्योतियों की उत्पत्ति हुई है।

(4) जायसी ने अपनी रहस्यवादी भावना को व्यक्त करने में प्रतीकों और बिम्बों की सहायता ली है। सारे जगत में उन्हें ब्रह्म का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। इसी कारण प्रकृति के कण-कण में ब्रह्म की झलक देखते हैं। उन्होंने सम्पूर्ण जगत को ब्रह्म का प्रतिबिम्ब बतलाया है—

"रवि ससि नखत दिपहिं ओहि जोति। रतन पदारथ मानिक मोती॥"

वह प्रकृति को ब्रह्ममय देखते हैं—

नयन जो देखा कँवल भा, निरमल नीर समीर।
हँसत जो देखा हँसभा, दसन जोति नगहीर॥

(5) जायसी के रहस्यवाद में गुरु की महत्ता भी स्पष्ट दिखायी देती है। हीरामन तोता गुरु के रूप में है जो जीवात्मा अर्थात् रतनसेन को पद्मावती अर्थात् ब्रह्म तक जाने का मार्ग बताता है। जायसी ने कहीं-कहीं पद्मावती को गुरु के रूप में प्रस्तुत किया है। जहाँ पद्मावती को गुरु रूप में प्रस्तुत किया है वहाँ उन्होंने परमात्मा और गुरु को एकाकार कर दिया है।

(6) जायसी के रहस्यवाद में प्रेम की पीर को महत्वपूर्ण स्थान देने के कारण रहस्यवाद अधिक भावनामय हो गया है। जायसी ने मिलन के सुख में और वियोग के दुख में प्रकृति का उल्लास और विषाद दिखाया है। जायसी ने पद्मावती और रतनसेन दोनों को विरहाकुल दिखाया है जिसका अभिप्राय है कि जीव और ब्रह्म एक ही थे, मिले हुए थे, न मालूम कैसे अलग हो गये। अतः जीव इसी कारण परमात्मा से पुर्नमिलन की इच्छा करता है।

इन दोनों का वियोग सारी सृष्टि वहन करती है ईश्वर के वियोग की अनुभूति से ही सूर्य बसन्त, पृथ्वी, पक्षी और समस्त वनस्पति पीड़ित है।

(7) जायसी के रहस्यवाद में साधनात्मक रहस्यवाद का रूप प्रेम के मार्ग में आने वाली बाधाओं के प्रति संघर्ष करने में मिलता है। हीरामन तोता राजा रतनसेन अर्थात् जीवात्मा से कहता है कि ब्रह्म की प्राप्ति कठिन तपस्या से ही हो सकती है। उसके लिए तुम्हें अपने सभी सुख वैभव का त्याग करना होगा। रतनसेन एक साधक के रूप में ब्रह्म रूपी पद्मावती को पाने के लिए अनेक बाधाओं को पार करता है। बिना साधना के वहाँ तक पहुँच पाना असम्भव है।

"साधन्ह सिद्धि न पाइए, जौ लगि सधै न ताप।"

जायसी के रहस्यवाद में प्रकृति के विविध रूपों में परोक्ष सत्ता के आभास को देखा जा सकता है। उनका रहस्यवाद अद्वैतवाद की भाव भूमि पर ही आधारित है। उनके काव्य में कहीं-कहीं कठिन साधनात्मक रहस्यवाद के भी दर्शन होते हैं। कहीं-कहीं जायसी विशुद्ध रहस्यवादी हो गये हैं। जहाँ पूरे रहस्यवादी हो गये हैं। वहाँ उनकी कविता में स्पष्ट रहस्यवाद की झलक मिलती है। उदाहरण के लिए—

तू राजा का पहिरसि कंथा। तो रे धरहिं मांझ दस पंथा।
काम क्रोध तिस्नामद माया। पाँचो चोर न छाँडहि काया।

इसी प्रकार

नव पौरी पर दसवं दुआरू। तेहि पर बाजि राजि धरियारु।

इसमें शरीर के नौ द्वारों के बाद दसवें द्वार का उल्लेख भी जायसी ने किया है। वह दशम द्वार ब्रह्म रन्ध्र है।

इसी प्रकार स्थान-स्थान पर जायसी के काव्य रहस्यवाद की स्पष्ट झलक देखने को मिलती है अतः उन्हें रहस्यवादी कवि कहने में किसी प्रकार के सन्देह एवं संकोच की आवश्यकता नहीं है।

प्रश्न 5—जायसी के काव्य में भाव-पक्ष की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—हिन्दी साहित्य के भक्ति में प्रेमाश्रयी धारा के प्रमुख और प्रतिनिधि कवि के रूप में जायसी की महत्ता सर्वोपरि है। मानवीय तत्वों एवं भावों का सहज समावेश जैसा जायसी के काव्य में दिखायी देता है। वैसा अन्यत्र कहीं दिखायी नहीं देता। उनका काव्य शृंगार और भक्ति रस से आप्लावित है। विरह अश्रु धारा से सिक्त भी है। सौन्दर्य

निरूपण, लोक पक्ष का निरूपण का समन्वित रूप जैसा इस काव्य में मिलता है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। जायसी की काव्य साधना बहुत उदात्त एवं उत्कृष्ट है। जायसी की काव्य गत विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट किया जा सकता है—

भाव निरूपण—भाव निरूपण की दृष्टि से पद्मावत काव्य अत्यन्त आकर्षक काव्य है, इसमें जिन भावों की व्यंजना हुई उनमें प्रेमभाव और उससे जुड़ा हुआ विरह वेदना का भाव प्रमुख है। पद्मावत काव्य प्रेम काव्य होने के कारण भावुकता एवं रसात्मकता से युक्त है। जायसी के भाव निरूपण में गर्व, हर्ष, ईर्ष्या, असूया, क्रोध, औत्सुक्य, शोक आवेश, घृणा, धैर्य आदि भावों का मार्मिकता से वर्णन हुआ है गर्व क्रोध औत्सुक्य आदि भावों की व्यंजना में तो जायसी ने विशेष सफलता प्राप्त की है। क्रोध, शोक, आवेश आदि का वर्णन नागमती के द्वारा किया गया है। औत्सुक्य की व्यंजना उस समय की गयी है जब राजा रतनसेन तोते के मुख से पद्मावती का नाम सुनता है।

प्रेमानुभूति—जायसी के काव्य का प्रमुख विषय प्रेम और सौन्दर्य है। जायसी का प्रेमादर्श सूफी प्रेम भावना के अनुरूप है। सूफियों के अनुसार ईश्वर परम सौन्दर्यमय है। इसी कारण प्रेम का उचित पात्र भी वही है। पदमावत में लौकिक दृष्टि से राजा रतनसेन और पद्मावती के प्रेम का चित्रण हुआ है। इसमें उन्होंने स्पष्ट किया है कि लौकिक प्रेम पथ अत्यन्त कठिन, कष्टदायी एवं विघ्नों से परिपूर्ण है परन्तु साधक प्रेमी परम आस्था एवं विश्वास रखने वाला सफलता अवश्य प्राप्त करता है।

जायसी ने सम्पूर्ण पद्मावत में प्रेमकथा का तात्विक निरूपण हुआ है। उन्होंने इसमें लौकिक प्रेम की उत्कर्षता के सभी पक्षों का सर्वाङ्ग निरुपण हुआ है।

विरहानुभूति—पद्मावत में विरह की तीव्रता दिखाई देती है। उनके अनुसार जीव सदा ही ब्रह्म की प्राप्ति के लिए उत्सुक रहता है। परन्तु ब्रह्म से उसका समागम लम्बे समय के बाद होता है इसी कारण जीव को विरह भोगना पड़ता है। प्रियतम के विरह में प्रिया को महाविरह भोगना पड़ता है। जायसी ने पद्मावत नागमती और पद्मावती दोनों के विरह का मार्मिक चित्रण किया है। जायसी ने नागमती का बारहमासा विरह का वर्णन जो किया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। जायसी ने प्रकृति को विरह व्यथा में सहभागिनी देखा है। इसके लिए उन्होंने प्रकृति को कभी आलम्बन के रूप में और कभी उद्दीपन के रूप में अपनाया है।

गुरू की महिमा का वर्णन—जायसी सन्त साहित्य के धार्मिक मान्यताओं के अनुसार काव्य रचना की, उसमें लौकिक एवं अलौकिक प्रेम केन्द्र बिन्दु है। शिष्य गुरू की कृपा से उस प्रेम ज्योति से साक्षात्कार करता है। गुरू ही शिष्य के भी प्रेम की चिंगारी जागृत करता है फिर शिष्य गुरू की कृपा से उसका विस्तार करता है।

"गुरु विरह चिनगी जो मेला।
जो सुलगाइ लेइ सो चेला॥"

रहस्यवादी भावना—जायसी के काव्य में सूफी साधना के अनुसार भावात्मक रहस्यवाद का विखरा हुआ रूप देखने को मिलता है। जायसी ने रतनसेन का जीवात्मा और पदमावती को ब्रह्म का स्वरूप माना है। उन्होंने रतनसेन को आत्मा और पदमावती को परमात्मा के रूप में चित्रित किया हैं कि जगत के नाना रूपों में परमात्मा प्रियतम के रूप माधुर्य की छाया देखने को मिलती है। सारे प्राकृतिक पदार्थ परमात्मा का समागम चाहते हैं। इस कारण सारी प्रकृति उसी परम सत्ता की ज्योति से जगमगाती रहती है। जायसी के काव्य में लौकिक प्रेम पर अलौकिक प्रेम की छाप है। उन्होंने विभिन्न रमणीय

रूपों दृश्य एवं रूपकों के द्वारा परमात्मा रूपी प्रियतमा से मिलने की उत्सुकता का भावपूर्ण चित्रण किया है। जायसी का काव्य उनकी रहस्यानुभूति के कारण अत्यन्त समृद्ध है।

जायसी एक ओर इस्लाम की आस्थाओं एवं मान्यताओं से जुडे थे तो दूसरी ओर द्वैत एवं विशिष्ट द्वैत से प्रभावित थे। इनके काव्य सांस्कृतिक समन्वय भी दिखायी देता है।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि जायसी का भाव पक्ष अत्यन्त पुष्ट एवं प्रशस्य है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—कबीर एवं जायसी के रहस्यवाद में क्या अन्तर है ?

उत्तर—कबीर का रहस्यवाद साधनात्मक है तथा वह भारतीय योग मार्ग से प्रभावित है। उसमें यत्र तत्र भावनात्मक रहस्यवाद का पुट प्राप्त हो जाता है। जायसी का रहस्यवाद भावनात्मक है तथा वह सूफी मत से उद्‌भूत है। भारतीय योग मार्ग से प्रभावित साधनात्मक रहस्यवाद का पुट उसमें यन्त्र-तन्त्र दृष्टिगोचर होता है।

कबीर अपने ईश्वर को अत: करण में ही छिपा हुआ मानते हैं। कबीर के इस मत पर सिद्धों एवं योगियों का प्रभाव है। वह कहता है—मो को कहाँ ढूढ़ूँ बन्दे मैं तो तेरे पास में।' पर जायसी अपने ईश्वर की सत्ता प्रकृति के नाना रूपों में देखते हैं। आकाश के तारे, झरने, पुष्प आदि सभी में वह ईश्वर की सत्ता के दर्शन करते हैं। उनकी मान्यता है कि गोचर विश्व में जो कुछ भी सुन्दर दृष्टिगोचर होता है। वह सब उसी का प्रतिबिम्ब है।

नयन जो देखा कंवलभा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हँस भा, दसन ज्योति नगहीर ॥

इसके साथ ही वह दूसरी ओर ईश्वर की उपस्थिति अन्त: करण में भी स्वीकार करते हुए कहते हैं—

पिउ हिरदय मेंट मेंह न होई।
कोरे मिलाप: कहौ केहि रोई ॥

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कबीर के रहस्यवाद में साधना पक्ष प्रधान है; जबकि जायसी के रहस्यवाद में भावना पक्ष।

प्रश्न 2—पद्‌मावत की रचना का उद्देश्य क्या है ?

उत्तर—महाकवि जायसी ने स्वयं अपनी रचना पद्‌मावत को अन्योक्ति बताया है। पद्‌मावत एक प्रेम काव्य है जिसमें कवि ने लौकिक प्रेम पथ के त्याग, कष्ट सहिष्णुता तथा विघ्न वाधाओं का चित्रण करके भगवत प्रेम की उस साधना का वर्णन किया है जिसके माध्मम से मनुष्य की वृत्तियाँ विश्व का रंजन करने व ली परमवृत्ति मे लीन हो जाती हैं।

प्रश्न 3—निर्गुण धारा के प्रेमाश्रयी शाखा के सूफी सन्त कवियों की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए बताइए कि जायसी के काव्य में वह विशेषताएं मिलती हैं या नहीं।

उत्तर—हिन्दी साहित्य का भक्ति काल दो भागों में विभाजित है।

(1) निर्गुण धारा।
(2) सगुण धारा के रूप में

निर्गुण काव्य धारा को भी दो भागों में बाँटा गया है।

(1) ज्ञानाश्रयी धारा (2) प्रेमाश्रयी धारा

ज्ञानाश्रयी शाखा के काव्य को कबीर, दादू, नानक आदि ने पल्लवित पुष्पित किया। प्रेमाश्रयी शाखा में सूफी कवि मुल्ला दाऊद, जायसी, कुतुबन इत्यादि आते हैं। हिन्दी के भक्ति काल की प्रेमाश्रयी शाखा के महाकवियों से जायसी का नाम आदर के साथ लिया जाता है। इनका महाकाव्य पद्मावत उत्कृष्ट महाकाव्यों में से एक है। इस काव्य में सम्पूर्ण दर्शन प्रेम पर टिका है। ये मुसलमान होते हुए भी अति उदार मानवतावादी और श्रृंगार प्रिय कवि थे। निर्गुण सन्त कवियों और सूफी कवियों के दर्शन में यही अन्तर था कि ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि आत्मा को पत्नी और परमात्मा को प्रियतम के रूप में देखते थे। परन्तु सूफी सन्त आत्मा और पति और परमात्मा को प्रियतमा के रूप में देखते थे। जायसी ने भी जीवात्मा (रतन सेन) को प्रियतम और पद्मावती (ब्रह्म) को प्रियतमा माना है। सूफी कवियों के काव्य में मुख्य रूप से जो विशेषताएँ मिलती है वे सभी जायसी के पद्मावत में विद्यमान है। परमात्मा की राह बताने वाले गुरु को बिशेष स्थान इन्होंने अपने काव्य में दिया है। सूफी सन्तों ने अपने काव्य में ठेठ अवधी का प्रयोग किया है। जायसी ने भी अवधी को ही अपने काव्य का आधार बनाया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूफी सन्तों के काव्य में मुख्यतः जो भी विशेषताएँ पायी जाती है। वह सभी जायसी के काव्य में भी पायी जातीं हैं। प्रेमाश्रयी धारा के कवियों में जायसी का अन्यतम स्थान है वह इस धारा के नायक कहे जा सकते हैं।

प्रश्न 4—अद्वैतवाद से क्या अभिप्राय है ?

उत्तर—अद्वैत का अर्थ है अभेद। जीव और ब्रह्म की एकता ही अद्वैत है। प्राचीन मनीषियों ने तत्व चिन्तन के द्वारा इसे प्राप्त किया था। अद्वैतवाद के दो पक्ष है आत्मा और परमात्मा की एकता और परमात्मा व प्रकृति या जगत की एकता। आत्मा और परमात्मा की एकता साधना का विषय है। इसमें प्रकृति के कण कण में ब्रह्म की ज्योति दिखाई देती है। आत्मा परमात्मा की एकता इन दोनों के मेल को ही अद्वैतवाद कहते हैं।

प्रश्न 5—जायसी की प्रेम भावना पर संक्षिप्त में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर—जायसी मुख्यतः प्रेम और सौन्दर्य के कवि हैं उनकी भावना में भारतीय और फारसी दोनों ही पद्धतियों का का समावेश है। तभी तो उसमें लौकिक से आलौकिक व्यंजना देखने को मिलती है। उनका प्रेम में अतिश्योक्तिपूर्ण भले ही हो किन्तु उसमें ऐसी विश्वनीयता और गरिमा है, जो अन्य प्रेम काव्यों में नहीं मिलती। जायसी के प्रेम भाव की अकथ्य स्थिति बड़ी महत्वपूर्ण है। जायसी ने प्रेम को अकथ्य बतलाया है।

अतिलघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—"सखिन्ह बुझाई दगध अपारा। गइ गोरा बादल के बारा।"

प्रस्तुत अवतरण के आधार पर बताइए पदमावती गोरा बादल के पास क्यों गयी थी ?

उत्तर—रानी पदमावती रतन सिंह को अलाउद्दीन खिजली की कैद से छुड़ा लाने की प्रार्थना करने गोरा बादल के यहाँ गयी थी।

प्रश्न 2—सुनतहिं राजा गा मुरझाई।

उपरोक्त पंक्ति के अनुसार राजा मूर्छित क्यों हो गया था ?

उत्तर—हीरामन तोते से राजकुमारी पद्मावती के सौन्दर्य का वर्णन सुनकर, राजकुमारी के प्रति पूर्वराग उत्पन्न हो जाने के कारण विरह से व्यथित होकर राजा मूर्छित हो गया था।

प्रश्न 3—'बन्धु मीत बहुतै समझावा'।

उपरोक्त पंक्ति के अनुसार बन्धु और मित्रों ने किसे और क्या समझाया ?

उत्तर—बंधु मित्रों ने राजा को समझाया। क्योंकि राजा राजकुमारी पद्मावती के प्रेम में राज सुखों को त्याग कर योगी बनकर उनको प्राप्त करने के लिए जाना चाहता था।

प्रश्न 4—"तुम राजा चाहहु सुख पाता। भोगहिं जोग करत नहीं भावा।"

उपरोक्त पंक्ति में हीरामन तोता राजा से यह बात क्योंकि कहता है ?

उत्तर—हीरामन तोता राजा से योग के मार्ग को न अपनाने के लिए इसलिए कहता है ? कि राजा रतन सेन राजा है उन्होंने जन्म से ही भोग, विलासमय जीवन व्यतीत किया है। ऐसे सुख वैभव में रहने वाला व्यक्ति योग के कठिन मार्ग पर कैसे चल सकता है।

प्रश्न 5—रानी पदमावती को योगी बनकर ही प्राप्त किया जा सकता है ? ऐसा हीरामन तोते ने क्यों कहा ?

उत्तर—जायसी ने पद्मावती को ब्रह्म का प्रतीक माना है अतः सारा माया मोह छोड़कर ही ब्रह्म को प्राप्त किया जा सकता है।

लौकिक अर्थ में तोता इसलिए राजा को योगी बनने को कहता है कि सैन्य बल से तो सिंहल द्वीप के राजा को जीतकर पद्मावती को प्राप्त करना असंभव था, किन्तु योगी बन जाने पर सिंहल द्वीप में प्रवेश संभव सा। अतः पद्मावती को प्राप्त करने को सफल होने के लिए वह राजा को ऐसी सलाह देता है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—पद्मावत में पद्मावती किसका प्रतीक है—

(क) माया का (ख) आत्मा का
(ग) परमात्मा का (घ) जगत का

प्रश्न 2—जायसी की भाषा है—

(क) ब्रज (ख) खड़ी बोली
(ग) सधुक्कड़ी (घ) अवधी
(च) फारसी

प्रश्न 3—पद्माबत किस प्रकार का ग्रन्थ है ?

(क) खण्ड काव्य (ख) प्रबन्ध काव्य
(ग) महाकाव्य (घ) प्रेम काव्य
(च) गीति काव्य

प्रश्न 4—'चरन कमल मुइंजन मन धरे। जात तहाँ लगि छाला परे।।

उपरोक्त पंक्ति में थोड़ा चलने पर पैरों में छाले पड़ जाना वाक्य से पदमावती विषय क्या आभस्ति होता है।

(क) पद्मावती कभी चली नहीं थी
(ख) पद्मावती के अंग अत्यन्त कोमल थे।

प्रश्न 5—'हौ तो अहा अमरपुर जहां पक्ति में अमरपुर शब्द किसका वाचक है।

(क) किसी गाँव का (ख) किसी नगर

(ग) किसी देश का (घ) स्वर्ग का
(च) किसी राज्य का

उत्तरमाला

(1) ग (2) घ (3) घ (4) ख (5) घ ।

अध्याय 3
तुलसीदास

व्याख्यात्मक प्रश्न

1. प्राननाथ प्रिय..............................गंवाई ।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित यह वाक्यांश तुलसी दास की रामचरित मानस के अयोध्या काण्ड के केवट प्रसंग से उद्धृत है। सीता वनगमन से पूर्व मंत्री सुमंत्र को समझा बुझाकर वापस भेज रही हैं उसी प्रसंग का वर्णन यहाँ किया गया है।

व्याख्या—सीता मंत्री सुमत्र से कहती है कि मुझे वनवास में जरा भी कष्ट नहीं हो रहा है क्योंकि प्राणनाथ श्रीराम और प्रिय देवर लक्ष्मण मेरे साथ हैं। वे अत्यन्त वीर तथा पराक्रमियों में अग्रणी है और धनुष धारण किये हुए हैं। अर्थात् वन में इन लोगों के होते हुए मुझे कोई भय नहीं है। अर्थात् ये दोनों मेरी रक्षा करने में समर्थ हैं। यहाँ मार्ग में पैदल चलने से न तो मुझे कोई कष्ट होता है, न कोई श्रम है। नहीं मुझे किसी प्रकार का कोई दुःख है। मुझे तो भविष्य की चिन्ता है अर्थात् हम लोगों के बिना अयोध्यावासी और परिवारी जन किस प्रकार रहेंगे। सीता के इस तरह के सुकोमल वचन सुनकर सुमंत्र इस तरह व्याकुल हो गये जिस प्रकार मणिधर सर्प की मणि खो जाने पर वह व्याकुल हो जाता है। उस समय अत्यधिक विकल होने के कारण न सुनाई दे रहा है और नहीं आँखों से कुछ दिखाई दे रहा है।

राम ने बहुत यत्न से उन्हें समझाया बुझाया किन्तु फिर भी उनके हृदय को शीतलता प्राप्त नहीं हुयी। उन्होंने राम, लक्ष्मण व सीता को वापस ले जाने के अत्यन्त प्रयत्न किए किन्तु राम ने अवसरानुकूल उचित उत्तर देकर उन्हें चुप कर दिया। राम की आज्ञा उनसे टाली नहीं जाती। कर्म की गति कठिन होने के कारण मनुष्य का उन पर कोई वश नहीं चलता। अत. सुमंत्र विवश होकर राम लक्ष्मण और सीता को आदर सहित अभिवादन करके लौट पड़े उस समय उनकी दशा ठीक उसी प्रकार हो रही थी जिस प्रकार कि उस बनिए की होती है जो धन कमाने के उद्देश्य से परदेश जाता है और अपनी मूल सम्पति को भी गवाकर वापस लौट आता है।

विशेष—तीसरी पंक्ति में उपमा और अन्तिम पंक्ति में उत्प्रेक्षा है। राम लक्ष्मण सीता के वनगमन के समय सुमंत्र की व्याकुलता का वर्णन बहुत ही स्वाभाविक रूप से हुआ है।

2. जासु वियोग..............................कहहू ।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—(सन्दर्भ पूर्व सन्दर्भानुसार)

श्रीराम ने सुमन्त्र को समझा बुझाकर विदा किया। तदुपरान्त लक्ष्मण और सीता सहित गंगा तट पर आये और केवट से गंगा पार पहुँचाने का विनम्र निवेदन किया। उस समय केवट और राम ने परस्पर जो संवाद हुए उसी का वर्णन इस अवतरण में है।

व्याख्या—जब राम ने सुमंत्र को वापस जाने के लिए कहा तो सुमंत्र बोले जिसके वियोग में पशु भी विकल हो रहे हैं उनके बिना माता पिता और प्रजाजन कैसे जियेंगे। राम ने उन्हें बलपूर्वक रवाना किया। उन्हें वापस लौटाकर राम गंगा के किनारे आये और गंगा से पार उतरने के लिए राम ने नौका मँगवाई तो केवट नौका लेकर नहीं आया वह कहने लगा कि मैं आपके मर्म को जानता हूँ। सारा जग यह जानता है कि आपके चरण कमल की धूल में कोई जादू है जिसके अन्दर स्पर्श से मनुष्य बनाने का रहस्य छिपा है अर्थात् आपकी चरण धूलि के स्पर्श से कोई भी साधारण वस्तु मनुष्य रूप धारण करलेती है। जब आपके चरणों की धूलि के स्पर्श से पत्थर की शिला स्त्री बन गयी, तो मेरी यह नाव तो साधारण लकड़ी है। अर्थात् यह तो पत्थर जैसी कठोर भी नहीं है। गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या की तरह इसका भी उद्धार हो जायेगा। यदि मेरी नाव रास्ता चलते समय नारी रूप में बदल गयी तो मेरी स्थिति अत्यन्त खराब हो जाएगी। मैं अपने परिवार का भरण पोषण किस प्रकार करूँगा। क्योंकि मैं तो और कोई काम भी नहीं जानता। अतः हे प्रभु यदि आप पार उतरना चाहते हैं तो पहले मुझे अपने चरण कमलों को धोने की आज्ञा प्रदान करें।

विशेष—उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, अनुप्रास अंलकारों का वर्णन है। केवट की भक्ति भावना की अभिव्यक्ति मार्मिक रूप से हुयी है।

3. उतरि ठाड़ भये..............................धरि लेवा।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—(सन्दर्भ पहली व्याख्या के अनुसार)

केवट प्रसंग से उद्धृत इस अवतरण में केवट की भक्ति भावना का वर्णन किया गया है।

व्याख्या—जब राम, लक्ष्मण, सीता केवट की नाव से उतरकर गंगा के रेत पर खड़े हुए तब केवट ने उन्हें दण्डवत प्रणाम किया। उस समय राम को तनिक संकोच हुआ कि वह इस समय केवट को नाव उतराई का किराया देने में असमर्थ हैं क्योंकि उनके पास कोई मुद्रा नहीं थी। वह केवट को कुछ देना चाहते थे परन्तु उनके पास कुछ था नहीं इसी कारण उन्हें संकोच हो रहा था। तब सीता ने अपने स्वामी के हृदय की बात समझकर अपनी अंगुली से मणि निर्मित अंगूठी उतारी और राम को दे दी। तब राम केवट को सम्बोधित करते हुए बोले कि, हे केवट लो अपनी नाव उतराई के पुरस्कार रूप में इसे ग्रहण करो। तब केवट ने व्याकुलता से राम के चरण पकड़ लिए और अत्यन्त द्रवित स्वर में बोला हे नाथ ! आज हमने सब कुछ प्राप्त कर लिया है और आज हमारी दुःख दारिद्र सम्बन्धी पीड़ाएँ समाप्त हो गयी हैं। बहुत समय से मैं मजदूरी लेता आ रहा हूँ परन्तु आज विधाता ने मुझे सबसे उत्तम और पूर्ण मजदूरी दी है अर्थात् आपको नाव में बैठाकर गंगा पार उतारने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है, इससे मेरा उद्धार हो गया।

हे प्रभु ! मुझे अब और कुछ नहीं चाहिए आपकी कृपा ही मेरे लिए सब कुछ है। जब आप बनवास की अवधि पूर्ण होने पर लौटकर आयेंगे तो आप जो कुछ भी देंगे उसको मैं आपकी कृपा मानकर स्वीकार कर लूँगा परन्तु इस समय मजूरी के रूप में मुझे कुछ नहीं चाहिए।

विशेष—केवट की भक्ति भावना का वर्णन मार्मिकता के साथ हुआ है। मनि मुँदरी·········में अनुप्रास अलंकार है।

अवधी भाषा का सरस सुन्दर प्रयोग है।

'चित्रकूट में राम'

4. "जगु·································नाचा।"

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण 'रामचरित मानस' से संकलित 'चित्रकूट में राम' शीर्षक से उद्धृत है।

सीता और लक्ष्मण के राम चित्रकूट में पहुँचे। वहाँ ऋषि मुनियों ने उनका सत्कार किया। साथ ही बाल्मीकि आदि मुनियों ने श्रीराम की ईश्वरीय अवतार के रूप में वन्दना की। इस अवतरण में महर्षि बाल्मीकि द्वारा राम के ब्रह्ममय, रहस्यमय रूप की चर्चा की गयी है।

व्याख्या—बाल्मीकि राम की महिमा का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि, हे राम ! ये संसार एक खिलौने और तमाशे की तरह है और तुमने इस तमाशे को देखने और खेलने के लिए यह मानव शरीर धारण किया है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों देवताओं को तुम अपने संकेतों पर नचाते हैं। ये तीनों देवता भी तुम्हारे रहस्य को नहीं जानते। जब यह तीनों देवता ही तुम्हारी माया को नहीं जान पाते तो और कोई तुम्हें कैसे जान सकता है। आपके परमात्म तत्व तथा दिव्य रूप को वही जान सकता है जिसे आप स्वयं इस योग्य बनाते हैं। जो कोई तुम्हें जान लेता है वह तुम्हारा ही होकर रह जाता है भाव यह है कि जिसे तुम्हारे दिव्यांश का पूर्ण ज्ञान हो जाता है वह परमात्मा तक में विलीन हो जाता है और मोक्ष की प्राप्ति कर लेता है।

महर्षि वाल्मीकि कहते हैं कि हे कृपा सिन्धु और कृपा के सागर हो, रघुकुल के आनन्दवर्धक हो आप अपने भक्तों को भली प्रकार जानते हो और भक्तों के हृदय में चन्दन के समान शोभायमान रहते हो अर्थात् हे राम तुम्हारे भक्त जिन पर तुम्हारी कृपा हो जाती है वह तुम्हारी भक्तिरूपी चन्दन से सदा सुवासित रहते हैं। आपका शरीर चिदानन्दमय है आप समस्त विकारों से रहित हैं अर्थात् आपकी देह प्रकृतिजन्य पंच महाभूतों की बनी हुयी कर्म बन्धनयुक्त, विदेह विशिष्ट मात्रिक नहीं है और उत्पत्ति नाश, वृद्धि क्षय आदि सब विकारों से रहित है। आपके इस रहस्य को ज्ञानवान पुरुष ही जानते हैं। आपने देवता और सन्तों की रक्षा करने के लिए नर शरीर धारण किया है। यह कार्य आप (प्रकृति तत्वों से निर्मित देह वाले) साधारण राजाओं की तरह से कहते और करते हैं।

हे राम ! आपके चरित्रों को देखकर और सुनकर मूर्ख लोग तो मोह को प्राप्त होते हैं और ज्ञानीजन सुखी होते हैं। आप जो कुछ कहते, करते हैं वह सब सत्य अर्थात उचित ही है क्योंकि जो जैसा स्वांग भरे वैसा उसे नाचना भी चाहिए अर्थात् इस समय आप मनुष्य रूप में हैं अतः मनुष्योचित व्यवहार करना भी ठीक है।

विशेष—उपरोक्त अवतरण में ऋषियों द्वारा राम के सत्कार में ये मृदुवचन कहे गये हैं।

इसमें तुलसी की अद्वैतवादी भावना व्यक्त हुयी है।

अनुप्रास 'यमक' अलंकार का प्रयोग है।

5. काम क्रोध·································गिरिवरहू।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

जब सीता, राम, लक्ष्मण सहित राम चित्रकूट में पहुँचकर मुनियों से अपने निवास स्थान के बारे में पूछने लगे तो बाल्मीकि ने चित्रकूट को ही उचित बतलाया।

व्याख्या—बाल्मीकि ने अपनी बात को जारी रखते हुए राम से कहा कि हे रघुकुल तिलक जिनके मन में काम, क्रोध, मद, अभिमान और मोह नहीं है और न ही लोभ, मोह, क्षोभ, राग द्वेष, कपट और दम्भ तथा माया है आप हृदय में निवास कीजिए अर्थात् जिनका आचरण पवित्र और निर्मल है आप उनके हृदय में निवास करें। यहाँ चित्रकूट में पवित्र नदी है जिसकी पुराणों ने प्रशंसा की है और जिसे अत्रि ऋषि की पत्नी अनसूया जी अपने तपोबल से लायी हैं। वह गंगा की ही धारा है जिसका नाम मन्दाकिनी है। वह पाप रूपी बालकों को खा जाने वाली डाकिनी है। अत्रि आदि बहुत से श्रेष्ठ मुनि यहाँ निवास करते हैं, जो योग, जप, तप करते हुए अपने शरीर को कसते हैं। हे राम आप यहाँ चित्रकूट में मुनियों के आश्रम में चलिए और सभी के परिश्रम को अपने दर्शनों से सफल बनाइए और पर्वतश्रेष्ठ चित्रकूट को गौरव प्रदान कीजिए।

विशेष—पाप निवारिणी मन्दाकिनी के लिए डाकिनी उपमान उचित है। पालक-पोषक में रूपक अलंकार है। चित्रकूट की महिमा का वर्णन करने के लिए वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया गया है।

विनय पत्रिका

6. सुन मन मूढ़..............................चेरो।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण तुलसीदास जी द्वारा रचित 'विनय पत्रिका' संकलित अंश द्वारा अवतरित है।

विनय पत्रिका नाम के अनुसार ही विनय की पाती है इसमें तुलसीदास भक्ति-भावना, जो दास्य भाव पर आधारित है, का पूर्ण परिचय मिल जाता है। प्रस्तुत पद भी तुलसी की भक्तिभावना का परिचायक है।

व्याख्या—तुलसीदास जी अपने मन को समझाते हुए कहते हैं कि हे मूर्ख मन तू मेरी शिक्षा को मानले और जैसा मैं कहता हूँ उसे ध्यान से सुन। भगवान के चरणों से विमुख होकर कभी किसी ने सुख प्राप्त नहीं किया। अरे मूर्ख भगवान भक्ति तो प्रातःकाल के समान है अर्थात् भगवान की भक्ति वह सवेरा है जिसके उदित होने पर दुःख, दारिद्र व अज्ञानरूपी अन्धकार दूर होता है। जब से चन्द्रमा और सूर्यरूपी भगवान आँखों से दूर हुए हैं, तब से मन अत्यधिक कष्ट पा रहा है अर्थात् ज्ञानरूपी प्रातः के अभाव में अन्धकार के साम्राज्य में अनेक कष्ट पा रहा हूँ। ज्ञानालोक के अभाव में मैं भ्रमित होकर अत्यन्त कष्ट पाता हुआ घूम रहा हूँ और वहाँ पर मुझे बहुत बड़ा शत्रु राहू ही मिला है।

आशय यह है कि सूर्य और चन्द्रमा के अभाव में सारा आकाश जिस प्रकार राहू से ग्रस्त रहता है उसी प्रकार अज्ञान के अन्धकार में मेरा मन दुर्भावनाओं से ग्रस्त रहता है। हे मूर्ख मन ! गंगा यद्यपि अत्यन्त पवित्र नदी है और तीनों लोकों में उसका यश व्याप्त है फिर भी भगवान विष्णु के चरणों से दूर रहने के कारण उसका बहते रहना निरन्तर जारी रहता है अर्थात् गंगा का उद्गम भगवान के पैर के अंगूठे से मानते हैं। गंगा ने अब भगवान विष्णु के चरणों को छोड़ दिया है इसी कारण से उसे निरन्तर बहना पड़ रहा है। इसलिए बिना भगवान की भक्ति किए सांसारिक विपत्तियों से छुटकारा नहीं मिल सकता है और अज्ञान का निवारण भी तब तक नहीं हो सकता है। इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं तुलसीदास जी कहते हैं कि हे मेरे मन अब अपनी सब आसक्तियों और अभिलाषाओं को छोड़ राम के (भगवान के) सेवक बन जाओ।

विशेष—तुलसी की दास्य भाव की भक्ति भावना का मनोरम चित्रण हुआ है। अनुप्रास, रूपक, उपमा दृष्टान्त अलंकारों का समावेश है।

प्रस्तुत अवतरण में ज्ञान भक्ति का समन्वय प्रशस्य है।

7. ऐसो को..............................तेरो।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

प्रस्तुत अवतरण में तुलसीदास ने अपने आराध्य भगवान राम की उदारता एवं भक्त-वत्सलता का वर्णन किया है। वे भगवान राम को सभी मनोरथों की पूर्ति का कारण मानते हैं।

व्याख्या—गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं कि मेरे राम जैसा इस जग में और कौन उदार है। जो बिना सेवा किए ही दीन-दु:खियों पर दया करें अर्थात् सब पर कृपा करके उनके कष्टों को दूर करें। श्रीराम की उदारता अनुपमेय है। जो मोक्ष मुनि और ज्ञानी लोग असाधारण योग के द्वारा वैराग्य धारण करने पर भी प्राप्त नहीं कर पाते वह मोक्ष (जटायु) गिद्धराज और शबरी को बिना किसी उपकार की भावना को हृदय में लिए सामान भाव से प्रदान कर दिया। रावण ने अपने दस शीश चढ़ाकर जो अतुल अक्षय सम्पत्ति शिव से अत्यन्त कठोर साधना करके प्राप्त की थी। वह सम्पत्ति राम ने तुच्छ भेंट समझकर बिना किसी संकोच के विभीषण को दे दी और अपनी इस उदारता पर उन्होंने जरा भी गर्व नहीं किया।

तुलसीदास जी कहते हैं कि हे मेरे मन यदि तुम सुख की अभिलषा रखते हो तो श्रीराम की आराधना करो। वही तुम्हारी सब अभिलाषाओं और मनोरथों को पूर्ण करेंगे अर्थात् राम भक्तवत्सल हैं। वह सभी की मनोकामनाओं की सिद्धि करते हैं।

विशेष—(1) राम की भक्त वत्सलता का वर्णन है।

(2) उदाहरण काव्य लिंग अलंकार है।

कवितावली

8. अवधेस..............................बिकसे।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण पाठ्यपुस्तक में संकलित कवितावली के अंश से लिया गया है।

इसमें राम के बाल रूप का वर्णन है उनके रूप की झाँकी प्रस्तुत करने के लिए दो का वार्त्तालाप प्रस्तुत किया। एक सखी दूसरी सखी से राम के बाल रूप का वर्णन कर रही है।

व्याख्या—एक सभी दूसरी सखी से कह रही है, हे सखी ! मैं राम की छवि देखकर आयी हूँ। वह अपनी सखी स अपने बालरूप का वर्णन अपनी सखी के सामने कर रही है। वह कह रही है कि मैं आज बहुत सवेरे राजा दशरथ के द्वार पर पहुँच गई। मैंने वहाँ देखा कि स्वयं महाराज अपने पुत्र को गोद में लेकर आए बालक राम की छवि अत्यन्त मधुर और आकर्षक थी। उनकी बाल छवि को देखकर मैं अचम्भित रह गई। उनको देखकर लगा कि यह बालक संसार के समस्त शोकों और व्याधियों का हरण करने वाला है। ऐसी मधुर छवि को देखकर भी जो मोहित नहीं होता उसका जन्म व्यर्थ है। वह सखी कहती है कि उस बालक के काजल सहित नेत्र खजन पक्षी के समान लग रहे थे। सखी ने कहा कि वे नेत्र ऐसे नेत्र प्रतीत होते थे मानो चन्द्रमा के भीतर दो समान स्वरूप और

आकृति वाले नवीन नीलकमल खिले हुए हों। भाव यह है कि उस बाल छवि का आकर्षण अत्यन्त मोहक था।

विशेष—राम की बाल छवि का वर्णन ललित और अलंकृत शब्दावली में किया गया।

उपमा, उत्प्रेक्षा अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग किया है।

9. तन..............................**बिहरैं।**

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

प्रस्तुत पद्यावतरण में तुलसीदास ने राम के सौन्दर्य का वर्णन कर रहे हैं।

व्याख्या—तुलसीदास जी कहते है कि बालक राम के शरीर की कान्ति नीलकमल के समान है तथा उनकी आँखें कमल की कोमलता का हरण करने वाली अर्थात् अत्यधिक आकर्षक हैं। बालक राम, भरत, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न बाल-क्रीड़ा करते समय धूल से सने हुए अत्यधिक सुन्दर और शोभायमान हो रहे हैं। वे अपने रूप सौन्दर्य से कामदेव की सुन्दर छवि को लज्जित कर रहे हैं अर्थात् उनकी सुन्दरता के सम्मुख कामदेव भी तुच्छ लगता है। बाल क्रीड़ा करते समय उनके दाँत इस तरह चमक रहे हैं जैसे आकाश में बिजली चमक रही हो और वे मधुर किलकोरी मारते हुए वे आपस में क्रीड़ा कर रहे हैं। तुलसीदास जी कहते हैं कि राजा दशरथ के ये चारों बालक सदा मेरे मनरूपी मन्दिर में बिहार करें अर्थात् इन चारों अवतारी बालकों की भक्ति भावना करता हूँ और मेरा मन सदा ही इनका स्तवन, स्मरण, वन्दन करता रहे।

विशेष—तुलसीदास ने राजा दशरथ के चारों बालकों की बाल क्रीड़ा का मनोरम चित्रण किया है।

अतिशयोक्ति उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक तथा अनुप्रास अलंकार का प्रयोग हुआ है। सवैया छन्द का प्रयोग हुआ है।

10. कबहूँ ससि मांगत..............................**बिहरैं।**

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

प्रस्तुत अवतरण में दशरथ के चारों पुत्रों की बालक्रीड़ाओं का चित्रण तुलसीदास ने किया है।

व्याख्या—तुलसीदास जी कहते हैं कि राजा दशरथ के चारों पुत्र बहुत मोहक बाल क्रियाएँ करते हैं। कभी तो वे चन्द्रमा को खिलौने के रूप में प्राप्त करने के लिए अड़ जाते हैं तो कभी अपना प्रतिबिम्ब कहीं देख लेने पर डर जाते हैं। कभी वे चारों बालक तालियाँ बजाते हुए नाचने लगते हैं उन्हें देखकर तीनों माताओं के हृदय प्रसन्नता से भर जाते हैं। वे अत्यधिक आनन्दित हो जाती हैं। कभी वे चारों बालक रोष में आकर रूठ जाते हैं और कभी किसी मनचाही वस्तु को प्राप्त करने के लिए हठ करते अड़ जाते हैं और उसे प्राप्त करके ही सन्तोष प्राप्त करते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं अयोध्या के राजा दशरथ के ये चारों बालक मेरे मनमन्दिर में सदा विहार करें।

विशेष—भावसाम्य–सूर ने भी कृष्ण के बालरूप का वर्णन इसी प्रकार किया है। निम्न उदाहरण दृष्टव्य है—'**मैया मैं तो चन्द्र खिलौना लैहों**"

अनुप्रास और रूपक अलंकार है।

अयोध्या के राजा दशरथ के चारों बालकों की स्वाभाविक एवं बालोचित बाल-चेष्टाओं का वर्णन है।

इसमें **तुलसी की नवधा भक्ति व्यक्त हुयी है।**

11. पूर ते निकसी...............................च्वै । (पृष्ठ 65)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत् ।

प्रस्तुत अवतरण में राम के वनगमन का वर्णन किया गया है । सीताजी थोड़ा पैंदल चलने पर ही थक जाती है । उसी समय का चित्र तुलसी ने इस अवतरण में चित्रित किया है ।

व्याख्या—तुलसीदास जी सीता की कोमलता का वर्णन करते हुए कहते है कि वन-गमन के लिए सीता अपने पति के साथ अयोध्या नगरी मे तो चली आयी परन्तु वह चलने के अनुभव से अपरिचित वन मार्ग के कष्टों से अनभिज्ञ थी । अत: तुलसी उनका वर्णन करते हुए कहते हैं कि धैर्य धारण करके सीता अयोध्या नगरी से बाहर निकल आयी परन्तु उन्होंने दो कदम ही मार्ग में बढ़ाये तभी उनके माथे पर श्रम के पसीने की बूँदे झलकने लगी और थकान और ताप के कारण उनके होठ भी सूख गये । इस तरह वन मार्ग में कुछ ही दूर चलने पर सीता अत्यधिक थकान का अनुभव करने लगी और व्याकुलता से राम से पूछने लगी कि अभी कितना और चलना है तथा पर्ण कुटी का निर्माण कहाँ करना है ।

तुलसीदास जी कहते हैं कि उनकी व्याकुलता और आतुरता देख कर तथा वन मार्ग में आने वाली कठिनाइयों का स्मरण करके श्री राम के नेत्रों से अश्रुधारा बह निकली अर्थात् राम सीता की कोमलता और व्याकुलता देखकर करुणा से भर उठे कि अभी तो थोड़ा ही मार्ग तय किया है । अभी से इतनी व्याकुल है तो चौदह वर्ष वन वन भटकते हुए कैसे बीतेगे ।

विशेष—सीता की कोमलता तथा राम का सीता के प्रेम का मार्मिक वर्णन है । अनुप्रास की छटा देखने को मिलती है सवैया छन्द का प्रयोग हुआ है ।

12. राम विहाय...............................दू की । (पृष्ठ 66)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत् ।

प्रस्तुत अवतरण में नाम स्मरण और भक्ति भावना का महत्व प्रतिपादित किया है । इस अवतरण में उन्होंने भगवान राम के नाम के दो अक्षरों की ही अत्यन्त महत्वपूर्ण बतलाया है ।

व्याख्या—तुलसीदास राम के नाम की महत्ता बताते हुए कहते हैं कि वाल्मीकि ने भगवान का राम नाम जपना छोड़कर मरा मरा (राम के विपरीत क्रमाक्षर) जपा । यह जप करने से ही बाल्मीकि का बिगड़ा हुआ स्वरूप सुधर गया अर्थात् वाल्मीकि ने राम के नाम का उल्टा जाप किया फिर भी उन्हें सिद्धि मिली । वे आदिकवि बने तथा रामायण जैसे ग्रन्थ की रचना की । नाम स्मरण से ही हाथी का उद्धार हुआ वैश्या और अजामिल नामक ब्राह्मण को भी मुक्ति मिली । भगवान के नाम के प्रताप से ही कौरवों की सभा में पाण्डवों की बधू द्रोपदी की लाज बच गयी । अर्थात् भगवान कृष्ण का स्मरण करने पर द्रोपदी की रक्षा हो सकी और दुष्ट कौरवों द्वारा उसका सतीत्व नष्ट होने से बच गया । इसी कारण वश तुलसीदास जी कहते हैं कि भगवान के नाम के दो अक्षरों का अत्यधिक महत्व है आज जो लोग इन दो नामों में प्रीति रखते हैं उनका कल्याण होता है ।

विशेष—(1) नवधा भक्ति का प्रभाव है ।

(2) अजामिल, वाल्मीकि, वैश्या, हाथी की अर्न्तकथाओं का उल्लेख है ।

(3) अनुप्रास अंलकार एवं सवैया छन्द है ।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—"भक्तिकाल के कवियों में तुलसी का अन्यतम स्थान है।" इस कथन की सोदाहरण विवेचना कीजिए।

उत्तर—तुलसी दास भक्ति काल के प्रतिनिधि कवि हैं। वह न केवल भक्ति काल के अपितु हिन्दी साहित्य के उन महान कवियों में अग्रणी हैं जिन्होंने हिन्दी साहित्य को पल्लवित और पुष्पित किया। तुलसी का उदय ऐसे काल में हुआ जिस समय समाज में अव्यवस्था, अनाचार, अनास्था का बोलबाला था उस समय के समाज को ऐसे महापुरुष की आवश्यकता थी जो समाज को धर्म, कर्म, ज्ञान एवं भक्ति का समन्वय स्थापित कर लोक कल्याण के मार्ग पर ला सके। इस कार्य के लिए तुलसी लोकनायक सिद्ध हुए। तुलसीदास ने मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के अपना आराध्य बनाकर समस्त युगीन मान्यताओं को अपनाते हुए विस्तृत काव्य रचना की।

तुलसी की सर्वश्रेष्ठता को बनाये रखने उनकी अनेक विशिष्टताएँ दिखाई देती है। जो इस प्रकार हैं—

(1) **समन्वयवादी प्रवृत्ति**—तुलसी की सबसे बड़ी विशेषता उनके काव्य में समन्वय वादी भावना है। तुलसीदास जी ने भारत की विभिन्न विचारधाराओं, विविध संस्कृतियों जीवन साहित्य आदि का सभी क्षेत्रों में समन्वय स्थापित किया उनकी समन्वयवादी विचार धारा को देखते हुए हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उनके विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि—"उनका सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शासन का समन्वय ग्रहस्थ और वैराग्य का समन्वय, भक्ति एवं ज्ञान का समन्वय, भाषा एवं संस्कृति का समन्वय है। सत्य एवं शील का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, पाण्डित्य और अपाण्डित्य का समन्वय रामचरित मानस आरम्भ से अन्त तक समन्वयक काव्य है।"

(2) **विविध आदर्शों की स्थापना**—'राम चरित्र मानस' जहाँ अपनी भक्ति भावना के प्रिय प्रसिद्ध है वहीं अपनी लोक संग्रह की भावना के लिए भी प्रसिद्ध है। रामचरित मानस में समाज के उच्च नैतिक मूल्यों की स्थापना की गयी है। इस ग्रन्थ में पिता, पुत्र, गुरु, पत्नी भाई, शत्रु, मित्र, पति, पत्नी, सेवक, राजा, प्रजा, भक्त भगवान आदि के आदर्श चरित्रों को प्रस्तुत किया गया है। रामचरित मानस में तुलसी ने आदर्श एवं अनुकरणीय चरित्रों की प्रस्तुति की है। राम राज्य की कल्पना आदर्श समाज की कामना है। तुलसी दास का सम्पूर्ण काव्य श्रेष्ठ आदर्शों की स्थापना करता हुआ लक्ष्य की महानता को प्रस्तुत एवं प्रमाणित करता है।

(3) **सम्पूर्ण जीवन का चित्रण**—भक्तिकाल की अन्य धाराओं में कवि किसी एक ही क्षेत्र को लेकर काव्य रचना के क्षेत्र में अवतरित हुए। उदाहरण के लिए सूफी कवि जीवन के सर्वाङ्ग रूप को प्रस्तुत न करके प्रेम रहस्यों में ही उलझे रहे किन्तु गोस्वामी तुलसीदास ने जीवन की सर्वाङ्गता का निरूपण करने का उद्देश्य लेकर अपने काव्य की रचना की। उन्होंने अपने आराध्य राम के सम्पूर्ण जीवन के आदर्शों का व्यापक चित्रण कर सम्पूर्ण जन जीवन को राममय बनाने का प्रयत्न किया।

(4) **साहित्यिक क्षेत्र में व्यापक कार्य**—तुलसी दास ने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में व्यापक एवं विस्तृत योगदान दिया उन्होंने राम को आसध्य मानकर व्यापक एवं विपुल साहित्य की रचना की तथा 'राम चरित मानस' के रूप में उन्होंने एक अद्वितीय और अन्यतम साहित्यिक कृति हिन्दी जगत को भेंद की। जो साहितिय के क्षेत्र में उत्कृष्ट रचना है। इसके अतिरिक्त विद्वानों के द्वारा प्रामाणिक माने गये अग्रलिखित ग्रन्थों की रचना की :

(1) रामलला नहछू (2) वैराग्य संदीपनी (3) जानकी मंगल (4) पार्वती मंगल (5) बरवै रामायण (6) रामाज्ञा प्रश्न (7) कविता वली (8) दोहावली (9) गीतावली (10) श्रीकृष्ण गीता वली (11) विनय पत्रिका।

इसमें से राम चरित मानस तुलसी का प्रमुख कीर्ति स्तम्भ हो इसके अतिरिक्त विनय पत्रिका कवितावली दोहावली तथा गीतावली उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

हिन्दी साहित्य में तुलसी विधाता की देन के रूप में स्वीकार किया जाता है। विषय की गहनता एवं व्यापकता, काव्य सौन्दर्य, भाषा गांभीर्य एवं परिमार्जित रूप की दृष्टि से तुलसीकृतियाँ सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी—गोस्वामी तुलसीदास बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। तुलसीदास कवि थे, भक्त थे, पण्डित थे, सुधारक थे लोक नायक थे और भविष्य के स्पष्ट थे। इन रूपों में उनका कोई भी रूप किसी से घटकर नहीं था। यही कारण था कि उन्होंने सब ओर से समता की रक्षा करते हुए एक अद्वितीय काव्य की रचना की जो आज तक भारत वासियों का मार्ग दर्शक रहा और आगे भी रहेगा।

लोक संग्रह की भावना—तुलसी ने अपने समय में समाज के लिए लोक संग्रह का कार्य जिसके कारण वह लोकनायक के रूप में जाने जाने लगे। तुलसी की भक्ति लोकोन्मुख थी भक्ति और साहित्य के क्षेत्र लोक मंगलकारी कवि के रूप में सामने आये। तुलसी के आराध्य स्वयं लोक मंगलकारी अर्थात् मंगल भवन अमंगल हारी थे। रामचरित के माध्यम से उन्होंने लोक संघर्ष का प्रतिपादन कर राम के लोक मंगलकारी रूप की स्थापना की।

काव्य सौन्दर्यात्मक वैशिष्ट्य—तुलसी ने अपने युग के सभी तत्वों का एवं समाज के विकृत रूप का परिष्कार कर धर्म, दर्शन, साहित्य और समाज में समन्वय की भावना को मूर्त रूप दिया तथा सच्चे लोक धर्म की प्रतिष्ठा की। काव्यत्व की दृष्टि से शायद ही कोई ऐसी विशेषता शेष हो जो तुलसी के काव्य में नहीं हो। प्रबन्ध, मुक्तक गीति सभी काव्य शैलियों के रूप इनके काव्य में मिल जायेंगे। सभी रसों के उत्कृष्ट उदाहरण इनके काव्य में प्राप्त होते हैं। अलकारों की अनुपम छटा इनके काव्य में यत्र-तत्र दिखायी देती है। भाव पक्ष एवं कला पक्ष दोनों ही दृष्टियों से तुलसी का काव्य अत्यन्त उत्कृष्ट है।

हरि औध जी द्वारा कही गयी उक्ति इनके काव्य के ऊपर बिल्कुल सत्य है।

'कविता कर के तुलसी न लसे, कविता लसी या तुलसी की कला'

विजयेन्द्र स्नातक के शब्दों में—"तुलसी हिन्दी कविता कानून का सबसे बड़ा वृक्ष है उस वृक्ष पर शाखाओं में काव्य कौशल की चारुता और रमणीयता चारों ओर बिखरी पड़ी है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि तुलसी ने न केवल भक्तिकाल का नेतृत्व किया अपितु पूरे हिन्दी साहित्य को एक अमूल्य निधि काव्य कृतियों के रूप में प्रदान की। वे जन नायक थे। उन्होंने अपनी प्रतिभा में ऐसे साहित्य की रचना की जिससे भारतवासी कभी उन्हें विस्मृत नहीं कर सकते।

प्रश्न 2—तुलसी की भक्ति भावना पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर—तुलसी भारत के सर्वश्रेष्ठ कवियों में अपना स्थान रखते हैं। विश्व में भी श्रेष्ठतम कवियों में उनका स्थान है। उन्होंने काव्य के माध्यम से भारत के प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों को जन साधारण तक संप्रेषित किया है। वह एक सच्चे भक्त थे यहीं कारण उनकी सम्पूर्ण काव्य रचना भक्ति रस से अनुप्राणित है। उनकी भक्ति भावना सगुणोपसना

से प्रेरित और पुष्ट थी। उन्होंने अपने आराध्य राम को अपने काव्य का माध्यम बनाया जड़ चेतन सभी को राममय जानकर तुलसी ने अपने भक्ति भाव को प्रकट किया है। उन्होंने ज्ञान की तुलना में भक्ति को कहीं अधिक सुगम सरल और व्यवहारिक बतलाया है। उनकी मान्यता है कि भगवान की भक्ति ही वह साधना है जिसके सहारे बिना प्रयास के ही संसार व्यापी भूल अविधा का नाश हो जाता है। उदाहरण उन्होंने लिखा है—

"भगति करत बिनु जतन प्रयासा। संसृति मूल अविद्या नासी"

तुलसी ने अपने काव्य में जिस भक्ति भावना को व्यक्त किया है। वह सेवक सेव्य भाव की है और चिन्तामणि रत्न के समान है। राम भक्ति रूपी चिन्तामणि जिसके हृदय में निवास करती है, उसके हृदय में दिन रात ऐसा परम प्रकाश रहता है कि फिर उसे दीपक, धृत, और वर्तिका किसी की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। इसी भाव को तुलसी ने निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है।

राम भगति चिन्तामनि सुन्दर। बसई .गरुड़ जाके उर अन्तर

× × × ×

परम प्रकाश रूप दिन राती। नहिं कछु चाहऊ दिया अरु बाती।

तुलसी ने भक्ति रूपी चिन्तामणि के प्रभाव और महत्व को तो प्रतिपादित किया है। साथ ही यह भी संकेत किया है कि यह भक्ति रूपी चिन्तामणि को प्राप्त कैसे किया जाता है। उन्होंने कहा है कि भक्ति रूपी चिन्तामणि को राम की कृपा से ही प्राप्त किया जाता है। इसके लिए आवश्यक नहीं कि वेदों और पुराणों का अध्ययन किया हो या वैराग्य और ज्ञान रूपी दो नेत्रों से देखने पर ही वह मणि दिखाई देगी। जो प्राणी भाव-सहित इसे खोजता है। वह निश्चय ही सब सुखों की खान इस भक्ति रूपी चिन्ता मणि को प्राप्त कर लेता है।

तुलसी की धारणा यह थी कि समस्त साधनों का धन राम भक्ति ही है। राम की भक्ति का मार्ग अत्यन्त सरल, सुखदायक और फलदायक है। इस भक्ति को प्राप्त करना भी सरल है। इसके लिए स्वभाव की सरलता, मन की पवित्रता सन्तोष, शुद्धाचारण, मैत्री और धैर्य की आवश्यकता होती है।

तुलसी की भक्ति भावना की बिशेषताएँ—तुलसी का जिस समय जन्म हुआ। उस समय समाज में भारी अव्यवस्था फैली हुई थी। चारों ओर निराशा का घोर अंधकार फैला हुआ था। ऐसे समय में तुलसी ने जनता को प्रकाश की एक किरण दी। उस समय में ईश्वरीय ज्योति की आवश्यकता थी तुलसी ने उसे राम में पा लिया था। उन्होंने जड़ चेतन सभी को राममय जानकर अपने भक्ति भाव को प्रकट किया है।

"जड़ चेतन जग जीव सब सकल राम मय जानि।
बंदऊ सबके कमल पद सदाजोरि जुग पानि॥"

दीनता की भावना—तुलसी की भक्ति भावना में उनकी दीनता और लघुता व्यक्त हुयी।

"नामु राम को कलप तरु कलि कल्याण निवासु
जो सुमिरत भयो भाँगते तुलसी तुलसी दासु॥"

एक अन्य प्रसंग में तुलसी दास ने अपनी लघुता प्रकट करते हुए राम का खरापन अर्थात् महत्व प्रतिपादित किया है—

"राम सो खरो है कौन मो सो कौन खोटों,"

सेवक सेव्य भाव—तुलसी की भक्ति सेवक सेव्य भाव से अनुप्राणित है। तुलसी राम को उच्चपद पर आसीन करते हुए स्वयं को उनका सेवक बताते हैं।

इसी सेवक सेव्य भाव को प्रकट करते हुए तुलसी कहते हैं—

"ब्रह्म तू हौं जीवतू, तू ठाकुर हौं चेरो।
तात मात गुरु सखा तू सब विधि हितू मेरो।"

शरणा गति की भावना—तुलसी के काव्य में शरणागति की भावना व्यक्त हुयी है तुलसीदासजी के अनुसार सब कुछ छोड़कर भगवान शरण में चले जाने पर ही जीव का हित है। वे राम के परम भक्त थे वे उन सभी वस्तुओं का त्याग कर देना उचित समझते थे जो राम के विपरीत जान पड़ती थी।

जाके प्रिय न राम वैदेही।
तजिए ताहि कोटि बैरी सम यद्यपि परम सनेही।

वह प्रभु की शरणागति में ही सच्चा सुख मानते हैं। उनके अनुसार भगवान से विमुख होकर कोई सुख प्राप्त नहीं कर सकता।

'सुनमन मूढ़ ! सिखावन मेरो।
हरिपद-विमुख लह्यो न काहू सुख, सठ यह समुझि सवेरो'

× × ×

तुलसीदास अब आसि छाँड़ि करि, होहु राम को चेरो।

सगुण और निर्गुण भक्ति भावना में समन्वय—तुलसी सगुणोपासक भक्त थे, किन्तु फिर भी उन्होंने निर्गुण और सगुण के बीच की खाई को समन्वयवादी भावना से भरने का प्रयत्न किया। इसके लिए उन्होंने मानस में कई स्थानों पर कहा है कि ब्रह्म तो निर्गुण ही है किन्तु वही भक्तों के प्रेम के कारण सगुण बन जाता है और लीला शरीर धारण करता है। इसी से उनकी निर्गुण और सगुण में समन्वय की भावना व्यक्त हो जाती है।

विविध देवताओं ने समन्वय—तुलसी को भक्ति में विविध देवताओं के मध्य समन्वय स्थापित किया गया हैं। तुलसी के समय में शैव और वैष्णव सम्प्रदायों का पारस्परिक विद्वेषात्मक सम्बन्ध पराकाष्ठा पर पहुँच चुका था अतः तुलसी ने इन सभी के बीच समन्वय स्थापित किया और एक भक्ति भाव की प्रतिष्ठा की उनके अनुसार शिव-राम दोनों ही पूज्य है शिव के इष्ट राम हैं और राम के इष्ट शिव हैं।

ज्ञान एवं वैराग्य संयुक्त एक निष्ठ भक्ति—तुलसी एक निष्ठ भक्त थे। उन्होंने भक्ति की निष्कामता को चातक आदि उपमानों से स्पष्ट किया है।

"एक भरोसो एक बल एक आस विश्वास
एक राम घनश्याम हित चातक तुलसीदास।"

इसके अतिरिक्त उनकी भक्ति में शील सौन्दर्य का शक्ति का समन्वित रूप है। ऐसे आराध्य की भक्ति निश्चिय ही व्यक्ति कल्याण परक होते हुए भी लोक कल्याण में समर्थ एवं सक्षम है।

राम की भक्ति के प्रभाव से माया प्रभावहीन हो जाती है। राम की भक्ति विशेष फलदायिनी है। वह साधन भी है और सिद्धि भी तुलसी ने साधन सिद्धि रामपद नेहू कहकर यही भाव व्यक्त किया है।

तुलसी की भक्ति नवधा भक्ति के सभी अंगों से युक्त है। उनकी काव्य कृतियों में नवधा भक्ति के अंग स्थान स्थान पर मिल जाएँगे उदाहरण स्वरूप—

श्रवण—जिन हरि कथा सुनि नहि काना। श्रवन रन्ध्र अहि भवन समाना।

कीर्तन—जो नहिं करै राम गुनगाना। जींह सो दादुर जीह समाना।

स्मरण—'सुमिर सनेह सहित सीता पति। रामचरन तजि नहिं आनि गति।

पाद सेवन—कर मित करहि राम पद पूजा। राम भरोस हृदय नहिं दूजा।

दासता—ब्रह्म तू हौ जीव तू ठाकुर हो चेरौ।

आत्म समर्पण—अब रघुनाथ सरन आयौ जन भव विकल डरयौ
तुलसीदास निज भवन द्वार पर प्रभु दीजै रहन परयौ॥

इसी प्रकार भक्ति के सात सोपानों में जो दीनता, मान मर्षता, भव्यदर्शन भर्त्सना, आश्वासन, मनोराज्य, विचारण बताये गये हैं। वे सभी तुलसी के काव्य में मिलते हैं। तुलसी की भक्ति पूरी इन सात सोपानों की परिधि में आ जाती है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि तुलसीदास भक्ति काल के सर्वश्रेष्ठ भक्त कवि थे। उनके काव्य में भक्ति का सच्चा, निर्मल व्यवहारिक और अनुकरणीय रूप मिलता है। वैसे तो मानस आदि सभी ग्रन्थों में भक्ति का पूर्ण परिपाक देखने को मिलता है किन्तु इस दृष्टि से उनकी कृतियों में विनय पत्रिका उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति ठहरती है।

प्रश्न 3—'तुलसी का काव्य विराट समन्वय भावना का काव्य है।' इस कथन का सोदाहरण विवेचन कीजिए।

अथवा

'तुलसी ने लोक कल्याण के लिए समन्वय पर बहुत बल दिया है।' इस कथन का विवेचन कीजिए?

उत्तर—भारत एक ऐसा देश है जिसमें बहुत से धर्म और बहुत भाषाओं को स्थान प्राप्त है यहाँ समाज, संस्कृति, धर्म और राजनीति आदि प्रारम्भ से वैमनस्य और भेदभाव के बीज पनपते रहें। इसी कारण इस देश का लोक नायक वही हो सकता है जो हर वर्ग को सन्तोष प्रदानकर हर वर्ग के सुख वैभव की कामना करे। समन्वय स्थापित करे। और तुलसी में यह गुण पूर्णतः पाया जाता है वे अपने समय के लोकनामक और हिन्दी साहित्य के उन्नायक कवि माने जाते हैं। उनका काव्य विविध विचार धाराओं का काव्य है तुलसी ने काव्य और जीवन में जो समन्वय किया वही उन्हें महान लोकनायक की संज्ञा प्रदान करता है।

1. ज्ञान और भक्ति में समन्वय—तुलसी के समय में एक ओर विद्वान तत्त्व ज्ञान को प्रमुख मानते थे तो दूसरी ओर साधना को। तुलसीदास ने अपने काव्य में ज्ञान और भक्ति का समन्वय प्रतिपादित किया उन्होंने बतलाया कि ज्ञान और भक्ति में कोई भेद नहीं है। दोनों ही मोक्ष प्राप्ति के साधन है। तुलसी कहते थे ज्ञान के साथ-साथ भक्ति की स्थिति भी अपरिहार्य है। भक्ति रूपी जल से पवित्र किया गया चित्र भगवान की क्रीड़ा क्षेत्र बन जाता है। अतः ऐसे सरल निर्मल मन से ईश्वर भक्ति आसानी से हो जाती है। जबकि ज्ञान कठिन शास्त्रों के परिशीलन से होता है।

2. अद्वैत और विशिष्टाद्वैत का समन्वय—तुलसी से पूर्व शंकर के अद्वैतवाद का विरोध करने पर रामगुन के विशिष्टाद्वैत की स्थापना की तुलसी ने दोनों में समन्वय कर अपनी रुचि के अनुसार जो उचित प्रतीत हुआ उसे ग्रहण किया।

एक ओर उन्होंने ईश्वर अंश जीव अविनाशी कहकर संसार को नित्य शाश्वत एवं अविनाशी बताकर विशिष्टाद्वैत का समर्थन किया तो दूसरी ओर विनय पत्रिका में जगत के मिथ्यात्व को शंकर की भाँति अद्वैत बताकर समर्थन किया है।

3. शैव एवं शक्तियों का समन्वय--शैव सम्प्रदाय के लोग शिव की उपासना पर बल देते थे और वैष्णव मतानुयायी विष्णु की भक्ति करते हैं। परन्तु तुलसी अपने काव्य में विष्णु के आराध्य शिव की भक्ति करते हैं।

शिव द्रोही मम दास कहावे
ते नर मोहि सपनेहू नहिं भावे ॥

4. निर्गुण और सगुण में समन्वय—तुलसी से पहले ब्रह्म के निर्गुण और सगुण दो रूपों को लेकर दार्शनिकों में भारी मतभेद था। शंकर के निर्गुण के विरोध में बल्लभ और रामनुज का सगुण रूप अपने समर्थ रूप में खड़ा हो गया जहाँ सूर ने निर्गुण का खण्डन कर सगुण की स्थापना की वहाँ तुलसी ने दोनों के अस्तित्व को बनाये रखा।

"सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा।
उभय हर हिभव संशय खेदा।"

उन्होंने राम के लिए अनादि अनन्त अरूप आदि अनेक निर्गुण विशेषण प्रयुक्त किए हैं और उनकी साकार वन्दना भी की है।

5. **धार्मिक क्षेत्र में समन्वय**—तुलसी का आविर्भाव जिस समय साहित्य के क्षेत्र में हुआ। वह युग धार्मिक आन्दोलनों का था। उस समय धर्म विकार ग्रस्त हो गया था। और बाह्याडम्बरों की प्रधानता थी। धर्म की आड़ में उसके ठेकेदार विभिन्न सम्प्रदायों को जन्म दे चुके थे। वह एक दूसरे के मतों पर कीचड़ उछालकर अपने मत की प्रतिष्ठा करने में लगे हुए थे तुलसी ने सभी धर्मों के मध्य समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया धार्मिक समन्वय की इस प्रक्रिया में सर्वदेव समन्वय महत्वपूर्ण है। उन्होंने राम को कण-कण में व्याप्त कहा और इसी कारण संसार को राममय देखते हुए वह कहते हैं—

सियाराम मय सब जग जानी। करहू प्रनाम जोरि जुग पाणी।

6. **सामाजिक क्षेत्र में समन्वय**--तुलसीदास ने सामाजिक समन्वय के द्वारा संत-असन्त का समन्वय किया, व्यक्ति और समाज के बीच अज्ञानी और ब्राह्मण के बीच, सती और कामिनी के, संतमत और लोकमत राज्य और जनता के मध्य भी समन्वय स्थापित किया।

सामाजिक क्षेत्र में वर्णाश्रम व्यवस्था को लेकर बहुत भेदभाव था तुलसी ने उसमें भीसमन्वय की कामना उन्होंने गुहराज से ब्राह्मण वशिष्ठ को गले मिलाकर यह भेदभाव दूर कर दिया। स्वयं आराध्य देव राम ने शबरी के झूंठे बेर तक खाये।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि तुलसीदास ने विविध सन्दर्भों के समन्वय का प्रशंसात्मक कार्य किया। यही उनका सामाजिक क्षेत्र में समन्वय का कार्य है।

7. **राजा और प्रजा में समन्वय**—रामचरित मानस में तुलसीदास ने जिन राजाओं दशरथ, जनक, राम का चित्रण किया। सभी को प्रजा वत्सल दिखाया। वे अपनी प्रजा की सुरक्षा का सदा ध्यान रखते थे। प्रजा के कष्टों को दूर करना वे अपना कर्त्तव्य समझते थे। तुलसी ने इस प्रसंग में प्रजा को राजा के लिए प्राण तक न्यौछावर करने वाला कहा है। दशरथ की मृत्यु पर सारी नगरी शोक में डूब जाती है। राम के वन गमन के समय सारी प्रजा वन जाने के लिए तत्पर हो जाती है।

8. सांस्कृतिक क्षेत्र में समन्वय—तुलसीदास ने अपने रामचरित मानस में पाँच निम्न जातियों वाले पात्रों को जिनकी संस्कृति भी पृथक-पृथक है, चित्रण किया है। उन्होंने समन्वयात्मक प्रतिभा में कोल, भील, वानर तथा पक्षियों की संस्कृति की भी परोक्ष रूप से झाँकी प्रस्तुत की है। सुग्रीव और हनुमान, जटायु, गरुड़ साधारण पक्षी जीव मात्र नहीं है, वरन् उनमें ज्ञान और भक्ति की पर्याप्त क्षमता एवं प्रतिभा दिखलायी गयी है। वे मनुजवत आचरण करते हैं तुलसी ने देवताओं मनुष्यों व राक्षसों की संस्कृति के के मध्य समन्वय स्थापित करते हुए राम राज्य की स्थापना की परिकल्पना की है। हाँ उन्होंने मानव संस्कृति को ही सर्वोपरि चितित्र किया है।

9. साहित्यिक क्षेत्र में समन्वय—तुलसी की समन्वयवादी विचारधारा जहाँ हमें धर्म समाज दर्शन इत्यादि में मिलती है वहीं साहित्यिक क्षेत्र के समन्वय में भी पीछे नहीं रहे हैं। उन्होंने मानस में अवधी और अन्य ग्रन्थों में ब्रजभाषा का प्रयोग किया है। साथ में आंचलिक भाषाओं की शब्दावली कहावतों एवं मुहावरों का प्रयोग भी किया है। सभी सरस उग्र, प्रभावपूर्ण, क्लिष्ट आदि शैलियों का प्रयोग करके समन्वय का कार्य किया है। उन्होंने अपने युग का शायद ही कोई छन्द छोड़ा है जिसका प्रयोग अपने काव्य में न किया हो जहाँ उनके दोहे चौपाइयों में रस की फुहार छूटती है वही पर घनाक्षरी कवित्त का निर्मल जल प्रपात भी शाश्वत रूप में बहता रहता है काव्य के क्षेत्र में शब्द और अर्थ के पारस्परिक सम्बन्धों में भी समन्वय स्थापित किया गया है।

10. शक्ति शील एवं सौन्दर्य में समन्वय— तुलसी ने अन्य समन्वयों के साथ ही शक्ति, सौन्दर्य और शील के मध्य भी समन्वय स्थापित किया था तुलसी के राम शक्ति, शील, सौन्दर्य की अक्षयनिधि हैं। तुलसी के राम में शक्ति, शील एवं सौन्दर्य के तीनों रूपों की झाँकी मिलती है। मानस में उनके ये तीनों रूप संगठित होकर आये हैं। मानस में राम के सौन्दर्य एवं विनय और शक्ति वर्णन यत्रतत्र दिखायी देते हैं। वे माता-पिता, भाई-मित्र आदि सभी के प्रति अत्यन्त विनम्र रहते हैं और सामान्य जनों से भी उतना ही स्नेह रखते हैं। सौन्दर्य में वे कामदेव को भी लजाने लगते हैं। युद्ध क्षेत्र में अत्यन्त शक्तिशाली योद्धा हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है तुलसी अद्‌भुत समन्वयवादी कवि थे। अपने काल में उन्होंने विरोधी मान्यता, स्थितियों, परम्परा, मतमतांतरों में समन्वय स्थापित किया।

प्रश्न 4—तुलसी के काव्य के कलापक्ष और भावपक्ष पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—तुलसी राम के अनन्य उपासक, समाज सुधारक एवं हिन्दी साहित्याकाश के दैदीप्यमान नक्षत्र थे। भारतीय जन मानस पर आज भी जितना प्रभाव उनके काव्य का है उतना अन्य किसी कवि के काव्य का नहीं है। तुलसी ने स्वान्तः सुखाय काव्य की रचना की। उनका साहित्य सर्वहिताय भी प्रमाणित हुआ। तुलसी के काव्य का मूल प्रतिपाद्य लोक मंगल की भावना है। उन्होंने राम, लक्ष्मण, सीता, भरत आदि चरित्रों के माध्यम से अनेक आदर्शों की स्थापना की है। तुलसी ने उस समय समाज में बढ़ते हुए साम्प्रदायिक मतभेदों को दूर किया। वे स्वयं वैष्णव थे किन्तु उन्होंने शैवों और वैष्णवों के बढ़ते हुए द्वेष को समाप्त किया। उनके राम भी शैव है। उन्होंने तो यहाँ तक कह दिया कि शिव का द्रोही राम का भक्त हो ही नहीं सकता। सभी दृष्टियों से तुलसी का साहित्य अत्यन्त उच्च और श्रेष्ठ है भावपक्ष की दृष्टि से देखें तो उन्होंने नौ रसों का सजीव चित्रण किया है। यदि कलापक्ष की दृष्टि से देखें तो उनका काव्य श्रेष्ठतम कलाकृति हैं। तुलसी का साहित्य हिन्दी साहित्य के भण्डार की उज्ज्वल मणि माला है और रामचरित मानस वह रस मानस है जिसने तुलसी के शरीर को जरामरण के भय से मुक्त कर दिया है। व्यंजना के स्तर पर उनके काव्य का उद्देश्य राम कथा के समान उदात्त मानवीय आचरण को अपनाने की प्रेरणा देना रहा है।

भाव निरूपण—तुलसी का काव्य भाव निरूपण की दृष्टि से मौलिक मार्मिक सरस बन पड़ा है। अपने साहित्य में उन्होंने विविध भावों को प्रस्तुत किया है। वात्सल्य, करुणा, प्रेम, सहानुभूति आदि भावों का निरूपण उन्होंने स्वाभाविक भाव भूमि पर किया है। 'पुष्प वाटिका' प्रसंग में राम को देखकर सीता का मनोभाव दृष्टव्य है।

"थके नयन रघुपति छवि देखे। पलकन्हि हूँ परि हरे निमेषे।
अधिक सनेह देर भई भोरी। सरद ससिहि जनु चितव चकोरी।"

राम वन गमन वर्णन में शोक और करुणा मनोभावों का चित्रण भी तुलसी के काव्य की अतुलित असीम सम्पदा है। राम वन गमन में लक्ष्मण के शक्ति लगने वाले प्रसंग में इसे देखा जा सकता है।

इस प्रकार तुलसी के काव्य में मानव मन के विविध भावों की मार्मिक सरस और काव्यात्मक व्यंजना हुई है। राम, सीता ही नहीं अन्य पात्रों भरत, केवट, निषाद राज आदि के मनोभावों का वर्णन बहुत सुन्दरतापूर्वक किया है।

समन्वयवादी भावना——तुलसी का काव्य समन्वयवादी भावना से ओत प्रोत है। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक जीवन में, राजनीतिक क्षेत्र में अपनी समन्वयवादी भावना को प्रस्तुत कर अपने काव्य को लोकमंगल की भावना से अनुप्राणित किया है।

राम कथा का सरस एवं काव्यात्मक वर्णन—तुलसी राम भक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि थे, उन्होने प्रायः अपनी सभी रचनाओं में रामकथा को ही अन्यतम स्थान प्रदान किया है। रामचरित मानस, विनय पत्रिका, दोहावली, गीतावली, कवितावली, जानकी मंगल, बरबै रामायण आदि में तुलसी ने आद्योपान्त अत्यन्त भावपूर्ण और मनोहर वर्णन किया है।

आदर्शों एवं मर्यादाओं की स्थापना—तुलसी भारतीय संस्कृति के उन्नायक कवि माने जाते हैं। उन्होंने रामकथा के विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से आर्य मर्यादाओं की स्थापना की है। रामचरित मानस में माता-पिता, पिता-पुत्र, भाई-बहिन पति-पत्नी, स्वामी सेवक, गुरू शिष्य आदि पारस्परिक सम्बन्धों के मध्य रहने वाली मर्यादा का तुलसी ने प्रभावोत्पादक वर्णन किया है। विनय-पत्रिका में उन्होंने दास्य भाव की भक्ति प्रस्तुत कर सेवक मर्यादा की अपूर्व अभिव्यक्ति की है। राम का राज्य शासन के उच्च आदर्शों एवं मर्यादाओं का प्रतीक है। राम, लक्ष्मण और भरत आदर्श भाई के, सुग्रीव अच्छे मित्र के तथा विश्वामित्र आदर्श गुरू के प्रतीक हैं।

लोक मंगल की भावना—तुलसी का साहित्य लोक मंगल की भावना से परिपूर्ण है। उन्होंने तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों के बिखरे हुए सूत्रों को समन्वय द्वारा स्थापित कर एकता स्थापना का प्रयास किया। उन्होंने राम राज्य की आदर्श परिकल्पना कर राम को लोक रक्षक और लोक मंगलकारी रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने काव्य में लोक-हित को सर्वोपरि स्थान दिया। उन्होंने सामाजिक जीवन के सर्वांगीण विकास के सफल प्रयास किए।

रस निरूपण—तुलसी के काव्य में रस का सागर हिलोरे लेता हुआ जान पड़ता है। उसमें विविध रसों की आकर्षक व्यंजना हुई है। उनके काव्य में शृंगार, वीर, अद्भुत, शान्त, रौद्र, भयानक, करुण, वात्सल्य और हास्य रसों की योजना अत्यन्त सुन्दर और प्रभावशाली है। विनय-पत्रिका में भक्ति रस और शान्त रस है। मानस में तो प्रायः सभी रसों का परिपाक हुआ है। शृंगार रस के दोनों ही पक्षों का वर्णन सरसतापूर्ण होकर भी मर्यादित है।

तुलसीदास के काव्य में मानव मन के सभी मूल भावों का अनुभावों और सचारियों का चित्रण मनोरम ढंग से हुआ है।

मानव जीवन के विविध पक्षों का वर्णन—तुलसी के काव्य में मानव जीवन के विविध पक्षों का निरूपण हुआ है उसमें धर्म नीति, भक्ति, ज्ञान, दर्शन मानव सम्बन्धों और जीवन मूल्यों की विशद विवेचना हुई है। तुलसी के काव्य में मानव जीवन के विविध पक्ष रसात्मकता और कलात्मकता लिए हुए हैं। तुलसी के आराध्य राम न केवल ब्रह्म है अपितु मानव जीवन की विविध परिस्थितियों से होकर भी गुजरते हैं। राजा और प्रजा, पितृ-भाव भ्रातृ भाव आदि का तुलसी ने सुन्दर वर्णन किया है।

कलापक्ष सम्बन्धी विशेषताएँ

तुलसी के भावपक्ष के समान ही कलापक्ष भी अत्यन्त समृद्ध एवं प्रभावशाली है, कलापक्ष का सौन्दर्य भाषा, अलंकार छन्द विधान आदि पर निर्भर होता है।

भाषा सौन्दर्य—भाषा की दृष्टि तुलसीदास ने हिन्दी का नेतृत्व किया। उन्होंने ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं में काव्य रचना की। अवधी को उन्होंने काव्यात्मक रूप में संवारा उनकी भाषा में सरलता सहजता एवं भाव प्रवणता का गुण विद्यमान है। उनके द्वारा रचित ग्रन्थ रामचरित मानस साहित्यिक अवधी का अन्यतम उदाहरण है विनय-पत्रिका में मोहक एवं मधुर ब्रज भाषा का वैभव है। मानस के प्रत्येक काण्ड में संस्कृत की स्तुतियाँ लिखकर संस्कृत में कविता करने को प्रतिभा भी तुलसी ने प्रकट कर दी है भाषा तुलसी की अनुयायिनी है।

उदाहरणार्थ—

"पुरतें निकसी रघुवीर वधू, धरि-धीर दए मग में डग द्वै
झलकी-भरि भाल कनी जल की, पुट सूखि गये मधुराधर द्वै।"

भाव को प्रकट करने के लिए तुलसी को जिन शब्दों की आवश्यकता हुई। वही वहाँ पर काम में लिए गये यह स्थिति तुलसी की अपार प्रतिभा की सूचक है।

"रानी मैं जानी आजानी महा, पविपाहन हू तें कठोर हियो है।
राजहूँ काज अकाजुन जान्यो, कह्यौ तिनको जिन काम कियो है।"

छन्द और अलंकार योजना—तुलसी के काव्य में सभी वर्ण मात्रिक छन्द प्रयुक्त हुए हैं। दोहा-चौपाई शैली में मानस की रचना की गयी है। कवितावली में कवित्त-विनय पत्रिका में पद रचना है। यदि व्यापक रूप से तुलसी साहित्य का अध्ययन करें तो पायेंगे कि तुलसी ने दोहा-चौपाई, कवित्त, सवैया और पदों का प्रयोग बड़ी कुशलता से किया है।

तुलसी के काव्य में भावों के प्रवाह के साथ जो मधुर एवं ललित वाक्य योजना दिखायी देती है, उसमें अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, एवं उदाहरण अलंकारों का प्रयोग तो उन्होंने स्थान-स्थान पर किया है। शब्दों की आवृत्ति एवं नाद योजना के कारण इनके काव्य में अनुप्रास की छटा बहुत ही मनोहारी है।

रूपक और उत्प्रेक्षा का एक साथ प्रयोग तुलसी ने कई स्थलों पर किया है।

अर्थ गौरव एवं उक्ति वैचित्र्य – तुलसीदास की भाषा में शब्द, ज्ञान, वाक्य, पटुता, अर्थ गौरव और उक्ति वैचित्र्य पर्याप्त मात्रा में मिलता है। विनय-पत्रिका भाषा की इन विशेषताओं से परिपूर्ण है। भाषा का सुष्ठु, उपयुक्त और वैचित्र्यपूर्ण प्रयोग विनय पत्रिका की अमूल्य निधि कही जा सकती है।

लोकोक्ति तथा मुहावरों का प्रयोग—तुलसी की भाषा में लोक जीवन से गृहीत कहावतों व मुहावरों का प्रयोग भी मार्मिकता के साथ हुआ है। कवि ने इनका प्रयोग भाषा को चटकीली भड़कीली बनाने के लिए नहीं अपितु भाव को व्यापक अर्थ देने के लिए किया है। 'अंजन कहा आखि जेहि फूटें' 'का वर्षा जब कृषि सुखाने' इत्यादि।

साहित्यिकता—तुलसी का भाषा में सर्वप्रधान गुण उसकी साहित्यिकता है। उसमें लक्षणा, व्यंजना, माधुर्य एवं प्रसाद गुण प्रधान भाषा दिखाई देती है। और माधुर्य प्रसाद ओज गुण भी हैं।

तुलसी का काव्य हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। वह भाव कल्पना कला शैली आदि सभी दृष्टियों से न केवल प्रभावी, रसमय, जीवनमय और उत्कर्षकारी है, अपितु विश्व मंगल का निदर्शक भी है। काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से वह अनुपम है उसकी सुषमा अनूठी है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—'केशव कहि न जाई' पद में तुलसी ने क्या भाव प्रकट किए हैं।

उत्तर—प्रस्तुत पद में तुलसीदास ने सगुण और निर्गुण ब्रह्म में समन्वयवादी भावना व्यक्त की है वह भक्ति भावना से प्रेरित होकर अपने नैतिक अद्वैतवाद की पुष्टि कर रहे हैं। तुलसीदास जी ने उक्त पद में परमात्मा के सम्बन्ध में सब दार्शनिक मतों की समीक्षा की है और भगवान की विचित्र लीला का वर्णन किया है।

प्रश्न 2—तुलसी काव्य में अलंकार योजना पर सोदाहरण एक संक्षिप्त लेख लिखिए।

उत्तर—तुलसी के काव्य में अलंकारों का सरल सहज एव स्वाभाविक रूप मिलता है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, विभावना, असंगति, विरोधाभास, सन्देह, अनुप्रास, श्लेष, यमक आदि कितने ही अलंकारों का आकर्षक प्रयोग तुलसी काव्य की उल्लेखनीय विशेषता कही जा सकती है। ये अलंकार सहज रूप से व्यक्त हुए है। उनकी अलंकार योजना के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं।

उपमा—(1) देह-गेह-नेह जानि जैसे घन दामिनी
(2) सजनी ससि में समसील उभै, नव नील सरोरुह से विकसै।"

रूपक—"तुलसी मन मन्दिर में विहरै।"
"चरन कमल वन्दौ हरि राई।"

उत्प्रेक्षा—'सुन्दरता कहँ सुन्दर करई। छवि गृह दीप शिखा जनु बरई।'

अनुप्रास—"जागु, जागु, जीव, जड़ जौहे जग जामिनी।"
"प्रभु, प्रसाद पट भूषन धरहीं'

दृष्टान्त—"हरिपद विमुख लहयौ न काहू सुख, सठ यह समुझि सवेरो।"

विभावना—"शून्य भीति पर चित्रण नहिं तनु बिनु लिखा चितेरे।"

असंगति—"हृदय घाउ मेरे पीर रघुवीरै।" इत्यादि।

तुलसी के काव्य में अंलकारों का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक अलंकारों के वे सम्राट कहे जा सकते हैं।

**प्रश्न 3—"जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भव सिंधु-अपारा।
सोई कृपालु केवटहि निहोरा। जेहि जगु किय तिहूँ पगु ते थोरा।"**

उपरोक्त पंक्तियों में तुलसी ने क्या भाव व्यक्त किए हैं तथा राम की किस विशेषता की ओर संकेत है।

उत्तर—तुलसीदास राम को विष्णु का अवतार मानकर नररूप में उनके विनय और शील का गुण गान कर रहे हैं। वह कहते हैं जिनका स्मरण करने से पापी मनुष्य भी भव सिन्धु को पारकर लेता है। ऐसे कृपालु नारायण केवट से एक छोटी सी नदी पार कराने की प्रार्थना कर रहे हैं। यह नारायण रूपी राम जिन्होने तीन पगों में पूरा ब्रह्माण्ड नाप लिया तथा वह केवट से एक नदी पार कराने की प्रार्थना कर रहे हैं यह उनकी शीलता और सरलता ही है।

प्रश्न 4—तुलसी का संक्षिप्त जीवन परिचय लिखिए ?

उत्तर—भगवान राम के अनन्य उपासक समाज सुधारक एवं हिन्दी साहित्याकाश के देदीप्यमान नक्षत्र महाकवि तुलसीदास का जन्म संवत् 1554 में राजापुर जिला बांदा में हुआ था इन के पिता का नाम आत्माराम तथा माता का नाम हुलसी था। जन्म लेते ही यह अन्य बालकों की तरह रोये नहीं अपितु इनके मुख से राम नाम निकला था। उनके बचपन का नाम रामबोला था। जन्म के समय ही इनके मुख में 32 दाँत थे और इनका जन्म अमुक्त मूल नक्षत्र में हुआ था। माता की मृत्यु हो जाने के कारण इनके पिता ने इनका परित्याग करके मुनियाँ नामक दासी को सौप दिया था। मुनियाँ नामक दासी के बाद वह बाबा नरहरि दास के पास रहे उन्होंने उनका पालन पोषण किया था। उन्हें पढ़ाया लिखाया। तुलसी ने अपने गुरु के रूप में उन्हें स्वीकार किया है। वेदान्त आदि का गम्भीर ज्ञान उन्होंने शेष सनातन नामक आचार्य से लिया था। इनका विवाह रत्नावली नाम की सुन्दर एवं अत्यन्त विदुषी कुमारी से हुआ। ये अपनी पत्नी को अत्यन्त प्रेम करते थे। एक बार इनकी पत्नी ने इसो कारण करारी फटकार लगाई। तभी इन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ उनकी मीठी झिड़की ने तुलसी की आखें खोल दी। वे संसार से विरक्त होकर काशी जाकर राम का गुण कीर्तन करने लगे राम की भक्ति में मग्न होकर उन्होंने अनेक काव्य रत्न दिए जिन में राम चरित मानस भी एक है। राम का गुणगान करते हुए ही सं० 1680 में ये वैष्णव भक्त कवि कुल शिरोमणि प्लेग रोग से ग्रस्त होकर परलोकवासी हो गये।

प्रश्न 5—हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में तुलसी का स्थान निर्धारित कीजिए ?

उत्तर—कवि कुल शिरोमणि तुलसीदास का काव्य कलापक्ष और भावपक्ष दोनों दृष्टियों से अप्रतिम है। उनका रामचरित मानस तो हिन्दुओं के लिए पाँचवें वेद के समान है तथा हिन्दी का सौभाग्य सिन्दूर है। भावों की गहनता अनुभूति की स्पष्टता जैसी तुलसी के काव्य में दृष्टिगोचर होती है। ऐसी अन्य किसी के काव्य में नहीं। ब्रज और अवधी दोनों ही भाषाओं पर तुलसी का जैसा असाधारण अधिकार है वह भी अत्यन्त दुर्लभ है। अलंकारों के प्रयोग और छन्द विधान में तो उनकी तुलना ही कोई नहीं कर सकता। सभी दृष्टियों से तुलसी का काव्य अप्रतिम है। प्रबन्ध काव्य, मुक्तक काव्य, महाकाव्य, गीति काव्य सभी की रचना करने में इन महाकवि ने अद्भुत कौशल दिखाया है इन्हीं सब विशेषताओं के कारण हिन्दी साहित्य में तुलसी ने उच्चतम स्थान प्राप्त किया है।

प्रश्न 6—तुलसीकृत रामचरित मानस की साहित्यिक आलोचना कीजिए।

उत्तर—तुलसीकृत राम चरितमानस हिन्दी साहित्याकाश का दैदीप्यमान नक्षत्र है। इसमें सात सर्ग है इसमें प्रकृति का सश्लिष्ट, उपदेशात्मक आदि रूपों में वर्णन हुआ है। इसका प्रधान रस शान्त है साथ ही अन्य रसों का भी वर्णन हुआ है। इसके नायक राम और नायिका सीता है। इसमें वन गमन, सीता हरण, लक्ष्मण शक्ति आदि अनेक स्थलों पर कवि ने धार्मिक स्थलों का चित्रण किया है।

तुलसीकृत रामचरित मानस का आधार ग्रन्थ बाल्मीकि रामायण माना जाता है। पर बाल्मीकि के कथानक को तुलसी ने अपने कौशल से यथा स्थान परिवर्तित एवं परि-

धित भी किया है। तुलसी ने कुछ प्रसंग नारद पुराण से तथा कुछ महाभारत के शान्ति पर्व से भी लिए।

तुलसी का कथा विन्यास अपने ढंग का है तथा रोचकता लिए हुए है। रामचरित मानस की भाषा अवधी हैं। इसमें दोहा, चौपाई, सोरठा, कवित्त आदि छन्दों का प्रयोग हुआ हैं। अलंकारों की दृष्टि से कवि ने लगभग सभी अलंकारों का प्रयोग किया है और वह भी सहज रूप में प्रयास रूप में नहीं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि तुलसीकृत रामचरित मानस एक श्रेष्ठ महाकाव्य है उसमें वर्णित रूपों में भारतीय जनमानस में आज भी प्रभावित है तथा उसके विधि निषेधों को यथावत् स्वीकार करता चलता है।

प्रश्न 7—तुलसी दास के काव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ बतलाइए।

उत्तर—गोस्वामी तुलसीदास के काव्य की प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं—

(1) सदाचार का पालन
(2) मर्यादा का समर्थन
(3) आर्य संस्कृति की प्रतिष्ठा
(4) राम नाम की महिमा का गाथा
(5) समन्वय की भावना का प्रचार प्रसार
(6) मानव कल्याण की भावना
(7) विश्व बधुत्व की स्थापना
(8) साहित्यिक उच्चादर्शों की प्रतिस्थापना
(9) भाषा का परिष्कार।

प्रश्न 8—तुलसी की विनय पत्रिका की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—रामचरित मानस के बाद श्रेष्ठता के क्रम में विनय पत्रिका आती है। विनय पत्रिका में कलियुग द्वारा सताये जाने पर श्री हनुमान की प्रेरणा से तुलसी ने श्री राम की सेवा में विनय की जो पत्रिका प्रेषित की है वहीं विनय पत्रिका है।

विनय पत्रिका की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :

(1) यह एक मुक्तक काव्य है जिसका प्रत्येक पद स्वतन्त्र एवं पूर्वा पर सम्बन्ध से परे होते हुए भी कथा को क्रमबद्धता के लिए हुए हैं।

(2) इसमें गणेश, सूर्य, शिव, विष्णु, दुर्गा आदि देवी देवताओं की स्तुतियाँ की गयी हैं। सभी से यह निवेदन किया गया है कि वे हृदय में श्रीराम के पास की प्रार्थना करें।

(3) इसमें कवि की भक्ति भावना आत्मनिवेदन और दैन्य वृत्तिका मार्मिक निरूपण हुआ है।

(4) कवि का हृदय अपने इष्ट श्रीराम के प्रति भक्ति भावना से ओत-प्रोत है।

(5) इसमें कवि का दर्शन एवं धर्म विषयक ज्ञान विस्तार से वर्णित है।

(6) तुलसी ने इस ग्रन्थ की रचना द्वारा सिद्ध कर दिया कि उनका न केवल अवधी भाषा पर ही अधिकार है अपितु ब्रजभाषा पर भी उनका समान अधिकार है।

(7) अलंकारों का सहज एवं स्वाभाविक प्रयोग हुआ है।

(8) छन्द की दृष्टि से इसमें गेय पदों का प्रयोग हुआ है।

प्रश्न 9—रामचरित मानस की श्रेष्ठता प्रतिपादित कीजिए ?

उत्तर—रामचरित मानस एक श्रेष्ठ एवं उच्च कोटि का काव्य है। इसमें कवि

ने सात काण्डों में राम के जन्म से पूर्व की कथा से आरम्भ करके राम रावण युद्ध तक लौटने तक की कथा को बड़े ही सुन्दर ढंग से सुनियोजित किया है। तुलसी ने कथा के मार्मिक स्थलों को बड़ी कुशलता के साथ चुना है। साथ ही उनका भावुकता पूर्ण वर्णन प्रस्तुत किया है।

कथा का विनियोजन इस ढंग से किया गया है कि कहीं भी वस्तु व्यापार वर्णन एवं भाव व्यंजना में व्यवधान उपस्थित नहीं हुआ है।

इसके साथ ही तुलसी की सबसे बड़ी विशेषता उनकी सारग्राहिणी प्रवृत्ति थी जिसके बल पर उन्होंने मार्मिक स्थलों का तो प्रभावोत्पादक ढंग से वर्णन किया है पर नीरस प्रसंगों में भी चेतना फूंकदी है। उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर रामचरित मानस की श्रेष्ठता सिद्ध हो जाती है।

प्रश्न 10—तुलसीदास ने अपने ग्रन्थ रामचरित मानस लिखते समय यह उद्घोषणा की थी कि स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा अर्थात् मैं रघुनाथ की गाथा स्वान्तः सुखाय लिख रहा हूँ, आप उनके इस मत से कहाँ तक सहमत हैं ?

उत्तर—तुलसी का आविर्भाव उस समय हुआ था जब अधिकांश कवि राज दरबारों में रहकर राजाओं को प्रसन्न करने के लिए अपनी बुद्धि विलास का उपयोग कर रहे थे अर्थात् उनकी रचना का उद्देश्य परान्तः सुखाय था। उनका लक्ष्य अपने आश्रयदाता को प्रसन्न रखना तथा उससे अधिकाधिक लाभ प्राप्त करना होता था। इस प्रकार उनकी प्रतिभा दूसरों के हाथों बिकी रहती थी। ऐसे वातावरण में तुलसी का स्वान्तः सुखाय का उद्देश्य परान्तः सुखाय का निषेध करने वाला है। परिजन हिताय का नहीं हैं उन्होंने स्वयं ही कहा है—

"कीरति भनिति भूति बल सोई
सुर सरिसम सब कहूँ हित होई ॥"

डा० श्याम सुन्दरदास ने लिखा है कि तुलसी ने जो कुछ भी लिखा है। वह उपदेश देने या कवित्व प्रदर्शन की भावना से नहीं, अपितु स्वान्तः सुखाय लिखा है। उनकी रचना में उनके हृदय के विस्तृत सीधे सादे भाव है। उसमें कहीं भी कृत्रिमता या प्रदर्शन की भावना नहीं हैं। अतः उनका स्वान्तः सुखाय का उद्घोष निश्चय ही जन-कल्याण एवं लोक मंगल की भावना से ओत-प्रोत है।

अतिलघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—तुलसी द्वारा रचित काव्यों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—(1) रामचरित मानस
(2) रामलला नहछु
(3) पार्वती मंगल
(4) जानकी मंगल
(5) वैराग्य संदीपनी
(6) बरबै रामायण
(7) कवितावली
(8) दोहावली
(9) गीतावली
(10) रामाज्ञा प्रश्नावली
(11) श्रीकृष्ण गीतावली
(12) विनय पत्रिका।

प्रश्न 2—तुलसी की भक्ति भावना पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—तुलसी की भक्ति भावना वेद विहित भक्ति थी जिसमें वैराग्य विवेक, शील सदाचार का पूरी तरह् निर्वाह किया गया है।

प्रश्न 3—तुलसी का दार्शनिक मत बताइए।

उत्तर—तुलसी वस्तुतः समन्वयवादी थे। अतः दार्शनिक क्षेत्र में भी हमें इसी भावना के दर्शन होते हैं। इसी कारण कतिपय विद्वान उनके दार्शनिक मतवाद के सम्बन्ध में मतभेद रखते हैं।

सिद्धान्त रूप से तुलसी अद्वैतवादी ही थे। अनेक स्थलों पर उनके विशिष्टा द्वैत-वादी रूप के भी दर्शन होते हैं यथा—

"सिया राम मय सब जग जानी।
करहूँ प्रनाम जोरि युगपानी ।।"

निष्कर्षतः तुलसी समन्वयवादी दार्शनिक थे।

प्रश्न 4—वैष्णव भक्ति के सात अंग कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—वैष्णव भक्ति के सात अंग इस प्रकार हैं—

(1) दीनता
(2) मान भर्षता
(3) भय दर्शन
(4) भर्त्सना
(5) आश्वासन
(6) मनोराज्य
(7) विचारणा।

प्रश्न 5—"बरु तीर मारहूँ लखनु पै। जब लगि न पाय पखारिहौं।"

उक्त पंक्ति में लक्ष्मण के किस मनोभाव की ओर संकेत किया गया है ?

उत्तर—उपरोक्त पंक्ति में तुलसी ने लक्ष्मण के क्रोधी स्वभाव की ओर संकेत किया है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—चरण धोई चढ़ाई नाव न नाथ उतराहि चहौं

उक्त पंक्ति के अनुसार बतलाइए कि श्रीराम से केवट क्या मांग रहा है—

(क) धन (ख) नाव की उतराई
(ग) मणि अंगूठी (घ) चरण धोलेने की विनती।

प्रश्न 2—"बहुत काल मैं कीन मजूरी आजु दीन्ह विधि भलि पूरी
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरे दीनदयाल अनुग्रह तोरे"

उपरोक्त पंक्ति में केवट की कौन-सी भावना व्यक्त होती है ?

(क) लोभ (ख) भक्ति
(ग) अनुग्रह की (घ) अहंभाव
(च) धन लोलुपता।

प्रश्न 3—रामचरित मानस की भाषा है—

(क) हिन्दी (ख) अवधी
(ग) खड़ी बोली (घ) ब्रजभाषा
(च) संस्कृति।

प्रश्न 4—तुलसीदास की भक्ति किस भाव से अनुप्राणित है ?

(क) सखा भाव (ख) दीन भाव
(ग) भ्रातृ भाव (घ) दास्यभाव
(च) करुण भाव।

प्रश्न 5—'गीतावली' किस काव्य की कोटि में आता है ?

(क) खण्ड काव्य (ख) प्रबन्ध काव्य
(ग) महाकाव्य (घ) गीति काव्य
(च) मुक्तक काव्य।

प्रश्न 6—तन की दुति स्याम सरोरुह लोचन"......मन मन्दिर में विहरै" पद में किस रस का परिपाक हुआ है ?

(क) श्रृंगार (ख) करुण
(ग) वात्सल्य (घ) शान्त
(च) हास्य।

प्रश्न 7—'राम को रूप निहारति जानकी कंकन के नग की परछाहीं' उक्त पंक्ति में सीता का कौन-सा मनोभाव व्यक्त हुआ है ?

(क) सरलता (ख) सहजता
(ग) प्रेम की रस मग्नता (घ) उदारता
(च) निश्छलता।

उत्तरमाला

(1) घ (2) ख (3) ख (4) घ (5) घ (6) ग (7) ग।

अध्याय 4
रहीम

व्याख्यात्मक प्रश्न

(1) कहा करौ वैकुण्ठ लै, कल्प वृच्छ की छाँह।
रहिमन ढाक, सुहावनी, जो गल पीतम बाँह ॥1॥
जे सुलगे ते बुझ गए, बुझे ते सुलगे नाहिं।
रहिमन दाहे प्रेम के बुझि-बुझि कै सुलगाहिं ॥2॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहों के रचयिता रहीम हैं। रहीम ने दोहावली मुक्तक शैली अपना कर भक्ति नीति और श्रृंगार आदि से सम्बन्धित दोहों की रचना स्वानुभूति के आधार पर की है। प्रस्तुत दोहों में प्रेम की महत्ता स्पष्ट की गयी है। रहीम में प्रथम दोहे में प्रेम की महत्ता का वर्णन किया है।

व्याख्या—रहीम कहते हैं न तो मुझे कल्प वृक्ष की छाया की आवश्यकता है और नहीं मैं स्वर्ग का अभिलाषी हूँ रहीम कहते हैं कि प्रियतम पास हो तो ढाक या घास फूस के पत्तों से निर्मित कुटिया ही मेरे लिए स्वर्ग के समान है (दूसरे अर्थ में प्रियतम का अर्थ परमात्मा से ले सकते हैं। तब इसका अर्थ इस प्रकार होगा) प्रियतम (परमात्मा) की प्रेम और कृपा रूपी वाहे यदि गले में पड़ी रहे तो सभी इच्छाओं पर उसी की छाया रहती है अर्थात् शेष कामनाएँ स्वतः ही समाप्त हो जाती हैं।

दूसरे दोहे में रहीम कहते हैं कि जो सुलगता है वह बुझ जाता है अतः बुझने के बाद उसका सुलगना संभव नहीं होता। परन्तु जो प्रेम की अग्नि से जलते हैं, वह बुझ बुझ के भी सुलगते रहते हैं। अभिप्राय यह है कि विपत्तियों के आने पर प्रेम रूपी अग्नि बुझती नहीं है यदि कोई उसे बुझाना चाहे तो वह और अधिक प्रबल हो जाती हैं।

विशेष—प्रेम पथ में अनन्यता का वर्णन है। प्रेम त्याग एवं कष्ट सहिष्णुता का पर्याय माना है।

प्रियतम के महत्व का प्रतिपादन किया गया है।

तद्भव शब्दावलीं का प्रयोग है।

बुझि-बुझि में पुनरोक्ति प्रकाश अलंकार है साथ अनुप्रास की छटा भी दृष्टव्य है।

(2) रहिमन यह न सराहिए, देन लेन की प्रीति।
प्रानन बाजी राखिए हार होई के जीति ॥3॥
रहिमन मोम तुरंग चढ़ि चलिवो पावक माहिं।
प्रेमपंथ ऐसो कठिन, सब कोउ निवहत नाहिं ॥4॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहे रहीम द्वारा रचित काव्यांश से उदधृत है प्रस्तुत दोहों में प्रेम के मार्ग की कठिनता एवं उसके लिए त्याग भावना का महत्व स्पष्ट किया है।

व्याख्या—रहीम कहते हैं कि लेने देने के ऊपर आधारित प्रेम सराहना नहीं करनी चाहिए क्योंकि लेन देन पर आधारित प्रेम स्वार्थ परिचायक है। अर्थात् प्रेम सच्चा नहीं होता है। अतः उसी प्रेम की सराहना करनी चाहिए जिसमें प्रेमी अपने प्रेम के निर्वाह पर प्राणों की बाजी लगादे, चाहे उसमें जीत हो या उसकी हार अर्थात् त्याग अपनाने पर ही प्रशंसनीय होता है।

दूसरे दोहे में रहीम कहते हैं कि प्रेम का मार्ग बड़ा कठिन है। उस पर चलना कामदेव के घोड़े पर सवार होकर आग पर चलने के समान है ऐसे प्रेम के मार्ग पर हर कोई नहीं चल सकता। अभिप्राय यह है कि प्रेमावस्था में कामदेव मन को सन्तप्त करता है, उस दशा में अनेक कष्ट उठाने पड़ते हैं और लोक लाज का भी परित्याग करना पड़ता है। यह कार्य आग पर चलने के समान कठिन है। इस कठिन कार्य का निर्वाह करने में अर्थात् प्रेम का निर्वाह करने में हर कोई सफल नहीं होता।

विशेष—प्रेम की कठिनता एवं कष्ट सहिष्णुता का वर्णन किया गया है। प्रेम मार्ग को अत्यन्त कठिन बतलाया गया है।

अनुप्रास रूपक दृष्टान्त अलंकारों का प्रयोग है।

(3) रहिमन नीचन संग बसि, लगत कलंक न काहि।
दूध कलारिन हाथ लखि, सब समुझहि मद ताहि ॥7॥
कौन बड़ाई जलधिमिलि गंग नाम भो धीम।
केहिकी प्रभुता नहिं घटी, पर घर गये रहीम ॥8॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहा रहीम दोहावली द्वारा उदधृत है यह दोनों नीति सम्बन्धी दोहों से उद्धृत है। प्रथम दोहे में रहीम ने नीच की संगति का परिणाम क्या होता है, बतलाया है दूसरे दोहे में पराये घर में जाकर रहने का परिणाम बतलाया है।

व्याख्या—रहीम कहते है कि नीच व्यक्ति की संगति करने किसे कलंक नहीं लगता अर्थात् नीच व्यक्ति के साथ संगति करने वाला व्यक्ति भी कलंकित हो जाता है। चाहे वह कितना भी भला क्यों नहीं जिस प्रकार शराब बेचने वाली (कलाल की स्त्री) के हाथ में दूध देखकर भी सब उसे शराब समझते हैं अर्थात् कलारिन के हाथ में दूध जैसी वस्तु भी शराब समझी जाती है।

दूसरे दोहे में रहीम दूसरे के घर रहने में हानि की ओर संकेत कर रहे हैं। रहीम कहते है कि समुद्र में गंगा के मिल जाने से उसको क्या बड़ाई मिलती है। अर्थात् गंगा जब तक समुद्र में नहीं मिलती तब तक वह पूज्य रहती है और सुरसरि कहलाती है परन्तु समुद्र में मिल जाने पर गंगा का अपना कोई अस्तित्व नहीं रहता रहीम कहते हैं ऐसा कौन उदाहरण है जिसका समान पराये घर में चले जाने पर ने घटा हो अर्थात् पराये घर में जाकर रहने से मनुष्य का आदर उसी प्रकार कम हो जाता हैं जिस प्रकार गंगा के समुद्र में मिल जाने पर उसका आदर घर जाता है।

विशेष—अनुप्रास, दृष्टान्त अलंकारों का प्रयोग। ये दोनों नीति सम्बन्धी दोहे हैं। मुक्तक शैली का प्रयोग है।

(4) जैसी जाकी बुद्धि है, तैसो कहै बनाय।
ताको बुरा न मानिये, लेन कहाँ सू जाय ॥10॥
रहिमन अब वे विरछ कहँ, जिनकी छाँह गम्भीर।
बागन बिच-बिच देखियत सेहुड़ कुंज करीर ॥12॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहे में रहीम द्वारा रचित दोहावली के नीति सम्बन्धी दोहों में से उद्धृत हैं। पहले दोहे में रहीम ने बुद्धि और आचरण का सम्बन्ध बतलाया है। दूसरे दोहे में रहीम ने समासोक्ति के माध्यम से संसार के उद्यान में पारस्पारिक प्रेम की भावना रूपी छाया के अभाव की बात कही है।

रहीम कहते हैं प्रत्येक व्यक्ति अपनी बौद्धिक क्षमता के आधार पर कार्य करता है। इसके अतिरिक्त और वह कर ही क्या सकता है? अर्थात् वह अपनी बौद्धिक क्षमता के अनुसार ही आचरण करता है। अतः कवि का स्पष्ट कथन कि जिस व्यक्ति की जैसी बुद्धि होती है, वह वैसी ही बातें भी करता है आचरण या व्यवहार बौद्धिक क्षमता की ही उपज है। अतः ऐसी स्थिति में उसके व्यवहार का बुरा नहीं मानना चाहिए। कारण यह है कि वह व्यक्ति अतिरिक्त बुद्धि कहाँ से लाए ? उसके पास जितनी बुद्धि है उसका उतना ही उपयोग कर सकता है।

दूसरे दोहे में रहीम कह रहे हैं कि समय की गति बड़ी विचित्र होती है एक ऐसा समय था कि जब इस संसार रूपी उपवन में गहरी एवं घनी छाया के वृक्ष हुआ करते थे। किन्तु अब वे सघन प्रेम की छाया वाले वृक्ष रहे ही नहीं जिसके नीचे बैठकर व्यक्ति अपना जीवन यापन कर सके। अब तो समय ही बदल गया है अब तो इस संसार रूपी उद्यान में से ही और करील के ही कांटेदार वृक्ष दिखायी देते हैं। रहीम का इस दोहे से तात्पर्य यह है कि अब पारस्परिक प्रेमभाव की भावना कहीं दिखायी नहीं देती। सर्वत्र कटीला व्यवहार से दिखायी देता है। पहले इस देश में प्रेमभाव की कमी नहीं थी परन्तु अब समय बदल चुका है।

विशेष—रहीम नैतिक मूल्यों में विश्वास करते थे। अतः वह प्राचीन नैतिक मूल्यों के पक्षधर थे।

प्रस्तुत दोहों में कवि ने प्रयोगात्मक शैली का प्रयोग किया है।

अनुप्रास एवं समासोक्ति अलंकार का सौन्दर्य दृष्टव्य है।

गम्भीर छाया—प्रेम का प्रतीक है।

सेहुड़ और करील—कटु व्यवहार का प्रतीक हैं।

(5) धन थोरो इज्जत बड़ी कहि रहीम का बात।
जैसे कुल की कुल वधू, चिथड़न मांहि समात ॥6॥
धनि रहीम जल पंक को, लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन हैं, जगत पियासो जाय ॥7॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहे रहीम द्वारा रचित दोहावली के नीति सम्बन्धी दोहों से लिए गये हैं।

प्रस्तुत दोहों में जीवन व्यवहार तथा आचरण सम्बन्धी मार्मिक और जीवनोपयोगी भाव व्यक्त हुआ है।

व्याख्या—प्रथम दोहे में रहीम कह रहे हैं कि मनुष्य के पास भले ही धन कम हो परन्तु उसकी कुलीनता कम नहीं होनी चाहिए अर्थात् धनाभाव में भी प्रतिष्ठा कम नहीं

होनी चाहिए कुलवधू यदि चिथड़ों में भी रहे तो भी उसकी प्रतिष्ठा धनी नारी से अधिक महत्व रखती है। क्योंकि उसकी सबसे बड़ी पूँजी उसकी कुलीनता, पवित्रता तथा उसका सतीत्व होता है धन नहीं।

दूसरे दोहे में रहीम कह रहे हैं कि वह कीचड़ वाला जल धन्य है जो लघु रूप में होते हुए भी लोगों की प्यास बुझाने में समर्थ है। उस मणि, मोती, रत्न युक्त आकार में बड़ा होते हुए भी समुद्र की क्या बड़ाई है जो जगत की प्यास बुझाने में समर्थ नहीं है। अर्थात् छोटा होते हुए भी जो किसी के काम आ सके वही धन्य है। ऐसे बड़े से क्या लाभ जो बड़ा होते हुए भी किसी के काम न आ सके।

विशेष—भावसाम्य—बड़ा हुआ तो क्या हुआ जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं फल लागे अति दूर।

कुल की कुल वधू में अनुप्रास अलंकार की छटा दृष्टव्य है। प्रथमा दृष्टान्त अलंकार का भी स्वाभाविक प्रयोग है।

ये कवि के अनुभवों का निष्कर्ष है। भाषा सरल तथा सहज रूप में है।

(6) कदली, सीप, भुजंग, मुख स्वाति एक गुन तीन।
जैसी संगति बैठिए, तैसोई ही फलदीन ॥24॥
कैसे निबहैं निबल जन, करि सबलन सौ बैर।
रहिमन बसि सागर बिच, करत मगर सो बैर ॥25॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहे रहीम द्वारा रचित दोहावली से उद्धृत है।

प्रथम दोहे में संगति के प्रभाव का चित्रण है। दूसरे दोहे में निर्बल व्यवित की विवशता का चित्रण है।

व्याख्या—रहीम कह रहे हैं कि स्वाति नक्षत्र की एक बूँद केले, सीप और सर्प के मुख में जाने पर भिन्न-भिन्न रूप में परिवर्तित हो जाती है अर्थात् स्वाति नक्षत्र से बरसा हुआ पानी केले में गिरने पर कपूर, सीप में गिरने पर मोती और सर्प के मुख में पड़कर बिष हो जाता है। अर्थात् स्वाति नक्षत्र का पानी संगति के कारण अनुरूप गुण वाला हो जाता है। इसलिए व्यक्ति जैसी संगति करेगा उसको वैसा ही फल मिलेगा अर्थात् व्यक्ति अच्छी संगति से अच्छा और बुरी संगति से बुरा बन जाता है इसी कारण सोच विचारकर ही संगति करनी चाहिए।

दूसरे दोहे में रहीम कहते हैं कि निर्बल लोग बलशालियों से बैर करके किस प्रकार अपना जीवन निर्वाह कर सकते हैं। अर्थात् निर्बल से बलवान व्यक्ति की कोई बराबरी नहीं होती इसलिए बलवान से बैर करके वह स्वयं संकट में पड़ सकता है। जैसे समुद्र में रहकर मगर से बैर कैसे हो सकता है। बैर रखने पर मगर मच्छ उस व्यक्ति या प्राणी को निगल लेगा। इसलिए निर्बल को सबल से बैर नहीं रखना चाहिए।

विशेष—सत्संगति के लिए कहा गया है संगति के प्रभाव के लिए लोकानुभाव का उदाहरण दिया गया है। दूसरे दोहे में पानी में रहकर मगरमच्छ से बैर वाली कहावत का सुन्दर समावेश किया गया है।

अनुप्रास और दृष्टान्त अलंकार का प्रयोग हुआ है दोहे जैसे छोटे से छन्द में भावों का समायोजन सुन्दर ढंग से किया गया है।

(7) जे रहीम विधि बड़ किए को कहि दूषन काढ़ि ।
चन्द्र दूबरो कूबरो, तऊ नखत तें बाढ़ि ॥28॥
जो बड़ेन को लघु कहै नहिं रहीम घट जाहिं ।
गिरिधर मुरलीधर कहे कछु दुख मानत नाहिं ॥31॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहे रहीम द्वारा रचित दोहावली से उद्धृत है । प्रथम दोहे में रहीम ने विधि की श्रेष्ठता का वर्णन किया है दूसरे दोहे में बहुधन की महिमा का वर्णन किया है और पर दोष-दर्शन को अनुचित बतलाया है । इन दोहों में रहीम की अनुभव चेतना व्यक्त हुयी है ।

व्याख्या—रहीम कहते हैं कि जिसे विधि ने बड़ा बना दिया है, उस पर कोई दोष नहीं मढ़ सकता अर्थात् विधाता की रचना पर दोष निकलना व्यर्थ ही है । जैसे—चन्द्रमा अत्यन्त दुबला और कुबड़ा है परन्तु विधाता ने उसे उच्च स्थान दिया है । इसलिए वह सब नक्षत्रों से बढ़कर माना जाता है भाव यह है कि विधाता ने जिसे बड़ा बना दिया है । वह बेडोल और बदसूरत होने पर भी सभी के लिए सम्मान का पात्र बन जाता है । उसमें कोई भी दोष दर्शन नहीं करता है ।

दूसरे दोहे में रहीम कहते हैं कि यदि बड़े व्यक्ति को कोई छोटा कहे तो उसके छोटा कहने मात्र से वह छोटा नहीं हो जाता । भाव यह है कि छोटा कह देने से बड़े की प्रतिष्ठा में कमी नहीं आती । जैसे पर्वत को धारण करने वाले श्री कृष्ण को मुरली धर कह देने से उनकी प्रतिष्ठा में कोई आँच नहीं आती भाव यह है कि पर्वत को धारण करके उन्होंने लोगों की रक्षा करने का महान कार्य किया और मुरली उस कार्य के सामने छोटी वस्तु है जिससे जनरंजन का कार्य उन्होंने भगवान श्रीकृष्ण को मुरलीधर कह देने से उनका बड़प्पन या गौरव कम नहीं होता केवल कह देने भर से कोई छोटा नहीं होता । छोटा या बड़ा मनुष्य अपने कर्मों से होता है ।

विशेष—'गिरिधर' और 'मुरलीधर' शब्दों का प्रयोग साभिप्राय हुआ है ।

पौराणिक आख्यानों का संकेत किया गया है ।

अनुप्रास और दृष्टान्त अलंकारों का प्रयोग सहज रूप में हुआ है ।

(8) जो 'रहीम' गति दीप की, कुल कपूत गति सोय ।
बारे उजियारो लगे, बढ़े अँधेरो होय ॥32॥
जो रहीम मन हाथ है, तो तन कहु किन जाहिं ।
जल में जो छाया परे, काया भींजति नाहिं ॥33॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण रहीम द्वारा रचित दोहावली से उद्धृत है पहले दोहे में रहीम कुपुत्र के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किये हैं तथा दूसरे दोहे में उन्होंने मन को नियन्त्रण में रखने के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किए हैं ।

व्याख्या—रहीम कहते हैं कि जो गति दीपक की होती है, वही कुल के कुपुत्र की भी होती है । जिस प्रकार दीपक जलने पर प्रकाश देता है, परन्तु बढ़ने पर (बुझने) पर अंधकार कर देता है । उसी प्रकार कुल का कुपुत्र जब जन्म लेता है तो उसके बचपन की उम्र में खशियाँ मनायी जाती । परन्तु जैसे जैसे वह बड़ा होता है तो अपने दुराचरणों से घर में निराशा रूपी अन्धकार भर देता है । आशय यह है कि पुत्र के जन्म से लेकर उसके बचपन तक माता-पिता को बहुत प्रसन्नता होती है । परन्तु जब वह बड़ा होकर बुरे कार्य क रने लगता है तो उसके परिवार में निराशा का अन्धकार फैल जाता है ।

रहीम कहते है कि यदि मन अपने नियन्त्रण में है तो शरीर बुरे आचरण किस प्रकार कर सकता है। जिस प्रकार शरीर की छाया जल में पड़ती है किन्तु शरीर भीगता नहीं है। उसी प्रकार मन के वश में होने पर शरीर भी वश में रहता है। और बुरे आचरण नहीं करता। बुरे आचरण से दूर रहने के लिए मन को वश में करना अत्यन्त आवश्यक है।

विशेष—बारे और बाढ़े शब्द ब्रज भाषा के बहुत प्रचलित लोक भाषा से सम्बन्धित है। लोक जीवन में प्रचलित इन दोनों का अर्थ इस प्रकार होता है—

बारे—जलाना

बाढ़े या बढ़ाना अर्थ बुझाना होता है।

लोक भाषा में प्रचलित इन शब्दों का प्रयोग रहीम साहित्यिक रूप में श्लेषात्मक अर्थ के प्राप्ति के लिए किया है। जोकि अत्यन्त आकर्षक है। पहले दोहे में श्लेष अलंकार दूसरे में दृष्टान्त अलंकार है।

(9) जो विषया संतन तजी, मूढ़ ताहि लपटात।
ज्यों नर डारत बमनकर, स्वान स्वाद सों खात ॥34॥
तबहीं लौ जीवो भलो, दीबो होय न धीम।
जग में रहिवो कुचित गति, उचित न होय रहीम ॥35॥
थोथे बादर क्वार के ज्यों रहीम घहरात।
धनी पुरुष निर्धन भयेः करैं पाछिली बात ॥36॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत दोहे रहीम द्वारा रचित 'रहीम दोहावली' से उद्धृत हैं यह दोहे रहीम ने नैतिक और आचरणिक दृष्टिकोण से लिखे हैं। पहले दोहे में विषय भोग आदि को अवांछनीय और मूर्ख व्यक्तियों के ग्रहण करने योग्य बतलाया है। दूसरे और तीसरे दोहे में उदारता एवं दान शीलता का वर्णन किया है।

व्याख्या—प्रथम दोहे में रहीम कहते है कि जिस विषय भोग को सन्तपुरुष अवांछनीय और विनाशकारी मानकर छोड़ देते हैं। मूर्ख व्यक्ति उसी को ग्रहण करते हैं। अर्थात् उससे लिपटे रहते हैं उनकी यह स्थिति उस कुत्ते के समान होती है जो मनुष्य द्वारा वमन किए गये पदार्थ को बड़ी रुचि से खाता है। कुत्ता मूर्ख होता है अतः नर के त्याज्य को ग्रहण करता है। उसी प्रकार मूर्ख व्यक्ति संतों के त्याज्य को अपने से लिपटाये रहता है।

दूसरे दोहे में रहीम कह रहे हैं कि मनुष्य को संसार में तभी तक जीना चाहिए जब तक उसका मनुष्यों को दान देना धीमा न पड़ जाए। इस संसार में अत्यन्तकृपण और धनहीन होकर जीना उचित नहीं है अर्थात् उदारता और दानशीलता से जीवन आनन्द पूर्वक बीत जाता है। परन्तु कृपणता से जीवन बिताना उचित नहीं होता। इसका दूसरा अर्थ इस प्रकार भी कर सकते हैं कि मनुष्य का जीना तभी तक श्रेष्ठ है जब तक ज्ञान, चेतना रूपी दीपक प्रज्ज्वलित रहे ज्ञान के विलुप्त हो जाने पर जीवन जीने का कोई औचित्य नहीं है इसका कारण यह है बुरे चित अर्थात् कुचित्त अर्थात् विषयों में आसक्ति रखकर जीना अनुचित होता है। चित्त की निर्मलता एवं पवित्रता सदैव वांछनीय होती है।

तीसरे दोहे में रहीम कहते हैं कि क्वार मास के थोथे बादल होते हैं वे पानी नहीं बरसाते पर उमड़ते घुमड़ते हुए गर्जना करते रहते हैं। इसी प्रकार धनवान व्यक्ति जब निर्धन हो जाता है तो वह अपनी दान शीलता की पिछली बातों को बखान करता रहता है, परन्तु वह दान नहीं कर पाता। भाव यह है कि क्वार मास के बादल जलहीन होते हैं

परन्तु वह वर्षा ऋतु के बादलों की भाँति ही गरजते रहते हैं। इसलिए वह थोथे होते हैं। निर्धन व्यक्ति भी धन सम्पन्नता के काल की बातें बढ़ चढ़कर किया करता है। आशय यह है कि मनुष्य को अपने वर्तमान में जीना चाहिए भूतकाल के स्वप्नों में ही खोये नहीं रहना चाहिए।

विशेष—धनवान व्यक्तियों के निर्धन हो जाने पर उनकी विवशता चित्रित हुयी है।

अनुप्रास, उपमा एवं दृष्टान्त अलंकारों का सार्थक प्रयोग है।

कुचित गति से अभिप्राय मन की कलुषता और कृपणता से है। पाछिली बात का आशय पिछले दिनों की बातें करने से है।

प्रथम दोहे में वीभत्स रस का चित्रण हुआ है।

बरवै—

(10) मन मोहन बिन देखे दिन न सुहाय।
गुन न भूलिहौं सजनी, तनक मिलाय॥
समुझति सुमुखि सयानी बादर झूम।
बिरहिन के हिय भभकत, तिनकी धूम॥
डोलत त्रिविध मरुतवा, सुखद सुठार।
हरि बिनु लागत सजनी, जिमि तरबार॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत पद्यांश रहीम द्वारा रचित बरवै से उद्धृत है। इसमें कृष्ण के वियोग में गोपियों की मनः स्थिति का मार्मिक वर्णन है।

व्याख्या—एक सखी दूसरी सखी से कह रही है सखि प्रियतम कृष्ण को देखे बिना दिन अच्छा नहीं लग रहा है। अर्थात् मेरा मन उत्कंठित हो रहा है। यदि तुम क्षणभर के लिए भी उनसे मिला दो तो मैं आजीवन तुम्हारे इन गुणों को नहीं भूलूंगी अर्थात् तुम्हारा यह उपकार नहीं भूलूँगी।

रहीम कहते हैं कि विरहणी बादलों को उमड़ते हुए देखती है तो कहती है हे सखी यह बादलों की घटा नहीं है अपितु किसी विरहणी का हृदय दहक रहा है और उससे धुँआ निकलकर आकाश में फैल रहा है।

विरहणी अपनी सखी से कहती है यद्यपि शीतल, मन्द, सुगन्धित तीन प्रकार की वायु प्रवाहित हो रही है और प्रत्येक प्राणी इस वायु से सुख की अनुभूति कर सकता है परन्तु प्रियतम कृष्ण के बिना मुझे यह वायु तलवार के समान तीक्ष्ण और कष्टकारी लग रही है। अभिप्राय यह कि संयोग स्थिति जो वस्तुएँ मन में आनन्द की अनुभूति उत्पन्न करती थी वही अब वियोगकाल में कष्टकारी प्रतीत हो रही है।

विशेष— विरहणी नायिका की सन्तप्तावस्था का वर्णन है।

तीसरे छन्द में विरहोत्कंठिता नायिका का स्वाभाविक चित्रण किया गया है। विरह की स्मरण दशा का वर्णन है।

उपमा अनुप्रास, उत्प्रेक्षा अलंकारों का सुन्दर प्रयोग है।

(11) जब ते आयौ सजनी मास असाढ़।
जानि सखिवा तिय के, हिम की गाढ़॥
जदपि वसत हैं सजनी, लाखन लोग।
हरि बिन कित यह चित को, सुख संजोग॥
देखन ही को निसदिन तरफत देह।
यही होत मधूसूदन पूरन नेह?॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत पद्यांश रहीम द्वारा रचित बरवै से उदधृत है इसमें प्रियतम के बिना नायिका की मन:स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है।

व्याख्या—विरहणी नायिका कहती है जब से यह अषाढ़ मास लगा है। तब से ही हमें उस निष्ठुर प्रियतम के हृदय की गहराई का पता लगा है। यदि प्रिय के मानस में हमारे लिए तनिक भी प्रेम होता तो इस ऋतु में उसे हमारी याद नहीं आती।

यद्यपि इस दुनिया में लाखों लोग निवास करते हैं, किन्तु हमारा मन प्रियतम कृष्ण के बिना किसी प्रकार कि सूखानुभूति प्राप्त नहीं करता अर्थात् यद्यपि यह संसार सूना नहीं है, फिर भी प्रियतम कृष्ण के बिना मुझें यह संसार वीरान लग रहा है। प्रियतम कृष्ण के बिना मुझे सुख की प्राप्ति कैसे हो सकती है।

रहीम विरहणी नायिका के मनोभाव व्यक्त करते हुए कहते हैं कि हमारा यह सम्पूर्ण शरीर प्रियतम की छवि देखने के लिए तड़पता रहता है। किन्तु वे आते ही नहीं है क्या यही पूर्ण प्रेम कहलाता है कि प्रेमी तड़पता रहे प्रिय आकर खबर तक न ले।

विशेष—वियोग का सरस व सहज वर्णन है। अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।

(12) घेर रह्यौ दिन रतियां, विरह बलाय।
मोहन की वह वतियां ऊद्यौ हाय ! ॥
मोहि मीत बिन देखे छिन न सुहात।
रहत मरयौ हिय साँसन, आँसुन नैन ॥
जब ते बिछुरे मितवा, कछु कस चैन।
रहत मरयौ हिय सांसन, आँसुन नैन ॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत छन्द रहीम द्वारा रचित बरवै से लिए गये हैं। इस अवतरण में विरहणी गोपियों की व्यथा का चित्रण किया गया है। उद्धव गोपियों को ज्ञान-योग का उपदेश देता है, तब गोपियाँ प्रेम रोग की बातें करती है प्रेम के लिए वह अपने विरही जीवन को श्रेष्ठ बताती हैं।

व्याख्या—विरहणी नायिका उद्धव से कहती है हे उद्धव यह विरह रूपी मुसीबत हमें दिन रात घेरे रहती है इसी कारण हम प्रियतम कृष्ण की प्रेम भरी मीठी बातें सुनने के लिए तरसती रहती हैं परन्तु हे उद्धव हमारे भाग्य में वह सुख कहाँ है यदि वह सुखद अवसर मिलता तो हमारे सारे कष्ट दूर हो जाते।

विरहणी नायिका कहती है कि मुझे प्रियतम को देखे बिना एक क्षण भी अच्छा नहीं लगता है अर्थात् मैं हर समय प्रिय दर्शन के लिए लालायित रहती हूँ और सदा उनका सामीप्य चाहती हूँ परन्तु मुझे ऐसा अवसर नही मिलता है। इसीलिए विरह के कारण हर क्षण मेरे कमल नेत्र आसुओं से भरकर उलझते रहते हैं अर्थात् मेरी आँखें सदा अश्रु धारा बहाती रहती हैं।

विरहणी नायिका कहती है जबसे मन मीत कृष्ण बिछुड़े हैं तब से मुझे किसी प्रकार चैन नही हैं उसासों से हृदय भरा रहता है और आँसूओं से आँखें भरी रहती हैं अर्थात् प्रियतम के बिना हमें चैन कैसे आ सकता है ?

विशेष—विरह व्यथा का वर्णन है।

अनुप्रास, पुनरोक्ति प्रकाश, रूपक अलंकारों का प्रयोग सहज रूप में हुआ है।

(13) जबते मोहन बिछुरैं कुछु सुधि नाहिं।
रहे प्रान परि पलकनि, द्वग मग माहि॥

उझकि उझकि चित दिन दिन, हेरत द्वार।
जबते बिछुरे सजनी नन्द कुमार॥
जबते बिछुरे मोहन भूख न प्यास।
बेरि बेरि बढ़ि आवत बडे उसास॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत छन्द में रहीम द्वारा रचित बरवै नायिका भेद से उद्धृत है। इस में विरहणी नायिका के मनोस्थिति का मार्मिकता के साथ वर्णन है।

व्याख्या—विरहणी गोपी कहती है कि जबसे प्रियतम कृष्ण हमसे बिछुड़े हैं तब मुझे किसी प्रकार का होश नहीं है। प्रियतम की प्रतीक्षा में मेरे प्राण पलकों पर अटके रहते हैं और मेरी दृष्टि उनके आगमन के मार्ग पर ही लगी रहती है। अर्थात् मैं रात दिन उनके आगमन मार्ग को देखती रहती हूँ इस कारण मेरे प्राण और नेत्र मेरे वश में नहीं हैं।

बिरहणी गोपी अपनी सखी से कहती है हे सखि ! जब से वे प्रियतम नन्द कुमार श्री कृष्ण हमसे बिछुड़े हैं। तब से मेरा चित्त बेचैन रहता है। मेरा यह चित्त बार-बार उझक-उझक कर दरवाजे की ओर देखता रहता है अर्थात् मेरा मन प्रियतम के मार्ग को टकटकी लगाकर निहारता रहता है ? मन में प्रियतम के आगमन की उत्सुकता बनी रहती है इस कारण मेरी आँखें सदा द्वार पर ही लगी रहती हैं।

गोपी कहती है कि जब से प्रियतम कृष्ण मुझसे बिछुड़े है तब से न तो मुझे भूख लगती है और न ही मुझे प्यास लगती है तब से बार-बार लम्बी सांसे बढ़ रही हैं। अर्थात् प्रियतम के विरह मे सन्तप्त रहने से हृदय अत्यन्त व्यथित है तथा लम्बी-लम्बी साँसे छोड़ रहा है।

विशेष—विरहरणी नायिका के विरह व्यथा का चित्रण प्रिय मिलन की उत्सुकता का मार्मिक चित्रण किया गया है।

अनुप्रास पुनरुक्ति प्रकाश और काव्यलिंग अंलकारों का सुन्दर प्रयोग हुआ है। विप्रलम्भ शृंगार का वर्णन है।

(14) अन्तरगत हिय बेधत, छेदत प्रान।
विष सम परम सबनतें, लोचन बान॥
उन बिन कौन निवाहै, हित की लाज।
उधो तुमहू कहियो, धनिब्रजराज॥
कहा कान्हते कहनों, सब जग सखि।
कौन होत काहू के, कुबरीं राखि॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण में रहीम ने विरहिणी नायिका को व्यथा तथा प्रेमी दृष्टि की कठोरता का चित्रण किया है। उद्धव ज्ञान-योग का उपदेश गोपियों को देने आये, परन्तु उनके उपदेश का गोपियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। तब वापस लौटते समय उद्धव को कृष्ण लिए गोपियों ने उपालम्भात्मक उपदेश दिया।

व्याख्या—विरहिणी गोपी कहती है कि प्रियतम के प्रेमाविष्ट लोचन रूपीवाण मेरे हृदय में प्रविष्ट होकर उसे वेध रहे हैं। ये लोचन वाण विष के समान अत्यन्त कष्ट दायक हैं। व्यथा देने वाली अन्य चीजों की अपेक्षा ये लोचन वाण अत्यन्त कुटिल और कष्ट दायक हैं।

गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि उन प्रियतम कृष्ण के बिना हमारे हित की बात और कौन कर सकता है। हे उद्धव तुम उनसे कह देना कि आप ब्रजराज धन्य हैं अर्थात्

प्रियतम कृष्ण को हमारी स्थिति बता देना कृष्ण के बिना हमारे प्रेम की लाज रखने वाला कोई है ही नहीं। उनका उत्तरदायित्व अब और बढ़ गया है इसलिए उन्हें अब हमारी लाज रखनी चाहिए।

गोपियाँ कहती हैं कि अब प्रिय कृष्ण के विषय में क्या कहें अर्थात् इतनी विरह व्यथा भोगने के पश्चात् भी कुछ कहना सुनना बाकी रह गया है। सारा संसार साक्षी है, अर्थात् हमारी प्रियतम कृष्ण के प्रति एक निष्ठा तथा सर्मपणशीलता से सारा जग परिचित है। प्रियतम श्रीकृष्ण को हमारी सुध लेनी चाहिए थी परन्तु यह कहने से क्या लाभ है अब तो उन्होंने कूबरी कुब्जा को अपना लिया है और उसी में खुश हैं तो फिर वह हमारे कैसे हो सकते हैं। अर्थात् वह तो अब कूबरी कुब्जा के ही होकर रह गये हैं उन्हें हमारी सुध नहीं रही फिर उन्हें ये प्रेम सन्देश भिजवाने से क्या लाभ।

बिशेष—नायिका की विरह वेदना का मार्मिक वर्णन है प्रणय निवेदन की भावना अत्यधिक है तृतीय बरबै में अत्यन्त तीखा उपालम्भ है कुब्जा के प्रति पर स्त्री डाह का भी चित्रण है :

अनुप्रास, रूपक अलंकार का प्रयोग है।

उक्ति वैचित्र्य का चमत्कार दृष्टव्य है।

विप्रलम्भ शृंगार का मार्मिक चित्रण हुआ है।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—रहीम की भक्ति भावना पर एक निबन्ध लिखिए ?

उत्तर—भक्तिकाल में एक ओर निर्गुण ज्ञानधारा का प्रसार हो रहा था, तो दूसरी ओर सगुण भक्ति का प्रचार व प्रसार हो रहा था। परन्तु रहीम धार्मिक कट्टरता से दूर रहकर भागवत सम्प्रदाय के समर्थक थे। वे सारे संसार को एक सृष्टा की सृष्टि मानते थे। वे राम, कृष्ण, खुदा, परमेश्वर आदि में कोई भेद नहीं मानते थे। उन्होंने परमात्मा को राम तथा रहीम दोनों ही नाम से सम्बोधित किया है। इसी कारण उन्होंने राम के प्रति अनन्य भक्ति भावना दिखाई है। कृष्ण भक्ति से सम्बन्धित इनके अनेक दोहे कवित्त और सवैये, हैं जिसमें उनकी अनन्य भक्ति भावना की झलक मिलती है। उनकी काव्य सर्जना उनकी भक्ति की स्पष्ट छाप है। यद्यपि वे मुसलमान थे, मुस्लिम सभ्यता में पले एवं बढ़े थे। किन्तु फिर भी वह कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति भावना रखते थे। इसकी भक्तिभाव पर मुग्ध होकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने यह दोहा लिखा—

"इन मुसलमान हरिजनन पर
कोटिक हिन्दू वारिए॥"

उनकी कृष्ण के प्रति अनन्य आस्था व्यक्त हुयी है इसी कारण वे प्रतिदिन उनका नाम स्मरण करते हैं वे हर समय उनकी रूप छवि का चिन्तन करते हुए उसके सम्मुख सांसारिक सुखों को त्याज्य मानते हैं। वे रात दिन कृष्ण में ही अपना चित्त लगाये रखना चाहते हैं। वे कहते हैं—

"जिन रहीम चित आपनो, कीन्हों चतुर चकोर
निसिवासर लाग्यो रहे, कृष्णचन्द्र की ओर।"

रहीम के अनेक दोहे और सवैये कृष्ण भक्ति से समन्वित हैं। उनके दोहों में सरस

भक्त हृदय के समर्पण भाव के स्पष्ट दर्शन होते हैं कृष्ण पर रहीम अनन्य विश्वास रखते हैं यथा—

"रहिमन कोऊ का करैं, ज्वारी चोर लबार।
जो पति राखनहार है, माखन चाखन हार॥"

रहीम ने अपने काव्य में श्रीकृष्ण की रूप माधुरी का चित्रण करते हुए अपनी अनन्यता निष्ठा एवं आस्था व्यक्त की है।

"छवि आवन मोहन लाल की
काछनि काछे कलित मुरली कर पीत पिछौरी साल की
× × ×
यह सरूप निरखै सोई जाने इस रहीम के हाल की॥"

मदनाष्टक में रहीम ने श्री कृष्ण के एक-एक अंग का उनकी छड़ी और मूँदरी का भक्तिभाव के साथ चित्रण किया है और यह दर्शाया है कि अपने आराध्य की प्रत्येक वस्तु कितनी मोहक होती है। फुटकर पदों में इनकी दास्यभाव की भक्ति भावना का परिचय दिया है।

रहीम भक्तिभावना के लिए मन की पवित्रता पर बल देते हैं। यदि व्यक्ति अज्ञान वश भी ईश्वर का नाम लेता है तो वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।

कृष्ण भक्ति की तरह ही रहीम के दोहों में राम भक्ति भी पूरी तरह मिलती है राम भक्ति से प्रेरित होकर लिखा है—

"रहिमन धोखे भाव से, मुख से निकले राम।
पावत पूरन परमगति, कामादिक को धाम॥"

रहीम के मन में राम के प्रति बड़ी ललक थी। वे संसार में आकर भगवत भक्ति को उद्धार का एक मात्र साधन समझते थे। उन्हें सबसे अधिक घृणा, झूठ और मिथ्या प्रचार प्रसार से थी वे नाम स्मरण और जपतप को बहुत महत्व देते थे। रहीम का ऐसा विश्वास था कि इससे भगवान भक्त के वश में हो जाते हैं।

यथा— रहिमन मनहि लगाई के देखिलेहु किन कोय।
नर को बस करिबो कहा, नारायण बस होय॥

इस तरह रहीम राम और कृष्ण दोनों के ही भक्त थे। वे भक्ति भाव के पोषक थे और सगुणोपासना के समर्थक कवि व साहित्यकार थे। रहीम के काव्य में सखा, दास्य और माधुर्य भाव की भक्ति के दर्शन होते हैं। उनकी भक्ति में आडम्बर एवं कट्टरता की अपेक्षा पवित्र आचरणशीलता, सर्मपणशीलता और अनन्य आस्था का स्वरमुखरित हुआ है।

प्रश्न 2—"कवि रहीम ने ज्ञान भक्ति नीति और श्रृंगार का समन्वित रूप प्रस्तुत करके अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया है।"

अथवा

"जीवन के मीठे अनुभवों तथा कटुअनुभवों के कारण रहीम ने जीवन व्यवहार तथा आचरण सम्बन्धी मार्मिक रचना प्रस्तुत की है। इस कथन के सन्दर्भ में रहीम के काव्य का मूल्यांकन कीजिए ?

अथवा

रहीम दोहावली में नीति उपदेशात्मकता सरल सरस चित्रण हुआ है। इस कथन की युक्ति युक्त समीक्षा कीजिए।

उत्तर—रहीम के काव्य का समग्र रूप से अध्ययन करने पर स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जाता है कि उनका लोकानुभव अत्यन्त व्यापक था। वह अकबर के नवरत्नों में से एक थे रहीम साहित्य के विशेष प्रेमी थे ये विविध भाषाओं के ज्ञाता थे साथ भक्त, ज्ञानी, नीतिज्ञ और शृंगार प्रिय भी थे। इन्होंने विभिन्न स्थानों का भ्रमण किया था इसी कारण वह अनेक लोगों के सम्पर्क में रहने से और जीवन में सुख दुख के अनेक उतार-चढ़ाव देखने से रहीम का लौकिक ज्ञान अत्यन्त विस्तृत हो गया था यही कारण है। कि वे इनकी रचनाओं में जीवन के खट्टे मीठे अनुभवों को अभिव्यक्ति प्राप्त हुयी है।

विषय वस्तु की दृष्टि रहीम द्वारा रचित दोहावली में लौकिक तथा व्यावहारिक नीति से सम्बन्धित अनेक दोहे समाविष्ट हैं। रहीम ने क्षमाशीलता, संगति का परिणाम, विवेकशीलता, स्वाभिमान, परोपकार, सज्जनता आदि का दृष्टान्तों के साथ चित्रण किया है। इसी प्रसंग में उन्होंने नीति सम्बन्धी उपदेश भी दिया है। उनके नीति उपदेश मानवीय भावों पर खरे उतरते हैं तथा वे अत्यन्त सरल, सरस और सम्प्रेषणीय हैं। उनके नीति उपदेशों का उदाहरण सहित विवेचन प्रस्तुत है—

1. **स्वाभिमान की रक्षा**—रहीम अपने स्वाभिमान की रक्षा करने का प्रत्येक व्यक्ति को उपदेश दिया है। उन्होंने कहा है कि जहाँ मनुष्य की प्रतिष्ठा और मर्यादा पर आँच आये वहाँ उसे कदापि नहीं जाना चाहिए। उनके अनुसार वही कार्य करना चाहिए जिसमें उसकी प्रतिष्ठा बनी रहे।

"मान सहित विष खाय के शम्भु भये जगदीश
बिना मान अमृत पियो, राहु कटायो सीस॥"

इसी प्रकार उन्होंने अभिमान की महत्ता बताते हुए उपदेश दिया है—

"रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून
पानी गये न ऊबरैं, मोती मानस, चून।"

2. **संगीत का प्रभाव**—रहीम ने अपने काव्य में सत्संग और कुसंगति का बहुत महत्व प्रतिपादित किया है। कुसंगति से अच्छा व्यक्ति भी बुरा हो जाता है सतसगति मनुष्य में अच्छे आचरण आयेंगे। उनके अनुसार व्यक्ति जैसी संगति करेगा उसको वैसा ही फल मिलेगा इसका उदाहरण देकर रहीम ने अपनी बात को प्रतिपादित किया है।

"कदली, सीप, भुजग मुख, स्वाति एक गुनतीन,
जैसी संगति बैठिए तैसोई फल दीन॥"

इस प्रकार रहीम के काव्य में सत्संगति के सन्दर्भ में अनेक, नीति सम्बन्धी दोहे हैं। जिसमें प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से अच्छे लोगों की संगति करने का उपदेश दिया गया है।

3. **दान शीलता**—रहीम ने समर्थ व्यक्तियों को दान शीलता का उपदेश दिया है। उन्होंने अनेक स्थानों पर दान देने व भीख न माँगने पर अपना मत व्यक्त किया है।

वे कहते हैं—रहिमन वे नर मर चुके, जे कहूँ माँगन जाहिं।
उनते पहले वे मुए जिन मुख निकसत नाहिं॥

4. **परोपकार की भावना**—रहीम परोपकार को मानव जीवन का सर्वश्रेष्ठ गुण बतलाया है। जो लोग गरीबों एवं दुर्बलों पर दया करके उनकी भलाई करते हैं वे वस्तुतः मानवता के उपासक हैं और महान माने जाते हैं। परोपकारी व्यक्ति बिना किसी स्वार्थ के दूसरों के लिए हित करता है। ऐसे लोगों को रहीम ने धन्य माना है और अन्य मनुष्यों को बिना स्वार्थ के दूसरों का हित करने की प्रेरणा दी है—

यथा—

"वे रहीम नर धन्य हैं, पर उपकारी अंग
बांटन बारे को लगे, ज्यों मेंहदी को रंग।"

5. **दुर्जनों की निन्दा**—नीति प्रधान दोहों में रहीम ने जहाँ सज्जनों की प्रशंसा की है वही दुर्जनों की निन्दा भी की है उन्होंने कहा है कि ओछे लोगों के साथ रहने से अच्छे (सज्जन) लोग भी कलंकित हो जाते हैं। और उन्हें अनेक कष्ट उठाने पड़ते हैं।

"कहु रहीम कैसे निभै, कदली बेरि को संग।
वे डोलत रस आपने, उनके फाटत अंग॥"

दुर्जनों की संगति से दूर रहकर सज्जनों की संगति करनी चाहिए और उन्हीं से मित्रता रखनी चाहिए रहीम कहते सज्जन व्यक्ति सदा ही दूसरों का भला करते रहते हैं यदि वे रूठ भी जाए तो उन्हें मना लेना चाहिए—

"टूटे सुजन मनाइए जो टूटे सौ बार।
रहिमन फिर-फिर पोइए टूटे मुक्ताहार॥"

6. **सच्चे मित्र की पहचान**—सच्चे मित्रों की पहचान करना बहुत कठिन कार्य है रहीम ने सच्चे मित्र का लक्षण उपस्थित करते हुए मित्रता का निर्वाह करने का उपदेश दिया है। रहीम कहते थे कि सम्पत्ति काल में सब मित्र बनते हैं। परन्तु सच्चा मित्र विपत्ति आने पर ही काम आता है। रहीम कहते हैं कि थोड़े दिन की विपत्ति भी भली है। क्योंकि उससे अपने मित्रों की पहचान हो जाती है। सच्चा मित्र आपत्तिकाल में पूरा साथ देता है—

"मथत मथत माखन रहै, दही मही बिलगाय।
रहिमन सोई मीत है, पीर परे ठहराय॥"

7. **क्षमाकीलता**—रहीम ने ओछे लोगों की निन्दा करते हुए बड़े लोगों की क्षमाशीलता की प्रशंसा की है। क्षमाशील होने से व्यक्ति की मान-मर्यादा में वृद्धि होती है और उसके यश का प्रसार होता है।

"छिमा बढ़न को चाहिए, छोटन को उतपात।
का रहीम हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात॥"

8. **स्वार्थपरता की निन्दा**—रहीम ने स्वार्थ भावना की निन्दा की है उन्होंने बतलाया कि स्वार्थपरता के कारण व्यक्ति निकृष्ट आचरण करने लगता है ऐसे व्यक्ति काम निकाल कर मुख मोड़ लेते हैं। रहीम के अनुसार स्वार्थी व्यक्ति अपने आश्रयदाता या हितचिन्तक का अहित कर डालता है। ऐसे लोगों से सदा दूर रहना चाहिए। क्योंकि ऐसे लोग तो सम्पत्तिकाल में साथी बन जाते हैं। ऐसे व्यक्ति अत्यन्त नीच होते हैं। यथा—

"कहि रहीम या जगत में, प्रीति गई दे टेर।
रहि रहीम नर नीच, स्वारथ स्वारथ हेर॥"

9. **कर्मशीलता**—रहीम ने गीता के समान कर्म योग का भी प्रतिपादन किया है। उन्होंने बतलाया है कि मनुष्य का कर्तव्य केवल करनी करते रहना है उसका फल तो ईश्वर के हाथ है। यथा—

"निज कर क्रिया रहीम कहि, सुधि भावी के हाथ।
पांसे आपने हाथ में, दाँव न अपने हाथ॥"

यदि व्यक्ति उचित कर्म करता रहे तो उसे उसका फल अवश्य ही प्राप्त होता है। इसीलिए तन मन लगाकर कर्म करते रहना चाहिए।

10. समय का महत्व—रहीम ने समय की गतिशीलता एवं महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए बतलाया है कि सदा समय एक सा नहीं रहता है, इस लिए समय के अनुसार ही कार्य करना चाहिए। बुरा समय आने पर अनुचित वचन भी सहन करने पड़ते हैं।

अन्य इसी प्रकार रहीम के नीति सम्बन्धी दोहों में अनेक-अनेक बातों से सम्बन्धित उपदेश मिलते हैं जैसे, विवेकशील होकर कार्य करना चाहिए। चापलूसी की सदा निन्दा करनी चाहिए। अनुचित कर्म लोभ लालच से बचना चाहिए समय के अनुसार कार्य करना, धन की अधिकता पर गर्व नहीं करना चाहिए समय एवं धन का सदुपयोग करना चाहिए। इसी प्रकार रहीम ने संसार की नश्वरता, व्यवहारिक, अनुभव की परिपक्वता दुर्व्यसनों का कुप्रभाव, विधाता की सर्वशक्तिमत्ता धन की अस्थिरता, और विषयासक्ति आदि पर अनेक उपदेशात्मक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं।"

रहीम दोहावली में लौकिक एवं व्यावहारिक ज्ञान का अच्छा समावेश है। रहीम ने अपने अनुभव के आधार पर विभिन्न दृष्टान्तों का सुन्दर समावेश कर उपदेशात्मक बातें कहीं हैं इन उपदेशों में उनके जीवन मे प्राप्त किए गये खट्टे मीठे अनुभवों की झलक स्पष्ट रूप से मिलती है इनके नीति उपदेश अत्यन्त प्रभावशाली एवं सम्प्रेष्य है। इनके नीति सम्बन्धी उपदेशों में अत्यन्त सरसता एवं सरलता है।

प्रश्न 3—रहीम के काव्य की विशेषताएँ अपने शब्दों में लिखिए।

उत्तर—अब्दुर रहीम खानखाना सम्राट अकबर के अच्छे सेनापति तथा दरबार के नवरत्नों में से थे। ये अकबर के प्रिय पात्र थे। परन्तु अकबर के पुत्र जहाँगीर ने इनके साथ बहुत बुरा व्यवहार किया इन्हें राज्य से निकाल दिया और इनकी सारी सम्पत्ति छीन ली। मुसलमान होते हुए भी यह कृष्ण के परम भक्त थे। यह अरबी, फारसी, तुर्की के अच्छे ज्ञाता तो थे ही साथ ही संस्कृत और हिन्दी भाषाओं के अच्छे ज्ञाता भी थे इनका भारतीय संस्कृति के प्रति बहुत लगाव था।

रहीम का स्वभाव कोमल तथा उदार था। रहीम के उदार स्वभाव के कारण उनकी सभा सदैव विद्वानों से भरी रहती थी। रहीम दानी परोपकारी और अत्यन्त सज्जन व्यक्ति थे। भक्ति, नीति, शृंगार के भावों से समन्वित रहीम का काव्य भक्ति नीति और शृंगार के भावों से भरा था। उनका यह काव्य विशिष्ट सजग प्रतिभा का परिणाम है।

रचनाएँ—रहीम की प्रमुख रचनाओं में, नगर शोभा बरबै नायिका, भेद, बरबै शृंगार सोरठा, मदनाष्टक, फुटकर पद, रहीम सतसई आदि की गणना की जाती है।

रहीम हिन्दू मुस्लिम संस्कृति के संरक्षक और पक्षधर थे। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में भी हिन्दू, मुस्लिम संस्कृति का समन्वित रूप मिलता है। एक ओर तो वह भारतीयता से जुड़ गये दूसरी ओर वे भागवत सम्प्रदाय के निकट आ गये थे और निर्गुण सगुण का स्तवन कर धार्मिक कट्टरता से मुक्त हो गये। शृंगार और प्रेम रहीम काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य विषय है। इन सभी विशेषताओं में रहीम की काव्य साधना अप्रतिम मानी जाती है। उनकी काव्यगत विशेषताओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है—

(1) भाव पक्ष (2) कला पक्ष।

(1) **भाव पक्ष**—रहीम की भावपक्ष सम्बन्धी विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

प्रेम-भाव का निरूपण—रहीम ने प्रेम के लौकिक पक्ष को ही अपनाया है। उनके 'बरबै नायिका भेद' में पर्याप्त शृंगारिकता मिलती है बरबै नायिका भेद में आये हुए सभी पद्य आकर्षक हैं, चित्त को प्रभावित करने की क्षमता में युक्त है। उन्होंने भिन्न-भिन्न नायिकाओं के सुन्दर और सरस भावपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत किए हैं।

उदाहरणार्थ— औचक आय जोवनवाँ दुःखदीन
छुटिगौ संग गोइयवां, नहीं मलकीन ॥

रहीम ने प्रेम मार्ग को अत्यन्त कठिन बताया है तौर उस पर चलने वाले को बार-बार सचेत भी किया है।

'रहिमन मैन तुरंग चढ़ि, चलिवों पावक माहिं
प्रेम पंथ ऐसो कठिन, सब कोउ निबहत नाहिं ॥'

भक्ति भावना—रहीम ने भागवत सम्प्रदाय के अनुसार अपनी भक्ति भावना का परिचय दिया है। उन्होंने ईश्वर की सर्वव्यापकता का वर्णन किया है। उन्होंने भी एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया उनके अनुसार राम, रहीम, खुदा, अल्लाह, एक ही ईश्वर के कई नाम हैं। रहीम ने अपने काव्य में कृष्ण व राम दोनों के प्रति अनन्य भक्ति भावना प्रदर्शित की है।

रहीम ने ईश्वर को दया का सागर बतलाया है जो व्यक्ति अज्ञानवश भी राम का अर्थात् ईश्वर का नाम लेता है। वह भी सद्गति को प्राप्त होता है। भक्ति भावना के लिए रहीम ने मन की शुद्धता एवं पवित्राचरण पर बल दिया है। भक्ति के क्षेत्र में बाह्याडम्बरों और दिखावे की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने ईश्वर के प्रति अपने काव्य में अनन्य आस्था का भाव दिखाया है।

व्यावहारिकता ज्ञान— रहीम का काव्य नीति एवं व्यवहारिक ज्ञान से भरा हुआ है। उन्होंने आत्मश्लाघा से मुक्त रहने का आदेश तथा मान मर्यादा की रक्षा पर बल दिया है। दूसरी ओर रहीम ने सम्मान एवं मर्यादा की रक्षा पर बल दिया है।

इसी प्रकार रहीम ने याचना करना और दानशील बनना मनुष्य का श्रेष्ठ अंग बताया है। दानशीलता के अभाव के कारण जीवन को निस्सार तथा अमानवीय बतलाया है। इसी प्रकार उन्होंने सत्संगति आदि के विषय में व्यावहारिक बातें कही हैं।

लोकानुभूति—रहीम को व्यापक लोकानुभव था। उन्हें राज्याश्रय में सम्मान भी प्राप्त हुआ तथा निर्वासन का कष्ट भी झेलना पड़ा। इस कारण उन्होंने अपने अनुभवों को ही अपने साहित्य में व्यक्त किया है। उन्होंने संसार के स्वार्थीजनों को धिक्कारा है। कष्ट सहिष्णु होने का उपदेश दिया है। सज्जनों को अपने अनुकूल रखने का आदेश दिया है। उन्होंने मित्र और शत्रु को पहचान कर तदनुरूप आचरण करने को कहा। इन उपदेशों को जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए उन्होंने दृष्टान्तों का सहारा लिया।

सज्जनों को अपने अनुकूल रखने का उपदेश देते हुए उन्होंने कहा है—

"टूटे सुजन मनाइए जो टूटे सौ बार
रहिमन फिर-फिर पोइए जैसे मुक्ताहार।"

इसी प्रकार उन्होंने दान शीलता की भावना को भी अपने काव्य में व्यक्त किया है।

"जो जल बाढ़े नाव में घर में बाढ़े दाम।
दोनों हाथ उलीचिए यही सज्जन को काम।"

जीव और जगत का अत्यन्त सूक्ष्म अनुभव होने के कारण रहीम के काव्य में न भावों का अन्तर्द्वन्द ही मिलता है। सीधे साधे शब्दों में उनके जीवनपयोगी विचार ही उनकी रचनाओं में परिव्याप्त दिखाई देते हैं।

विरहानुभूति की तीव्रता—रहीम ने जीवन को बड़ी गहराई से देखा था वे प्रेमी थे। इसी कारण प्रेम की गहराई को समझते थे। यही कारण है कि प्रेम को जीवन का सर्वस्व

मानते थे। संयोग के तो सुन्दर चित्र उन्होंने खींचे ही परन्तु विरह वर्णन में वे किसी से कम नहीं हैं, उनके विरह वर्णन में अनुभूति की तीव्रता है। मार्मिकता और स्वाभाविकता है। रहीम ने गोपियों के माध्यम से नारी की विरह वेदना को अपने काव्य में वर्णित किया है। रहीम के विरह वर्णन में कहीं भी कृत्रिम या आरोपित परिस्थितियाँ नहीं हैं। उन्होंने सरल ढंग से हृदय की, प्रेम की परिपक्वता, एकनिष्ठता और समर्पण भावनाओं को दोहों में बाँधकर प्रस्तुत किया है।

बढ़त जात चित दिन-दिन चौवन चाव
मन मोहन तैं मिलिबौ सखि कहँ दाम।
मोहि मीत विन देखे छिन सुहात।
पल-पल भरि भरि उलझत, दृग जल जात।

अनन्य आस्थावान्—वे सम्राट के प्रति जितने आस्थावान थे। उतने ही अधिक भगवान के प्रति आस्था रखते थे उनका यह विश्वास दोहों में व्यक्त हुआ है—

"प्रीतम छवि नैनन बसी, पर छवि कहाँ समाय।
भरी सराय रहीम लखि, आयु पथिक फिर जाए।।"

वह कहते हैं कि हृदय में एक के प्रति आस्था है तो फिर इसमें दूसरा कैसे समा सकता है। मन तो एक ही के प्रति सच्चा आस्थावान् रहता है।

कलापक्ष—रहीम के भावपक्ष के समान ही कलापक्ष भी प्रौढ़ समृद्ध है। काव्य के कलापक्ष के अन्तर्गत भाषा शैली, छन्द, अलंकार तथा प्रतीक योजना आती है जिसका यहाँ बिन्दुवार विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

भाषा एवं शैली का सौन्दर्य—रहीम ने अपने काव्य में मुख्यतः ब्रज और अवधी का प्रयोग किया है। इन्होंने जिन छन्दों का प्रयोग किया, अधिकांश वह ब्रज भाषा के ही हैं। रहीम अपने समय के भाषा विदों में अग्रणी थे। उन्हें पंजाबी सिन्धी दक्षिण भारतीय क्षेत्रों में रहने का अवसर मिला इस कारण उन्हें क्षेत्रीय भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया था। रहीम ने अवधी और ब्रजभाषा दोनों का प्रयोग किया है। 'बरवै नायिका भेद लिखकर उन्होंने पूर्वी अवधी भाषा सम्बन्धी अधिकार की छाप लगाई है। अपने नीति विषयक चुटीले दोहों में भी उन्होंने अवधी का प्रयोग अत्यन्त सफलतापूर्वक किया। खड़ी बोली का प्राचीन रूप हमें उनकी रचनाओं में उपलब्ध होता है। इन भाषाओं के अलावा रहीम तुर्की, फारसी और संस्कृत भाषाओं के भी अच्छे ज्ञाता थे। संस्कृत और फारसी में भी उन्होंने रचना की थी उनका शब्द ज्ञान अत्यन्त विस्तृत एवं गम्भीर था। यही कारण था कि वे अपने काव्य के लिए उपयुक्त शब्द आसानी से खोज लिया करते थे। भाषा के माधुर्य का वे बराबर ध्यान रखते थे। भाषा के माधुर्य के लिए वह कभी-कभी ग्रामीण शब्दों का प्रयोग भी बिना किसी हिचक के कर लिया करते थे। अतः हम कह सकते हैं कि उनकी शब्द योजना सरस माधुर्य गुण लिए हुए स्वाभाविक थी, उनके शब्द विन्यास और वाक्य विन्यास कहीं भी शिथिलता दिखायी नहीं पड़ती। उन्होंने भाषा को कहीं भी दुर्बोध नहीं होने दिया है।

रहीम का सारा काव्य मुक्तक काव्य है। उनकी शैली अत्यन्त सहज सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। रहीम का काव्य सच्चे हृदय की अनुभूति का काव्य है। यही कारण है कि उनेक काव्य में सहजता स्वाभाविक रूप से मिलती है। वे अपनी बात को सीधे सरल एवं प्रभावी ढंग से कह देते थे उनकी कविता में कथन की वक्रता नहीं है। हिन्दी के **सरलतम छन्द दोहा सोरठा** और बरवै का उन्होंने सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। रहीम के काव्य में कथ्य और शैली में सहजता एवं सरलता का समान योग मिलता है।

छन्द विधान—रहीम ने अधिकांशतः दोहा छन्द का प्रयोग किया है। किन्तु इनका बरवै छन्द अत्यन्त समादरणीय रहा है। ऐसा कहा जाता है कि रहीम के बरवै छन्द से प्रेरणा प्राप्त कर तुलसी ने 'बरवै रामायण' लिखी थी। श्रृंगार सोरठा में रहीम ने सोरठा छन्द को अपनाया है। मदनाष्टक में उन्होंने मालिनी छन्द का प्रयोग किया है। 'रास पंचाध्यायी में सवैया धनाक्षरी, पद, छप्पय, आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है। इनका छन्द विधान प्रशस्य है, उसमें नाद सौन्दर्य मतियति का पूरा-ध्यान रखा गया है।

अलंकार विधान—रहीम के दोहों में अलंकारों का सौन्दर्य सहजता काव्यात्मकता एवं विशिष्टता के साथ मिलता है। उन्होंने उपमा, रूपक यमक, उदाहरण, श्लेष, उत्प्रेक्षा स्वाभोक्ति अंलकारों का प्रयोग अपने काव्य में अधिकांशतः किया है। इन अलंकारों के उदाहरण यत्र-तत्र उनके काव्य में बिखरे पड़े हैं।

संक्षेपतः रहीम की काव्य प्रतिभा बहुमुखी थी उनके काव्य में भावपक्ष के अन्तर्गत व्यवहारिक, नीति, भक्ति, श्रृंगार प्रेम आदि भावों का सुन्दर चित्रण किया गया है जिसमें लोकानुभव का प्रचुर समावेश है। कलापक्ष की दृष्टि से उनका काव्य सरस सरल व अभिव्यक्ति पूर्ण है। उन्होंने ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं में काव्य रचना की है। और मुक्तक शैली में विविध छन्दों का प्रयोग किया है।

उनके काव्य में नीति उपदेश, सदाचार एवं उपयोगिता के गुण विद्यमान है। उसमें नीतिभक्ति विषय की विविधता तो है ही साथ ही भाषागत सादगी और शैलीगत स्पष्टता भी भरभूर मात्र में मिलती है। रहीम के दोहे छोटे से आकार प्रकार में बन संवर कर भी गहरा, मार्मिक और जीवनपयोगी संकेत देते हैं वास्तव में रहीम हिन्दू मुस्लिम संस्कृति के समन्वित रूप थे।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—रहीम के काव्य रीति नीति और भक्ति की त्रिवेणी मिलती है। इस कथन की व्याख्या कीजिए।

उत्तर—हिन्दी साहित्य के भक्तिकालीन कवियों में रहीम अपना अप्रतिम स्थान रखते हैं। वे अकबर के सेनापति तथा कट्टर इस्लाम धर्म के समर्थक थे। इनका सम्पूर्ण जीवन राजनैतिक गतिबिधियों में व्यतीत हुआ था। परन्तु काव्य रचना के क्षेत्र में भारतीयता से ओतप्रोत एवं सहृदय कवि थे। मुसलमान होने पर भी उनके हृदय में कृष्ण के प्रति अगाध प्रेमभाव था। यदि हम यह कहें कि हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों के समन्बित रूप का नाम ही कविवर रहीम था, तो अत्युक्ति न होगी। रहीम के साहित्य में व्यवहारिक नीति, भक्ति, श्रृंगार और प्रेमभाव के विविध रूपों के दर्शन होते हैं। कृष्ण भक्ति से सम्बन्धित इनके अनेक दोहे कवित्त सवैये हैं जिनमें उनके सरस भक्त हृदय के दर्शन होते हैं और उनके समर्पण भाव के स्पष्ट दर्शन होते हैं। कृष्ण पर उनका अनन्य विश्वास इस दोहे में व्यक्त होता है—

"रहिमन कोऊ का करै, ज्वारी चोर लबार।
जो पत राखन हार है माखन चाखन हार।"

रहीम ने भक्ति भावना के समान ही प्रेम की अनन्यता को अपने काव्य में चित्रित किया है। नगर शोभा, बरवै नायिका भेद, श्रृंगार सोरठ इत्यादि ग्रन्थों में रहीम ने श्रृंगार का मनोहारी चित्रण किया है। इनके प्रेम काव्य में संयोग और वियोग दोनों का ही अच्छा चित्रण हुआ है।

संयोग श्रृंगार का उदाहरण—

"हँसि हँसि हेरि अरसिया सहज सिंगार।
उतरत चढ़त नवेलिया, तिय के बार॥"

विप्रलम्भ श्रृंगार का उदाहरण—' बिन देखे कल नाहि, इन अँखियान
पल पल करत कलप सों अहो सुजान"

इस प्रकार इनके प्रेम में अनन्यता और प्रियतम के प्रति अनन्य आस्था का भाव उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है।

इसी प्रकार इनके काव्य की त्रिवेणी की धारा नीति है। इन्होंने रहीम दोहावली में नीति सम्बन्धी दोहे लिखे है जो दानशीलता, परोपकारिता, मित्रता, सत्संगति, स्वाभिमान कटाक्ष, विवेकशीलता समय का महत्व आदि विषयों से सम्बन्धित हैं। उन्होंने संसार की नश्वरता लोभ लालच के परिणाम आदि पर नीति सम्बन्धी बात कहीं है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि रहीम का काव्य श्रृंगार भक्ति नीति की ऐसी त्रिवेणी है, जिसमें स्नानकर का पाठक का मन आनन्दित तो होता है साथ पवित्र भी हो जाता है।

प्रश्न 2—रहीम की प्रेम भावना पर संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

उत्तर—रहीम के काव्य में जहाँ भक्ति नीति का अनूठा संगम है, वही उनके साहित्य रूपी त्रिवेणी के रूप में उनके काव्य वर्णित अनुपम प्रेम भावना की व्यंजना है। रहीम के काव्य में प्रेम की सरलता और सहजता देखने को मिलती है।

रहीम ने प्रेम के मार्ग को अत्यन्त कठिन बतलाया है तथा उस पर चलने वालों को बार-बार सचेत भी किया है।

"रहिमन मैन तुरंग चढ़ि, चलिवों पावक मांहि।
प्रेम पंथ ऐसौ कठिन, सब कोउ निबहत नाहि॥"

रहीम के अनुसार प्रेम का मार्ग कोई साधारण मार्ग नहीं है वह ऐसा विशिष्ट मार्ग होता है जिस पर सच्चा प्रेमी ही चल सकता है। यदि प्रेम सच्चा नहीं होता तो उसका पैर फिसल जाता है।

"रहिमन पैंडा प्रेम का, निपट सिलसिली गैल।
बिछलत पांव पिपीलिका, लोग लदावत बैल।"

प्रेम के कारण बियोग की व्यथा भी सहनी पड़ती है, परन्तु इसे वही जान सकता है। जिसने सच्चा प्रेम किया है और इस व्यथा का आस्वाद किया हो।

रहीम ने प्रेम के लौकिक पक्ष का चित्रण करके उदात्त भाव भूमि पर किया है उनकी अनन्य प्रेमानुभूति काम वासना के स्थूल चित्रों पर आधारित नहीं है। अपितु उसमें पवित्रता है, सहजता है एक निष्ठता है और प्रेम की पीर विद्यमान है।

प्रश्न 3—रहीम ने संगति के परिणाम पर अपने क्या विचार व्यक्त किए हैं?

उत्तर—रहीम के नीति सम्बन्धी काव्य में सत्संगति और कुसंगति का बहुत महत्व माना गया है। उनके अनुसार कुसंगति के प्रभाववश अच्छा व्यक्ति भी बुरा बन जाता है इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को कुसंगति से दूर रहना चाहिए नहीं तो कुसंगति मनुष्य को अनेक प्रकार की हानि पहुँचाती है।

उदारणार्थ—कहु रहीम कैसे निभै, बेरि, केरि कौ संग।
वे डोलत रस आपने, उनके फाटत अंग।

इसी प्रकार रहीम ने एक अन्य दोहे में कुसंगति के दुष्प्रभाव का द्योतित किया है।

"रहीम उजली प्रकृति को, नहीं नीच को संग।
करिया बासन कर गहे, कालिख लागत अंग।।"

रहीम कहते थे कि ओछी संगति से सदैव हानि उठानी पड़ती है। लेकिन कुछ उत्तम प्रकृति के लोग ऐसे भी होते हैं जिन पर कुसंग का कोई असर नहीं पड़ता है।

"जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसंग।
चंदन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग।।"

रहीम के अनुसार सामान्यतः व्यक्ति जैसी संगति करता है। उसे वैसा ही फल मिलता है। यह अनुभूत सत्य है इसीलिए रहीम ने प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से अच्छी संगति करने की ही सलाह दी है।

प्रश्न 4—समय के महत्व के विषय में रहीम ने अपने क्या विचार प्रकट किए हैं।

उत्तर—रहीम ने समय की गतिशीलता को बताते हुए उसके महत्व को प्रतिपादित करते हुए बतलाया है कि समय सदा एकसा नहीं रहता है, इसीलिए समय की गति के अनुसार कार्य करना चाहिए तभी उसका फल मिलता है। उचित समय पर प्रयास करने से सफलता अवश्य मिलती है नहीं तो व्यक्ति को पश्चाताप करना पड़ता है।

"समय पाय फल होत है, समय पाय सरि जाय।
सदा रहे नहि एक सी का रहीम पछिताय।"

रहीम कहते हैं कि समय की स्थिति को देखकर कार्य करना चाहिए। बुरा समय आने पर अनुचित वचन भी सहन करने पड़ते हैं। बुरा समय आने पर अपने मित्र भी पराये हो जाते हैं। लोग जान पहचान भी भूल जाते हैं। इस प्रकार मनुष्य के जीवन में समय का बहुत महत्व है।

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—रहीम के अनुसार सच्चा मित्र कौन होता है?

उत्तर—रहीम के अनुसार जो विपत्ति के समय काम में आए वही सच्चा मित्र है।

प्रश्न 2—रहीम के अनुसार मित्र की पहचान किस प्रकार की जा सकती है?

उत्तर—रहीम के अनुसार जब व्यक्ति पर बुरा समय आता है, उसी समय मित्रों की पहचान हो जाती है।

प्रश्न 3—रहीम ने प्रेम के पथ के विषय में क्या कहा है?

उत्तर—रहीम के अनुसार प्रेम का मार्ग अत्यन्त कठिन और सटीला होता है सच्चा प्रेमी ही उस पर चल सकता है। जरासी चूक होने पर उस पर से पैर फिसल जाता है।

प्रश्न 4—रहीम के हृदय में तुलसीदास के लिए क्या भाव थे?

उत्तर—रहीम के हृदय में गोस्वामी तुलसी पर इन्हें विशेष श्रद्धा थी और वे अपने निर्वासन के समय कुछ दिनों उनके साथ रहे भी।

प्रश्न 5—रहीम द्वारा लिखित ग्रन्थों के नाम बतलाइए?

उत्तर—कवि वर रहीम ने निम्नलिखित रचनाओं की सर्जना की—

(1) दोहावली, बरवै नायिका भेद, मदनाष्टक रासपंचाध्यायी, शृंगार सोरठा, नगर शोभा आदि रचनाएँ हैं। इसके अतिरिक्त रहीम ने रहीम सतसई काव्य की भी रचना

की थी। 'खेट कौतुक जातम' नामक ज्योतिष ग्रन्थ की संस्कृत में रचना की और 'बाबर के आत्म चरित' का तुर्की भाषा में फारसी भाषा में अनुवाद किया 'फारसी दीवान' नामक रचना फारसी में लिखित है। इनके फुट कर पद 'रास पचाध्यायी' नामक रचना से सम्बन्धित माने जाते हैं।

प्रश्न 6—रहीम की भाषा किस प्रकार की थी ?

उत्तर—रहीम ने मुख्यतः ब्रज तथा अवधी भाषा में अपने ग्रन्थों की रचना की थी। उन्हें तुर्की फारसी, संस्कृत भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था।

प्रश्न 7—'जो रहीम ओछो बढ़े तो अधिक इतराय' पंक्ति में रहीम ने क्या भाव व्यक्त किए हैं ?

उत्तर—रहीम ने उपरोक्त पंक्ति में कहा है कि जो व्यक्ति छोटे से बड़ा बन जाता है तो स्वयं को बहुत अधिक गर्वित महसूस करता है। अर्थात् घमण्ड करने लगता है।

प्रश्न 8—'रहिमन विपदाहू भली जो थोरे दिए होय' पंक्ति में रहीम विपत्ति को भला क्यों कहा है ?

उत्तर—रहीम ने विपत्ति को इसलिए भला कहा है कि वह थोड़े दिन को ही आती है, परन्तु इस जगत में कौन अपना है, कौन पराया है। सभी का ज्ञान करा जाती है।

प्रश्न 9—'रहिमन तब लगि ठहरिए, दान मान सनमान।

"घटत मान देखिए जबहिं तुरतहिं करिय पयना।।"

प्रस्तुत दोहे में रहीम ने क्या भाव व्यक्त किए हैं ?

उत्तर—रहीम उपरोक्त दोहे में कह रहे हैं कि किसी जगह मनुष्य को तभी तक ठहरना चाहिए जब तक उसका मान सम्मान हो। परन्तु जैसे ही मान सम्मान में कमी आने लगे तो वहाँ से तुरन्त ही चल देना चाहिए।

प्रश्न 10—संकलित बरवै अंश में प्रेम के किस पक्ष का वर्णन किया गया है।

उत्तर—संकलित 'बरवै' अंश में रहीम ने कृष्ण के मथुरा चले जाने पर गोपियों के कृष्ण के प्रति प्रेम के वियोग पक्ष का वर्णन किया है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—रहीम किस प्रकार के कबि थे—

(क) भक्ति कवि (ख) श्रृंगारी कवि
(ग) दरबारी कवि (घ) मुसलमान भक्ति कवि
(च) वीररस के कबि।

प्रश्न 2—रहीम ने किस विषय से सम्बन्धित रचनाएँ लिखीं—

(क) श्रृंगार से सम्बन्धित (ख) भक्ति से सम्बन्धित
(ग) नीति से सम्बन्धित (घ) श्रृंगार, नीति, भक्ति से सम्बन्धित
(च) वीर रस से सम्बन्धित।

प्रश्न 3—स्वाति नक्षत्र की बूँद सीप में गिरने पर क्या बन जाती है—

(क) विष (ख) कपूर
(ग) मोती।

प्रश्न 4—सच्चा मित्र वह होता है—

(क) जो सुख में साथ
(ख) जो सम्पन्न होने पर साथ दे

(ग) कुछ समय तक साथ रहे
(घ) जो बिपत्ति काल में भी साथ दे
(च) जो केवल विपत्ति आने पर मदद करे।

प्रश्न 5—बारे उजियारो करे·बढै अँधेरो होय में अंलकार है—

(क) रूपक (ख) उत्प्रेक्षा
(ग) यमक (घ) श्लेष
(च) अपह्नुति।

उत्तरमाला

(1) घ (2) घ (3) ग (4) घ (5) घ।

अध्याय 5
मीराबाई

व्याख्यात्मक प्रश्न

1. **तनक हरि चितवौ जी म्हारी ओर..............................मोर** ॥3॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित यह पद मीरा द्वारा रचित पदावली से लिया गया है। मीरा सगुण भक्ति धारा की कृष्ण काव्य परम्परा में अपना अप्रतिम स्थान रखती है। उन्होंने अपने आराध्य को अपना प्रियतम मानकर विरह व्यथा का लौकिक पक्ष प्रस्तुत किया है तथा प्रियतम कृष्ण के प्रति अनन्यता और समर्पणशीलता के भाव व्यक्त किये हैं। प्रस्तुत पद में भी मीरा इसी प्रकार की भावनाओं को व्यक्त कर रही हैं।

व्याख्या—मीरा अपने आराध्य से निवेदन करती हुयी कहती है कि हे प्रियतम! तुम जरा मेरी ओर तो देखो। मैं प्रतिपल तुम्हें प्रेम से निहारती रहती परन्तु तुम तो मेरी ओर क्षण भर के लिए भी दृष्टि न करते। अर्थात् मुझ पर आप थोड़ी भी कृपा दृष्टि नहीं रखते। मुझे प्रतीत हो रहा है कि तुम दिल के बहुत कठोर हो। हे प्रियतम तुम्हारी स्नेहपूर्ण कृपादृष्टि ही मेरी आशा है। आपके बिना मेरा दूसरा कोई ठिकाना नहीं है। अर्थात् आप ही मेरे सब कुछ हैं। आपको छोड़कर मेरा और कोई नहीं है। वह कहती है कि प्रियतम तुम्हारी कृपादृष्टि मुझ पर कब होगी। तुम मुझे कब मिलोगे। अर्थात् मेरा आराध्य तो तुम ही हो। अन्य कोई भी नहीं है। तुम कब मेरी ओर अपनी कृपादृष्टि करोगे। मेरी जैसी आपकी लाखों करोड़ों दासियाँ हैं। कहने का अभिप्राय है कि ईश्वर एक होता है परन्तु उसके भक्त अनेक होते हैं। मीरा कहती है कि हे प्रियतम मैं खड़ी-खड़ी तुम से प्रार्थना कर रही हूँ। प्रार्थना करते करते पूरी रात्रि व्यतीत हो गयी। अब प्रातः हो गयी है परन्तु अभी भी आपकी कृपा दृष्टि मेरी ओर नहीं हो पाई है। मीरा कहती है हे प्रभु आप अविनाशी हो मैं आप पर अपने प्राण न्यौछावर करने को भी उद्यत हूँ अर्थात् एक बार यदि आप अपनी कृपादृष्टि मेरी ओर करें तो मैं आपके ऊपर प्राण भी न्यौछावर कर सकती हूँ।

विशेष—मीरा की समर्पण भावना का परिचय मिलता है। मीरा की व्यथा एवं आकुलता की व्यंजना हुई हैं। अनुप्रास अलंकार की योजना है।

2. **रे पपइया प्यारे कब की बैर चितारयो**.......................**म्हारयो** ॥7॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित यह पद 'मीरा पदावली' से लिया गया है।

प्रस्तुत पद में मीरा ने पपीहे को अपनी विरहव्यथा को तीव्र करने वाला बता कर प्रेम की एक निष्ठा और प्रियतम के प्रति आस्था की भावना प्रकट की है।

व्याख्या—मीरा पपीहे को सम्बोधित करते हुए कह रही है कि अरे पपीहे ! तू मुझ से कौन से बैर का बदला ले रहा है। अर्थात् तुझे मेरे से ऐसा कौन सा बैर है जो मुझे इस तरह वेदना पहुँचा रहा है। मैं अपने महल में सुख से सोयी हुयी थी, परन्तु तेरी पिय पिय की पुकार से मैं जाग गयी और मुझे प्रियतम की स्मृति हो आई अर्थात् तूने अपनी पुकार से मेरे हृदय विरह वेदना को जगा कर और तीव्र कर दिया है। हे पपीहे तेरी इस पिय-पिय की पुकार से मेरी हृदय की दग्धता को तीव्र किया है तेरी इस पुकार ने जले हुए पर नमक लगाने का कार्य किया है। अथवा मेरे हृदय को चीर कर रख दिया है। तू प्रतिदिन उड़कर उस पेड़ की डाली पर बैठ जाता है और अपनी मधुर कूक से मेरे हृदय को और अधिक व्यथित करता रहता है। अर्थात् तेरी पिय-पिय की आवाज मेरी वेदना को और अधिक बढ़ा देती है मीरा कहती है कि मेरे प्रभु गिरधर नागर हैं। 'मेरा मन उन्हीं के श्रीचरणों में लगा हुआ है अर्थात् मेरा उद्धार अब मेरे प्रियतम गिरिधर नागर ही कर सकते हैं। मैंने पूर्णरूप से स्वयं को उन्हीं के श्रीचरणों में समर्पित कर दिया है।

विशेष—विरह की स्थिति का चित्रण है।

'जले पर नमक छिड़कना' और 'हृदय पर आरी चलाना' मुहावरों का साभिप्राय प्रयोग हुआ है।

अनुप्रास अलंकार की योजना है।

3. **मैं हरि बिन क्यूं जियूंरी माई**.............................**सुखदाई** ॥8॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में सकंलित यह पद मीरा द्वारा रचित 'पदावली' से लिया गया है। प्रस्तुत पद में मीरा ने अपने आराध्य श्रीकृष्ण को अपना प्रियतम मानकर अपनी विरह व्यथा का मार्मिक चित्रण किया है। उन्होंने प्रस्तुत पद में विभिन्न उदाहरणों का आश्रय लेकर अपनी विरह व्यथा और एक निष्ठता व अनन्यता का चित्रण किया है।

व्याख्या—मीरा अपनी विरह व्यथा का चित्रण करती हुयी कहती है कि मैं अपने प्रियतम कृष्ण के बिना किस प्रकार जीवित रहूँ। मैं अपने प्रियतम के विरह में बौरा गयी हूँ। अर्थात् पगली हो गयी हूँ और भीतर से खोखली और कमजोर हो गयी हूँ। जिस प्रकार कोई लकड़ी घुन लग जाने के कारण खोखली हो जाती है, अर्थात् प्रियतम का प्रेमरूपी घुन मुझे कोई खोखला किए जा रहा है। विरह व्यथा के कारण मेरी दशा अत्यन्त शोचनीय हो गयी है। मुझे ऐसा रोग लगा है जिसमें कोई भी औषधि काम नहीं कर सकती। आशय यह है कि मेरी इस व्यथा की औषधि केवल प्रियतम से मिलन ही है। मैं अत्यधिक प्रेम की व्यथा के कारण बाबली हो गयी हूँ। जिस प्रकार कछुआ मेढक आदि जल में रहने वाले जीव जल में ही रहते हैं, वहीं पलते हैं, बसते हैं और बड़े होते हैं। मछली भी कभी जल से नहीं बिछुड़ती, यदि वह पल भर को जल से बिछुड़ जाए तो तड़प-तड़प कर अपने प्राण त्याग देती है। उसी प्रकार मैं भी अपने प्रियतम के वियोग में तड़प रही हूँ मैं उन्हें वन-वन में खोजती

फिर रही हूँ। फिर भी कहीं मुरली की धुन नहीं सुन पा रही हूँ। अर्थात् अनेकों प्रयासों के बाद भी मैं अपने प्रिय से मिल नहीं पा रही हूँ। मीरा कहती है कि मेरे प्रभु गिरिधर गोपाल कहीं मिल जाए तो मुझे अत्यन्त सुख की प्राप्ति होगी।

विशेष—मीरा ने अपना जलचरों से तुलनात्मक चित्रण किया है। मीरा ने कहा है कि जिस प्रकार से जलचरों का प्राणरक्षक जल होता है उसी प्रकार विरहणी के लिए उसका प्राणरक्षक प्रियतम का सुखदायी मिलन है। मीरा की कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति भावना की प्रस्तुत की गयी है। कान्ताभाव की भक्ति का चित्रण किया गया है।

विशेष—अनुप्रास, उपमा, उदाहरण अंलकार का प्रयोग किया गया है। विरह की दस स्थितियों में से उन्माद स्थिति का वर्णन है।

4. **अब में सरण तिहारी जी, मोहि राखो कृपा निधान**··············**कान** ॥10॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित यह पद मीरा द्वारा लिखित 'पदावली' से अवतरित किया गया है।

मीरा ने कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति भावना व्यक्त करते हुए ईश्वर को अगम्य अगोचर बतलाया है। मीरा आराध्य से स्वयं को अपनी शरण में लेने की विनती कर रही है।

व्याख्या—मीरा अपने आराध्य श्रीकृष्ण से विनती करते हुए कहती है कि मैं अब तुम्हारी शरण में आ गयी हूँ अतः मुझे आप स्वीकार करें जिससे मेरा उद्धार हो सके। हे कृपा के सागर आपने अजामिल जैसे पापी का उद्धार किया। अनेक पापी और अधम प्राणियों का उद्धार किया है। आपने मगरमच्छ द्वारा पकड़ लिए जाने पर डूबते हुए गजराज का उद्धार किया। तोते को राम नाम पढ़ाने वाली पापिनी वेश्या को मुक्ति देकर बैकुण्ठ भेजा। और भी बहुत से अधम लोगों का उद्धार आपने किया है कुब्जा, नीच भीलनी (शबरी) का आपने उद्धार किया। इसको सारा जगत जानता है अभिप्राय यह है कि आप अत्यन्त प्रजा-वत्सल एवं दयाशील है इस बात को सारा संसार जानता है। आपकी यह भक्त वत्सलता सारा संसार जानता है। मैं आपकी इस विशेषता का कहाँ तक बखान करूँ अर्थात् मैं उनका नाम कहाँ तक गिनाऊँ जिन अधमों का उद्धार कर आपने उपकार किए है। आपके इस कार्य का बखान करते-करते वेद और पुराण भी थक गये हैं अर्थात् आपकी भक्त वत्सलता अपार हैं। मीरा स्वयं का अधिकार जताते हुए भगवान से कहती है कि आप दोनों कान खोलकर सुन लीजिए कि मैं पूर्णतया आपकी शरण में हूँ अतः मेरा भी उद्धार आपको करना ही पड़ेगा।

विशेष—मीरा ने कृष्ण की भक्त वत्सलता का वर्णन करते हुए अपनी अनन्य भक्ति भावना का परिचय दिया है। अजामिल गणिका, हाथी, शबरी आदि के माध्यम से ईश्वर की महिमा का गुणगान किया है।

अनुप्रास और दृष्टान्त अलंकारों का प्रयोग हुआ है पद में गेयता है। भक्त के हृदय की भावाभिव्यक्ति है।

5. **म्हां गिरधर के रंग राती सैया म्हाँ**··························**दिखराती** ॥3॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्राचीन काव्य कलाधर से संकलित यह पद मीरा द्वारा रचित 'पदावली' से लिया गया है।

प्रस्तुत पद में मीरा ने लौकिक तथा अलौकिक भावाभिव्यक्ति से विरह मिलन की सुन्दर और अद्भुत झांकी एक साथ उपस्थित की है।

व्याख्या—मीरा कहती है कि मेरे प्रियतम कृष्ण है और मैं उन्ही के रंग में रंगी

हुयी हूँ अर्थात् मैं प्रियतम श्रीकृष्ण के प्रेम रूपी रंग में पूरी तरह रंग गयी हूँ उनके अतिरिक्त मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता । हे सखि मैं पंचतत्वों से बने हुए इस शरीर रूपी पंचरंगी चोले को पहनकर झिरमिट का खेल खेलने के लिए जाती हूँ उस झिरमिट के खेल में ही मुझे कृष्ण मिल जाते हैं और उन्हें देखते ही तनमन से उन पर अनुरक्त हो जाती हूँ अर्थात् मेरा मन आनन्दित हो जाता है और तन रोमांचित हो जाता है । मीरा कहती है जिनके पति परदेश में रहते हैं वे अपने प्रियतम को निरन्तर पत्र लिखती रहती हैं । अर्थात् उन्हें अत्यधिक विरह व्यथा भोगनी पड़ती है फिर भी प्रियतम का मिलन सुख नहीं मिलता मेरे प्रियतम तो मेरे हृदय में निवास करते हैं वे कहीं आते-जाते भी नहीं हैं । इसी कारण न तो मुझे विरह व्यथा भी नहीं भोगनी पड़ती और पत्र नहीं लिखने-पड़ते हैं । मीरा कहती है कि मेरे सर्वस्व तो गिरधर नागर ही हैं । मैं तो निरंतर उन्हीं का प्रतीक्षा करती रहती हूँ । मेरे मन वासी प्रियतम की छवि कब साक्षात् होगी यही प्रतीक्षा मुझे दिन और रात रहती है ।

विशेष—-संसार की नश्वरता और अनश्वरता का चित्रण हुआ है । मीरा ने उपरोक्त विचार प्रकट करके अपने आध्यात्मिक चिन्तन को स्पष्ट किया है । मृत्यु-जन्म के लिए झिरमिट शब्द तथा शरीर के चोला शब्द का प्रयोग दार्शनिकता का पुट लिए है ।

'लिख लिख' में पुनरोक्ति प्रकाश, तथा स्थान-स्थान पर अनुप्रास की संयोजना है ।

भाषा पर राजस्थानी भाषा की स्पष्ट छाप है ।

6. राणा जी थे क्यांने राखो म्हासूं बैर························जहर ।।15।।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित मीरा के पदों में से प्रस्तुत पद अवतरित किया गया है । यह संकलित अंश मीरा द्वारा लिखित पदावली से लिया गया है ।

मीरा की भक्ति भावना और साधु संगति के कारण मीरा को अनेक कष्ट दिए गये । इसका संकेत यत्र-तत्र मीरा के पदों में मिल जाता है प्रस्तुत पद में भी मीरा राणा (अपने देवर) के कठोर व्यवहार के विषय में संकेत कर रही हैं । मीरा अपने देवर राणा को सम्बोधित करती हुई कहती हैं हे राणाजी आप मुझसे किस कारण वश बैर रखते हो । आप मुझे कैर के वृक्ष के समान कठोर प्रतीत हो रहे हो । अर्थात् कैर का झाड़ अकारण ही दूसरों को चुभता है पास आने वाले को कष्ट देता इसी कारण आप भी मुझे अकारण ही कष्ट दे रहे हो । मैंने अपनी भक्ति के लिए आपके महल अटारियाँ सब त्याग दी हैं । मैंने वह शहर भी त्याग दिया है । जहाँ आप निवास करते हो । मैंने सब प्रकार के सुखोपभोग भी त्याग दिए हैं । सुन्दरता को बढ़ाने वाले प्रसाधन काजल और बिन्दिया को लगाना भी मैंने छोड़ दिया है । मैंने सभी प्रसाधन त्याग कर भगवा रंग की चादर ओढ़ ली है अर्थात् मैंने सभी सुखोपभोग त्याग कर सन्यास धारण कर लिया है—मेरा आपकी इन वस्तुओं से कोई मोह नहीं है, फिर भी आप अकारण मुझ से बैर रख रहे हो । मीरा कहती है कि मेरे तो कृष्ण ही अब मेरे स्वामी और रक्षक हैं । उन्होंने ही अपनी कृपा से विष को अमृत बनाया और मेरी रक्षा की मेरा लक्ष्य अब उन गिरधर नागर की भक्ति करना ही है ।

विशेष—राणा को कैर के वृक्ष के समान कठोर बताया है । यह दृष्टान्त अलंकार का प्रयोग है ।

अनुप्रास, उपमा अलंकारों की योजना है ।

7. जोगिया जी निसदिन जोउ बाट························प्राणि ।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित मीरा द्वारा रचित पदों का अंश 'मीरा पदावली' से लिया गया । प्रस्तुत पद उसी में अवतरित है ।

इस पद में मीरा ने अपने आराध्य को प्रियतम मानकर कान्ताभाव की भक्ति भावना का परिचय दिया है उन्होंने अपने प्रियतम को प्रवासी जोगी बताकर उसके शीघ्र आगमन की आकांक्षा की है।

व्याख्या—मीरा अपने प्रियतम से कह रही हैं कि मैं प्रत्येक दिन उत्सुकता के साथ तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहीं हूँ अर्थात् हे प्रवासी प्रियतम मैं प्रतिदिन तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा करती हूँ। विरह व्यथा रहने के कारण मेरी स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गयी है। इसी कारण वश मैं तुम्हारे पास चलकर नहीं आ सकती। तुम्हारे पास चलकर आने में मैं समर्थ भी नहीं हूँ और तुम्हारे पास तक पहुँचने का रास्ता भी अत्यन्त कठिन हैं। वह रास्ता अत्यन्त दुर्गम, निर्जन और नदी घाटों से युक्त है। अतः उन्हें पार कर तुम्हारे पास तक पहुँच पाना अत्यन्त कठिन कार्य है। मैं तुम्हारे पास न आकर यहीं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हूँ। ऐसा प्रतीत होता है कि नगर में आकर मेरा प्रियतम कहीं रम गया है और उसने मेरे हृदय की प्रेम भावना को नहीं पहचाना है। यही कारण है कि वह आहत होकर नगर छोड़कर कहीं चला गया है।

मीरा कहती हैं कि मैं ही भोली (अनजान) थी जो अपने प्रियतम को रिझाकर रोक नहीं सकी अर्थात् उन्हें अपने प्रेम के बन्धन में न बाँध सकी। और मेरे इसी भोलेपन के कारण ही मुझे यह विरह व्यथा भोगनी पड़ रही है। उस योगी प्रियतम की प्रतीक्षा में बहुत दिन व्यतीत हो गये परन्तु वह आज तक नहीं आया। मेरा सम्पूर्ण शरीर विरहाग्नि में जला जा रहा है। हे प्रियतम मेरे अन्तर में लगी इस विरह की ज्वाला को बुझाने के लिए तुम शीघ्र ही आजाओ। क्योंकि मेरा शरीर असह्य विरह अग्नि में जला रहा है।

मीरा कहती है मुझे तो ऐसा प्रतीत हो रहा है कि या तो मेरा प्रियतम इस संसार में ही नहीं या मुझे सर्वथा भूल गया है। हे सखी अब मैं कहाँ जाऊँ क्या करूँ। मुझे तो प्रियतम के विरह के कारण कुछ भी नहीं सूझ रहा है। मैंने तो (प्रियतम के विरह में) अपनी आँखें भी रो-रोकर गँवादी हैं। हे योगी मेरी आत्मा तुम्हारी आरती उतारने को व्याकुल है। अर्थात् तुम्हारे दर्शन की उत्कृष्ट इच्छा मेरे प्राणों में धधक रही है। अतः मुझे अपनी समझकर तुम शीघ्र ही आ जाओ (अर्थात् मुझे अपना लो। मीरा कह रही है कि मै अत्यन्त व्याकुलतापूर्वक तुमसे विनती कर रही हूँ तुम शीघ्र ही आकर मुझे दर्शन दो) मीरा कहती है कि मैं अत्यन्त व्याकुल विरहणी हूँ और तुम्हारे बिना मेरे प्राण तड़प रहे हैं।

विशेष—मीरा की कान्ता भाव की भक्ति भावना इसमें स्पष्ट होती है। प्रियतम के बिना प्रेमिका की व्याकुलता का वर्णन है। विरहणी की आतुरता, व्यथा, उन्माद, अभिलाषा आदि का मार्मिक चित्रण किया गया है।

8. जोगिया मत जा मत जा.........................जोत में जोत मिलाजा ॥18॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित मीरा के पदों के अंश से अवतरित यह पद मीरा द्वारा रचित पदावली से लिया गया है।

प्रस्तुत पद में मीरा अपने कठोर हृदय वाले प्रियतम को सम्बोधित कर रही है। जिससे वह प्रवासन जाये यदि जाए तो मेरे इस कष्टमय जीवन का अन्त कर जाए।

व्याख्या—मीरा अपने प्रियतम को सम्बोधित करते हुए कह रही है कि हे मेरे निष्ठुर प्रियतम तुम इस तरह मुझसे दूर मत जाओ मैं तुम्हारे चरणों में पड़ी हुई तुम्हारी दासी हूँ। मुझे छोड़कर तुम प्रवासी मत बनो। अर्थात् मैं पूरी तरह से तुम्हारी शरण में हूँ तुम्हें समर्पित हूँ। तुम मुझे इस प्रकार निस्सहाय अवस्था में मुझे छोड़कर मत जाओ। मीरा कह रही है कि प्रेमभक्ति का मार्ग बड़ा अनोखा है। (यह वासनात्मक प्रेम की भाँति नहीं है यह

सात्विक प्रेम पर आधारित श्रद्धा एवं आस्था का मार्ग है। अतः सबसे अलग है इसलिए तुम मुझे वह मार्ग बतलाओ। जिस पर चलकर मैं तुम्हें प्राप्त कर सकूँ यदि तुम जाना ही चाहते हो तो मैं अभी अगरबती और चन्दन की चिता बनाती हूँ (विरह भोगने की अपेक्षा मैं अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देना अधिक उचित समझती हूँ।) तुम अपने हाथ से उस चिन्ता में अग्नि प्रज्जवलित करके चले जाओ। जब मेरा यह शरीर चिता में जलकर भस्म की ढेरी के रूप में परिवर्तित हो जाये तब तुम उसे (अपनी प्रियतमा की निशानी समझकर) अपने शरीर पर लगाकर सच्चे योगी का रूप धारण करके चले जाओ अन्त में मीरा निवेदन करती है, हे प्रभु तुम मेरी आत्मा को अपना अंश मानते हुए इसे अपने आप में मिला लीजिए। जन्म जन्मांतर से बिछुड़ी हुई इस आत्म ज्योति को परमात्मज्योति में अन्तर्लीन कर लो जिससे मुझे इन सांसारिक दुखों से मुक्ति मिल जाए।

विशेष—मीरा के इस पद में प्रियतम कृष्ण के प्रति निश्छल प्रेम व आस्था की अभिव्यक्ति हुई है। विरह वेदना की व्याकुलता का चित्रण है।

मीरा के इस पद के समान भाव जायसी के निम्न पद में व्यक्त किए गये हैं—

यह तन जारौं छार कै, कहौकि पवन उड़ाय।
मकुतेहि मारगगिरि परै, कंत धरैं जहँ पाँय॥

अनुप्रास और समासोक्ति अलंकार का प्रयोग है लौकिक भावों को आध्यात्मिक रूप में व्यक्त किया गया है।

9. पतियाँ मैं कैसे लिखूँ, लिखियो री न जाय………… ………रखाय (21)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—"प्राचीन काव्य कलाधर" में संकलित अंश से अवतरित यह पद मीरा द्वारा रचित मीरा की 'पदावली' से उद्धृत है।

व्याख्या—मीरा कहती है कि मैं अपने प्रियतम को किस प्रकार पत्र लिखूँ ? मुझसे तो पत्र लिखा ही नहीं जा रहा है। जब मैं पत्र लिखने के लिए कलम पकड़ती हूँ तो मेरा हाथ काँप जाता है। आँखों से देखा भी नहीं जाता क्योंकि नेत्र अश्रुपूरित हो जाते हैं। (प्रियतम के स्मरण के कारण अश्रुधारा प्रवाहित होने लगती है) यदि मैं वाणी द्वारा मौखिक रूप से अपनी बात कहना चाहती तो मुझसे वह सब कहा नहीं जाता जो मैं कहना चाहती हूँ। कुछ कहने से पूर्व ही मेरा हृदय काँपने लगता है। मीरा अपनी सखी को सम्बोधित करते हुए कहती है कि हे सखी तुम जिस तरह विरह वेदना से व्याकुल मुझे देखकर जा रही हो वह सब बताकर प्रियतम कृष्ण को जाकर भिजवा देना। मीरा कहती है कि अब तो मेरा कल्याण वह गिरिधर नागर गोपाल ही अपने चरणों में शरण देकर कर सकते हैं।

विशेष—नारी का लज्जा युक्त स्वभाव का वर्णन है।

प्रणय निवेदन की सहजता एवं स्वाभाविकता का चित्रण है।

10. पपइया रे पिव की वाणी न बोल……………………रह्यो ना जाई ॥22॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

स्वयं को प्रियतम कृष्ण की विरहणी प्रियतमा के रूप में मान कर मीरा ने अत्यन्त कोमल भावों की व्यंजना की है। वह पपीहे की पी पी की वाणी पर दो प्रकार की प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कर रही है।

व्याख्या—पपीहे की वाणी सुनकर मीरा कहती है कि बैरी पपीहे तू पिउ पिउ की वाणी मत बोल क्योंकि तेरी इस प्रकार की वाणी से विरहणी की विरह व्यथा और अधिक तीव्र हो जाती है यदि तेरे इस प्रकार के बोलों को कोई विरहणी सुन लेगी तो पंख मरोड़

डालेगी फिर तेरा बोलना स्वतः ही बन्द हो जायेगा। यदि इतने पर भी तूने बोलना बन्द नहीं किया तो मैं तेरी चोंच काट कर उस पर काला नमक छिड़क दूँगी, क्योंकि प्रियतम मेरे हैं और मैं प्रियतम की हूँ तुम पीउ-पीउ बोलने वाले कौन होते हो ? अर्थात् प्रियतम को पिउ-पिउ कहने का अधिकार सिर्फ मेरा है।

मीरा फिर बड़ी सहजता के साथ कहती है कि हे पपीहे मुझे तेरा पिउ-पिउ बोलना तभी अच्छा लगेगा जबकि आज प्रियतम से मेरा मिलन हो जाए। अर्थात् यदि मुझे प्रियतम से मिलने का सुख प्राप्त हो जाए तो मुझे तेरे ये शब्द कर्णप्रिय लगेंगे। अरे पपीहे तुम्हारी मधुर वाणी शुभ शकुन वाली सिद्ध हुयी तो मैं तेरी चोंच को सोने से मढ़वा दूँगी तब तुम मेरे आदरणीय होंगे।

मीरा कहती है कि हे कौवे मैं अपने प्रियतम को पत्र लिखती हूँ तू उसको मेरे प्रियतम तक पहुँचा दो। तुम प्रियतम से जाकर यह कहना कि तुम्हारे विरह में व्याकुल होकर तुम्हारी दासी मीरा ने भोजन भी त्याग दिया है। वह विरह व्यथा से अत्यन्त व्याकुल है। और दिन रात पिउ-पिउ की रट लगाए रखती है। वह अत्यन्त व्यथापूर्ण दिन व्यतीत कर रही है। हे अन्तर्यामी आप शीघ्र आकर मुझे दर्शन दीजिए। मुझसे अब आपके बिना रहा नहीं जा रहा हैं।

विशेष—विरह की उन्माद नामक दशा का चित्रण है।

लोकोक्ति एवं पद गेयता का समावेश है।

अनुप्रास और पुनरोक्ति प्रकाश अलंकारों का प्रयोग है।

11. झुक आयी बदरिया सावन की..................मंगल गावन की ॥25॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

प्रस्तुत पद में वर्षा ऋतु के सुहावने अवसर पर प्रियतम के प्रवास से लौटकर आने की सूचना मिलते ही प्रियतमा के आनन्दोल्लास का भावात्मक चित्रण किया गया है। मीरा ने स्वयं को आराध्य की विरहणी मानकर प्रिय मिलन की आनन्दमयी स्थिति की ओर इंगित किया है।

व्याख्या—मीरा कहती है कि सभी के मन को हर्षाने वाली वर्षा ऋतु आ गयी है और श्रावण मास के काले बादल आकाश में फैलने लगे हैं। (इस मन-भावन ऋतु में परदेस से आए प्रियतम का आगमन आनन्दकारी रहता है।) श्रावण मास के आते ही प्रियतम आगमन की सूचना मिल जाने पर मेरा मन अत्यन्त आनन्दित हो रहा है। मेरे मन में प्रियतम के प्रति स्नेह की उमंगें उठने लगीं। चारों ओर से बादल उमड़ घुमड़ कर आ रहे हैं उन बादलों के बीच में बिजली चमक रही है। उस चमक के साथ ही वर्षा की झड़ी लग रही है। वर्षा ऋतु के मेघ नन्हीं-नन्ही बूँदें बरसा रहे हैं। तन मन को सुख पहुँचाने वाली वायु प्रसरित हो रही है। यह वर्षा ऋतु बड़ी सुहावनी प्रतीत हो रही है। मीरा कहती है—हे मेरे गिरधर नागर प्रभु! यदि आप इस समय आजावें तो इस मंगल गाने की ऋतु में मैं भी आत्मविभोर होकर मंगल गीत गाने लगूँगी।

विशेष—मीरा ने वर्षा ऋतु का सुन्दर वर्णन किया है।

अनुप्रास, पुनरोक्ति प्रकाश अलंकारों का प्रयोग है। वर्षा ऋतु में प्रियतम के आगमन की बात सोचकर प्रियतमा के मन में उमड़ते हुए भावों की तुलना सावन में आकाश में उमड़ते-घुमड़ते मेघों से की है।

12. म्हारा ओलगिया घरे आयाजी..................म्हसाया जी ॥27॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

प्रस्तुत पद में स्वयं को प्रियतम कृष्ण की विरहणी बताकर उनके मिलन की शुभ घड़ी के आगमन पर उल्लासपूर्ण वर्णन किया है। इसी शुभ घड़ी के सुखद आगमन पर मीरा ने अपने मनोगत भावों को व्यक्त किया है—

व्याख्या—मीरा कहती है आज मेरा बिछुड़ा हुआ निर्मोही प्रियतम घर आ गया है उसके आने से मेरे शरीर से विरह-व्यथा का ताप दूर हो गया और मुझे परमानन्द एवं सुखद अनुभूतियाँ हो रहीं हैं। प्रिय के आगमन की प्रसन्नता में मैंने आज प्रिय के साथ मिलकर मंगलगान गाये हैं। जिस प्रकार मेघों की गर्जना सुनकर मोर आनन्द मग्न होकर नाचने लगता है, उसी प्रकार प्रियतम के आगमन से मेरा तन मन भी आनन्दित हो उठा है। मैं अपने प्रियतम से मिलकर पुलकित हो उठा हूँ। प्रियतम के इस मिलन ने मेरे हृदय के दुख और सांसारिक क्लेश मिटा दिए हैं। अर्थात् अविनाशी, अगम अगोचर प्रभु के मिलन से मुझे मुक्ति का मार्ग मिल गया है। जिस प्रकार चन्द्रमा को देखकर कुमुदनियाँ खिल जाती हैं उसी प्रकार मेरा शरीर भी हर्ष से पुलकित तथा रोमांचित हो रहा है। मीरा अपनी सखी से कहती है, हे सखी प्रियतम के आगमन से मेरा सन्ताप दूर हो गया है और अंग-प्रत्यंग शीतल हो गया है अर्थात् अब मैं विरह व्यथा रूपी अग्नि से मुक्त हो गयी हूँ। मेरे प्रियतम सीधे मेरे महल में आ गये हैं। जिस भक्तवत्सल प्रभु ने अपने सब भक्तों का कल्याण किया है उसी को मैंने अपने प्रियतम रूप में प्राप्त कर लिया है। मीरा कहती है कि अब मेरी विरहाग्नि शीतल हो गयी है और मेरे सारे दुःख-दर्द नष्ट हो गये हैं। अर्थात् प्रियतम से साक्षात्कार हो जाने से मेरे सारे दुख-दर्द नष्ट हो गये हैं।

विशेष—मिलन की आनन्दावस्था का वर्णन है।

प्रस्तुत पद में मीरा ने स्वयं को विरहणी प्रियतमा मानकर प्रिय मिलन का अनुभूतिमय चित्रण किया है।

उपमा, अनुप्रास, पुनरोक्ति प्रकाश अंलकारों का प्रयोग हुआ है।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—मीरा की भक्ति भावना पर सोदाहरण निबन्ध लिखिए।

उत्तर—भक्ति कालीन कवियों में मीरा अपना अप्रतिम स्थान रखती है। भक्तिकालीन कवियों में भक्ति अनन्यता एवं कितनी समर्पण की भावना इनके काव्य में मिलती है। वैसी अन्य कहीं नहीं है। बचपन से ही मीरा में भगवद भक्ति एवं ईश्वर आस्था की भावना जन्म लेने लगी थी। यौवन काल में ही विधवा हो जाने पर मीरा का अधिकांश समय साधुओं को संगति, कृष्ण नाम की चर्चा, भजन, कीर्तन आदि में व्यतीत होने लगा। वह मन्दिर में जाकर अपने आराध्य श्रीकृष्ण की मूर्ति के सामने उन्मुक्त भाव से नाचती-गाती थीं और अपने प्रियतम गिरधर लाल को रिझाती थीं। उसके देवर को और अन्य राज परिवार के सदस्यों को उनका यह व्यवहार अपनी कुल मर्यादा के लिए अपमानजनक प्रतीत हुआ। मीरा को धमकाया, रोका गया परन्तु वह रुकी नहीं तब उन्हें अत्यन्त कष्ट दिए गये। राणा के द्वारा भेजे गये विष को अमृत समझ कर पी गयीं। ससुराल तथा अपने परिवार के व्यवहार से तंग आकर मीरा तीर्थ यात्रा पर निकल पड़ी और अन्त में रणछोड़ जी के मन्दिर में उन्होंने प्रियतम कृष्ण में लीन होकर समाधि ले ली।

मीरा कृष्ण की अनन्य भक्त थी। लौकिक दृष्टि से भोजराज उसके पति थे। परन्तु आध्यात्मिकता की दृष्टि से मीरा अपने आराध्य को ही अपना पति मानती थी। इस कारण वह प्रियतम कृष्ण के प्रेम में दीवानी रहती थी तथा उसके संयोग और वियोग में तन्मय होकर पद-रचना गाती रहती थीं। इस कारण मीरा के पदों में लोक जीवन की

मार्मिक अभिव्यक्ति के साथ आलौकिक प्रेम का चित्रण हुआ है। उनकी भक्ति-भावना का आधार यही आत्म समर्पण की भावना मानी जाती है।

(1) **कृष्ण का रूप चित्रण**—मीरा कृष्ण को आराध्य ही नहीं अपितु अपना सर्वस्व मानती थी तथा स्वयं को उनके रूप सौन्दर्य पर मुग्ध बताया है। भक्ति भावना के प्रवाह से अपने आराध्य की मूर्ति में ही मीरा को उनका साकार रूप दिखायी देने लगता है, तब वह भाव विभोर होकर उनकी रूप माधुरी का वर्णन करने लगती थी—

मोहनी मूरति साँवरी सूरति, नैणा बने बिसाल।
अधर सुधारस मुरली राजति, उर बैजंती माल॥
छुद्र घंटिका कटि तट सोभित, नुपूर सबद रसाल।

(2) **मधुरा भाव की भक्ति**—भक्ति कालीन कवियों में कृष्ण भक्ति शाखा के कवियों में मधुरा भाव की भक्ति का रूप हमें देखने को मिलता है कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय के प्रायः अधिकांश कवियों में कृष्ण की माधुर्य भाव से उपासना मीरा किसी ऐसे सम्प्रदाय से तो सम्बन्धित नहीं थी परन्तु उन्होने कृष्ण के माधुर्य भाव की भक्ति की उन्होंने कृष्ण को प्रियतम और स्वयं को उनकी प्रियतमा बतलाया है और दाम्पत्य भाव के रूप में भक्ति की। इसी कारण मीरा की भक्ति को माधुर्य भाव की भक्ति मानी जाती है। स्वयं को प्रियतम कृष्ण की प्रिया मान कर मीरा ने भी मधुर भावों की सर्जना की है।

नैनन बनज बसाऊँगी, जो मैं साहिब पाऊँ।"

एक अन्य उदाहरण में—

"मेरे तो गिरधर गोपाल-दूसरो न कोई।"

× × ×

अँसुवन जल सींचि सीचि, प्रेम बेल बोई।
अब बेल फैलि गयी, आणद फल होई॥

मीरा ने अपने अनेक पदों में कृष्ण की रूप माधुरी पर स्वयं को मुग्ध बतलाया यही कारण है कि उन्होंने कृष्ण के बिना अपने जीवन को निस्सार बतलाया है। वह कहती हैं—

"मैं हरि बिन क्यूँ जियूँ री माई।
पिउ बिनु बौरी भई, ज्यूँ काठहि घुन खाई।"

(3) **प्रियतम रूप में कृष्ण की भक्ति**—मीरा ने स्वयं को कृष्ण की प्रेमिका तथा कृष्ण को प्रेमी रूप में चित्रित किया है। इसी भाव को लेकर उन्होंने शृंगार प्रधान काव्य की रचना की है। कभी वह उन्हें रिझाने की बात कहती है और कभी तन्मय होकर प्रेमभाव व्यक्त करती है। वह स्पष्ट रूप से कहती हैं—

"मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई॥"

मीरा रात दिन अपने प्रिय से मिलने को आतुर रहती है और विरह वेदना से व्याकुल हो उठती है।

यथा—विरह बुझावण अन्तरि आवो, तपन लगी तन माँहि

× × × ×

कांइ करूँ कित जाऊ री सजनी नैन गमायो रोई

निर्गुण एवं सगुण भक्ति का समन्वय—मीरा के काव्य में निर्गुण सगुण भक्ति का समन्वय देखने को मिलता है। एक ओर तो उन्होंने कृष्ण को प्रियतम मानकर विरह मिलन की धूप छाँव का अपने काव्य में उल्लेख किया है। दूसरी ओर कहीं-कहीं उन्होंने अपने प्रियतम को अगम अगोचर और अविनाशी कहकर उत्कट भक्तिभाव प्रदर्शित की है।

यथा—अभी ठाड़ी अरज करत हूँ, अरज करत भयो भोर।
मीराँ के प्रभु हरि अविनासी, देस्यूं प्राण अकोर।।

नाम स्मरण एवं गुण स्तवन—मीरा ने अपने काव्य में अनेक स्थानों पर अपने प्रियतम के नाम गुण की महिमा का उल्लेख किया है। मीरा की भक्ति भावना भावात्मक रहयस्वाद से व्याप्त दिखाई देती है। सम्भवतः कबीर व अन्य समकालीन कवियों का उन पर प्रभाव रहा हो। उन्होंने कुल की लाज और मर्यादा को त्याग दिया गोविन्द के गुणगान के लिए

यथा— 'मैं तो गोविन्द के गुण गाणा।
राजा रुठै नगरी राखै, हरि रुठयाँ कहँ जाणा।

निम्नलिखित उदाहरण में उन्होंने राम नाम के जाप की महत्ता बतलाई है।

मेरा मन रामहि राम रटै रे।
राम नाम जाप लीजै प्राणी, कोटिक पाप कटै रे।
जनम जनम के खत जु पुराने, नाम हि लेत कटै रे।

मीरा ने अपने आराध्य के गुणों की प्रशंसा की है और गुण स्तवन को ही सांसारिक कष्टों की मुक्ति का आधार बताया है।

"मीरा प्रभु सन्तन सुखदायीं भक्त बछल गोपाल।"
इसी प्रकार अन्य स्थान पर कहती है—
अब मैं सरणतिहारी जी, मोहि राखो कृपा निधान
अजामिल अपराधी तारे-तारे नीच सदान
× × ×
कहूँ लगि लगि जिनत न आवै थकि रहे वेद पुरान।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि मीरा काव्य माधुर्य भाव की अनन्य भक्ति भावना से युक्त हैं। उन्होंने सगुण के साथ जो निर्गुण का समन्वय किया वह प्रशंसनीय है। मीरा की भक्ति भावना अपने कोमल भावों एवं अनुभूतियों के लिए प्रसिद्ध है। उनकी भक्ति में अनुभूतिकी मार्मिकता और अभिव्यक्ति की सहजता है।

प्रश्न 2—मीरा के काव्य में वर्णित विरह वेदना पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

अथवा

"मीरा के काव्य में मिलन सुख एवं विरह वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति हुयी है।" इस कथन की सत्यता सोदाहरण विवेचित कीजिए।

उत्तर—मीरा ने अपने प्रेम को किसी माध्यम से निरुपित नहीं किया अपितु उनका सीधा प्रेम श्री कृष्ण से था। वह स्वयं को गिरिधर नागर की पत्नी मानती थी और कृष्ण को पति। उनके प्रेम का प्रारम्भ गिरिधर नागर की मोहनी मूरत पर मुग्ध होकर होता है। फिर तो वह गिरधर नागर के प्रेम में आकण्ठ डूबती चली जाती हैं उनकी प्रेमासक्ति बढ़ती जाती है नई-नई अभिलाषाएँ विकसित होती हैं प्रेम इस प्रकार प्रगाढ़ होत जाता है। प्रिय की प्राप्ति का अभाव विरह में बदल जाता है। मीरा की प्रेम की जड़ें अत्यन्त गहरी हो गयी हैं।

ऐतिहासिक साक्ष्यों से पता लगता कि मीरा का कृष्ण के प्रति प्रेम उसके जन्म-जात संस्कारों से उत्पन्न हुआ था और जन्म-जात संस्कारों से पनपी भक्ति भाव आगे चलकर मीरा के लिए आलौकिक प्रेम में परिणत हो गयी और वह अपने आराध्य के सामने नाचने लगीं। मीरा के काव्य में श्रृंगार रस के संयोग एवं वियोग दोनों पक्षों का जो स्वर उभरा है वह इसी अनुभूति का परिणाम है।

मीरा का काव्य श्रृंगार रस प्रधान है। इसमें श्रृंगार के दोनों पक्ष वर्णित हैं। दोनों ही पक्षों में मीरा के हृदय की गहराइ और प्रेम एकनिष्ठता की स्पष्ट छाप है। मीरा का प्रेम लौकिक भाव भूमि पर तो है परन्तु आलौकिक प्रेम को ही उन्होंने लौकिक भावभूमि पर प्रस्तुत किया है।

गिरिधर गोपाल की प्रियतमा मीरा कभी तो अपने प्रियतम कृष्ण को रिझाती हैं और कभी उनके सामने नाचने लगती हैं।

पग बाँध घुँघरयाँ नाची रे।
लोग कह्याँ मीरा भई बावरी, सास कहे कुलनासी रे।

मीरा के प्रियतम सदा उसके पास रहते हैं वह उसके हृदय में निवास करते हैं। उनका तन मन उन्हीं गिरिधर नागर के रंग में रंगा हुआ है।

म्हाँ तो गिरिधर के रंग राती, सैंया म्हाँ।
पंचरंग चोला पहर सखी म्हाँ झिरमिट खेलन जाती।

मीरा प्रियतम मिलन के सुख में अत्यधिक मग्न रहती है। वह कृष्ण को सदा अपने सामने देखना चाहती है। इसी कारण प्रियतम के घर आ जाने पर मीरा की खुशी फूट पड़ रही है।

चंद कू देखि-देखि कमोदणि फूलै, हरखि भई मेरी काया जी।
रग-रग सीतल भई मेरी सजनी, हरि मेरे महल सिधाया जी॥

आलौकिक प्रेम के कारण मीरा को मिलन सुख मिलता रहता है क्योंकि उनका प्रियतम उनके हृदय में ही निवास करता है।

म्हारा पिया म्हारे हियड़े वसतां, णां आबांना जाती।
मीराँ के प्रभु गिरिधर नागर, मग जोणँ दिनाराती॥

मीरा के काव्य में श्रृंगार का संयोग पक्ष भावात्मक तथा रहस्यात्मक दोनों रूपों में चित्रित हुआ है तथा नारी हृदय की सशक्त व्यंजना विभिन्न पदों में हुयी है।

वियोग पक्ष—मीरा के काव्य में संयोग श्रृंगार के समान ही श्रृंगार के वियोग पक्ष का चित्रण भी बहुत मर्मस्पर्शी हुआ है मीरा के काव्य में जो विरह वेदना व्यक्त हुयी है वह नारी हृदय की सम्पूर्ण अनुभूति का चीत्कार है। मीरा ने कृष्ण के प्रति प्रगाढ़ एवं कष्टमय प्रेम की भावना को प्रकट किया है। मीरा की विरह भावना का अध्ययन हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर कर सकते हैं।

प्रतीक्षा—मीरा की विरह भावना की प्रथम विशेषता प्रतीक्षा है। मीरा का हृदय प्रति क्षण प्रियतम के आगमन की प्रतीक्षा में लगा रहता है। दिन रात उन्हीं का रास्ता देखती रहती हैं।

जोगिया जी निस दिन जोउ वाट
पाँव न चाले पंथ दु हेलो, आड़ा औघट घाट।

× × ×
जोगिया की जोवत बोहो दिन बीता, अजहूँ आयो नाही
— — —
"कांई करु कित जाऊँ री सजनी नैन गुमायो रोई ॥"

दर्शनों की अभिलाषा—मीरा के पदों में प्रियतम के दर्शनों की उत्कट अभिलाषा देखने को मिलती है। उनकी प्रतीक्षा में मीरा का एक एक पल युग के समान व्यतीत होता है। उनका आगमन मार्ग निहारते-निहारते मीरा के नेत्र दुखने लगते हैं—

"दरस बिनु दूखण लागै नैन
जबसे तुम बिछुड़े प्रभु मोरे कबहूँ न पायो चैन।"

प्रियतम के दर्शन की उत्कट इच्छा में मीरा की नींद भी नष्ट हो गयी इसका चैन नष्ट हो गया उसका सारा जीवन काल बीता जा रहा है पर प्रियतम ने अभी अपने दर्शन नहीं दिए हैं।

विवशता एवं परवशता—मीरा ने कहीं-कहीं विवशता दिखाई है वह प्रियतम से कहती कि यदि तुम्हें मुझको छोड़कर ही जाना है तो मुझे कोई रास्ता तो बता जाओ।

'प्रेम भगति की पैड़ों ही न्यारो, हमें गैल बता जा ॥"

वियोग की विविध अवस्थाओं का चित्रण—वियोग शृंगार का चित्रण करते हुए मीरा ने विरहिणी की विभिन्न दशाओं का चित्रण भी किया है वह उन्माद की अवस्था में पपीहे को बोलने से रोकती है, क्योंकि पिउ कहने का अधिकार सिर्फ मुझे है। तो कभी वन वन जोगनी का भेष रखकर प्रियतम को ढूंढ़ती है। श्रावण की घटा छा जाने पर तो उसका विरह और भी उद्दीप्त हो जाता है।

वेदना की तीव्रता—विरह वेदना की तीव्रता मीरा के अनेक पदों में मिलती है। वे अपने प्रिय को पत्र लिखना चाहती हैं, किन्तु लिख नहीं पाती हैं। इसी विवशता जनित स्थिति में वे लिख गयी हैं।

"पतियाँ कैसे लिखूं, लिखियो री न जाय"

मीरा ने अपने विरह की तीव्रता को मीन, चकोर, पपीहे के माध्यम से भी व्यक्त किया है क्योंकि सभी का प्रेम एकांगी है इन सभी के प्रिय इनकी पीड़ा को नहीं पहचानते।

मीरा का पलपल प्रियतम के बिना कठिनाई से बीत रहा है।

'रे पपीहे कबको बैर चितारयौ'

पपीहे को भी वह इसलिए धमकाती कि उसके पिउ-पिउ पुकारने से विरह-व्यथा और तीव्र हो जाती है। संसार में होती हुई वर्षा उन्हें अग्नि की वर्षा जान पड़ती है।

सावन भादों में उनकी मिलनोत्कण्ठा अत्यधिक तीव्र हो जाती है। मीरा को प्रियतम के बिना कुछ भी अच्छा नहीं लगता है मीरा चाहती है कि उनका प्रियतम प्रवास जाने से पूर्व उसे जलाकर जावे ताकि मीरा को विरह वेदना का कष्ट न भोगना पड़े।

अगर चन्दन की चितावणाऊँ, अपने हाथ जला जा
जल बल भई भस्म की ठेरी, अपने अंग लगाजा

मीरा के काव्य में अथाह वेदना के दर्शन होते हैं मीरा के काव्य में आन्तरिक वेदना का मधुर स्वर उद्भासित हुआ है। मीरा के काव्य में जहाँ संयोग शृंगार के रूप में

मिलन सुख का चित्रण हुआ है वहीं विरह वेदना की भी मार्मिक अभिव्यक्ति हुयी है। इन दोनों भावों की कोमलतम अभिव्यक्ति से मीरा का सारा काव्य अपना अलग ही विशिष्ट स्थान रखता है।

प्रश्न 3—गीतकाव्य के तत्वों के आधार पर मीरा के काव्य का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर—हृदय की अगाध अनुभूति जब स्वर व ताल के घुघरू बांध लय की चुनरी में लिपट कर निर्वाध गति से नाच उठती है तब गीत बन जाती है। यों तो 'गीति' की परिभाषा भिन्न-भिन्न विद्वानों ने भिन्न प्रकार से दी है। सामान्यतः गीति इस रचना को कहा जाता है जिसमे संगीतात्मकता, लयात्मकता, भावों की मधुरता, गत्यात्मकता, भावों की मधुरता, गत्यात्मकता एवं अनुभूति तीव्रता आदि तत्व जिस रचना में हो वह गीति कही जाती है।

मीरा अपने आराध्य देव कृष्ण की अनन्य उपासिका थी भक्ति भावना के आवेश में मीरा ने जिन पदों का गान किया उनमें स्वतः ही गीत के तत्वों का समावेश हुआ है। उनके भावुक हृदय ने विविध राग रागनियों पर आधारित गेय पदों में कहीं छन्द संगीत की त्रुटियाँ मिल जाती हैं किन्तु उनकी त्रुटियाँ अनुभूति की बाढ़ में बह जाती हैं।

गीतकाव्य के जो तत्व निर्धारित किये गये हैं वे सभी मीरा के काव्य में मिल जाते हैं। मीरा कृत गीत गोविन्द और रास गोविन्द तो पूर्णतः गीत काव्य ही हैं। यहाँ मीरा के काव्य का मूल्यांकन गीति काव्य के तत्वों के आधार पर किया जा रहा है।

संगीतात्मकता तथा लयात्मकता—मीरा के समस्त पदों में संगीतात्मकता और लयात्मकता है। इन विविध राग रागनियों अनुकूल स्वर संगम एवं स्वर प्रवाह है अनेक राग रागनियों के उदाहरण स्वरूप भी मीरा के पद गाये जाते हैं। भक्ति संगीत के कार्यक्रमों में चाहे वह आकाश से प्रसारित किया जाय या दूर दर्शन से उनमें मीरा के पदों को अधिकांश रूप में लिया जाता है जो बड़े कर्णप्रिय और भक्ति रस आप्लावित जान पड़ते हैं। इन पदों में आकण्ठ व्याप्त वेदना ने इनमें और अधिक मर्मस्पर्शिता और गेयता भरदी है मीरा के भक्ति पद जन समाज में भी गाये जाते हैं। अतः गेयता की दृष्टि से यह पद उत्कृष्ट है—

"बसो मोरे नैनन में नन्दलाल
मोहनी मूरति, सांवरी सूरत नैना बने बिसाल।"

गेयता के साथ ही साथ मीरा के पदों में एक प्रकार की लय आदि से अन्त तक चलती है कहीं भी वह टूटती नहीं अतः गेयता और लयात्मकता की दृष्टि से मीरा के पद गीत कहे जा सकते है।

और लयात्मकता का एक उदाहरण दृष्टव्य है—

"झुक आई बदरिया सावन की, सावन की मन भावन की।
सावन में उमग्यो मेरा मनवा, भनक सुनी हरि आवन की
उमड़ घुमड़ चहुँ दिसि से आयो, दामण दमक झर लावन की।"

वेदना की अगाध अनुभूति—मीरा वेदना और पीड़ा की कवयित्री कही जा सकती है। उनके काव्य में वेदना की तीव्र अनुभूति व्यक्त हुयी है। मीरा के पदों में उनके हृदय की करुणा है। वेदना का स्वर है, पीड़ा है और करुणामय चीत्कार। उनका हृदय कृष्ण से मिलन के लिए प्रतिक्षण व्याकुल रहता था। मीरा कृष्ण को अपना पति मानती थी इसी कारण सारा जीवन उनके विरह में आँसू बहाती रही। अश्रुओं के साथ ही उनके अन्तर की पीड़ा गीत बनकर उनके होठों से फूट पड़ी। इस तरह मीरा की असह्य वेदना और पीड़ा के कारण मीरा के काव्य में गीति तत्वों का स्वतः ही समावेश हो गया।

यथा—

आपन आवै लिख नहीं भेजै, वाण पड़ी ललचावन की ।
ए दोई नैना क्ह्यौ नहिं मानै, नदिया बहे जैसे सावन की ।

भावों की कोमलता एवं गम्भीरता—कोई गीत, गीत की श्रेणी में तभी आ पाता है जब उसके भाव कोमल और स्निग्ध हों गीत के भाव ऐसे कोमल किन्तु गम्भीर होने चाहिए कि वह सहृदय के तार-तार को झंकृत कर दे हृदय अपने जैसा भाव जगा दे। मीरा के गीतों में हमें यही भावुकता और गम्भीरता देखने को मिलती है उनके भाव इतने सक्षम हैं किसी भी सहृदय में भी वेदना भाव भर सकते हैं। मीरा के पद किसी भी सहृदय के मन को रुला सकते हैं तथा उन्मादित कर सकते हैं।

पतियाँ मैं कैसे लिखूं, लिखियो री न जाय ।
कलम धरत मेरी कर कंपत, नैन रहे झरलाय ।
वात कहूँ मोहि कहत न आवै, जीय रह्यो डर राय ।

मीरा के पदों में भावों की गम्भीरता है उनमें कहीं भी उथलापन नहीं है मीरा कृष्ण के प्रेम में आकण्ठ डूबी थी, यही कारण है कि उनके पद भी भावों में आकण्ठ डूबे हुए हैं।

भाषागत माधुर्य—मीरा के काव्य की भाषा अत्यन्त मधुर एवं भावनानुकूल है। उसमें भावों के अनुरूप ही कोमल एवं मधुर शब्दों का प्रयोग है, जो अर्थ गाम्भीर्य और भाव गाम्भीर्य की दृष्टि से उचित है। मीरा के काव्य में नाद सौन्दर्य भी स्पष्टतः परिलक्षित होता है।

"सुन्दर बदन मदन की सोभा, चितवन अनियारी ।
बजावे बंसी कुजंन में ।
गावत तान तंरग रंग धुनि नाचत ग्वालन में ।
माधुरी मूरति है प्यारी ।"

गुजराती, राजस्थानी मिश्रित शब्दों के प्रयोग से मीरा के पदों में यद्यपि ऊष्म वर्णों की अधिकता, फिर भी मीरा ने उन्हें माधुर्य प्रदान करने की चेष्टा की है—

"म्हाँ तो गिरघर के रंग राती, सैयाम्हाँ ।
पंचरंग चोला पहर सखी म्हा झिरमिट खेलन जाती ।"

मुक्तक शैली—मीरा का सारा काव्य मुक्त छन्दों में ही है। मीरा के प्रत्येक पद में स्वतन्त्र भाव बोध है। प्रत्येक पद में भावों की तीव्रता समाविष्ट है। इस शैली में जो एक प्रकार का कसाव होता है वह मीरा के पदों में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। मुक्तक काव्य की दृष्टि में मीरा का काव्य सफल मुक्तक काव्य है। जो गीति काव्य का सबसे बड़ा गुण है।

इस प्रकार मीरा का काव्य एक सशक्त गीतिकाव्य है। इसमें वे सभी तत्व पर्याप्त मात्रा में निहित हैं जो एक गीतिकाव्य के लिए आवश्यक है।

प्रश्न 4—काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से मीरा के काव्य का मूल्यांकन कीजिए।

अथवा

साहित्यिक दृष्टिकोण से मीरा के काव्य का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर—हिन्दी साहित्य के कृष्ण भक्त कवियों में मीरा अपना अप्रतिम स्थान रखती है। मीरा का लक्ष्य कभी भी कविता करना नहीं रहा, न ही उनका लक्ष्य अनुपम काव्य

रचना कर के यश की प्राप्ति करना था। वे कृष्ण की अनन्य भक्त थीं और उनके भक्ति विह्वल हृदय में जो भाव कृष्ण के लिए समर्पित हो वाणी से निसृत हुए वही उनकी काव्य रचनाएँ बन गयीं। और उन्हीं रचनाओं से मीरा कवयित्री के रूप में जानी जाने लगी। मीरा का उद्देश्य भगवद भक्ति में तल्लीन होकर अपने आराध्य का गुणगान करना और अपने जीवन की मार्मिक अभिव्यक्ति कर आराध्य द्वारा अपना उद्धार करवाने की भावना प्रकट करना था। तब भी हमें मीरा काव्य में साहित्य की कई विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। मीरा का काव्य हिन्दी साहित्य का वैभव और गौरव है अनुभूति की तीव्रता भावों की कोमलता और गेयता की विशेषता के लिए इनका काव्य पूरे देश में लोकप्रिय है।

मीरा ने अपने आराध्य को ही अपना प्रियतम मानकर अनेक पदों की रचना की उनकी रचनाओं में 'नरसीजी का मायरो' गीत गोविन्द की टीका तथा राग सोरठ प्रसिद्ध हैं। 'रास गोविन्द' में उन्होंने विभिन्न राग रागनियों का प्रयोग किया है। 'मीरा की पदावली' का अनेक लोगों द्वारा सम्पादन किया गया है।

मीरा के काव्य में भावपक्ष की प्रधानता तथा उसका कलापक्ष गौण है। मीरा कृष्ण की वियोगिनी थी अतः कविता करना उनका लक्ष्य नहीं था काव्य गुण उनकी कविताओं में स्वतः ही समाविष्ट हो गये हैं। भाव पक्ष की दृष्टि से उनके काव्य में करुणा और वेदना का स्वर प्रमुख रहा है। उनके भावपक्ष की दृष्टि से काव्य सौन्दर्य सम्बन्धी विशेषताएँ निम्न बिन्दुओं पर उल्लिखित है।

भक्ति भावना—कृष्ण भक्तों में मीरा का अनन्यतम स्थान है मीरा ने गिरधर नागर कृष्ण को अपना प्रियतम मान कर उनके प्रति अनन्य भक्ति भावना प्रदर्शित की है। कहीं तो मीरा ने लौकिक रूप में सगुण उपासना की है परन्तु कहीं कहीं उनकी इस भक्ति भावना ने रहस्यवाद का चोला पहन लिया है। उस समय उनकी भक्ति निर्गुण भक्तों की सी प्रतीत होती है। मीरा का अपने प्रियतम के प्रति प्रेम लौकिक न होकर अलौकिक है। उनकी भक्ति दाम्पत्य भाव की मधुरा भक्ति है। उन्होंने कई स्थलों पर कृष्ण को अपने प्रतिरूप में स्वीकार किया है।

"मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई
जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई ॥"

मीरा भक्ति के रस में आकण्ठ डूबी हुई थी वह कृष्ण की दीवानी थी। वह कृष्ण रंग में ऐसी रंगी थी कि लोक निन्दा से भी बेखबर हो गयी थी। मीरा की भक्ति भावना में तन्मयता एवं मन की पवित्रता है।

रहस्यवादी भावना—मीरा ने अपने आराध्य को आध्यात्मिक रूप में अपना प्रियतम या पति बतलाया है। उन्होंने अपने प्रियतम को कहीं सगुण और कहीं निर्गुण निराकार बतलाया इस कारण उनके काव्य में रहस्यवाद की अनुभूति सशक्त रूप में व्यक्त हुई है मीरा का काव्य शृंगार प्रधान है, किन्तु प्रेम लौकिक न होकर अलौकिक है वे कृष्ण के मोहक रूप पर तन मन से न्यौछावर थीं। उनका प्रियतम सदा उनके हृदय में निवास करता था।

"जिठारो पिय परदेस बस्या री लिख-लिख भेज्यां पाती ॥
म्हारा पिया म्हारे हियड़े वसतां, णां अवाना जाती ॥"

कहीं-कहीं तो उन्होंने अपनी रहस्यवादी भावना स्पष्ट रूप से व्यक्त की है। यथा—

"इन नैनन मेरा साहिब बसता, डरती पलक न नाऊ री।
त्रिकुटी महल में बना है झरोखा तहाँ से झाँकी लगाऊ री।"

ऐसे स्थलों पर मीरा के ऊपर सिद्धों एवं नाथ पंथियों का स्पष्ट रूप से प्रभाव दृष्टि-गोचर होता है।

म्हाँ गिरधर के रंग राती, सैंया म्हाँ।
पंच रंग चोला पहर सखी म्हाँ झिर-मिट खेलन जाती।
वाँ झिरमिट माँ मिल्यो साँवरो, देख्यां तण मण राती।

नाम स्मरण एवं गुरू की महिमा का वर्णन—मीरा ने अपने काव्य में गुरू की महिमा का वर्णन, संसार की निस्सारता का वर्णन आदि पर विचार व्यक्त किए हैं उन्होंने गुरू को ईश्वर का मार्ग बताने वाला तथा ईश्वर से परिचय कराने वाला बताया है।

"पिया मिल्या मोहिं किरपा कीन्हीं, दीदार दिखायां हरि ने।
सत गुरु सबद लखाय अंसरी, ध्यान लखाया धन में।"

मीरा ने ईश्वर के नाम स्मरण को सत्संगति की तरह मुक्तिदायक बतलाया है—

राम नाम रस पीजे, मनुआं राम नाम रस पीजे।
तज कुसंग सत्संग बैठि नित, हरि चर्चा सुन लीजे।
"मेरा मन रामहिं राम रटै रे
राम नाम जप लीजै प्राणी, कोटिक पाप कटै रे।"

विरहानुभूति व मिलन सुखानुभूति—मीरा की माधुर्य भाव की भक्ति के दो रूप मिलते हैं—(1) मिलन, (2) विरह। मीरा कृष्ण के विरह में व्याकुल रही हैं उनका सारा काव्य उनकी इस विरह वेदना से लिप्त है।

परन्तु उनकी विरह की वेदना से ही आप्लावित रही और उन्होंने सुख की अनुभूति कभी की ही नहीं अपितु उन्होंने मिलन का सुख भी भोगा है। मिलन के सुख में वे अपने नटवर नागर के साथ मिलकर नैसर्गिक सुख के गीत भी गातीं है।

गहन एवं गम्भीर भावाभिव्यक्ति—मीरा के काव्य की सबसे बड़ी विशेषता उनके काव्य में गम्भीर भावाभिव्यक्ति है। यह भाव उनकी स्वयं की अनुभूति के उपरान्त उनके हृदय से निसृत हुए हैं इसी कारण वे कहीं भी बोझ नहीं लगते हैं। न ही कहीं उनमें उथला-पन दिखाई देता है वह अपने सहज एवं स्वाभाविक रूप में है।

गेयता—उनके काव्य की सबसे बड़ी विशेषता उनके काव्य में निहित गीति तत्वों की है इसी विशेष तत्व के कारण वह जन मानस में बहुत लोकप्रिय हुए। उनके पदों में अनुभूति की कोमलता है, तीव्रता है, प्रभावयमता है तथा माधुर्य है। इन्हीं तत्वों के सामन्जस्य के कारण उनके काव्य संगीत का माधुर्य दृष्टिगोचर होता है। उनके पदों का सबसे बड़ा गुण उनकी लयात्मकता, रोचकता एवं मधुरता है।

भाषा—मीरा के पद किसी भी कलात्मकता से बिलकुल दूर हैं। उनके पदों की भाषा मूल रूप से राजस्थानी है परन्तु मीरा स्थान-स्थान पर मन्दिरों में जाने के कारण उनकी भाषा में पंजाबी गुजराती, ब्रज भाषा आदि प्रान्तीय भाषाओं के शब्द आ गये हैं। मीरा अलग-अलग प्रान्तों में घूमती रही इस कारण भाषा पर प्रान्तीयता की छाप पड़ती गयी, परन्तु इससे भाषा की सहजता एवं स्वाभाविकता किसी भी प्रकार कम नहीं हुई। हिन्दी में उनके जो पद हैं उन पर गुजराती भाषा का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

शैली—मीरा ने अपने काव्य में मुक्तक गीति शैली को अपनाया है। ईश्वर की माधुर्य भाव की भक्ति में समय-समय पर जो उन्हें अनुभूतियाँ होती रहीं उन्हें वे समय-समय पर व्यक्त करती रहीं। उनके पद स्वतन्त्र हैं। उनका सारा काव्य मुक्तक शैली में मिलता है। उनके काव्य मे भावों का आवेश स्पष्टतः दिखाई देता है।

अलंकार—मीरा का काव्य किसी प्रकार की कृत्रिमता को लिए हुए नहीं है उन्हें किसी भी प्रकार के अलंकारों का कोई ज्ञान नहीं था। जो भी अलंकार उनके काव्य में हैं वह स्वतः ही स्वाभाविक रूप से आ गये। उनके काव्य में उपमा, रूपक, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग मिलता है।

प्रतीक योजना—मीरा के काव्य में प्रेम भावना के कारण रहस्यात्मक भावना आ गयी है। इससे उनके कई पदों में सुन्दर प्रतीक योजना दिखाई देती है। उन प्रतीकों में कुछ पारिभाषिक और विशिष्ट रूपात्मक हैं। जैसे—

"त्रिकुटी महल में बना है झरोखा"

इसमें 'ब्रह्म रन्ध्र' के लिए सुन्न महल का प्रयोग प्रतीकात्मक है इसी प्रकार 'पंचरंग चोला' 'झिर मिट', 'बड़े घर तालों लागां री' पारिभाषिक प्रतीक है।

निष्कर्षतः मीरा का काव्य कोमल भावों एवं हृदय की मार्मिक अनुभूतियों से परिपुष्ट है। उसमें स्वाभाविकता एवं सहजता है भावपक्ष सशक्त एवं कला पक्ष गौण है। अपनी सरस, सहजता, गेयता के कारण मीरा का काव्य आज जनमानस के हृदय को अपनी ओर आकृष्ट करता रहता है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—मीरा की लोकप्रियता के कारणों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—मीरा एक ऐसी कवयित्री थीं जिन्होंने अपना सारा जीवन कृष्ण के हाथों सौंप दिया, प्रियतम कृष्ण की आराधना के लिए उन्होंने जो यातनाएँ झेलीं और जो बाधाएँ उनके मार्ग में आयीं उन सभी की अभिव्यक्ति उनके काव्य में हुई है। प्रियतय कृष्ण के प्रेम में उन्होंने जो विरह वेदना सही है वह भी उनकी हृदयगत अनुभूति की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। उनका काव्य साहित्य प्रेमियों के लिए ही नहीं अपितु सम्पूर्ण जनमानस के लिए है। मीरा ने ऐसा काव्य लिखा जो जनमानस के मन को उद्वेलित करने में समर्थ हो सका। वह ऐसा काव्य है जिसको पढ़कर जन साधारण सहानुभूति और प्रेम से भर उठे। भक्ति के सागर में डुबकियाँ लगाने लगे। उसमें अनुभूतियों का तीव्र आवेग है मीरा के काव्य की लोकप्रियता किसी एक कारण से नहीं है अपितु उसके लोकप्रिय होने के अनेक कारण हैं जो इस प्रकार उल्लिखित हैं—

(1) मीरा के काव्य में माधुर्य भावना की अभिव्यक्ति हुई है।
(2) मीरा के काव्य में निर्गुण एवं सगुण का समन्वय हुआ है।
(3) उनका काव्य अनुभूतियों में तीव्र वेग परिलक्षित होता है।
(4) मीरा का काव्य अपनी गीतात्मकता के कारण बहुत लोकप्रिय हुआ है।
(5) मीरा के काव्य में जन भाषा का प्रयोग हुआ है।
(6) मीरा का काव्य लोक चेतना से पुष्ट और लोक विश्वासों से युक्त है।

यह लोक जीवन का प्रामाणिक काव्य है।

मीरा की लोकप्रियता के कारण अनेक हैं मीरा की लोकप्रियता आज भी यथावत बनी हुई हैं। भक्ति समर्पण और विश्वास के रंगों में डूबी मीरा की पद रचना की प्रासंगिकता आज भी यथावत बनी हुई है।

प्रश्न 2—मीरा मरुधरा की काव्य गंगा है? उसने प्रेम के आँसुओं से इस मरुभूमि को सींचा है? इस कथन की पुष्टि कीजिए।

उत्तर—वैसे हिन्दी साहित्य में कवयित्रियों में तीन नाम उभर कर आते हैं। मीरा, सुभद्रा कुमारी चौहान और महादेवी वर्मा। यों तीनों ही अपने अपने क्षेत्र की अधिष्ठात्रियाँ

हैं किन्तु इनमें भी सर्वोपरि और सर्वाधिक प्रचलित नाम मीरा का है। उन्होंने स्वयं लिखा है 'अंसुवन जल सींचि-सींचि प्रेम बेलबोई' मीरा राजस्थान के साहित्य एवं संस्कृति की पहचान बन गयी थी उनके गीतों की गूँज रेत के टीलों से उठकर कश्मीर और कन्या कुमारी तक पहुँचती है। उनकी भाषा प्रमुख रूप से राजस्थानी होते हुए ब्रजभाषा और गुजराती का स्पर्श लिए हुए है। जिन्होंने उनके काव्य को अत्यधिक मधुर बना दिया है। अपने इष्टदेव को पति के रूप उपासना करने वाली एक मात्र कवयित्री थी। नारी हृदय की कोमल भावना, विरह व्यथा, आध्यात्मिक ज्ञान, ऊँचा दर्शन संसार की निस्सारता, प्रभु नाम की महिमा सभी की अभिव्यक्ति बड़ी सक्षमता से हुई है। इन्होंने अपने काव्य की गंगा से मरुभूमि को पवित्र कर दिया तथा अपने पवित्र अलौकिक प्रेम के विरह के आँसुओं से मरुभूमि को रस रिक्त बना दिया। राजस्थान ही नहीं अपितु भारत भी ऐसी कोमल हृदया भक्त एवं कवयित्री का ऋणी रहेगा।

प्रश्न 3—'थांने कांई समझाऊ म्हारा वाला गिरधारी' नामक पद का आशय अपने शब्दों में समझाइए।

उत्तर—मीरा ने अपने प्रियतम के प्रति अपने भक्ति भाव को प्रकट करते हुए उनको अपने प्रेम की बात समझा रही है। वह कह रही है कि तुम मेरे प्रियतम हो और मैं तुम्हारी प्रेमिका हूँ तुम्हारी और मेरी प्रीत पूर्व जन्म से चली आ रही है। अब इससे मुक्त होना सम्भव नहीं है। प्रियतम के सुन्दर मुख को देखते रहने से मेरे हृदय में प्रगाढ़ प्रेम हो गया है। प्रियतम की मोहिनी रूपासक्ति से यह प्रेम परिपक्व हो गया है अतः अब प्रियतम को भूल पाना सम्भव नहीं है। हे प्रियतम कृष्ण तुम मेरे घर पधारो मैं तुम्हारे लिए मंगल गीत गाऊँगी। तुम्हारे आने की खुशी में मैं मोतियों से चौक पूर दूँगी और तन मन में तुम्हारे ऊपर न्यौछावर हो जाऊँगी। वह उपालम्भपूर्वक निवेदन करती हैं। मेरा तुम्हारा जन्म जन्मान्तर का साथ है अतः तुम्हें मुझसे किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए। तुम गोपियों के साथ तो प्रेम विलास में रत रहते हो उनके प्रियतम बनकर रास लीलाएँ रचाते हो और मेरे सामने ब्रह्मचारी बन जाते हो। मैं तो आपके चरणों में पड़ी हुई दासी हूँ अतः मुझे अपनी प्रेम भावना से अलग मत कीजिए।

मीरा ने इस पद में अपनी अनन्य भक्ति भावना दिखायी है। उन्होंने प्रियतम पर अपना अधिकार जताने के लिए उपालम्भ का प्रयोग किया है।

प्रश्न 4—'बदला रे तू जल भरि लै आयौ।' पद का भाव स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—मीरा वर्षा कालीन बादलों को सम्बोधित करते हुए कह रही है कि हे बादल तू जल भर कर ले आया है। तुम्हारे आगमन से रिमझिम-रिमझिम छोटी-छोटी बूँदें बरसने लगी हैं और कोयल का मीठा स्वर सुनायी देने लगा है। मधुर गति से पवन चल रहा है और आकाश में बादल छा गये हैं जो कभी कभी मधुर गर्जना करते हैं। ऐसे सुहावने अवसर पर शैय्या संवार दी है और मेरे प्रियतम घर आ गये हैं। मैं प्रियतम के साथ मिलकर प्रेम के गीत अर्थात् मंगल गान गाने लगी हूँ मीरा कहती हैं मेरे प्रिय तुम तो अविनाशी कृष्ण हो। अर्थात् जिनका कभी विनाश नहीं हो सकता वह अजर और अमर है ऐसे प्रियतम को वही प्राप्त कर सकता है जिसका भाग्य अच्छा हो।

मीरा ने प्रियतम को अविनाशी कहकर लौकिक विरहणी की अपेक्षा स्वयं को भाग्यशाली बतलाया है।

प्रश्न 5—माधुर्य भाव की भक्ति के अंगों का वर्णन कीजिए तथा मीरा के काव्य में यह कहां तक रूपायित हुए हैं।

उत्तर—मीरा के काव्य में माधुर्य भाव की भक्ति के अंग पूरी तरह से मिलते हैं। इस भाव की भक्ति के प्रमुखतः तीन अंग होते हैं—

1. रूप सौन्दर्य का वर्णन
2. विरह निवेदन
3. आत्म समर्पण

(1) **सौन्दर्य निरूपण**—मीरा ने अपने आराध्य श्रीकृष्ण का रूप वर्णन उसी रूप में किया है जिस रूप में गोपियाँ उन्हें देखती थीं मीरा के अनुसार उनके प्रियतम कृष्ण की मोहनी सूरत थी। वह श्याम के रंग में ही रंगी हुई थी ?

(2) **माधुर्य भाव की भक्ति और विरह**—प्रियतम के प्रति मिलनोत्कण्ठा व्यक्त करना ही विरह है। प्रेम का पवित्र रूप विरह में ही दृष्टिगोचर होता है। इस प्रेम की पीड़ा को वही जान सकता है जिसने इसका अनुभव किया हो। मीरा के काव्य में विरह की तीव्र वेदना व्यक्त हुई है। मीरा की वेदना युग-युग से प्रियतम से बिछुड़ी हुई प्रेमदग्धा प्रेमाकुल आत्मा की वेदना है। वह अपने प्रियतम पर अपना सर्वस्व समर्पित कर देना चाहती है।

(3) **आत्मसमर्पण की भावना**—माधुर्य भाव की भक्ति का तीसरा अंग आत्म समर्पण की भावना है। मीरा के काव्य में प्रियतम को सब समर्पण कर देने का भाव व्यक्त हुआ है। मीरा कृष्ण के प्रति पूर्णरूप से समर्पित है समर्पण की इसी भावना के कारण वह अविनाशी प्रियतम की दासी तक बनने को तैयार हो जाती है।

अतः स्पष्ट है मीरा के काव्य में माधुर्य भाव की भक्ति भावना है। माधुर्य भक्ति के सभी अंग मीरा की भक्ति में मिलते हैं अतः मीरा की भक्ति को हम बिना किसी संकोच के वैष्णवों की मधुरा भक्ति का नाम दे सकते हैं।

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—मीरा ने बहुत सरल शब्दों में अत्यन्त संक्षेप में बहुत सी बाहरी बातें कह दी हैं। इस कथन को संक्षेप व्यक्त कीजिए।

उत्तर—मीरा ने भगवान को सुख देने वाला और दुःख हरने वाला कहा है। इससे सीधे शब्दों में इतनी स्पष्ट और गहन बात नहीं कही जा सकती इसी प्रकार के अनेक प्रसंग मीरा के पदों में पाये जाते हैं।

प्रश्न 2—मीरा ने अपने प्रियतम के गुणों का बखान करते हुए किन अन्तर्कथाओं के प्रमाण दिए हैं ?

उत्तर—मीरा ने अपने प्रियतम के गुणों का बखान करने के लिए, तोते को राम-राम पढ़ाने से गणिका को मोक्ष प्राप्त हुआ, गजेन्द्र को मोक्ष प्राप्त हुआ, अजामिल का उद्धार हुआ आदि अन्तर्कथाएँ दी हैं इन अन्तर्कथाओं के माध्यम से प्रियतम की महिमा का गुणगान किया है।

प्रश्न 3—मीरा को किसने और किस कारणवश अनेक यातनाएँ दी ?

उत्तर—मीरा भगवद भक्त थी। भक्ति के आवेश में वह लोक-लाज को भूल जाती थीं अतः मीरा के देवर उनको कुल मर्यादा घातिनी समझते थे। उन्होंने मीरा को अनेक यातनाएँ दीं जिनका उल्लेख मीरा के पदों में मिलता है। कई बार उनको मार डालने की भी कोशिश की गयी। परन्तु मीरा की भक्ति भावना के कारण किसी घातक वस्तु का उन पर असर नहीं हुआ।

प्रश्न 4—मीरा के काव्य में किस पक्ष की प्रधानता है और उनकी रचनाएँ इतनी मार्मिक किस प्रकार बन पड़ी हैं ?

उत्तर—मीरा के काव्य में भावपक्ष की प्रधानता है। नारी हृदय के साथ-साथ अनन्य भक्ति भावना की अगाध अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के कारण ही उनका काव्य अत्यन्त मर्मस्पर्शी बना है। मीरा के काव्य में माधुर्य, सरसता, करुणा और प्रेम की पीर व्यक्त हुई है।

प्रश्न 5—मीरा ने शृंगार के किस पक्ष का वर्णन अधिक किया है और क्यों ?

उत्तर—मीरा कृष्ण की अनन्य उपासिका थी। वह दाम्पत्य भाव से कृष्ण की भक्ति करती थी। प्रियतमा से मिलन के लिए वह पल-पल लालायित रहती थी। प्रियतम से मिलन न हो पाने के कारण उनके हृदय से विरह का अजस्त्र स्रोत फूट पड़ता था। यही कारण है कि उनके काव्य में शृंगार के संयोग पक्ष की अपेक्षा वियोग पक्ष का वर्णन अधिक हुआ है। वह मीरा के हृदय की सहज अभिव्यक्ति थी।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—'म्हाँ तो गिरधर के रंग राती'

प्रस्तुत पंक्ति में गिरधर के रंग में रंग जाने से क्या तात्पर्य है ?

(क) श्याम रंग में रंग जाना

(ख) भक्ति में डूब जाना

(ग) प्रेम दीवानी हो जाना

(घ) गिरधर के समान श्यामवर्ण हो जाना

(ङ) सांवरे के साथ होली खेलना।

प्रश्न 2—मीरा अपने प्रियतम कृष्ण को क्यों नहीं लिखती है ?

(क) मीरा पढ़ी-लिखी नहीं थी

(ख) पत्र लिखने में लज्जा अनुभव होने के कारण

(ग) बदनामी के कारण

(घ) उनके प्रिय उनके हृदय में निवास करते थे

(ङ) पत्र लिखने की सुविधा उन्हें प्राप्त नहीं थी।

प्रश्न 3—मीरा ने गिरधर गोपाल की उपासना किस भाव से की थी ?

(क) दास्य भाव (ख) सख्य भाव

(ग) मातृत्व भाव (घ) पितृ भाव

(ङ) दाम्पत्य भाव।

प्रश्न 4—मीरा के पदों की भाषा कौन सी है ?

(क) राजस्थानी (ख) ब्रज

(ग) खड़ी बोली (घ) गुजराती

(ङ) अवधी।

प्रश्न 5—मीरा के पदों की प्रमुख विशेषता क्या थी ?

(क) प्रचलित राजस्थानी लोक भाषा का प्रयोग

(ख) विचारों की सरलता

(ग) निर्गुण ब्रह्म की उपासना

(घ) कृष्ण के प्रति अलौकिक दाम्पत्य भाव के प्रेम की व्यंजना

(ङ) रहस्य भावना।

प्रश्न 6—मीरा का काव्य किस प्रकार का था ?

(क) महाकाव्य (ख) प्रबन्ध काव्य
(ग) गीति काव्य (घ) खण्ड काव्य
(ङ) मुक्तक काव्य ।

उत्तरमाला

1. (ख) 2. (घ) 3. (च) 4. (क) 5. (घ) 6. (ग) ।

'ढोला मारूरा दूहा'

(1) "जिमि जिमि मन अमलेकियई, तार चढंती जाई ।
तिम तिम मारबणी तरणइ, तनणापउ थाइ ॥1॥
असइ आरखइ मारवी, सूती सेज विछाई
साल्ह कुँवर सुपनइ मिल्यउ, जागि निसान उखाई ॥2॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'प्राचीन काव्य कलाधर' में संकलित यह अंश राजस्थानी भाषा के प्रसिद्ध 'ढोला मारूरा दूहा' से लिया गया है। प्रस्तुत अवतरण उसी अंश से अवतरित है। प्रस्तुत अवतरण पूगल की राजकुमारी मारवणी की यौवनावस्था के प्रारम्भ होने का वर्णन है। पूगल की राजकुमारी जब यौवनावस्था के द्वार पर पहुँची तो उसे स्वप्न में प्रियतम के दर्शन हुए उसे यह ज्ञात नहीं था कि उसका बचपन में विवाह हो चुका है। फिर भी स्वप्न में उसे जिस राजकुमार के दर्शन हुए वह उसका पति ही था। इस अवतरण में मारवणी की यौवन प्राप्ति एवं स्वप्न दर्शन की स्थिति का वर्णन है।

व्याख्या—ज्यों-ज्यों अपने मन के प्रभुत्व को प्रकट करती हुई मारवणी आयु के तार पर चढ़ती जाती है। त्यों-त्यों उसके शरीर में यौवन के लक्षण प्रकट होते जाते हैं। अर्थात् मारवणी जब वयस्क होने लगती है तो उसके मनोभाव का भी विकास होने लगता है और शरीर पर यौवन के चिह्न उभरने लगते हैं।

मारवणी के शरीर पर तारुण्य का तेज फूटने लगा। जब वह अपनी सेज बिछाकर सोयी हुई थी कि स्वप्न में उसे ढोला मिला अर्थात् स्वप्न में उसे साल्ह कुमार ढोला मिला उसके मिलने से उसे मिलन सुख प्राप्त हुआ। परन्तु जब वह जागी तो प्रियतम को पास न पाकर निःश्वास भरने लगी अर्थात् स्वप्न दर्शन से उनके मन विरह व्यथा के अंकुर फूटने लगे। वह गर्म-गर्म लम्बे श्वांस छोड़ने लगी।

विशेष—'तार चढंती जाई' लेकर माताप्रसाद गुप्त, श्री भंवरलाल नाहरा आदि विद्वानों ने अलग-अलग अर्थ किए हैं।

विरह की प्रथमावस्था का वर्णन है, अनुप्रास एवं पुनरोक्ति प्रकाश अलंकार है।

(2) ऊलंबे सिर हथ्थड़ा चाहंती रस लुब्ध
ऊँची चढ़ि चातृगि जिउ, माग निहालउ मुध्ध ॥4॥
थाह निहालइ, दिन गिणाइ, मारु आसालुध्ध ।
परदेसे धाधल, विखंड न जाणई मुध्ध ॥5॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत् ।

मारवणी स्वप्न में प्रिय दर्शन के कारण व्याकुल हो जाती है और विरह के अपार सागर में डूब जाती है । उसी विरह व्याकुल व्यवस्था का वर्णन प्रस्तुत दोहे में किया गया है ।

व्याख्या—विरह से व्याकुल मारवणी अपने दोनों हाथों को ऊपर उठाये बीच में सिर को थोड़ा झुकाती हुई अनमने भाव से शून्यता का अनुभव कर रही है वह विरह के सागर में डूबी हुई है । वह चातक की भाँति ऊँची चढ़कर प्रियतम के आने का मार्ग देखती है अर्थात् स्वांति नक्षत्र के जल की बूँद का प्यासा चातक अपने प्रिय मेघ के आने की राह जिस प्रकार देखता रहता है । उसी प्रकार मारवड़ी बार-बार अट्टालिका पर चढ़कर प्रिय के आने की राह देखती रहती है ।

अपने स्वप्न में देखते हुए प्रियतम के आगमन और मिलन की अभिलाषा से मारवणी निरन्तर अपने प्रियतम का मार्ग देखती रहती है । परदेश में विविध प्रकार के झंझट होते हैं परन्तु मुग्धा मारवणी उसे नहीं जानती वह प्रिय मिलन की आशा में रहती है । अर्थात् मारवणी को यह ज्ञात नहीं है कि उसका प्रियतम कब आएगा । परन्तु फिर भी वह उसकी प्रतीक्षा करती रहती है ।

विशेष—(1) मारवणी को मुग्धा नायिका के रूप में चित्रित किया है । विरह की प्रिय स्मरण, अभिलाषा तथा अश्रुपात आदि दशाओं का चित्रण हुआ है ।

(3) सखि ए सज्जण बल्लहा, जइ अणदिठ्ठा तोइ ।
खिण खिण अन्तर सभरइ, नहीं विसारई सोई ।।10।।
मारु नूं आखई सखी, एह हमारी बुज्झ ।
साल्ह कुँवर सुहिगई मिल्यउ, सुन्दरि सऊत्र तुज्झ ।।11।।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्

मारु का विवाह अबोधावस्था में हुआ था जब वह डेड़ वर्ष की थी । तब से उसने अपने प्रियतम को कभी नहीं देखा था । वह उसे जानती भी नहीं थी । जब वह स्वप्न दर्शन के बाद विरह से व्याकुल रहने लगी । अपनी इस व्यथा को मारवणी ने जब अपनी सखियों को बताया, तो उन्होंने मारु (मारवणी) को वास्तविकता से परिचित कराया । यह दोहे उसी प्रसंग के हैं ।

व्याख्या—मारवणी अपनी सखियों से कहती कि हे सखियों ! यद्यपि मैंने प्रियतम को साक्षात् रूप में कभी नहीं देखा है, फिर भी मेरा हृदय क्षण क्षण में उसका स्मरण करता रहता है अर्थात् मैं क्षण भर के लिए भी उसे भुला नहीं पाती । इस प्रियतम के प्रति मेरी ऐसी दशा क्यों हो रही है जिसे मैंने साक्षात् रूप में कभी नहीं देखा ।

मारवणी का कथन सुनकर उसकी सखियाँ कहती हैं कि हमारी समझ में तो यही आता है कि तुमने स्वप्न में जिसे प्रियतम के रूप में देखा है वह साल्हकुँवर (ढोला) ही है । हे सुन्दरी । वह तुम्हारा पति है । भाव यह है कि सखियाँ कहती हैं कि हे सुन्दरी तुमने स्वप्न में अपने ही पति को देखा है जिसके प्रेम में तुम इतनी व्यथित हो रही हो ।

विशेष—मुग्धा नायिका की प्रेमासक्ति की व्यजंना है ।

स्वप्न दर्शन से प्रेम होने की स्थिति का वर्णन है ।

संवादात्मक शैली है ।

(4) बावाहिया चढ़ि गऊख सिरि, चढ़ि ऊँचें इरी भीत।
मत ही साहिववाहुडइ, कउ गुण आवइ चीत ॥14॥
वावहिया चढ़ि डूँगरे, चढ़ि ऊचइरी णाज।
मतही साहिव वाहुडइ, सुणि मेहांरी गाज ॥15॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

सखियाँ जब मारू को उसके विवाहित होने का ज्ञान कराती हैं तो वह अपने प्रियतम की स्मृति में और अधिक विहवल हो जाती है। वह पपीहे को सम्बोधित करते हुए कहती है कि हे पपीहे तू ऊँचे स्वर में पिउ-पिउ की पुकार कर जिसे सुनकर मेरे प्रियतम आ जावे।

व्याख्या—मारवणी कहती है हे पपीहे तू किसी झरोखे या ऊँची दीवार पर चढ़कर पिउ-पिउ पुकार। जिससे तेरी आवाज सुनकर मेरे प्रियतम आ जावें। (वर्षा काल में पपीहा पिउ-पिउ पुकारता है तो उसके मधुर बोल सुनकर प्रवासी प्रियनम घर लौटने को उत्सुक हो जाते हैं क्योंकि तब उसके हृदय में प्रियतमा की स्मृति और अधिक तीव्र हो जाती है इसी उद्देश्य से मारवणी पपीहे को ऐसा कहने लगी।

मारवणी पुनः पपीहे को सम्बोधित करती हुयी कहती है कि हे पपीहे तू किसी ऊंचे पर्वत पर जाकर बैठजा या किसी तालाब की ऊँची पाल पर चढ़कर बोल, जिससे मेघों की गर्जन सुनकर प्रियतम वहीं लौट ना जाएँ। मारवणी के कथन का यह आशय है कि मेघों की गर्जना सुनकर प्रियतम भ्रमित हो सकता है परन्तु पपीहे की पिउ पिउ की आवाज से उसे अभास हो जाएगा कि मेरी प्रियतमा यहीं है।

विशेष—मारवणी अपने सन्देश का माध्यम पपीहे को बनाती है।

अनुप्रास एवं यमक अलंकार का प्रयोग हुआ है।

मेघों की गर्जना सुनकर विरही मन प्रिय मिलन के लिए अत्यधिक उत्सुक हो जाता है। उसी का वर्णन इसमें किया गया है।

(5) बाबाहिया, तरपंखिया, तइ किऊँ दीन्ही लोर।
मइँ जाण्यउ प्रिय आवियउ, ससहर चन्द चकोर॥
बावाहिया निःसंखिया बाढ़ दइ दइ लूण।
प्रिय में भई प्रीउ की, तू प्रिउ कहइ सकूण॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

सखियों से अपने प्रिय का परिचय प्राप्त हो जाने पर मारवणी और अधिक विरह से व्याकुल रहने लगी। तभी कभी तो वह पपीहे को पीऊ 2 टेरने को कहती है और कभी उसे ऐसा करने से मना करती है। मारवणी की इसी दशा का वर्णन इन दोनों दोहों में किया गया है।

व्याख्या—मारवणी कहती है कि हे लाल रंग के पंखों वाले पपीहे इस समय पिउ-पिउ की रट क्यों लगा रखी है। तुम्हारी इस प्रकार की रट सुनकर मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे प्रिय आ गये हैं। जैसे चन्द्रमा के लिए चकोर प्रिय है, उसी प्रकार वे प्रियतम मेरे लिए प्रिय हैं अर्थात् पपीहे तुम्हें पिउ पिउ बोलने का कोई अधिकार नहीं है यह अधिकार सिर्फ मेरा है।

मारवणी पपीहे को सम्बोधित करती हुयी पुनः कहती है कि अरे नीले पंखों वाले पपीहे तुम्हारी आवाज मेरी विरह व्यथा को और तीव्रकर रही है इस विरह व्यथा में

तुम्हारी यह आवाज मुझे ऐसी लग रही है जैसे कोई मुझे काटकर ऊपर से नमक लगा रहा हो। प्रिय मेरा है और मैं प्रियतम की हूँ तू पिउ पिउ बोलने वाला कौन होता है अर्थात् तेरे पिउ पिउ बोलने से मुझ विरहणी को प्रिय का नाम स्मरण हो आता है और मेरी वेदना अत्यधिक तीव्र हो जाती है।

विशेष—दोनों दोहों में चातक को उसके बोलने पर उपालम्भ दिए है पपीहा प्रेम का पारस्परिक उपमान रहा है। मीरा ने भी इसी प्रकार से पपीहे को प्रताड़ित किया था—

यथा—पपहियारे पिव की वाणी न बोल।
पिव मेरा मैं पिवकीरे, तू पिव कहैस कूण।"

(6) चहुँ दिसि दामिनी सघन घन, पीउ तजी तिण वार।
चारु मग चातग भए, पिउ पिउ करत पुकार ॥23॥
ऊनमि आई बद्दली, ढोलउ आयउ चित्त
यो बरसई रितु आपणी, इनण हमारे नित्त ॥26॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

मारवणी प्रियतम के विरह में अत्यन्त व्याकुल रहने लगती है। वर्षा ऋतु के आने से उसकी वेदना और भी उद्दीप्त हो जाती है यहाँ मारवणी की विरह दशा का वर्णन किया गया है—

व्याख्या—चारों ओर घन घोर बादल छाये हुए हैं। उन बादलों के बीच बिजली चमकती है और बादल घनघोर गर्जना कर रहे हैं ऐसे में मारवणी सोचती कि ऐसे समय में प्रियतम ने मुझे छोड़ रखा हैं। अर्थात् उसका प्रियतम उसके पास नहीं है इस विरहाकुलता में वह प्रिय-प्रिय पुकार रही है। ऐसा लगता है जैसे मारवणी मरकर चातक बन गई हो और वही पिउ पिउ पुकार कर रही है।

वर्षा ऋतु में आकाश में चारों ओर बदली उमड़ने लगी है। ऐसे उद्दीपनकारी अवसर पर मारवणी के हृदय में प्रियतम ढोला की स्मृति उमड़ने लगती है अर्थात् मारवणी को उस उद्दीपनकारी अवसर पर ढोला की याद सताने लगती है। मारवणी सोचती है कि बदलियाँ तो वर्षा ऋतु आने पर ही बरसती है परन्तु मेरे ये नेत्र तो सदा बरसते रहते हैं।

विशेष—अश्रुपात सात्विक भाव है। विप्रलम्भ श्रृंगार का वर्णन है उत्प्रेक्षा अलंकार द्वितीय में अनिशयोक्ति है।

(7) गिरह, परवालण, सर, मरण, नदी हिडोलण हारि।
सूती सेजइं एकली, हइ हइ दईवम मारि ॥29॥
जल थल, थल जल हुया रह्यउ, बोलइ मोर किंगार
स्रावण दूभर हे सखी किहाँ मुझ प्राणाधार ॥30॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—वर्षा ऋतु पर्वतों का प्रक्षालन करने वाली है। खाली सरोवरों को भरने वाली तथा नदियों को जल विलोड़ित करने वाली है। (सबको सुख देने वाली इस वर्षा ऋतु में मैं विरह का दुःख भोग रही हूँ) इस सर्व सुख दायिनी वर्षा ऋतु में एक मैं ही भाग्य हीना सूनी शैय्या पर अकेली सोई हूँ। हे दैव तू मुझे मत मार (अर्थात् विरह व्यथा के कारण मैं तो स्वयं ही मरी जा रही हूँ, फिर मुझ मरी हुयी को मारने से क्या लाभ)

मारवणी अपनी सखी से कहती है इस ऋतु में इतना जल बरस गया है कि जल और थल का भेद ही समाप्त हो गया है अर्थात् सब जगह जब ही जल दिखाई देता है। नदियों और सरोवरों के किनारों पर मोर बोल रहे हैं। हे सखी ! यह सावन का महीना मेरे लिए असाध्य हो रहा है। मेरे प्राणाधार प्रियतम कहाँ हैं ? (मैं अब प्रियतम के बिना रह नहीं सकती हूँ।)

विशेष—विरह को उत्तेजित करने वाले उद्दीपन प्रस्तुत किए गये है जैसे मोर, वर्षा काल इत्यादि। मारवणी अपने दैव को भी विपरीत बतलाया है। भावों की सशक्त अभिव्यक्ति हुयी है।

(8) जिम, जिम सज्जण संभरइ, तिमि तिमि लग्गई तीर।
पंख हुवइ जो जाइ मिलि, मनां बंधांड़ा धीर ।.48॥
आड़ा डूँगर बन घणा, खरा पियारा मित्त
देह विधाता पखंडी, मिलि, मिलि, आवउ नित्त ॥49॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

विरह विदग्धा मारवणो प्रियतम के पास जाने की वह अनेक कल्पनाएँ करती है, परन्तु उसकी कोई भी मनोकामना पूर्ण नहीं होती। इसलिए वह प्रिय स्मरण तथा धैर्य धारण करने के अलावा वह क्या कर सकती है। इन दोहों में मारवणी की इसी भावना की अभिव्यक्ति है।

व्याख्या—विरहणी मारवणी ज्यों ज्यों अपने प्रियतम का स्मरण करती है। त्यों-त्यों उसकी स्मृति उसके हृदय में तीर की तरह चुभती है (अर्थात् वह और भी व्यथित हो जाती है) वह कल्पना करती है कि अगर मेरे पंख होते तो मैं उड़कर प्रियतम से मिल जाती परन्तु मेरे पास पंख हैं ही नहीं और दूसरा कोई उपाय भी नहीं है (अपने प्रियतम से मिलने का) इसलिए मारवणी अपने मन को धीरज बंधाती है।

मारवणी कहती है मेरे और प्रियतम के बीच उनेक दुर्गम और अगम पर्वत शृंखलाएँ है। घने जंगल हैं अर्थात् मेरा प्रियतम अत्यन्त दूर है, उसके पास पहुँच पाना अत्यन्त कठिन है मार्ग अत्यधिक लम्बा है और उनमें अनेक बाधाएँ हैं। इसीलिए हे विधाता अगर तू मुझे पंख दे दे तो मैं अपने प्रियतम से प्रतिदिन मिलकर आ सकती हूँ।

विशेष—विरहणी नायिका अपने प्रियतम से मिलने की अनेक कल्पनाएँ करती हैं।
नायिका की आतुरता एवं विवशता की व्यंजना हुयी है।
अनुप्रास एवं पुनरोक्ति प्रकाश अलंकार है।

(9) आड़ा डूँगर, भुईं धणी, तियां मिली जई एम।
मनिहूँ खिणही न मल्हियइ, चकवी विणियर जेम ॥52॥
ज्यूं ए डूंगर संमुहा, त्यूं जइ सज्जण हुंति
चम्पा वाड़ी भमर ज्यंउ, नयण नगाइ रहंति ॥53॥

संदर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

विरहणी मारवणी सोचती है कि मेरा भाग्य विपरीत होने के कारण मुझे प्रिय मिलन का सुख नहीं मिल रहा है अब तो प्रियतम का निरन्तर स्मरण करते रहना ही

उचित है। हृदय में बसाकर ही प्रियतम के दर्शनों से सन्तोष करना ही उचित है। प्रस्तुत दोहों में इसी प्रकार के भाव व्यक्त किए गये हैं—

व्याख्या—मेरे और प्रियतम के बीच कई पर्वत हैं। बहुत लम्बा फासला है। लेकिन प्रियतम से मिलन तो इसी प्रकार हो सकता है कि मैं एक क्षण के लिए भी अपने मन से उसे अलग न करूँ, जिस प्रकार चकवी सूर्य को अपनी आँखों से दूर करना नहीं चाहती। उसी प्रकार मैं भी प्रियतम की स्मृति को अपने हृदय से दूर नही होने दूँगी।

मारवणी कहती है कि जिस प्रकार मेरे सामने ये पर्वत खड़े हैं यदि वैसे ही मेरे सामने प्रियतम यदि इसी प्रकार खड़े होते तो मैं टकटकी लगा कर देखती रहूँ। जिस प्रकार भ्रमर चम्पा के बाग की ओर अपनी दृष्टि लगाये रहता है (अर्थात् प्रियतम के सम्मुख होने पर मैं उनके रूप दर्शन से तृप्त होना चाहती हूँ।)

विशेष—मुग्ध नायिका की मनोदशा का वर्णन है।
मारवणी ने स्वयं को चकवी बता कर प्रियतम के दर्शनों की लालसा व्यक्त की है।

उपमा और उदाहरण अंलकार का प्रयोग हुआ है।

मारवणी का सन्देश

(10) ढाढ़ी एक सन्देसड़उ प्रीतम कहिया जाइ।
सा धणवलि कुइला भई, भसम ढंढोसि सिआई ॥2॥
ढाढी जे प्रीतम मिलइ, यू कहि दाख बियाह।
पंजर नहिं हइ प्रांणियउ, थां दिस झल रहियाय ॥3॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

मारवणी की विरह व्यथा जानकर उसके माता-पिता ने ढोला के पास सन्देश वाहक के रूप में ढाढ़ियों को भेजने का निश्चय किया। तब मारवणी ने उनसे जो सन्देश प्रियतम के पास भेजा उसी का वर्णन इन दोहों में किया गया है।

व्याख्या—मारवणी ने कहा हे ढाढ़ी! तुम मेरे प्रियतम के पास जाकर यह सन्देश देना कि तुम्हारे विरह की अग्नि में जल कर तुम्हारी प्रियतमा कोयला हो गयी है अब तुम आकर उसकी भस्म को ढूँढ़ना। अर्थात तुम्हारे विरह में तुम्हारी प्रेमिका की स्थिति इतनी असह्य हो गयी है कि यदि तुमने आने में विलम्ब किया तो मेरी जीवन लीला ही समाप्त हो जाएगी।

मारवणी कहती है कि हे ढांढ़ी! तुम्हें यदि मेरे प्रियतम मिले तो उन्हें यह जाकर कहना कि तुम्हारी प्रियतमा के शरीर में प्राण नहीं हैं केवल उन प्राणों की लौ तुम्हारी (आगमन की राह में) ओर जल रही है (अर्थात् मारवणी का शरीर अतिकृशकाय हो गया है एवं मरणासन्न स्थिति में पहुँच गया है केवल प्रिय मिलन की क्षीण आशा अभी विद्यमान है।

विशेष—'लौ लगाना' मुहावरे का प्रयोग है। विरहणी की अत्यधिक वेदना की व्यंजना की गयी है।

(11) पंथी एक संदेशडउ, भल मारण सनई भख्ख।
आतम तुझ पासई यहई, ओलग रुड़ारुख्ख ॥4॥
ढांढी जइ सांहिब मिलइ, यू दाखवियाह जाई,
आख्यां सीप विकासियउ, भमरन वइ सई आइ ॥7॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत् ।

जब ढांढ़ी सन्देश वाहक के रूप में नरवर के लिए प्रस्थान करते हैं, तो मारवणी अपनी विरह व्यथा बतलाती हुयी प्रियतम को सन्देश भेजती है वह ढाढियों के कहती है।

व्याख्या—हे पथिक मेरा एक सन्देश उस भले मनुष्य अर्थात् प्रियतम को देना कि तेरी (मारवणी की) आत्मा तुम्हारे पास ही है। उसके शरीर को भले ही तुम जितना भी दूर रखो। परन्तु मन सदा तुम्हारे ही पास रहता है।

मारवणी कहती है कि हे ढांढी यदि तुम्हें मेरे स्वामी मिलें तो उनसे कहना कि तुम्हारे आने की प्रतीक्षा में टकटकी लगाये रहने से मेरी आँख रूपी सीपियाँ अत्यन्त विकसित हो गयी हैं हे स्वाति नक्षत्र के बादल अब तुम आकर बरसो। (अर्थात् जिस प्रकार सीपी में स्वाति की बूँद पड़ने से मोती हो जाती है उसी प्रकार तुम भी बरसो जिस से मुझे मोती स्वरूप सुफल मिल सके।)

विशेष—आत्मा को सदा प्रियतम के पास बताकर पवित्र आत्मिक प्रेम चित्रित किया गया है। आँखों पर सीपी का आरोप करके रूपक की व्यजंना की गयी है अनुप्रास और रूपक अलकारों का प्रयोग है।

(12) पंथी एक संदेशसड़उ, लग ठोलई पैंह्च्चाई।
सावज सकल तोड़स्यई वैंसा सणइ न जाई॥
पंथी एक सदेड़उ लग ढोलहि पैंह्च्चाय।
जोवन जायई प्राहूणउ। वेगउ रऊ घर आय॥

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

मारवणी ढाढियों को प्रस्थान करते समय सन्देश में कहती है वह अपने सन्देशों के द्वारा अपनी विरह व्याकुलता व्यक्त करती है और विभिन्न रूपकों के माध्यम से प्रियतम को आकृष्ट करना चाहती है जिससे उनका प्रियतम उससे आकर मिलले। प्रस्तुत दोहों में भी मारु प्रियतम को अपना सन्देश कहलवा रही है।

व्याख्या—मारवणी ढाढियों से कहती कि हे पथिक। मेरा एक सन्देश और ढोला से कह देना कि यौवन रूपी हाथी या पशु सांकल तोड़ने को व्यग्र हो रहा है। हे प्रियतम तुम शीघ्र आजाओ क्योंकि अब इस यौवन रूपी पशु को वश में नही किया जा सकता (अर्थात् यौवन काल में प्रियतम का विरह असह्य हो रहा है)।

मारवणी कहती है कि हे पथिक तुम मेरे प्रियतम ढोला तक मेरा यह सन्देश पहुँचा दो कि यौवन रूपी अतिथि अब वापस जा रहा है इसलिए तुम शीघ्र ही मेरे पास आजाओ। (यौवन कुछ वर्षों तक रहता है अतः यौवन के चले जाने से पूर्व उसका उपभोग कर लेना चाहिए)

विशेष—यौवन की तुलना उन्मत्त पशु से की गयी है।

दूसरे दोहे में यौवन को अतिथि बना कर उसकी अस्थिरता को सूचित किया है।

रूपक अंलकार का चमत्कारिक प्रयोग है।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 1—'ढोला मारु रा दूहा एक सरस लोक गाथा है' इस कथन के आधार पर ढोला मारुरा की कथा की विशेषताएं लोक कथाओं के आधार पर निर्धारित कीजिए?

उत्तर—ढोला मारु रा दूहा राजस्थानी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ प्रेमाख्यानक काव्य है 'ढोला मारु' की इस गाथा के विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं हैं, परन्तु अधिकांश विद्वान इसकी कथा के लोक जीवन से सम्बन्धित होने के कारण इसे लोक गाथा मानते हैं। चाहे इसमें लोक गाथा की सभी विशेषताएँ निहित न हों परन्तु काव्य रचना एवं प्रवृत्ति के आधार पर इस लोक गाथा का कहना ही अधिक समीचीन लगता है।

लोक गाथा से अभिप्राय कथात्मक गीतों से होता है। प्रचलित अर्थ में इसके अन्तर्गत वह सब परम्परागत गेय काव्य आ जाता है जिसमें भावपूर्ण आख्यान की परम्परा हो।"

उक्त परिभाषा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लोक गाथा एक ऐसा गीत है जिसका आकार बड़ा होता है जिसमें कथानक की प्रधानता के साथ गेयता होती है और मौखिक परम्परा के रूप में जन मानस में यह प्रचलित और लोकप्रिय होता है। विभिन्न लक्षणों के आधार पर लोक गाथा की निम्न विशेषताएँ की गयी हैं—

1. रचयिता का अज्ञात होना
2. रचयिता के व्यक्तित्व का अभाव
3. विस्तृत कथानक
4. संगीत एवं नृत्य का साहचर्य
5. स्थानीयता की प्रचुरता
6. उपदेशात्मकता का अभाव
7. सन्दिग्ध ऐतिहासिकता
8. टेक पदों की पुनरावृत्ति
9. अलंकृत शैली का अभाव
10. मौखिक प्रवृत्ति।

लोक गाथा की उक्त विशेषताओं के आधार पर 'ढोला मारु रा दूहा' काव्य का विवेचन इस प्रकार स्पष्ट किया जा रहा है।

(1) **रचयिता अज्ञात होना**—लोक गाथा की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि इसका रचयिता अज्ञात होता है 'हीर रांझा' राज भरथरी आदि कई लोक कथाएँ उत्तर भारत में प्रसिद्ध हैं परन्तु उनके रचनाकारों का कुछ भी पता नहीं है। लोक कथा किसी एक की न होकर पूरे लोक की होती है। इन कथाओं में रचयिता का व्यक्तित्व लोक जीवन में विलुप्त हो जाता है। जहाँ तक ढोला मारु रा दूहा काव्य का प्रश्न हैं इसके रचयिता के सम्बन्ध में कोई निश्चित मत नहीं है। विभिन्न विद्वानों ने अनुमान के आधार कवि कल्लोल, कुशलाभ, लूठा करण खिड़िया, कुशललाभ आदि को इसका रचयिता कहा है। मौखिक परम्परा के कारण बाद में इसके साथ अनेक दोहे जोड़ दिए इसी कारण इसके रचनाकार को अज्ञात् ही माना जाना चाहिए।

(2) **मौखिक प्रवृत्ति**—लोक गाथाएं चिरकाल से लोक जीवन में मौखिक परम्परा के रूप में चलती रहती हैं तभी तक यह सुरक्षित रहती हैं। इनका विकास भी तभी तक होता है जब तक इनकी मौखिक 'ढोला मारूरा दूहा' काव्य को मौखिक परम्परा सैकड़ों वर्षों से चली आ रही है मौखिक परम्परा के कारण इसमें रामय समय पर काफी दोहे जोड़ दिए गये हैं दोहा जैसे सरल छन्द के होने के कारण यह काव्य अत्यन्त लोक प्रिय है।

(3) **रचयिता के व्यक्ति का अभाव**—प्रत्येक रचना पर उसके रचयिता की स्पष्ट झलक होती है। उसकी अपनी शैली तथा अपना निजी पन होता है जिससे उसकी कुछ अपनी पहचान होती है। परन्तु लोक गाथा में कथा के प्रभावी होने से रचयिता का व्यक्तित्व छिपा रहता है। इस दृष्टि से यदि ढोला मारू, काव्य पर दृष्टिपात किया जाए इसमें भी यही पाया जाता है। इसका रचयिता आज तक अज्ञात है।

(4) **संगीत एवं नृत्य का साहचर्य**—लोक गाथा में गेयता तत्व की प्रधानता रहती है। इसका कारण संगीत और नृत्य का इससे घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। यह लोक गाथा लोक प्रचलित वाद्यों के साथ गायी जाती है। यदि इस प्रकार की विहंगम दृष्टि इस काव्य

पर डाली जाए तो इस ढोला मारू में संगीत और नृत्य में कोई सम्बन्ध नहीं है। फिर भी ढ़ांढ़ी वर्ग अब भी इन्हें लय और ताल के साथ गाता है उल्लास के अगों में इन्हें कई तरह से गाने की परम्परा रही है। अपनी इसी विशेषता के कारण लोक गाथा लोक कण्ठ द्वारा जीवित व विकसित होती रही है।

(5) **स्थानीयता की प्रचुरता**—लोक गाथा में स्थान विशेष से सम्बन्धित होती है अतः उसमें स्थानीय रीति रिवाज, खान पान, पशु एवं पक्षी लोक संस्कृति का चित्रण मिलता है यदि 'ढोला मारूरा' को इस दृष्टि से देखा जाए तो उसमें भी राजस्थान से सम्बन्धित सभी विशेषताओं का चित्रण मिल जाएगा।

(6) **उपदेशात्मकता का अभाव**—लोक गाथाओं में उपदेशात्मक प्रवृति का सर्वथा अभाव रहता है। यह गाथाएँ नीति तथा सदाचार की शिक्षा नहीं देती इन कथाओं का मुख्य उद्देश्य उपदेश देना न होकर किसी लोक जीवन की घटना को कथा के रूप में रूपायित होता है। 'ढोला मारू' में भी रचनाकार उद्देश्य उपदेश देना न होकर प्रेम तत्व का निरूपण कर लोक जीवन में प्रेम का आदर्श प्रस्तुत करना था।

(7) **सन्दिग्ध ऐतिहासिकता**—लोक गाथाएँ ऐतिहासिकता से सम्बन्ध रहने पर भी प्रामाणिक होते हुए भी अप्रमाणिक ही रहती है। इनमें श्रवण परम्परा से सुनी हुयी घटनाओं की उपस्थित किया जाता है। जिनकी ऐतिहासिकता प्रायः सन्दिग्ध ही होती है। ढोला मारू में कुछ तो ऐतिहासिक पात्र हैं। कुछ स्थान भी इतिहास से मेल खाते हैं परन्तु कुछ प्रसंग काल्पनिक तथा अप्रमाणिक है।

(8) **विस्तृत कथानक**—लोक गाथाओं का कथानक अत्यन्त विस्तृत होता है। कुछ गाथाएँ तो महाकाव्यों के समान लम्बी होती है। 'ढोला मारू' का कथानक भी बहुत लम्बा है नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित इस ग्रन्थ में कुल 674 दोहे हैं। परन्तु अन्य हस्तलिखित प्रतियों में दोहे व चौपाइयों की संख्या इससे भी अधिक है। इस लोककथा का कथानक अत्यन्त विस्तृत एवं परिवर्द्धित है।

(9) **अंलकृत शैली का अभाव**—लोक कथा एक व्यक्ति की रचना न होकर पूरे समाज की रचना होती है। जो लोक जोवन में प्रसार प्राप्त करती है। लोक गाथा की रचना लोक जीवन के सम्बन्धित होने का कारण उसमें साहित्यिक श्रेणी की कलात्मकता का प्रायः अभाव ही रहता है। क्योंकि इनकी समीक्षा काव्य शास्त्र के आधार पर नहीं की जाती।

परन्तु 'ढोला मारू' काव्य में कलात्मकता का सर्वथा अभाव नहीं है उसमें गुण, रीति आदि के सुन्दर प्रयोग मिलते हैं। उपमा, रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग मिलता है विप्रलम्भ श्रृंगार का अनूठा चित्रण है। परन्तु फिर भी इसमें साहित्यिकता का सर्वथा अभाव है। इसमें कलात्मकता के स्थान पर वर्णनात्मकता की अधिकता है।

(10) **टेक पदों की पुनरावृत्ति**—विद्वानों ने लोक गाथा में टेक पदों की पुनरावृत्ति को उसकी प्रमुख विशेषता माना है। लोक गाथा गेय रचना होती है और गति तथा लय की दृष्टि से, सरसता का संचार करने के लिए और प्रभावोत्पादकता लाने के लिए टेक पदों की पुनरावृत्ति की जाती है। ढोला मारू रा दूहा में टेक पदों की आवृत्ति उस प्रकार की नहीं हैं जैसी अन्य लोक गाथाओं में होती है यह दोहा बद्ध प्रेमाख्यानक है सभी दोहे स्वतन्त्र है परन्तु कुछ दोहों में प्रथमचरण की आवृत्ति दूसरे दोहे में देखने को मिलती है। 'ढोला मारू' में लोक गाथाओं की यह विशेषता आंशिक रूप से देखने को मिलती है।

उक्त सभी लोक गाथाओं की विशेषताओं की कसौटी पर कसने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह एक प्रेमाख्यानक सरस लोक गाथा ही है। इसमें लोक गाथा

की प्राय: सभी प्रवृतियाँ देखने को मिलती हैं। यह राजस्थानी लोक जीवन तथा लोक संस्कृति पर आधारित है। इस कथानक का मूलाधार श्रृंगार रस है। इसमें 'ढोला मारू' के प्रेम का सुन्दर चित्रण हुआ है। सभी विशेषताओं के आधार पर यह सिद्ध हो जाता है कि 'ढोला मारू' एक सरस लोक गाथा काव्य है।

प्रश्न 2—'ढोला मारू' में मर्यादित और शाश्वत प्रेम की व्यंजना हुयी है। युक्ति युक्त विवेचना कीजिए।

उत्तर—'ढोला मारू रा दूहा' प्रेमाख्यानक लोक गाथा काव्य है। इसकी रचना इसकी शिष्ट एवं मर्यादित प्रेम की भाव भूमि पर हुई है। इसमें वर्णित प्रेम सर्वत्र संयत, मर्यादित और गरिमामय है। इस काव्य में वर्णित प्रेम श्रृंगार की भाव प्रधान तथा मनोरम व्यंजना है, इसी कारण इसमें आदि से अन्त तक सरसता, मधुरता, मार्मिकता एवं रसात्मकता है। इसमें वर्णित प्रेम दाम्पत्य प्रेम है, फिर भी इसके प्रेम में श्रृंगार परकता के साथ प्रेम में गरिमा और उत्कृष्टता दोनों हैं।

'ढोला मारू रा दूहा' में उदात्त व कुंठित प्रेम की दोनों भावनाओं से सम्बन्धित प्रेम का निरूपण हुआ है। इसके अन्त में जाकर प्रेम उच्चता एवं सात्विकता आदि के गुणों से युक्त होकर भारतीय धारणा के उच्च धरातल पर प्रतिष्ठित हो जाता है। इस लोक गाथा में लौकिक प्रेम की ही अभिव्यंजना हुयी है। अलौकिकता को तो इसमें स्पर्श भी नहीं किया गया है। इस काव्य में एक सीधी सादी प्रेम कथा है। इसमें प्रेम की दुर्बलताएँ यथोचित रूप में वर्णित की गयी है। पति व्रत्त धर्म की पवित्रता के प्रभाव से इस लोक गाथा में प्रेमाभिव्यक्ति की एक एक पंक्ति दाम्पत्य प्रेम का आदर्श बन गयी है। 'ढोला मारू' को आदर्श दम्पति की जो सामाजिक स्वीकृति मिली, उसमें प्रेम भावना के उत्कृष्ट रूप का हाथ रहा है।

'ढोला मारू रा दूहा' में अभिव्यक्ति प्रेम भारतीय नारी के शील और विनय का आदर्श है। प्रिय के द्वारा प्रदत्त विरह का दुःसह दुख झेलकर भी उसमें कहीं मारू के आक्रोश और अभिमान का स्वर नहीं मिलता है।

'ढोला मारू रा दूहा में कहीं कहीं ऊहात्मक उक्तियाँ भी मिलती हैं परन्तु ऐसी ऊहात्मक उक्तियों की संख्या नहीं के बराबर ही है पूरी गाथा में प्राय: हृदयस्थ संवेदना का सच्चा आवेग ही व्यक्त हुआ है। यह गाथा नारी के शील की पराकाष्ठा है। इसमें नायक व नायिका द्वारा कहीं भी मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया गया है सर्वत्र लज्जा और शील का ध्यान रखा गया है।

'ढोला मरू रा' दूहा में प्रेम का उच्चतम रूप बखूबी देखने को मिलता है। इसमें ऐसे तथ्य स्वीकार किए गये हैं जिनसे इसमें स्वाभाविकता का संचार हुआ है। कवि ने काव्य की प्रवाहमयता के साथ ही साथ उचित अवसर पर संयोग को समाविष्ट भी किया है इससे काव्य में स्वाभविकता का संचार हुआ है। दाम्पत्य जीवन के सूत्रों से बधे हुए इस काव्य में सांकेतिक एवं लाक्षणिक संयोग वर्णन अंश रूप में है। यदि ये न होता तो इसके काव्य सौन्दर्य को आघात पहुँचता। इसमें कवि ने सर्वत्र मर्यादा का ध्यान रखा है जहाँ नग्न दृश्यों एवं स्थितियों के अभिव्यंजना की आवश्यकता पड़ी भी है वहाँ पर रचनाकार ने अपनी कुशलता का परिचय देकर संकेतों और प्रतीकों के वर्णन से उन्हें सजीव बना दिया है।

उदाहरणार्थ—सज्जण पाणी खीर ज्यूं खिल्ले खिल्ल थयाह।
जांणे चन्दण रुँखखड्उ, विलगी नागर बेलि॥

इस लोक गाथा में संयोग की तृप्ति की व्यंजना भी सांकेतिक शैली में की गयी है। जो औचित्यपूर्ण एवं मर्यादित है।

चौथे पहरे रेण के कूँकड मोहि राली।
घण संभालै कंचुकी, प्री मूछाँ सा बलि॥

इस काव्य में कहीं भी अश्लील वर्णन नहीं है। सम्पूर्ण संयोग के वर्णन में सुरुचि पूर्ण आचरण मिलता है। संयोग का भी कोई भी वर्णन अपनी मर्यादा से च्युत नहीं हुआ है साथ ही साथ साहित्यिक मर्यादा का भी पूर्ण ध्यान रखा गया है। फलतः यह प्रेम पूर्णतः मर्यादित और संयमित है।

इस काव्य में कवि ने पर्याप्त कौशल और सूझ के साथ प्रेम का चित्रण किया है। इसके प्रेम वर्णन में सर्वत्र मर्यादा, संयम और गरिमामय है।

प्रश्न 3—ढोला मारू रा दूहा काव्य में विप्रलम्भ शृंगार का मार्मिक चित्रण किया गया है।" इस कथन की युक्ति युक्त समीक्षा कीजिए।

अथवा

'ढोला मारू रा दूहा एक मार्मिक एवं सरस विरह काव्य है। इस कथन की विवेचना करते हुए इसके विरह वर्णन की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—अनेक समीक्षकों ने 'ढोला मारू रा दूहा' को प्रेम विरह काव्य स्वीकार किया इसको सीधी सादी प्रेम कथा में मानव हृदय की सरल स्वभाविक भावानुभूतियों को प्राकृतिक रंगों में रंग कर प्रस्तुत किया गया है। इस प्रेम काव्य में शृंगार का रस राजत्व स्वीकार किया गया है। यदि हम कहें कि इस काव्य की नीव ही शृंगार है तो अत्युक्ति न होगी। इस प्रेम काव्य में शृंगार के दोनों पक्षों का चित्रण हुआ है। इस काव्य में वर्णित विरह वर्णन अत्यन्त मार्मिक और सहज है। इसमें संयोग की अपेक्षा विरह को अधिक प्रमुखता मिली है। इसके विरह वर्णन की मार्मिकता एवं सहजता प्रशंसनीय है। इस काव्य में तीन प्रमुख पात्र है—ढोला, मारवणी, मालवणी। इन तीनों पात्रों के त्रिकोणात्मक प्रेम का वर्णन इसमें किया गया है। इनके विरह का भी वर्णन है। ढोला इस काव्य का नायक एवं प्रमुख पात्र है वह मारवणी से हुए विवाह को प्रस्तुत करके मालवणी के साथ विवाह कर सुखोपभोग में लिप्त रहता है। जब मारवणी का सन्देश उसे मिलता है तो वह उसके तीव्र विरह में डूब जाता है। और प्रलाप करने लगता है।

'ढोला मारूरा' के विरह वर्णन में जो विशेषताएँ दिखाई देती हैं। उनका वर्णन इस प्रकार है—

पारस्परिक पद्धति का प्रयोग—पारस्परिक विरह काव्य में नायिका या नायक किसी पक्षी, पथिक आदि से अपने प्रियतम को सन्देशा भेजते हैं। इस विरह काव्य में भी यह परम्परा अपनाई गयी है। मारवणी कभी क्रौन्च पक्षी कभी वायु कभी कौए आदि को अपनी विरह व्यथा कहती है वह पथिकों के द्वारा अपने प्रियतम ढोला के पास सन्देश कहलवाती है—

यथा—"पंथी एक संदेसड़उ लग ढोलइ पैंहच्चाई
सावज संकल तोड़स्यई, वैसा सणई न जाई।"

इसी प्रकार वह ढाढियो द्वारा अपने प्रियतम को सन्देश भिजवाती हुई कहती है कि—

"ढाढ़ी एक सन्देसड़ा, प्रीतम कहिया जाइ।
साधण बलि कुइलाभइ, भसम ढंठो लिसि आई।।"

प्रकृति और विरह—ढोला मारूरा में विरहा तिरेक की स्थिति का चित्रण प्रकृति के माध्यम से किया गया है प्रकृति के जो पदार्थ और उपकरण संयोग की अवस्था में अत्यन्त सुख पहुँचाते हैं वियोग की अवस्था में वे ही दुखदायी अर्थात पीड़ा देने वाले बन जाते हैं। ढोला मारू का काव्य में भी यही स्थिति है। वर्षा ऋतु में मारवणी को अपने प्रियतम की बहुत याद आती है बरसात संयोग में बड़ी भली प्रतीत होती है परन्तु वियोग बढ़ी पीड़ा देने वाली बन जाती है।

यथा—"गिरह पखालण, सर भरण, नदी हिडोलण तरि।
सूती से जई एकली हई हई दबूवम भारि।।"

विरह में सुख की शैय्या साँप की तरह विषैली और आर्कषक महल शमशान नजर आता है।

मार्मिक एवं अनुभूति पूर्ण विरह वर्णन—विरह वर्णन में की एक शैली यह भी रही है कि समान भावना समान परिस्थिति वाले जीवों में सहानुभूति हो जाती है। मारवणी जब तालाव के पास जब सारसों को रोते कलपते देखती है तो वह स्वयं विलाप करने लगती है। इसी प्रकार मारवणी क्रौन्च पक्षी से भी अपनी सहानुभूति दिखाती है। मारवणी को स्वप्न दर्शन से अपने पति के प्रति प्रेम उत्पन्न हो जाता है और विरह से व्याकुल हो जाती है। मारू के विरह का चित्र कवि ने बड़े मार्मिक ढंग से खींचा है—

चहुँ दिसि दामिनी सघन घन पीउ तजी तिण वार।
मारू मग चातक भए पिउ पिउ करत पुकार।।

विविध मनोभावों का वर्णन—'ढोला मारू रा' में विरह वर्णन में विरहणी की क्षीणता, मानसिक व्यथा उसकी व्याकुलता, आलस्य शून्यता और निराशा के चित्रों का भी वर्णन किया गया है। इसी प्रकार कवि ने वर्षा ऋतु के माध्यम से नायिका की बिरह दशा का मार्मिक और यथार्थ चित्रण किया है। इसी प्रकार चातक के बोलने पर कभी तो उसकी वाणी उसे मीठी लगती है और कभी उसके बोल विरहणी मारवणी को कठोर लगे हैं जिसके लिए वह प्रताड़ित भी करती है।

यथा—

बाबहिया रत पखियाँ बोलई मधुरी वांणि।
काइं लवंतउ भाडि कर परदेसी प्रिउ आरिण।

इसी प्रकार निम्न दोहे में वह पपीहे को प्रताड़ित कर रही है—

"बावाहिया' तू चोर है, थारी चोंच कटा किसू।
राति ज दीन्ही लोट, भइ जरायउ प्री आवियउ।।"

कभी वह पपीहे को अपना सहायक भी बना लेती है—

"बावहिया चढ़ि गऊख सिर चढ़ि ऊँचइरी भीत।
मत ही साहिब वाहुडइ, कईगुण आवई चीत।।"

इसी प्रकार त्रिविधमानों भावों का वर्णन करते हुए कवि ने विरहणी की प्रतीक्षा भावना, चिन्ता, स्मृति आदि का वर्णन बड़ी मनोरमता से किया है।

शैली की पारम्परिकता—ढोला मारु रा दूहा अन्य प्रेम और विरह काव्यों की विरह वर्णन की परम्परा के अनुसार लिखा गया है। इसकी शैली अन्य पारम्परिक विरह काव्यों जैसी ही है।

विरह की विविध दशाओं का वर्णन—मारवणी और ढोला के विरह वर्णन में लगभग सभी विरह दशाओं का वर्णन किया है। स्वप्न दर्शन से उत्पन्न प्रेम के विरह के चित्रण के प्रसंग में, अभिलाषा, स्मृति, गुण कथन, उन्माद, व्याधि, उद्वेग, चिन्ता और प्रलाप आदि काम दशाओं का चित्रण किया गया है।

ढोला और मालवणी के प्रसंग में भी विभिन्न काम दशाओं का वर्णन है।

अन्य विशेषताएँ—उपरोक्त ढोला मारु रा में विरह वर्णन की जो अन्य विशेषताएँ हैं वह इस प्रकार है।

1. इस काव्य के भाव पक्ष को प्रभावी बनाने में विरह वर्णन की सरसता और मार्मिकता का विशेष योग दान रहा है।

2. कल्पना की तीव्रता, भावानुभूति, रसानुभूति जैसे गुण इस विरह काव्य में यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं।

3. 'ढोला मारु रा' में नायिका भेद स्पष्ट में वर्णित है इस काव्य की दोनों नायिकाएँ वंश और सामाजिक दृष्टि से कुलीन हैं और धर्म की दृष्टि से स्वीकीया नायिका गुणों के अनुसार उत्तम है।

4. विरह वर्णन के भावुक प्रसंगों में जो अंलकार योजना दिखाई देती है वह बोझ स्वरूप नहीं लगती उस में सहजता का गुण व्याप्त है।

5. ढोला मारू रा में विरह वर्णन की भाव व्यंजना को अधिक प्रभावशाली बनाने हेतु प्रतीकों का भी प्रयोग किया गया है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि 'ढोला मारू रा' एक सरस मनोरम तथा मार्मिक विरह काव्य है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 1—'ढोला मारु रा' काव्य में शैलीगत प्रयोग का विवेचन कीजिए।

उत्तर—ढोला मारू रा दूहा में अभिव्यक्ति की दृष्टि से शैली के चार भेद किए जा सकते हैं—सरल, अंलकृत क्लिष्ट और गूढ़ शैली।

1. सरल शैली—प्रसाद गुण की प्रधानता के कारण इस शैली में सरलता और और सुबोधता विशेष रूप से पाई जाती है।

2. अलंकृत शैली—इस शैली का प्रयोग इस काव्य में अनेक स्थलों पर हुआ है। किन्तु यह शैली रीति कालीन कवियों की भांति आडम्बर युक्त नही है।

3. क्लिष्ट शैली—ढोला मारु रा में इस शैली का प्रयोग नही हुआ है।

4. गूढ़ शैली—ढोला मारू रा में इस शैली के कुछ उदाहरण देखने को मिलते हैं।

5. सन्देश पद्धति—इस काव्य में स्थान-स्थान पर सन्देश काव्य शैली मिलती है। यह सन्देश कहीं तो पपीहे द्वारा कहीं कौए द्वारा, कहीं तो ढाढियों, और कहीं सुग्गे द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

6. स्वप्न पद्धति—अनेक स्थानों पर कवि ने स्वप्न का आधार लेकर कथा का प्रसंग बाधा है।

7. व्यंग्य शैली—ढोला मारू रा में अनेक स्थलों पर व्यंग्य की चुभन भी मिलती है।

8. उपालम्भ शैली—मारवणी के विरह वर्णन में अनेक स्थानों पर इस उपालम्भ शैली का प्रयोग हुआ है।

9. ऊहात्मक शैली—कहीं-कहीं कवि ने ऊहात्मक शैली का भी प्रयोग किया परन्तु इस का प्रयोग बहुत कम नहीं के बराबर है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'ढोला मारू रा' में विविध प्रकार की शैलियों का प्रयोग हुआ है। अस्पष्टता और कृत्रिमता जैसे दोष किसी भी शैली में नहीं मिलते हैं।

प्रश्न 2—'ढोला मारू रा' काव्य में राजस्थान के लोक जीवन की पूरी झांकी प्रस्तुत की गयी है? इस कथन को स्पष्ट कीजिए?

उत्तर—ढोला मारू रा प्रेम काव्य पर आधारित लोक गाथा है इस लोक गाथा में कवि ने स्थानीयता का समावेश प्रचुरता के साथ किया है। लोक गाथा जिस अंचल से सम्बन्धित होती है उसमें वहाँ की लोक संस्कृति, रहन सहन रीतिरिवाज, खान-पान, पशु पक्षी ऋतु वनस्पति आदि का स्वाभाविक चित्रण होता है। 'ढोला मारू रा' में भी राजस्थानी जनजीवन का चित्रण किया गया है। इसमें राजस्थान की संस्कृति, रहन सहन, त्यौहारों, ऋतुओं आदि का सुन्दर चित्रण मिलता है वर्षा ऋतु राजस्थान का प्राण है इसमें अनेक दोहों में वर्षा ऋतु, रेतीली भूमि गहरे कुओं तथा ऊँट आदि का पर्याप्त वर्णन किया गया है मालवणी मालवा प्रदेश की थी कवि ने उसके प्रसंग में मालवा अंचल का भी चित्रण किया है। इस प्रकार से कहा जा सकता है कि ढोला मारू रा में देशकाल का चित्रण, लोक जीवन की अभिव्यक्ति अपना एक अलग वैशिष्ट रखती है।

प्रश्न 3—'ढोला मारू रा' काव्य में जिस प्रकार शृंगार पर अपने विचार व्यक्त कीजिए?

उत्तर—'ढोला मारू रा' काव्य में जिस प्रकार शृंगार के वियोग पक्ष की मार्मिक एवं सरस अभिव्यक्ति हुई उसी प्रकार उसमें शृंगार के संयोग पक्ष की अभिव्यक्ति भी किसी प्रकार कम नहीं है जब ढोला को ढोढियों द्वारा विरह व्यथिता मारवणी की दशा का पता लगता है तो वह ऊँट पर चढ़कर पूगल देश पहुँचता है अपने प्रियतम को अपने सामने पाकर मारवणी अत्यन्त आनन्दित हो उठती है और सखियों के समक्ष अपना उल्लास प्रकट करती है।

वह अपने प्रियतम से मिलन के लिए सजती संवरती है तथा सज संवरकर कर वह अपने प्रिय के महल में जाती है उस समय उसकी चाल हंसों के समान थी पैरों में वह धुघँरू और सोने की पायल पहने, वीणा के समान मृदु वाणी और फव्वारे के समान लहराते केशपाश दिखायी देते हैं। जब वह प्रियतम उस दिखायी देते है तो वह प्रथम समागम के लिए प्रियतम के लिए प्रियतम से लिपट जाती है उस क्षण का भी कवि ने बड़ा मर्यादित चित्रण किया है—

"कंठ विलग्गी मारवी, करि कंचूवा दूर।
चकवी मन औणद हुवउ, किरण पसारया सूर॥"

इस प्रकार ढोला मारू में शृंगार का चित्रण अत्यन्त आकर्षक एवं मार्मिक हुआ है, उसमें कहीं अश्लीलता की झलक नहीं मिलती है।

प्रश्न 4—ढोला मारू रा दूहा की भाषा में किस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया गया है।

उत्तर—ढोला मारू में अनेक प्रकार के शब्दों का प्रयोग मिलता है। इस काव्य के शब्द समूह को निम्नांकित शीर्षकों में विभाजित करके रखा जा सकता है।

तत्सम शब्द—अनूप, नारी, कटि, कुच, उत्तर, नीर मदन देह, कवि, नदी, प्राण, मयंक, कंचन, सज्जन, इत्यादि।

अर्द्ध तत्सम—दुकाल, पदमिनी, काय, उछाह, मसम, अंकुस आदि।

तद्भव शब्द—राड, नयरे, रीझी, सासरइ, वीयांह, आइस, हिवई आदि।

देशज—दीकर, चिलाय, पाज, दासु, दियण, सांख, हर, वाहला आदि।

अन्तर्प्रान्तीय शब्द (अ) पंजाबी—चांदहीं, सत्ता, चंग, लज्ज अज्ज सैं
(ब) गुजराती ऐम, केम, जेम, तेड़न, बगल, विजउ आदि।
(स) ब्रज भाषा—भए, पिय, दसन वसन आदि।
(क) ब्रजभाषा भए, पिय, दसन, वसन आदि।
(ख) मराठी, नखर, चई, मोकले ओलक्खियां
(ग) सिन्धी म्हाँजी आदि।

विदेशी अरबी—अमले साहिब सलाम नजर
फारसी—गारा, खुरसांण, निसान डूंगर

इस प्रकार ढोला मारू रा दूहा में प्रयुक्त शब्द विधान वैविध्य का गुण लिए हुए हैं। उसका अपना ही सौन्दर्य है।

प्रश्न 5—मारवणी ने जो सन्देश अपने प्रियतम ढोला के पास भिजवाया उसका (अपनी पाठ्य पुस्तक के संकलित अंश) सारांश प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर—जब मारवणी की विरह व्यथा असहनीय हो गयी और इसका पल उसके माता-पिता को लगा उन्होंने ढाढियों को मारू के पति ढोला के पास सन्देश लेकर जाने को कहा जब मारू को पता चला कि ढाढ़ी उसके प्रियतम के पास सन्देश वाहक बनके जा रहे हैं तो उसने उन्हें अपने पास बुलाकर जो सन्देश कहा उसकी बड़ी मार्मिक व्यंजना कवि ने की है। मारवाड़ी कहती है कि मेरे प्रियतम को जाकर कहना कि तुम्हारी मारवणी ने तुम्हारे लिए सन्देशा भेजा है। वह कहती है कि तुम उनसे जाकर कहना कि तुम्हारे विरह में जलकर तुम्हारी पत्नी कोयला हो गयी है। यदि तुम शीघ्र न पहुँचे तो तुम उसकी भस्म को प्राप्त करना। वह कहती है कि तुम यह भी कह देना कि उसके प्राण तुम्हारे पास हैं तुम्हारे आने की आशा मे ही जीवित है। उसकी आत्मा तुम्हारे पास है और शरीर यहाँ पड़ा है।

वह कहती है कि तुम्हें मेरे प्रियतम मिले तो कहना कि तुम्हारे आने का मार्ग देखते-देखते उसकी आँखों ने सीपियों का आकार ले लिया है। स्वाति नक्षत्र के धन तुम उसमें कब बरसोगे। यौवन रूपी वृक्ष तो अब लगा है जब वह उखड़ जाएगा तब तुम आकर क्या करोगे। वह कहती है कि यौवन कमल तो कवका खिल चुका है परन्तु भ्रमर रूपी तुम अभी भी दूर क्यों हो। वह कहती है कि प्रियतम से कहना कि यौवन रूपी हाथी सांकल तोड़ने को तैयार है अतः तुम ही उसे आकर सभालो वह मेरे वश में नहीं रहा वह कहती कि यौवन रूपी अतिथि आकर जाने को उद्यत है। अतः उसके जाने से पूर्व तुम आकर उसका (उपभोग) सत्कार करे।

वह कहती है कि तुम्हारी पत्नी तुम्हारे बिना तड़प रही है। आँखों से हर समय अश्रु धारा बहती रहती है अतः तुम शीघ्र ही चले आओ।

प्रस्तुत सन्देश में मारवणी अपने प्रियतम को तरह-तरह से रिझाने वाले सन्देश भेज रही है। तथा प्रलोभन भी देती है कि किसी भी प्रकार उसके प्रियतम शीघ्रातिशीघ्र उसके पास पहुँच जाए।

उक्त सन्देश में विरह की कारुणिक अवस्था मार्मिकता, प्रेम की गहराई तथा भावों की गहरी अनुभूति मिलती है।

अतिलघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—'डोला मारू रा दूहा' में ढोला के साथ मारवणी का क्या सम्बन्ध वर्णित किया गया है ?

उत्तर—प्रस्तुत लोक गाथा में ढोला और मारु का दाम्पत्य सम्बन्ध वर्णित किया गया है। उनका विवाह तब हुआ था जब मारवणी 1½ वर्ष की थी और ढोला 3 वर्ष का।

प्रश्न 2—मारवणी दुःखी क्यों रहती थी ?

उत्तर—मारवणी अपने पति ढोला के वियोग में दुःखी रहती थी।

प्रश्न 3—राजस्थान में 'ढोला मारू रा दूहा' की लोकप्रियता के क्या कारण हैं ?

उत्तर—राजस्थान में 'ढोला मारू रा दूहा' गाथा इसलिए अधिक लोकप्रिय है कि उसमें राजस्थान के परिवेश का ही वर्णन है वह यहाँ की प्रचलित लोक कथा पर आधारित है तथा उसमें राजस्थान के रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि का विवरण है। इस कारण वह यहाँ के जन मानस का एक अंग बन चुकी है।

प्रश्न 4—'ढोला मारू रा' की रचना किस कवि ने की थी।

उत्तर—इस काव्य ग्रन्थ की रचना किसने की और कब की यह अभी तक अज्ञात है। विभिन्न विद्वानों की कल्पना के आधार पर कल्लोल कवि, लूढ़कर खिड़िया, कुशल आदि के नाम इस काव्य ग्रन्थ के रचना कारों के रूप में उल्लिखित करते है। परन्तु वास्तव में इसकी रचना किसने की यह अज्ञात है।

प्रश्न 5—ढोला किस वंश से सम्बन्धित था ?

उत्तर—ढोला कछवाहा वंश के राजा नल का पुत्र था जो नरवर प्रदेश के राजा थे।

प्रश्न 6—मारवणी किसकी पुत्री थी ?

उत्तर—मारवणी पूगल देश के राजा पिंगल की पुत्री थी।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—ढोला मारुरा दूहा किस प्रकार का काव्य है ?

(क) वीर काव्य (ख) महाकाव्य (ग) प्रबन्धकाव्य (घ) प्रेम काव्य (च) खण्ड-काव्य।

प्रश्न 2—ढोला मारू रा दूहा में किस प्रकार का प्रेम वर्णित है ?

(क) प्रेमी प्रेमिका का प्रेम (ख) भावनात्मक प्रेम (ग) वासनात्मक प्रेम (घ) दाम्पत्य प्रेम।

प्रश्न 3—मारवणी अपना सन्देश प्रियतम तक किसके द्वारा भिजवाती है ?

(क) कौए के द्वारा (ख) हंस के द्वारा (ग) चातक के द्वारा (घ) ढाढियों के द्वारा (च) बादलों के द्वारा।

प्रश्न 4—मारवणी ने अपने पति के दर्शन कहाँ किए थे ?

(क) बाग में (ख) नदी के किनारे (ग) स्वप्न में (घ) चित्र में (च) महल में।

प्रश्न 5—मारवणी किस प्रकार की नायिका थी ?

(क) ज्ञात यौवना (ख) अज्ञात यौवना (ग) मुग्धा (घ) प्रेषित पतिका (च) स्वकीया।

प्रश्न 6—बावहिया मिलपंखिया, वाढ़त खू दई लूण।
प्रिउ में मइ प्रिउ की, तू प्रिय कहईस झूठा।

इस दोहे में मारवणी कौन सा भाव पपीहे के प्रति व्यक्त कर ही है—

(क) प्रेम का (ख) रोष का (ग) क्षोभ का (घ) व्यथा का (च) वेदना का

उत्तरमाला

(1) घ (2) घ (3) घ (4) ग (5) ग (6) ख।

छन्द अलंकार

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—अंलकार शब्द का अर्थ बताते हुए अलंकार की परिभाषा निर्धारित कीजिए ?

उत्तर—अंलकार शब्द अलम् और कार दो शब्दों से मिलकर बना है।

अलम् का अर्थ है भूषण—जो अंलकृत या भूषित करें वह अलंकार हैं। अर्थात् जिसके द्वारा भूषित किया जाए वह अलंकार है।

अतः अंलकार शब्द का शाब्दिक अर्थ आभूषण से होता है।

साहित्यक अर्थ में शब्द और अर्थ की उस विशेषता को अलंकार कहते हैं। जिससे काव्य का श्रृंगार होता है। अर्थात् जिस प्रकार आभूषण शरीर की शोभा बढ़ाते हैं। उसी प्रकार अलंकार काव्य की शोभा बढ़ाते हैं।

शब्द और अर्थ काव्य के शरीर, रस काव्य की आत्मा और अंलकार आभूषणों के समान है। इसके अनुसार ही हम काव्य में अंलकारों का स्थान निर्धारित कर सकते हैं।

अंलकार काव्य के शोभा कारक तत्व हैं।

उदाहरण के लिए—

'पीपर पात सरिस मन डोला'

प्रदत्त पंक्ति में उपमा अलंकार का प्रयोग किया गया है। अलंकार काव्य में ही नहीं पद्य में भी प्रयुक्त किए जाते हैं जैसे—

'कमल नयन राम के साथ सीता का स्वयंवर हुआ'। इसमें कमल नयन में रूपक अलंकार है।

प्रश्न 2—अलंकारों के प्रमुख भेदों का सोदाहरण विवेचना कीजिए ?

उत्तर—शब्द और अर्थ को काव्य के शरीर बताया गया है इसलिए साहित्य में अंलकारों के मुख्य दो भेद हैं—

(1) शब्दालंकार (2) अर्थालंकार, कुछ विद्वानों ने अलंकार का एक तीसरा भेद भी माना है। वह है उभयालंकार।

1. **शब्दालंकार**—जहाँ शब्द के द्वारा सौन्दर्य हो वहाँ शब्दालंकार होता है। शब्दालंकार की पूरी पहचान वह होती है कि यदि अलंकार वाले शब्द के बदले उसका पर्यायवाची शब्द रख दें तो उसकी सुन्दरता समाप्त हो जाएगी।

उदाहरण के लिए—

'हिस्त्र निशाचर भूधर कन्दर पशु संकुल'

यदि हम निशाचर के स्थान पर राक्षस रख दें तो इसकी सुन्दरता समाप्त हो जाएगी।

जैसे—

'हिंसक राक्षस, पर्वत गुहा पशु संकुल।'

उक्त उदाहरण में पर्यायवाची शब्द रख देने के कारण पंक्ति का सौन्दर्य नष्ट हो गया इसीलिए यहाँ शब्दालंकार है।

2. **अर्थालंकार**—जहाँ शब्दों में चमत्कार न होकर अर्थ में चमत्कार हो वहाँ अर्थालंकार होता है।

उदाहरण—

सबने रानी की ओर अचानक देखा,
वैधव्य तुषारावृता यथा विधु रेखा।

इस अर्थ में सबने रानी की ओर आँख उठा कर देखा उसके शरीर पर विधवापन के चिन्हरूप सफेद कपड़े थे, जिसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था जैसे कुहरे से ढकी हुई चन्द्रमा की कला हो।

यहाँ पर वैधव्य पर तुषार का आरोप किया गया है। रानी की चन्द्रकला से तुलना की गयी है। इससे काव्य में सौन्दर्य आ गया है। हम चाहें तो इन शब्दों के बदले पर्यायवाची शब्द भी रख दें तो भी यह चमत्कार बना ही रहेगा। अर्थालंकार का शब्दालंकार से अन्तर है। पयार्यवाची शब्द रख कर भी अर्थ के सौन्दर्य में कोई कमी नहीं पड़ता।

"सबने रानी की ओर अचानक देखा।
वैधव्य कुहरा आच्छादित ज्यों शशि रेखा।"

3. **उभयालंकार**—जहाँ शब्द और अर्थ दोनों में ही सौन्दर्य हो वहाँ उभयालंकार होता है अर्थात् जहाँ शब्द और अर्थ दोनों ही सौन्दर्य को बढ़ायें।

यथा— 'पीपर पात सरिस मन डोला'

यहाँ प की तीन बार आवृति हुयी है अतः यहाँ अनुप्रास (शब्दालंकार) अलंकार है सरिस शब्द में उपमा (अर्थालंकार) है।

प्रश्न 3— काव्य में अलंकारों का महत्व प्रतिपादित कीजिए ?

उत्तर—अलंकार, अलंकार के समान सौन्दर्य वर्धक अंग है अनिवार्य अंग नहीं है। अत: यह कहा जा सकता है कि काव्य में जहाँ रस और भाव की मार्मिक व्यंजना हो वहाँ अंलकारों का कोई विशेष महत्व नहीं है। जिस प्रकार कोई व्यक्ति सर्वांग सुन्दर हो तो उसके लिए अंलकार (आभूषणों) की कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती है। यदि उसे अंलकारों से आभूषित कर दिया जाय तो उसका सौन्दर्य द्विगुणित हो जाएगा। उसके सौन्दर्य में च र चांद लग जाएँगे। इसी प्रकार काव्य की भी स्थिति है यदि काव्य के भाव बहुत सुन्दर हैं तो उसे अलंकार की कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती और यदि उसमें अंलकारों का प्रयोग भी है तो वह कविता मन को अपने भ.व सौन्दर्य तथा बाह्य सौन्दर्य दोनों से प्रभावित करेगी। सहज रूप में प्रयुक्त किए जाने पर अलंकार शोभावर्धक होते हैं परन्तु यदि कविता के भाव पक्ष पर ध्यान न देकर केवल अलंकारों के अनुसार कविता लिखी जाएगी तो किसी भी व्यक्ति को प्रभावित नहीं कर सकती। अभिप्राय यह है कि यदि अलंकार कविता में बिना किसी प्रयास के आ जाए अर्थात् भावों के साथ ही साथ व भाषा में स्वत: ही सभाविष्ट हो जाए तो निश्चय वह कविता के शोभावर्धक अंग होंगे परन्तु यदि उनका प्रयोग भाषा में चमत्कार लाने की दृष्टि से बलात् रूप से किया जाए तो कविता में सौन्दर्य की अपेक्षा भौंडापन ही आएगा।

मनुष्य अपनी जन्मजात प्रवृत्ति से ही एक सौन्दर्योपासक प्राणी है वह अपनी प्रत्येक कृति को मनोरम और सुन्दर देखना चाहता है। जिस प्रकार साज सज्जा एवं अलंकरण से किसी सुन्दरी के रूप सौन्दर्य में वृद्धि होती है उसी प्रकार काव्य को भी अंलकृत कर देने से कविता के सौन्दर्य में वृद्धि होती है, यदि काव्य में अंलकारों का प्रयोग यथोचित तथा आवश्यकतानुसार सहज रूप से किया जाए तो नि:सन्देह ही वह काव्य का सौन्दर्य ही बढ़ाते हैं। काव्य लिए अलंकार होने चाहिए, न कि अलंकारों के लिए काव्य। अलंकार रस भावों के अनुकूल प्रयुक्त होकर ही उत्कर्ष साधना में सहायक होते हैं। परन्तु अलंकारों का यथोचित तथा यथास्थान प्रयोग ही किया जाना चाहिए। ऐसा करने पर ही वे भावाभिव्यक्ति एवं भाव प्रदर्शन में सहायक होकर रसानुभूति को तीव्र एवं गहन अनुभूति करते हैं।

प्रश्न 4—अनुप्रास अलंकार की परिभाषा देते हुए उदाहरण दीजिए ?

उत्तर—अनुप्रास में वर्ण या वर्ण समूह अनेक (दो या अधिक) बार आता है। अर्थात् स्वर के भेद होने पर भी व्यंजनों की आवृत्ति को अनुप्रास कहते हैं।

उदाहरण—भरत भारती मंजु मराली

इसमें भ र और त इन तीन वर्णों का समूह दो-दो बार आया है।

इस असार संसार में, सार चार कह व्यास।
गंग-सलिल, सतसंग, सिव, सदन, काशी-वास॥

अनुप्रास के भेद—

1. छेकानुप्रास
2. वृत्यानुप्रास
3. श्रुत्यानुप्रास
4. अन्त्यानुप्रास

लाटानुप्रास—जब ऐसे शब्द या वाक्य दुबारा आ जाए जिन का अर्थ तो एक हो, किन्तु अन्वय करने का तात्पर्य भिन्न हो जाए वहाँ लाटानुप्रास होता है।

उदाहरण—"पराधीन जो जन, नहीं स्वर्ग नरक ता हेतु।
पराधीन जो जन नहीं, स्वर्ग नरक ता हेतु॥"

इसका अर्थ है जो मनुष्य पराधीन हैं उनके लिए स्वर्ग नहीं हैं, उनके लिए नरक है, जो मनुष्य पराधीन नहीं है उनके लिए तो नरक भी स्वर्ग के समान है—यह अर्थ अल्प-विराम और अन्वय से ज्ञात हुआ।

प्रश्न 5—यमक तथा श्लेष अलंकार की सोदाहरण विवेचना करते हुए इनके अन्तर को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर—यमक—जहाँ शब्द या शब्दाशों या वाक्यांशों की आवृत्ति हो (एक से अधिक बार आये) किन्तु उनके अर्थ भिन्न हों वहाँ यमक अलंकार होता है। उदाहरण—

"भजन कह्यो तासे भज्यों, भज्यो न एकौ बार।
दूर भजन जासों कह्यो, सो तैं भज्यों गवांर ॥"

भजन=ईश्वर भक्ति, भज्यो-भाग जाना भज्यो=भजन करना।

"बना अतीवा कुल म्लान चित्त को
विदारता था तरु को **बिदार** का।"

इसमें विदार शब्दांश दोवार आया है यह पूरा शब्द नहीं है। पहला विदार विदारता का अंश है तथा दूमरा विदार को बिदार का अंश है यहाँ विदार शब्दांश का अर्थ ही नहीं है। शब्दांश के यमक में दोनों शब्द निरर्थक होते हैं।

श्लेष—श्लेष का अर्थ होता है चिपका हुआ। जब एक ही शब्द के एक से अधिक अर्थ निकले वहाँ श्लेष अलंकार होता है।

उदाहरण—"नर की अरु नल नीर की गति एकै करि जोय
जेतो नीचो ह्वै चलै तेतो ऊँचो होय।"

इस उदाहरण में नीचो से अभिप्राय है (1) गहरा (2) नम्र, विनयशील।

ऊँचों का अभिप्राय है (1) ऊपर उठा हुआ (2) उन्नत या बड़ा।

इसी प्रकार एक अन्य उदाहरण है—

"पानी गये न ऊबरै मोती मानस चून"

पानी शब्द के यहाँ तीन अर्थ हैं—
मोती के पक्ष में=आब या चमक
मनुष्य के पक्ष में=इज्जत व प्रतिष्ठा
आटे के अर्थ में=पानी।

अतः यहाँ श्लेष अलंकार है।

श्लेष और यमक में अन्तर—

समानता—दोनों ही अलंकारों में एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं।

विषमता—यमक अलंकार में शब्द अनेक बार आता है। श्लेष अलंकार में शब्द एक ही बार आता परन्तु उसी शब्द के अनेक अर्थ होते हैं।

यमक का उदाहरण—

कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय।
वा खाये बौराए जग पा पाये बौराए ॥

उक्त उदाहरण में कनक शब्द की आवृत्ति दो बार हुयी है दोनों का अर्थ भिन्न है। एक कनक का अर्थ है धतूरा, दूसरे कनक का अर्थ है सोना।

श्लेष का उदाहरण—चिरजीवौ जोरी जुरै क्यों न सनेह गम्भीर।
को घटि ये वृषभानुजा वे हलधर के तीर॥

यहाँ वृषभानुजा और हलधर दो अर्थों को अपने साथ चिपकाए हुए हैं परन्तु दोनों में किसी शब्द की आवृत्ति नहीं हुयी है अतः एक ही बार प्रयुक्त किए गये हैं।

वृषभानुजा के दो अर्थ हैं—एक अर्थ राधा

दूसरा अर्थ बैल की बहन गाय

इसी प्रकार हलधर के भी दो अर्थ है एक अर्थ में तो हलधर बलराम के अर्थ में प्रयुक्त होता है परन्तु दूसरे अर्थ में हलधर किसान के लिए भी प्रयुक्त होता है अतः यह श्लेष अलंकार है।

प्रश्न 6—उपमा अलंकार की परिभाषा देते हुए उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—जहाँ उपमेय के साथ उपमान की किसी साधारण धर्म को लेकर तुलना की जाए वहाँ उपमा अलंकार होता है।

उपमा में किसी वस्तु की तुलना किसी दूसरी वस्तु के साथ की जाती है। दोनों वस्तुओं में कोई गुण ऐसा होता है जो दोनों में कुछ समानता रखता हो उसी गुण के कारण दोनों में समानता बतलाई जाती है।

उपमा अलंकार के निम्न चार अंग हैं—

(1) उपमेय (2) उपमान (3) साधारण धर्म (4) वाचक शब्द।

(1) उपमेय—जिस वस्तु या व्यक्ति की तुलना की जाए वह उपमेय है। जैसे—मुख।

(2) उपमान—जिस से तुलना की जाए वह उपमान कहलाता है।

(3) साधारण धर्म—जो गुण या क्रिया उपमेय और उपमान दोनों में हो जैसे—सुन्दरता।

(4) **वाचक शब्द**—जैसे समान, सा सदृश, सी, से, जैसी आदि।

उदाहरण—मुख कमल के समान सुन्दर है।

(1) मुख उपमेय है। (2) कमल उपमान है। (3) सुन्दर साधारण धर्म है। (4) समान वाचक शब्द है।

उपमा के दो भेद होते हैं—(1) पूर्णोपमा (2) लुप्तोपमा।

जहाँ उपमेय उपमान आदि उपमा के चारों अंगों में से एक अंग में लुप्त हो वहाँ लुप्तोपमा होती है।

"शलभ चंचल मेरे मन प्राण"

जब इन चारों में से किसी का भी लोप नहीं होता और चारों अंगों के सहित उपमा है।

जैसे—सागर सा गम्भीर हृदय हो
गिरि सा ऊँचा हो मन।

प्रश्न 7—रूपक अलंकार की सोदाहरण विवेचना कीजिए। रूपक एवं उपमा अलंकार में अन्तर स्पष्ट करें?

उत्तर—जब एक वस्तु पर दूसरी वस्तु का आरोप किया जाए अर्थात् उपमेय का उपमान के साथ अभेद दिखाया जाए वहाँ रूपक अलंकार होता है।

उदाहरण के लिए 'मुख कमल' है।

इन उदाहरणों में मुख पर कमल का आरोप किया गया है अर्थात् मुख को कमल का रूप प्रदान किया गया है अतः यहाँ रूपक अलंकार है।

'उदित उदय गिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग।
विकसे सन्त सरोज सब, हरषे लोचन भृंग॥

यहाँ पर मंच, रघुवर, सन्त और लोचन उपमेय हैं इनमें क्रमशः उदय गिरि, बाल पतंग, सरोज और भ्रमण उपमानों का आरोप किया है अथवा अभेद स्थापित किया गया है। अतः यहाँ रूपक अलंकार है। रूपक अलंकार का एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत है—

"जीवन की चंचल सरिता में, फेंकीं मैंने मन की जाली।
फँस गयी मनोहर भावों की, मछलियाँ सुघर भोली भाली॥"

रूपक तथा उपमा अलंकार में अन्तर—उपमा अलंकार में समान वस्तु से तुलना की जाती है। किन्तु रूपक अलंकार में समान वस्तु में अभेद स्थापित कर दिया जाता है। अर्थात् उपमान को उपमेय पर आरोपित कर दिया जाता है।

उदाहरण—

रूपक	उपमा
1. सीता का मुख चन्द्र है। 2. चरन सरोज पखारन लागा।	1. सीता का मुख चन्द्र के समान है। 2. करलो नभ सा शुचि जीवन को।

दोनों पर अलंकारों का अन्तर स्पष्ट है।

प्रश्न 8—उत्प्रेक्षा और प्रतीप अलंकारों की परिभाषा देते हुए उदाहरण द्वारा स्पष्ट करें ?

उत्तर—उत्प्रेक्षा—जब किसी वस्तु में किसी दूसरी वस्तु की सम्भावना की जाए अर्थात् एक वस्तु को दूसरी मान लिया जाए।

दोनों वस्तुओं में समान धर्म के कारण ऐसी सम्भावना की जाती है। सम्भावना करने के लिए कुछ शब्दों का प्रयोग किया जाता है। जो उत्प्रेक्षा के वाचक शब्द कहलाते हैं। यथा—मानो, मनो, मनु मनहूँ, जानो, जनु सा इत्यादि।

उदाहरण—नेत्र मानो कमल हैं।

नेत्र वास्तव में कमल नहीं हैं परन्तु मान लिया है कि वे कमल हैं।

उदाहरण—सोहत ओढ़े पीत पट, स्याम सलोने गात।
मनो नीलमणि शैल पर, आतप परयो प्रभात।

यहाँ पीताम्बर धारी श्रीकृष्ण के स्याम शरीर पर प्रातः काल के पीले धूप से सुशोभित नीलमणि पर्वत के स्वरूप की सम्भावना की गयी है, अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है।

प्रतीप—जब उपमेय के सामने उपमान का तिरस्कार किया जाए यह तिरस्कार कई प्रकार से किया जाता है।

उपमान को उपमेय और उपमेय को उपमान बनाकर उपमान सदा उपमेय से श्रेष्ठ होता है, श्रेष्ठ उपमान को उपमेय बना देना। अपेक्षाकृत हीन उपमेय को उपमान बना देना उपमान का तिरस्कार से ही है।

उदाहरण—(क) उपमान को उपमेय और उपमेय को उपमान बना कर—

सखि ! मयंक तब मुख सम सुन्दर।

यहाँ उपमान चन्द्रमा का तिरस्कार करने के लिए मुख चन्द्र के समान सुन्दर है।

(ख) उपमान को उपमेय की उपमा के अयोग्य बताकर—

का सरवरि तेहि देऊँ मंयकू।

उस मुख को चन्द्रमा की उपमा क्या दूँ। अर्थात् चन्द्रमा उसके योग्य नहीं है।

(ग) उपमान को उपमेय के सामने अनावश्यक बताकर—

मुख आलोकित जग करै, कहो चन्द्र केहि काम

जब मुख ही जगत को प्रकाशित कर देता है तो चन्द्रमा की क्या आवश्यकता है।

(घ) प्रत्यक्ष रूप से—

काहे करत गुमान ससि ! तब समान मुख मंजु

हे चन्द्रमा ! तू क्यों गर्व करता है मुख तेरे ही समान सुन्दर है।

यहाँ पर चन्द्रमा का प्रत्यक्ष रूप से तिरस्कार किया गया है।

प्रश्न 9—व्यतिरेक तथा विरोधाभास अलंकारों को उदाहरण सहित समझाइए ?

उत्तर—ये दोनों ही अर्थालंकार के भेदों के अन्तर्गत आते हैं।

व्यतिरेक—जब उपमेय में उपमान की अपेक्षा की जाये, कोई बात अधिक बतायी जाय, अर्थात् जब उपमेय को उपमान से किसी बात में बढ़कर बताया जाए वह व्यतिरेक अलंकार होता है।

"का सरवरि तेहि देउ मयंकू।
चाँद कलंकी, वह निकलंकू।"

यहाँ पर कहा गया है कि उस (सुन्दरी) के मुख को चन्द्रमा की उपमा क्या दी जाए ? चन्द्रमा में कलंक है परन्तु वह निष्कलंक है अतः उसका मुख चन्द्रमा से भी सुन्दर है।

टिप्पणी—(1) व्यतिरेक अंलकार कभी उपमा के साथ कभी रूपक के साथ और कभी प्रतीप के साथ आता है।

(2) व्यतिरेक के साथ रूपक आने पर अनेक विद्वान उसे रूपकातिश्योक्ति मान लेते हैं।

विरोधाभास—जब विरोध न होते हुए भी विरोध दिखायी दे। जब साथ न रहने वाली वस्तुओं को एक साथ रख दिया जाए, तब विरोधाभास अलंकार होता है।

उदाहरण—

मीठी लगे अँखियान लुनाई

आखों का लावण्य मीठा लगता है। लुनाई या लावण्य का अर्थ होता है खारापन या नमकीन। अतः खारापन मीठा लगता है। यहाँ विरोधाभास अलंकार है।

प्रश्न 10—दीप और विभावना अलंकारों की सोदाहरण विवेचना कीजिए ?

उत्तर—यह दोनों अलंकार अर्थालंकार के भेद हैं।

दीपक—जब प्रस्तुत और अप्रस्तुत को एक ही अर्थ धर्म से अन्वित किया जाए वहाँ दीपक अलंकार होता है।

उदाहरण—सोहत मुखफल हास सो, अमल चन्द्रिका चन्द्र।"

यहाँ प्रस्तुत मुख और अप्रस्तुत चन्द्र दोनों को एक ही धर्म से अन्वित किया गया है।

अप्रस्तुत कभी कभी एक से अधिक भी हो सकते हैं।

यथा—कामिनी कन्त सों, जामिनी चन्द सों,
दामिनी पावस मेघ घटा सों।
जाहिर चारहूँ ओर जहान लसें,
हिन्दवान खुमान सिवा सों।

यहाँ प्रस्तुत हिन्दवान और अप्रस्तुत कामिनी, यामिनी तथा दामिनी चारों का एक धर्म 'लसैं' आया है।

विभावना—जब कारण न होने पर भी कार्य हो जाए वहाँ विभावना अलंकार होता है।

उदाहरण—

मुनि तापस जिनतें दुख लहहीं।
ते नरेस बिनु पावक दहहीं॥

जलना कार्य के लिए अग्निरूपी कारण होना चाहिए। यहाँ अग्निरूपी कारण के न होने पर जलना रूपी कार्य हो गया है।

टिप्पणी—अपूर्ण कारण से कार्य हो, रुकावट होने पर भी कार्य हो जाए, विपरीत कारण के कार्य हो और कार्य कारण से कार्य हो तब भी विभावना अलंकार होता है।

जैसे—

(1) **जब अपूर्ण कारण से कार्य हो—**

तो सो को सिवा जी ! जेहि दो सौ आदमी सो जीत्यो
जंग सरदार सौ हजार असवार को।

शिवाजी ने दो सौ सिपाहियों से लाख सिपाहियों के सरदार को जीत लिया। जीतना कार्य का कारण सेना है, पर दो सौ सिपाहियों की सेना लाख सेना को भी जीत सके, इसके लिए पर्याप्त नहीं होती, परन्तु फिर भी उसने जीत लिया। इस प्रकार अधूरे या अपर्याप्त कारण से कार्य हुआ।

(2) **जब कार्य की रुकावट उपस्थित होने पर भी कार्य हो जाए—**

"तेज छत्रधारीन हूँ असहन ताप करन्त।"

छत्र होने से ताप करना कार्य नहीं हो सकता। छत्र ताप रूपी कार्य होने के मार्ग रुकावट है, पर यहाँ छत्ता रूपी रुकावट होने पर भी कर्य हो जाता है।

(3) **जब विपरीत कारण से कार्य हो—**

"करिघन उमड़ि अँगारे बरसत हैं।"

"घन से अंगारे नहीं, पानी बरसता है, जो अंगारों बरसत हैं।"

घन से अंगारे नहीं, पानी बरसता है जो अंगारों का विरोधी है परन्तु यहाँ पर कहा गया है कि बादल अंगारे बरसाते हैं।

(4) **जब कार्य से कारण उत्पन्न हो—**

कर कल्पद्रुम सों करयो जस समुद्र उत्पन्न।

हाथ दान देने में कल्पवृक्ष के समान है उनसे यश का समुद्र उत्पन्न हुआ। समुद्र कल्पवृक्ष का कारण न कि कल्पवृक्ष समुद्र का। पर यहाँ कल्पवृक्ष को समुद्र का कारण कहा गया है।

प्रश्न 11— सन्देह और भ्रान्तिमान अलंकारों को उदाहरण सहित स्पष्ट करते हुए इनके अन्तर को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर—सन्देह—जब सादृश्य के कारण एक वस्तु में अनेक वस्तुओं के होने की संभावना दिखाई पड़े और निश्चय न हो वहाँ सन्देह अलंकार होता है।

उदाहरण—

नारी बीच सारी है कि है कि सारी बिच नारी है।
नारी ही सारी है कि सारी ही की नारी है॥

द्रोपदी के चीरहरण के समय जब उसकी साड़ी का कहीं अन्तिम छोर दिखाई नहीं देता तो यह सन्देह उत्पन्न होता है कि नारी साड़ी की बनी हुयी इत्यादि। अतः यहाँ सन्देह अलंकार है।

उदाहरण—

"कैधौं रितुराज काज अवनि उसाँस लेत।
किधौं यह ग्रीषम की भीषण लुआर है।"

ये ग्रीष्म ऋतु की भयंकर लू की लपटें हैं या बसन्त विहार में पृथ्वी के अन्तस से निकलती हुयी विरह की आहें हैं।

भ्रान्तिमान—जब सादृश्य के कारण उपमेय में उपमान समझ लिया जाए वहाँ भ्रान्तिमान अलंकार होता है।

उदाहरण—

1. नाक का मोती अधर की कान्ति से,
बीज दाड़िम का समझकर भ्रान्ति से।
हुआ शुक मौन है।
सोचता है अन्य शुक यह कौन हैं।

नायिका की नाक के वेसीर को अनार का दाना समझ कर तोता भ्रम में पड़ गया है।

2. चन्द्र आकास को पास बिहाई कै
आजु यहाँ कहाँ आई उयो है ?

किसी मुख को देखकर चन्द्रमा समझ लिया।

सन्देह अलंकार में केवल सन्देह ही होता है। परन्तु भ्रान्तिमान में भ्रम उत्पन्न हो जाता है और भ्रम के कारण उपमेय में उपमान समझ लिया जाता है। सन्देह में या, अथवा कि, किधौं, कैधौं आदि का अर्थ देने वाले सन्देह वाचक शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं।

प्रश्न 12—अपन्हुति, दृष्टान्त, एवं निदर्शना अलंकारों को सोदाहरण विवेचित कीजिए ?

उत्तर—अपन्हुति—अपह्नुति शब्द का अर्थ है—छिपाना या निषेध करना जहाँ प्रस्तुत पर (उपमेय) का निषेध करके किसी दूसरी वस्तु की स्थापना की जाए वहाँ अप-

न्हुति अलंकार होता है । अर्थात् जहाँ उपमेय का निषेध करके उपमान का होना कहा जाए।

उदाहरण—नहिं सखि ! राधा-वदन यह है पूनो का चाँद । यहाँ राधा के मुख का निषेध करके उसे चाँद ही बतलाया गया है।

अतः यहाँ अपह्नुति अलंकार है।

टिप्पणी—नहीं और व शब्द अपह्नुति के वाचक शब्द हैं।

दृष्टान्त—जब पहले एक बात कहकर फिर उससे मिलती जुलती दूसरी बात पहली बात के उदाहरण के रूप में कही जाए वहाँ दृष्टान्त अलंकार होता है दृष्टान्त में दो प्रकार के वाक्य होते हैं—एक उपमेय वाक्य, दूसरा उपमान वाक्य, पर दोनों में बिम्ब प्रति बिम्ब भाव होता है। अर्थात् दोनों का धर्म एक नहीं होता, पर एक जैसा अर्थात् मिलता जुलता होता है।

उदाहरण—'करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जातते, सिल पर परत निसान ॥''

ज्यामति के अभ्यास द्वारा सुजान (उपमेय को) बनने शिक्षा दी जा रही उसका बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव सिल के द्वारा प्रकट किया गया है। अतः यहाँ दृष्टान्त अलंकार है।

निदर्शना अलंकार—जब दो कार्यों या दो वस्तुओं को उनमें समानता सूचित करने के लिए एक बताया जाय।

(क) दो कार्यों में एकत्व की स्थापना—"कविता समुझाइवो मूरख को सविता गहि भूमि पै डारिबो है।" यहाँ मूर्ख को कविता समझाने के कार्य को सूर्य को लेकर पृथ्वी पर फेंक देना कहा गया है, अर्थात् दोनों को एक बताया गया है । वस्तुतः दोनों कार्य एक नहीं है मूर्ख को कविता समझा सकना एक बात है और सूर्य को पृथ्वी पर फेंक देना बिल्कुल दूसरी बात है, दोनों कार्य सर्वथा भिन्न हैं। फिर भी दोनों को एक बतलाया गया है। इसलिए दोनों में समानता सूचित करनी है मूर्ख को कविता समझा सकना वैसा ही है (असम्भव है) जैसा सूर्य को पृथ्वी पर फेंक सकना।

(ख) दो वस्तुओं में एकत्व की स्थापना—

"पायी जाती अमल मुख में ओप आदित्य की है।"

आदित्य की ओप (सूर्य की शोभा) आदित्य में ही रहती है, मुख में नहीं रह सकती। मुख की ओप आदित्य की ओप के समान है यह सूचित करने के लिए मुख की ओप को आदित्य की ओप कह दिया गया है।

निर्दशना में प्रायः उपमेय या उपमेय वाक्य के साथ जो आदि शब्द तथा उपमान या उपमान वाक्य के साथ सो, वह आदि शब्द आते हैं पर इनका आना आवश्यक नहीं है।

प्रश्न 13—पाश्चात्य काव्यशास्त्र के मानवीकरण, विशेषण विपर्यय अलंकारों की परिभाषा देते हुए सोदाहरण स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर—भारत की भाँति पश्चिम में भी साहित्य शास्त्र का अच्छा विकास हुआ उसमें अनेक अलंकारों का विवेचन हुआ जिनमें से कुछ भारतीय काव्यशास्त्र के समान हैं परन्तु कुछ अलग है। उनका प्रयोग भारतीय काव्य में हुआ है जिन अलंकारों का प्रयोग भारतीय काव्य में हुआ है वह निम्न हैं—

(1) मानवीकरण (2) विशेषण विपर्यय (3) ध्वन्यार्थ व्यंजना।

(1) **मानवीकरण**—जब अमानव पर मनवीय गुणों का आरोप किया जाय वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है।

उदाहरण—पगली हाँ सम्भाल ले,

कैसे छूट पड़ा तेरा अंचल।

देख बिखरती मणि राजी

अरी उठा वैसुध चंचल।

उक्त पंक्तियों में रात्रि पर अज्ञात यौवना नायिका का आरोप किया है।

उदाहरण—जब कामना सिन्धु तट तक आयो,

ले संध्या का तारा दीप।

फाड़ सुनहली साड़ी उसकी।

तू क्यों हंसती अरी प्रतीप।

विशेषण विपर्यय—जब किसी वस्तु के विशेषण को दूसरी वस्तु के साथ प्रयुक्त किया जाए वहाँ विशेषण विपर्यय अलकार होता है।

इस पथ का उद्देश्य नहीं है,

श्रान्त भवन में टिक रहना।

किन्तु पहुँचना उस मंजिल तक,

जिसके आगे रहा नहीं।

प्रश्न 14—छन्द की परिभाषा देते हुए उसकी उपयोगिता और रूप पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—प्रत्येक मनुष्य कभी न कभी एकाकी होने पर गुनगुनाता है और उसमें तन्मय होकर आनन्द अनुभव करता है। इस तरह गुनगुनाते हुए जब कुछ सरस शब्द आते हैं और उनमें लय गति और यति होने से उसके स्वर में मधुरता आ जाती हैं तो उसे विशेष सुख की प्राप्ति होती है।

लय गति और यति सहित रचना को छन्दोबद्ध रचना कहा जाता है।

छन्द को वृत्त या पिंगल भी कहा जाता है। गद्य की अपेक्षा पद्य में लय के कारण विशेष आकर्षण रहता है इस भेद को समझने के लिए गद्य और पद्य के उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(गद्य) युद्ध के मैदान में तलवार की झंकार सुनकर शत्रुओं के हृदय काँप उठे थे।

इसी को पद्य में इस प्रकार कहेंगे—

जब झंकार सुनि असि की, तब लगा काँपने अरि हृदय।

इस प्रकार गद्य रचना को पढ़ने की अपेक्षा छन्दोबद्ध रचना को पढ़ने में अधिक आनन्द की प्राप्ति होती है।

परिभाषा—काव्य शास्त्र के नियमानुसार जिस रचना में मात्रा, वर्ण विराम, गति का विचार रखकर शब्द योजना की जाती है। उसे छन्द या पद्य कहते हैं।

काव्य में छन्द की उपयोगिता—काव्य में छन्द के दो उपयोग हैं—

(1) **अभिव्यक्ति का अनुशासन**—छन्द कवि की अभिव्यक्ति का अनुशासन है। अपने भाव को कम से कम शब्दो में व्यक्त करने हेतु वह सार गर्भित शब्द प्रयोग करता है जिस छन्द का स्वरूप बना रहे और उसकी अभिव्यक्ति भी व्यक्त हो सके।

(2) छन्द के माध्यम से काव्य में संगीत एवं लय का समाहार होता है रस के अनुसार छन्द भी निश्चित होते हैं। कुछ छन्दों में सुन्दर गति एवं संगीत तत्व की प्रधानता रहती है। कुछ छन्दों में उग्र संगीत के तत्व मिले रहते हैं।

छन्द का स्वरूप—छन्द अक्षरों की गिनती व मात्राओं की गिनती से निर्मित होते हैं।

(1) **मात्रा**—एक मूल स्वर के उच्चारण में जितना समय लगता है उसे मात्रा कहते हैं। इस दृष्टि से ह्रस्व या लघु स्वर की एक मात्रा हुयी। अ, इ, उ, ऋ ये एक मात्रिक छन्द है। दीर्घ और संयुक्त स्वरों की सदा दो मात्राएँ होती हैं। आ, ई, ऊ, ए ओ, औ। इन सबकी दो मात्राएँ होती हैं।

(2) **लघु**—एक मात्रिक वर्ण को लघु या ह्रस्व कहते हैं।

अ, इ, उ, ऋ लघु वर्णन है। लघु का संक्षेप ल है लघु चिह्न। है। गुरु—दीर्घ मात्रा वाले वर्ण को गुरु कहा जाता है। गुरु संक्षेप में गु लिखा जाता है। यदि ह्रस्व से परे संयुक्त वर्ण हो तो ह्रस्व वर्ण भी गुरु हो जाता है जैसे—सत्य। इस शब्द में स गुरु है। आवश्यकता पड़ने पर पाद (चरण के अन्त वाला ह्रस्व स्वर भी गुरु मान लिया जाता है। अनुस्वार और विसर्ग वाला ह्रस्व भी गुरु होता है जैसे दुःख, अंग। गुरु का चिन्ह ऽ है।

(1) संयुक्त अक्षर से पहले के वर्ण गुरु कहते हैं। जैसे—नित्य तथ्य में नि और त गुरु है।

(2) यदि संयुक्त अक्षर से पूर्व वर्ण पर भार पड़े तो उसे लघु ही मानते हैं। जैसे—तुम्हारी में तु लघु है।

(3) कहीं-कहीं उच्चारण ह्रस्व होने पर वर्ण दीर्घ हो तब भी उसे ह्रस्व मान लिया जाता है—"मोहि भा अस भरोस हनुमन्ता" में भा दीर्घ होते हुए भी लघु है।

यति—प्रत्येक छन्द में बीच में कुछ स्थल विराम के लिए होता है। उस विराम स्थल को यति या विराम कहते हैं।

गति—छन्द में समाहित संगीतात्मक लय गति कहलाती है जिसके टूटने पर गति भंग दोष होता है।

चरण या पाद—किसी छन्द के भाग को चरण या पाद कहा जाता है अधिकतर एक छन्द में चार चरण होते हैं, किन्तु कुछ शब्दों में छः चरण भी होते हैं।

गण—तीन अक्षरों का एक गण होता है।

उनमें से कोई वर्ण ह्रस्व कोई दीर्घ कभी सारे ह्रस्व और कभी सारे दीर्घ भी हो सकते है। गणों को याद रखने के लिए निम्न सूत्र प्रयोग में लाया जाता है।

ISS SI SI IIS
यमाता राज भ्रान सलगा

इसी के आधार पर गण आठ प्रकार के होते हैं—

सूत्र	गण	मात्राएँ
1. यमाता	यगण	ISS
2. मातारा	मगण	SSS
3. ताराज	तगण	SSI
4. राजभा	रगण	SIS
5. जभान	जगण	ISI

6. भानस	भगण	ऽ । ।
7. नसल	नगण	। । ।
8. सलगा	सगण	। । ऽ

वर्ण वृत्तों के ज्ञान के लिए इन्ही गणों का प्रयोग होता है। वहाँ लक्षण में गण शब्द बिना लगाये ही म स र इत्यादि गणों के पहले अक्षर बता दिए जाते हैं। इस प्रकार छन्दों का ज्ञान सांकेतिक शब्दों द्वारा हो जाता है।

छन्द के अन्तिम अक्षरों की समानता को तुक कहते हैं जिन छन्द के अन्त में तुक सदृश न हो तो उसे अतुकांत कहते हैं।

प्रश्न 15—छन्द की परिभाषा देते हुए छन्द के भेदों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—छन्द की परिभाषा इससे पूर्व के प्रश्न न० 14 में देखिए।

छन्दों के भेद—छन्दों के मुख्य रूप से दो भेद होते हैं—

(1) वर्ण वृत्त। (2) मात्रिक छन्द। एक तीसरा छन्द स्वच्छन्द छन्द भी माना गया है।

(1) **वर्ण वृत्त**—जहाँ प्रत्येक चरण में लघुवर्णों का क्रम और संख्या बराबर हो वह वार्णिक छन्द होता है। जैसे—

विगत है जल जात निशा हुयी,
धुति मयीवह पूर्व दिशा हुयी
छिप उलूक गये भय भीति से,
अब विकास करों तुम प्रीति से

यहाँ पहले चरण पर हम लघु गुरु चिन्ह लगायेंगे—

विगत	है	जल	जात	निशा	हुई
। । ।	ऽ	। ।	ऽ ।	। ऽ	। ऽ

तीन-तीन वर्णों को लेकर यदि गण बनालें तो ये गण इस प्रकार होंगे। गभ मर अर्थात् प्रत्येक चरण में नगण, भगण, मगण और रगण में चारों ही गण हैं यह वर्णवृत्त या वार्णि छन्द द्रुत विलम्बित हुआ।

(2) **मात्रिक छन्द**—जिन छन्दों के प्रत्येक चरण में वर्णों की संख्या और लघु गुरु का क्रम एक सा न हो, परन्तु मात्राओं की संख्या बराबर हो वह मात्रिक छन्द होता है।

जैसे—

सत संगति मुद मंगल मूला।
सोइ फल सिधि सब साधन फूला॥
सठ सुधरहिं सत संगति पाई।
पारस परस कुधातु सुहाई॥

यहाँ प्रत्येक चरण में लघु गुरु का क्रम एकसा नहीं है और वर्ण संख्या भी समान नहीं है, परन्तु प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ हैं। इसलिए यह मात्रिक छन्द है। मात्रिक छन्द के तीन भेद होते हैं—

1. **मात्रिक सम छन्द**—इनके चारों चरणों में बराबर मात्राएँ होती हैं।

जैसे—चौपाई, रोला इत्यादि।

2. **मात्रिक अर्द्धसम छन्द**—जिनके पहले और तीसरे चरण में मात्राएँ एकसी हों और दूसरे तथा चौथे चरण में एकसी वे मात्रिक अर्द्धसम छन्द कहलाते हैं। जैसे—दोहा, सोरठा आदि ।

3. **मात्रिक विषम छन्द**—जिन मात्रिक छन्दों के चरण चार से कम या अधिक हो अथवा तीन चरण एकसे हों और एक अलग ढंग का हो। वे मात्रिक विषम छन्द कहलाते हैं। जैसे—कुण्डलिया, छप्पय इत्यादि ।

स्वच्छन्द छन्द—जिस पद्य में वर्णों की मात्राओं की संख्या तथा गुरु लघु का क्रम न हो, कोई चरण बहुत छोटा और कोई बहुत लम्बा हो, परन्तु यदि ताल हो वह स्वच्छन्द छन्द होता है।

स्वच्छन्द छन्द का उदाहरण—

वह आता
दो टूक कलेजे के करता
पछताता पथपर आता
पेट और पीठ मिलकर दोनों हैं एक
चल रहा लकुटिया टेक
मुट्ठी भर दाने को
भूख मिटाने को
मुँह फटी झोलीका फैलाता
दो टूक कलेजे के करता,
पछताता पथ पर आता।

यह स्वच्छन्द छन्द आज की प्रयोगवादी कविता से आरम्भ हुआ, और आज तक भी यह कविता लेखकों के लिए लोक प्रिय बना हुआ है।

छन्द कविता का अनुशासन होते हैं। छन्दोबद्ध कविता पढ़ने में सरस और सहज होती है। परन्तु आज के युग में छन्दोंवद्ध कविताओं की मात्रा बहुत ही कम दिखायी देती है। जहाँ नये कवियों का प्रश्न है। वह छन्दों की ओर किसी प्रकार का ध्यान नहीं देते इसी कारण नयी कविता में अनगढ़ता लगती है उसका स्वरूप छन्दोबद्ध कविता के समान सरस और सुन्दर नहीं है। छन्दोबद्ध कविता उचित लय और गति को ध्यान में रख कर सुनाई जाए तो एकता और श्रोता दोनों को ही आनन्द की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 16—मात्रिक छन्द से आप क्या समझते हैं? दोहा, चौपाई, हरिगीतिका, छप्पय गीतिका, रोला, उल्लाला, छन्दों को उदाहरण सहित स्पष्ट करें।

उत्तर—जिन छन्दों के प्रत्येक चरण में वर्णों की संख्या और लघु-गुरु का क्रम एकसा न हो परन्तु मात्राओं की संख्या बराबर हो वह मात्रिक छन्द होते हैं। निम्नलिखित जिन छन्दों की विवेचना की जा रही है सभी मात्रिक छन्द हैं।

1. **दोहा**—दोहा के पहले और तीसरे चरण में तेरह-तेरह मात्राएँ और दूसरे तथा चौथे चरण में ग्यारह-ग्यारह मात्राएँ होती हैं। तुक दूसरे व चौथे चरण में मिलती हैं। दूसरे और चौथे चरण का अन्तिम वर्ण लघु होता है। दोहा मात्रिक अर्द्धसम जाति का छन्द है।

उदाहरण—

अधर धरत हरि के परत, ओंठ डीढि पट जोति।
हरित बाँस की बासुरी, इन्द्रधनुष रंग होति।

2. **चौपाई**—चौपाई के प्रत्येक चरण में 16 मात्राएँ होती हैं। चरण के अन्त में गुरु लघु (ऽ।) नहीं आने चाहिए। तुक प्रथम और द्वितीय चरण की तथा तृतीय और चतुर्थ चरण की आपस में मिलती है। इसमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि समकल (मात्रा) के पीछे समकल और विषम कल के पीछे विषमकल आएँ।

उदाहरण— सत संगति मुद मंगल मूला।
सोइ फल सिधि सब साधन फूला।
खल सुधरहिं सत संगति पाई।
पारस परस कुधातु सुहाई॥

3. **हरिगीतिका**—इसमें प्रत्येक चरण में 16 और बारह मात्राएँ होती हैं। विराम देने पर छन्द में अट्ठाईस मात्राएँ होती है। 16 और 12 मात्राओं पर यति होती है पादान्त में लघु गुरु आते हैं। इसके विषय में निम्न पंक्ति प्रसिद्ध हैं—

श्रृंगार (16) भूषण (12) अन्तलगि रचि, गाइए हरिगीतिका

उदाहरण—

मन जांहि राचेउ मिलहिं सो वरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधानु सुजानु शील सनेहु जानत रावरो॥
इहि भाँति गौरि असीस सुनि, सिय सहित हिय हरषित अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि-पुनि मुदित मन मन्दिर चली॥

4. **गीतिका**—'रत्न कवि कल धारिके लग अन्त रचिये गीतिका' 'गीतिका' नामक मात्रिक छन्द में चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण मे 26 मात्राएँ होती है। 14 तथा 12 मात्रा पर यति होती है। इस छन्द में प्रायः अन्त में रगण—ऽ।ऽ (गुरु-लघु-गुरू या ।ऽ आवश्यक है।'

उदाहरण—

"साधु भक्तों में सुयोगी, संयमी बढ़ने लगे।
सभ्यता की सीढियों पर सूरमा चढ़ने लगे।
वेद मन्त्रों को विवेकी प्रेम से पढ़ने लगे।
वंचकों की छातियों में शूल से गढ़ने लगे।"

5. **उल्लाला—**

'विषमनि पन्द्रह समनेरह, कल होवे उल्लाल में।

उल्लाला छन्द के पहले तीसरे चरण में 15-15 और दूसरे चौथे चरण में 13-13 मात्राएँ होती हैं। यह 28 मात्राओं का छन्द है।

उदाहरण— ।। ऽ। ऽ। ऽ ऽ। ऽ
उस मातृ भूमि की गोद में — 15 मात्रा
।। ऽऽ ।। ऽ।ऽ
जब पूरे सन जायेंगे। — 13 मात्रा
होकर भव बन्धन मुक्त हम
आत्म रूप बन जाएँगे।

छप्पय—

रोला के पद चार, मत्त चौबीस धारिये।
उल्लाला पद दोय, अन्त माहीं सुधारिये॥

छप्पय छन्द में पहले चार चरण तो रोला छन्द के (24-24) मात्रा वाले और फिर दो चरण उल्लाला छन्द के होते हैं।

उल्लाला दो चरणों को छप्पय में एक चरण गिना जाता है।

उदाहरण—

जिसकी रज में लोट लोट कर बड़े हुए हैं।
घुटनों के बल सरक-सरक कर खड़े हुए हैं।
परमहंस-सम बाल्यकाल में सब सुख पाये।
जिसके कारण धूल भरे हीरे कहलाए। (रोला)
हम खेले कूँदें हर्ष युत जिसकी प्यारी गोद में।
हे मातृभूमि ! तुझको निरख मग्न क्यों न हो मोद में॥ (उल्लाला)

रोला—रोला की चौबीस कला यति शंकर तेरह—24 मात्रा रोला छन्द के प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। 11 भाग तथा 13 भाग पर यति होती है।

उदाहरण—

ऽ ऽऽ ।। ।।। ऽ । ऽ । ऽ ।।। ऽ
हे देवों ! यह नियम, सृष्टि में सदा अटल है,
रह सकता है वही सुरक्षित जिसमें बल है
निर्बल का नहीं जगत में कहीं ठिकाना,
रक्षा साधन उसे प्राप्त हो चाहे नाना॥

प्रश्न 17—वार्णिक छन्द किसे कहते हैं ? द्रुत विलम्बित, बसन्त तिलका, शिखरिणी सवैया, कुण्डलिया मालिनी छन्दों को उदाहरण सहित स्पष्ट करें ?

उत्तर—जिन छन्दों में मात्राओं को न गिनकर 'नगण मगण' इत्यादि गणों को गिना जाता वह वर्णिक छन्द कहलाते हैं।

दुत विलम्बित—दुत विलम्बित छन्द न-भा-भ-रा।

द्रुत विलम्बित छन्द में नगण (।।।) दो भगण (ऽ।) और एक रगण होते हैं। इसमें प्रत्येक चरण में कुल 12 वर्ण होते हैं।

उदाहरण—

प्रबल जो तुममें पुरुषार्थ हो
सुलभ कौन तुम्हें न पदार्थ हो
प्रगति के पथ में विचरो उठो
भुवन में सुख शान्ति भरो उठो।

बसन्त तिलका—जानो बसन्त तिलका त-भ-जा ज गागा बसन्त तिलका छन्द में तगण, भगण, जगण और दो गुरू होते है इस छन्द के प्रत्येक छन्द में १४ वर्ण होते हैं। आठवें वर्णपर और पादान्त में यति होती है।

उदाहरण—

त भ ज ज ग ग
ऽ ऽ । ऽ ।।। ऽ ।। ऽ । ऽ ऽ
बातें बड़ी सरस थे कहते बिहारी
छोटे बड़े सकलका, हित चाहते थे।

अत्यन्त प्यार दिखला, मिलते सबों से,
वे थे सहायक बड़े दुख के दिनों में।

शिखरिणी—रसों रुद्रों छिन्ना, य-म-न-स-भ-ला-गा शिखरिणी छन्द में यगण, मगण-नगण- सगण, मगण, लधु और गुरू होते हैं। छः और ग्यारह वर्ण पर यति होती है। यह छन्द सत्रह अक्षर का होता है।

उदाहरण—

यगण मगण नगण सगण भगण ल.भ.

। S S S S S । । । । । S S । । । । S

सदा सच्चे साथी सकल जगके एक तुम हो।
तुम्ही को हे स्वामी ! सुकर भव-उद्धारकरना ॥
तुम्ही ने पायी है जय भय तथा क्रोध भर भी।
करो रक्षा भू की खग-मृग जनों की मनुज की ॥

मालिनी—न न मय य बनाओ मालिनी छन्द प्यारा

इस छन्द के प्रत्येक चरण में 15 वर्ण होते हैं। 8 या 7 पर यति होती है।

गण – नगण, नगण, मगण, यगण, यगण

प्रिय पतिमेरा प्राण प्यारा कहाँ है ?
दुख जल निधि डूबी का सहारा कहाँ है ?
लख मुख जिसका मैं आज लौं जी सकी हूँ।
वह हृदय हमारा नैन तारा कहाँ है।

सवैया—सवैया छन्द हिन्दी काव्य में अत्यन्त ही लोकप्रिय रहा है। थोड़े बहुत अन्तर के साथ इसके कई रूप होते हैं। (1) मदिरा सवैया (2) मत्तगयंदया मालती सवैया (3) सुन्दरी सवैया (4) किरीट सवैया (5) दुर्मिल सवैया (6) सुमुखी सवैया (7) उप-जाति सवैया। इन रूपों में थोड़ा बहुत अन्तर होता है।

मत्तगयन्द सवैया—सत मकार युग हो जब मत्तगयन्द क है तब ताको। अर्थात् मत्तगयन्द सवैया के प्रत्येक में सात भगण और दो गुरु मिलाकर 23 वर्ण होते हैं अर्थात् सात मकार मिलाकर दो गुरू गाने सवैया छन्द होता है।

"या लकुटी अरु कामरिया पर, राज तिहुँ पुर को तजि डारौं।
आठहुँ सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्द की गाय चराय बिसारौं।
रसखान कहै इन नैननि तैं, ब्रज के वन बाग तड़ाग निहारौं।
कोटिक हूँ कल धौत के धाम, करील के कुँजन ऊपर वारौं।"

कुण्डलियाँ—यह मात्रिक विषम छन्द है इसमें छः पद होते हैं इसमें आदि में एक दोहा रखा जाता है तथा उसके पश्चात् रोला छन्द रखा जाता है। इसके प्रत्येक पद में 24 मात्राएँ होती है तथा आदि और अन्त का पद एक जैसा होता है।

दोहे के अन्त के शब्द रोला के आरम्भ में और रोला, के अन्त के कुछ शब्द दोहे के आरम्भ में आते हैं।

कोई संगी नहिं उतै है इतही को संग
पंथी ! लेहु मिलि ताहि ते, सब सों सहित उमंग

सबसों सहित उमंग बैठि तरनी के माँही
नदिया नाव संयोग, फेरि यह मिलिहै नांही
बरनै दीन दयाल पार पुनि भेंट न होई
अपनी-अपनी गैल पथी जैह सब कोई।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—उपमा और प्रतीप में अन्तर स्पष्ट करें ?

उत्तर—उपमा प्रतीप अंलकार में उपमान को उपमेय के समान बतलाया जाता है और उपमा में उपमेय को उपमान के समान बतलाया जाता है।

उपमा—मुख मयंक सम मंजु मनोहर।

प्रतीप—यह मयंक सिय मुख समसुन्दर।

प्रश्न 2—रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकार में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—रूपक में उपमेय को उपमान का रूप दिया जाता है अर्थात् उपमेय को उपमान बना दिया जाता है। उत्प्रेक्षा में उपमेय में उपमान की कल्पना या सम्भावना की जाती है अर्थात् उपमेय को उपमान मान लिया जाता है।

रूपक—मुख चन्द्रमा है।

उत्प्रेक्षा—मुख मानो चन्द्रमा है।

प्रश्न 3—प्रतीप और व्यतिरेक में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—प्रतीप में उपमेय के सामने उपमान का तिरस्कार किया जाता है व्यतिरेक में उपमेय में उपमान की अपेक्षा अधिक बतलाई जाती है। व्यतिरेक के साथ प्रतीप प्रायः आ जाता है। उस अवस्था में तिरस्कार का कारण सूचित करता है।

प्रतीप—का सरवरि मुख देउ मयंकू।

व्यतिरेक—चाँद कलंकी, मुख मिकलंकू।

प्रश्न 4—भ्रान्तिमान और सन्देह अंलकार में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—सन्देह में अनिश्चय रहता है भ्रान्ति में झूठा निश्चय।

सन्देह में यह निश्चय नहीं हो पाता कि वस्तु कौन-सी है। परन्तु भ्रान्ति में निश्चय हो जाता है पर वह झूठा होता है सच्चा नहीं।

सन्देह—यह मुख है या चन्द्र है।

भ्रान्तिमान—यह चन्द्रमा है।

प्रश्न 5—भ्रान्तिमान अपह्नुति में अन्तर बताइए।

उत्तर—भ्रान्ति में वक्ता भ्रान्ति के कारण असत्य की स्थापना करता है।

अपह्नुति में वह जान बूझकर सत्य का निषेध और असत्य की स्थापना करता है।

प्रश्न 6—अपह्नुति एवं रूपक अंलकार में अन्तर को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर—अपह्नुति में निषेध और आरोप दोनों होते हैं।

रूपक में केवल आरोप होता है।

अपह्नुति—यह मुख नहीं चन्द्रमा है।

रूपक—यह (मुख) चन्द्रमा है।

प्रश्न 7—दृष्टान्त और निर्दशना अंलकारों के बीच का अन्तर है। उदाहरण सहित समझाइए ?

उत्तर— दृटान्त में दो कथन होते हैं जो मिलते जुलते होते हैं, ये दोनों कथन सर्वथा दो स्वतन्त्र वाक्यों में होते हैं।

निर्दशना में भी दो कथन होते हैं जो मिलते जुलते होते हैं, पर वे दो स्वतन्त्र वाक्यों में नहीं होते हैं। वे जो और सारे सर्वनामों के द्वारा एक ही वाक्य में मिला दिये जाते हैं। निर्दशना में कथन प्रायः असंभाव्य को लिए हुए होता है

दृष्टान्त—"सिव और रंग हि जिति सकै, और न राजा-राव।
हत्थि मत्य पर सिंह बिनु, आन न धालै घाव॥"

निर्दशना—जंग जीतन जे चहत हैं तो सों वैर बढ़ाइ।
जीवे की इच्छा करत कालकूट ते खाइ॥

प्रश्न 8—विरोधाभास, विभावना अंलकारों में क्या अन्तर है ?

उत्तर—साथ न रहने वाली वस्तुओं का साथ रहना विरोधाभास है कार्य कारण सम्बन्धी विरोध में विभावना अंलकार होता है।

प्रश्न 9—चौपाई में कितनी मात्राएँ और कितने चरण होते हैं ?

उत्तर—चौपाई में चार चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में 16-16 मात्राएँ होती थी।

प्रश्न 10—सोरठा और दोहा छन्द में क्या अन्तर है ?

उत्तर—यदि दोहे के सम चरण विषय चरणों के स्थान पर रख दिए जाए तो सोरठा छन्द बन जाता है।

प्रश्न 11—मात्रिक सम छन्द किसे कहते हैं ?

उत्तर—इनके चारों चरणों में बराबर मात्राएँ होती हैं। जैसे चौपाई, रोला इत्यादि।

प्रश्न 12—मात्रा किसे कहते हैं ?

उत्तर—एक मूल स्वर के उच्चारण में जितना समय लगता है उसे मात्रा कहते है।

प्रश्न 13—गणों की गिनती का सूत्र कौन-सा है ?

उत्तर—गणों की गिनती का सूत्र है—'यमाता राज भान, सलगा'

प्रश्न 14—मात्रिक छन्द और वर्ण वृन्त छन्दों में अन्तर स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर—मात्रिक छन्द में संख्याओं की गिनती होती है।

वार्णिक छन्दों में वर्गों की संख्या और लघु गुरु का क्रम एक सा होना चाहिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—'ओस बिन्दु चुग रही हंसिनी मोती उनको जाना' प्रस्तुत पंक्ति में कौन सा अंलकार है ?

(क) सन्देह (ख) भ्रान्तिमान
(ग) प्रतीप (घ) व्यतिरेक अर्थान्तर न्यास।

प्रश्न 2—'ये पलाश के पुष्प नहिं, ये जलते अंगार हैं।' पंक्ति में कौन-सा अलंकार है ?

(क) सन्देह, (ख) प्रतीप
(ग) अपह्नुति (घ) असंगति व विभावना।

प्रश्न 3—प्रस्तुत पंक्तियों में किस पंक्ति में उत्प्रेक्षा अलंकार है ?

(क) 'कंज विचारो ह्वै सकत सुधर न नैन समान ।'
(ख) 'संत हृदय नवनीत समाना'
(ग) 'अति कटु वचन कहति कैकेई, मानहु लोन जरे पर देई ।'
(घ) मंयक है श्याम बिना कलंक का
(च) चरन सरोज पखारन लागा ।

प्रश्न 4—रूपक अलंकार में—

(क) उपमेय को उपमान के सामने तिरस्कृत किया जाता है ।
(ख) उपमान को उपमेय पर आरोपित किया जाता है ।
(ग) उपमेय और उपमान की तुलना की जाती है ।
(घ) उपमेय की संभावना उपमान में की जाती है ।
(च) उपमेय को उपमान से अधिक उत्कृष्ट बताया जाता है ।

प्रश्न 5—'भूपति सोहत दान सो फल फूलन उद्यान'
प्रस्तुत पंक्ति में कौन अलंकार है ।

(क) अपह्नुति (ख) दीपक
(ग) उपमा (घ) रूपक ।
(च) उत्प्रेक्षा ।

प्रश्न 6—दोहा छन्द में कितनी मात्राएँ होती हैं ?

(क) दोनों चरणों में 13-13 (ख) 13 और 11
(ग) 11 और 13 (घ) प्रत्येक चरण में 16 मात्राएँ ।

प्रश्न 7—रोला छन्द में कितनी मात्राएँ होती हैं—

(क) 20 (ख) 24
(ग) 28 (घ) 16
(च) 30 ।

प्रश्न 8—रोला और उल्लाला से मिलकर कौन-सा छन्द बनता है ?

(क) हरि गीतिका (ख) गीतिका
(ग) चौपाई (घ) छप्पय
(च) द्रुत विलम्बित ।

प्रश्न 9—दिवस का अवसान समीप था,
गगन कुछ लोहित हो चला ।
तरु शिखा पर थी राजती
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा ।

उक्त पंक्तियों में कौन-सा छन्द है ?

(क) सवैया (ख) बसन्त तिलका
(ग) छप्पय (घ) गीतिका
(च) द्रुत विलम्बित ।

प्रश्न 10—या लकुटी अरु कमरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौ,
आठहू सिद्धि नवौ निधी को सुख नन्द की गाय चराय बिसारौ ।

प्रस्तुत पक्तियों में कौन-सा छन्द है ।

(क) मालिनी (ख) गीतिका
(ग) छप्पय (घ) सवैया
(च) शिखरिणी ।

प्रश्न 11—सोलह और बारह मात्राएँ किस छन्द के चरणों में होती हैं ?

(क) गीतिका (ख) हरिगीतिका
(ग) रोला (घ) छप्पय
(च) शिखरिणी ।

प्रश्न 12—मेरी भव बाधा हरो, राधा नागरि सोई ।
ता तन की झाई परें, स्याम हरित दुति होई ।

प्रस्तुत पंक्तियों में कौन-सा छन्द है ।

(क) सोरठा (ख) उल्लाला
(ग) दोहा (घ) चौपाई
(च) रोला ।

प्रश्न 13—सिन्धु सा विस्तृत और अथाह एक निर्वासित का उत्साह प्रस्तुत पंक्ति में कौन-सा अलंकार है ।

(क) उपमा (ख) उत्प्रेक्षा
(ग) रूपक (घ) अनुप्रास ।

प्रश्न 14—"यह प्रेम को पंथ कराल महा
तरवार की धार पै धावनों है ।"

प्रस्तुत पंक्ति में कौन-सा अंलकार है ?

(क) निर्दशना (ख) विभावना
(ग) अंसगति (घ) प्रतीप
(च) व्यतिरेक ।

प्रश्न 15—'प्यास मिटी पानी बिना मोहन को मुख देखि ।'

उक्त पंक्ति में कौन से अंलकार है ?

(क) व्यतिरेक (ख) विरोधाभास
(ग) अंसगति (घ) विभावना
(च) अतिश्योक्ति ।

उत्तरमाला

(1) ख (2) ग (3) ग (4) ख (5) ख (6) ख (7) ख (8) घ (9) च (10) घ (11) ख (12) ग (13) क (14) क (15) घ ।

हिन्दी साहित्य का इतिहास

प्रश्न 1—आदि कालीन काव्य की प्रमुख विशेषताएँ बताइए ?

अथवा

हिन्दी साहित्य के आदिकालीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए ।

उत्तर—हिन्दी साहित्य का आदिकाल अनेक विरोधी तर्कों से भरा हुआ है । चाहे वह नामकरण को लेकर विवाद हो या समय को लेकर । चारण साहित्य की अधिकता होने के कारण कुछ विद्वानों ने इसे चरण काल के नाम से अभिहित किया तो वीर काव्य की अधिकता को देखते हुए राम चन्द्र शुक्ल ने वीर गाथा काल के नाम से अभिहित किया । हिन्दी साहित्य का यह प्रारम्भिक काल था इसलिए इसे आदिकाल के नाम पुकारना अधिक समाचीन है । इसमें सभी तरह का साहित्य आ जाता है आदिकालीन साहित्य की जो मुख्य प्रवृतियाँ देखने को मिलती हैं वे इस प्रकार हैं—

(1) **आश्रय दाताओं का अतिश्योक्ति पूर्ण बर्णन**—इस काल के कवियों के काव्य का लक्ष्य अपने आश्रयदाताओं को बढ़ा-चढ़ाकर प्रशंसा करना था, ऐसा करके वे अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने की चेष्टा करते थे । इस कारण यह था कि ऐसा करने पर उन्हें पुरस्कार मिलता था ।

(2) **युद्धों का सजीव वर्णन**—आदिकालीन काव्य की यह भी प्रवृत्ति मिलती है कि उनके काव्य में युद्धों का सजीव वर्णन मिलता है । उस समय भारत छोटे राज्यों में बंटा हुआ था और ये राज्य आपस में वैमनस्य की भावना रखते थे । युद्धों में से राजा सदैव व्यस्त रहते । आश्रय में पलने वाले कवियों का धर्म वीरों को उत्साहित करना था ऐसा करने के लिए वह कभी-कभी अति रंजित वर्णन भी करते थे । कुछ कवि तो अपने आश्रयदाताओं के साथ युद्ध भूमि में भी जाते थे । उदाहरणार्थ—चन्द वरदायी पृथ्वीराज चौहान के साथ अधिकतर युद्धों में जाते थे यही कारण है कि उस काल के काव्य में युद्धों का सजीव वर्णन मिलता है । क्योंकि जैसा वे आँखों से देखते थे वैसा ही वर्णन काव्य में अपनी लेखनी द्वारा कर देते थे ।

(3) **व्यापक राष्ट्रीयता का अभाव**—आदिकालीन कवि जिस आश्रयदाता के राज्य में रहते थे उसे ही अपना राष्ट्र मानते थे । वे बहुत सीमित क्षेत्र को भी अपने राष्ट्र की संज्ञा देते थे । वे उसी के हित के विषय में सोचा करते थे । अजमेर और दिल्ली के राज कवि को कन्नौज अथवा कालिजर के राज्य के उत्कर्ष अपकर्ष से कोई वास्ता नहीं था ।

(4) **वीर एवं शृंगार रस का सुन्दर समन्वय**—आदिकालीन काव्य में वीर और शृंगार रस का सुन्दर समन्वय हुआ है । अधिकतर युद्धों के पीछे किसी न किसी राजकुमारी का कारण होता था । अत: आश्रित कवियों ने या तो अपने आश्रयदाता की वीरता का वर्णन बढ़ा-चढ़ाकर किया है । या उसके प्रेम का यही कारण है कि इन कवियों के काव्य में शृंगार व वीर रस को ही प्रधानता मिली है ।

(5) **ऐतिहासिकता की अपेक्षा कल्पना का अधिक प्रयोग**—आदिकालीन साहित्य ऐतिहासिकता की अपेक्षा कल्पना का निर्वाह अधिक हुआ है। दरबारी कवि अपने आश्रय दाता के शौर्यपूर्ण वर्णन के लिए उनका युद्ध ऐसे राजाओं से भी बता देते थे, जो उनके समकालीन भी नहीं थे। ऐतिहासिकता के अभाव के कारण उनकी रचनाएँ अप्रमाणिक घोषित कर दी जाती है। पृथ्वीराज रासो को प्रमाणिक व अप्रमाणिक मानने का विवाद इसी कारण है।

(6) **वर्णनात्मकता की प्रधानता**—आदिकालीन कवियों के काव्य में वर्णनात्मकता की प्रधानता है। उनके काव्य में युद्धों का वर्णन जो हमें देखने को मिलता है वह ऐसा है है कि पढ़ते समय हमारे सामने चित्रित हो उठता है जैसे हमारी आँखों के सामने वह घटना घट रही हो। इसी प्रकार शृंगार वर्णनों में वर्णनात्मकता की प्रधानता देखने को मिलती है। इनके वर्णन के क्षेत्र में नायिका का नख-शिख सौन्दर्य वर्णन उसके रहने के स्थान हाव भाव आदि का वर्णन तथा युद्ध क्षेत्र का वर्णन रहे हैं।

(7) **चरित्र काव्य लिखने की प्रधानता**—जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि इस काल के कवि किसी राजा के आश्रय में रहते थे, अतः वह अपने राजा को नायक के रूप में रखकर उसके चरित्र पर ही पूरा काव्य लिख देते थे। वीसलदेव रासो, पृथ्वीराज रासो, पदम चरिउ, आदि इसके उदाहरण है। इन चरित काव्यों में राजा के शौर्य और प्रेम का अद्भुत सामञ्जस्य रहता था।

(8) **लोक भाषा में काव्य रचना की प्रवृत्ति**—आदिकालीन कवियों ने अपने काव्य रचना में अधिक लोक प्रचलित भाषा का प्रयोग किया है। राजस्थान के कवियों का जो हमें काव्य मिलता है उसकी रचना डिंगल भाषा, जोकि उस समय साहित्यिक राजस्थानी थी हुई थी। इसके अतिरिक्त, मैथिली, अपभ्रंश, पालि, संस्कृत आदि भाषाओं की रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं। अमीर खुसरो ने उस समय अपनी रचनाओं में खड़ी बोली हिन्दी का भी प्रयोग किया है।

(9) **मनोरंजक साहित्य लिखने की प्रवृत्ति**—आदिकालीन कवियों के काव्य में मनोरंजन साहित्य की अधिकता मिलती। उनका कार्य अपने आश्रयदाता और प्रजा का मन रंजन करना होता था अतः उनकी रचनाओं का मूल उद्देश्य मनोरंजन साहित्य लिखना था यही कारण है कि उनके युद्ध प्रेम आदि के वर्णन कहीं कहीं पर इतने अतिश्योक्ति पूर्ण हो गये हैं कि वह हास्यास्पद लगते हैं।

(10) **उपदेशात्मक एवं धार्मिक काव्य लिखने की प्रवृत्ति**—चारण काव्य के अतिरिक्त अन्य काव्य रचनाएँ जो हमें आदिकाल की प्राप्ति हुई है। उसमें उपदेशात्मकता एवं धार्मिकता की भावना पाई जाती है। रासोकाव्य में भी उपदेशात्मकता के दर्शन होते हैं। उदाहरण के लिए पृथ्वीराज रासो में कयमास के वध कर देने पर कवि चन्दवरदायी ने पृथ्वीराज को प्रताड़ित भी किया है और उसे आगे ऐसा न करने की चेतावनी भी दी है।

आदिकालीन साहित्य में जो अपभ्रंश का साहित्य हमें मिलता है उसमें धार्मिक रचनाओं की प्रधानता मिलती है। उदाहरणार्थ—परमात्म प्रकाश, बौद्ध गान दोहा इत्यादि इसके उदाहरण हैं। :पाहुड़ दोहा जो कि अपभ्रंश की कृति है इसमें रहस्यवादी प्रवृत्ति के भी दर्शन होते हैं।

अमीर खुसरो की मुकरियों और पहेलियों में भी उपदेशों की झलक मिलती है।

(11) **छन्द एवं अलंकारों की विविधता**—आदिकालीन साहित्य में छन्दों एवं अलंकारों की विविधता देखने को मिलती है। आदिकालीन साहित्य में अधिकाशतः छप्पय,

रोला, दोहा, तोटक, गाथा, उल्लाला आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है। चन्दवरदायी ने तो पृथ्वीराज रासो में अनेक छन्दों का प्रयोग किया, जिससे उनका रासो छन्दों का अजायबघर सा प्रतीत होता है। रासो के छन्द जब बदलते हैं तो श्रोता के चित्त में प्रसंगानुकूल कम्पन्न उत्पन्न कर देते हैं।

आदिकालीन साहित्य में अलंकारों का प्रयोग चमत्कार प्रदर्शन के लिए किया गया है। कहीं-कहीं अलंकार अपने सहज रूप में व्यक्त हुए हैं परन्तु कहीं-कहीं तो वे बोझिल प्रतीत होते हैं।

(12) **श्रृंगार एवं वीर के अतिरिक्त अन्य रसों का वर्णन**—आदिकालीन साहित्य में श्रृंगार और वीर रस के अतिरिक्त, वीभत्सरस, भयानक रस, शान्त रस, करुण रस आदि का भी परिपाक हुआ है। युद्ध वर्णनों में रौद्र, वीभत्स तथा अद्भुत युद्ध के परिणाम में निराशाजन्य निर्वेद की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।

आदिकालीन साहित्य जैसाकि नाम से विदित होता है। सारी काव्य परम्पराओं का प्रारम्भिक काल था। आदिकाल को हिन्दी साहित्य का बाल्यकाल कहा जाता है जिसमें अनेक प्रवृत्तियाँ तो उत्पन्न हुई पर वह समृद्ध हुयीं आगे के साहित्य में जाकर। अतः आदिकाल हिन्दी साहित्य का आरम्भ था, तब से यह साहित्यिक परम्परा आरम्भ होकर अब अपने प्रौढ़ रूप में पहुँच गयी है।

प्रश्न 2—'आदिकाल को अनेक विद्वानों ने अलग-अलग नामों से प्रस्तुत किया है' इस कथन की पुष्टि कीजिए।

उत्तर—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 1050 से 1375 के जिस काल को वीरगाथा काल नाम दिया है, वह काल अनेक विवादास्पद भ्रान्तियों से घिरा है। इस काल का नामकरण अत्यधिक विवादग्रस्त थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने साहित्यिक प्रवृत्तियों की बहुलता के आधार पर इस काल को वीरगाथा काल की संज्ञा प्रदान की। किन्तु वर्तमान शोधों एवं नवीन कृतियों के प्रकाश में आ जाने और अपभ्रंश भाषा की कृतियों का सम्यक मूल्यांकन हो जाने के पश्चात् आचार्य शुक्ल द्वारा प्रतिस्थापित इस काल का नामकरण निश्चय ही उचित एवं संगत प्रतीत नहीं होता है।

आचार्य शुक्ल द्वारा प्रतिस्थापित 'वीरगाथा काल' इस काल को भिन्न-भिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न नाम दिए हैं। अपने मत को प्रतिस्थापित करने का प्रयत्न भी किया है।

(1) **चारण काल**— डा० रामकुमार वर्मा ने इस काल में चारण या भाटों द्वारा रचित रचनाओं का आधिक्य देखकर इस काल को चारण काल के नाम से अभिहित किया है।

(2) **सिद्ध सामन्त युग**—पण्डित राहुल सांकृत्यायन 8 वीं से 12 वीं सदी तक की साहित्यिक सामग्री में मुख्यतः दो तत्व हैं सिद्धों की वाणी और सामन्तों की स्तुति, अतः इस आधार पर इन्होंने इस काल को सिद्ध सामन्त युग कहा है। सांकृत्यायन जी ने अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी मानकर सिद्धों और नाथों द्वारा अपभ्रंश में रचित सभी रचनाओं को हिन्दी में स्वीकार कर लिया है।

(3) **बीज वपन काल**—आदि काल हिन्दी साहित्य का अंकुरित काल था। अनेक प्रकार की साहित्यिक प्रवृत्तियों ने इस काल में जन्म लिया। यह प्रवृत्तियाँ इस काल में अंकुरित ही हुयीं थीं। उनको विकास प्राप्त नहीं हुआ था। इस काल की इसी विशेषता को देखकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इस काल को बीज वपन काल कहा।

समीक्षा—उपर्युक्त चारों नामकरण क्रमशः वीरगाथा काल, चारण काल सिद्ध-सामन्त काल तथा बीज वपन काल में एक त्रुटि पायी जाती है वह यह कि इन नामों में समूचे काल के साहित्य की प्रवृत्तियों का पूरा बोध नहीं होता है। उदाहरणार्थ—वीसल देव रासो तथा विद्यापति की पदावली आदि अत्यन्त श्रृंगारिक रचनाएँ इन नामों की सीमा में नहीं आपाती अतः उपर्युक्त नामकरण असंगत प्रतीत होते हैं क्योंकि उनसे तत्कालीन प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति नहीं होती।

(4) **आदिकाल**—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस काल को आदिकाल की संज्ञा प्रदान की है। सन् 1952 में बिहार राष्ट्र भाषा परिषद में द्विवेदी जी ने इसको आदिकाल नाम दिया है पर यह नाम एक भ्रामक आदि भावना को व्यक्त करने वाला था। आगे चल-कर द्विवेदी जी ने स्वयं इसका खण्डन करते हुए कहा है—"वस्तुतः हिन्दी का आदि काल शब्द एक प्रकार की भ्रामक धारणा की सृष्टि करता है और श्रोता के चित्त में सदा यह भाव उत्पन्न करता है कि यह काल कोई आदिम मनोभावापन्न, परम्पराविनिर्युक्त, काव्य रूढ़ियों से अछूते साहित्य का काल है।"

(5) **प्रारम्भिक काल**—डा० गणपति चन्द्र गुप्त आदि विद्वानों ने इस काल को प्रारम्भिक काल के नाम से अभिहित किया। आदिकाल के विरोध में यह लोग लिखते हैं। "10 वीं शताब्दी से 14 वीं शताब्दी तक की रचित अपभ्रंश की शताधिक प्रामाणिक रचनाएँ व अपभ्रंश के शिलालेख तथा हिन्दी की एक भी प्रामाणिक रचना का अभाव यही सिद्ध करता है कि जिसे हम हिन्दी का आदिकाल कहने का लोभ कर रहे हैं, वह वस्तुतः अपभ्रंश का प्रौढ़ काल है। आचार्य द्विवेदी की जिन अज्ञात नाम कृतियों की खोजने की चिन्ता में उलझे हुए हैं; वस्तुतः वे कभी निर्मित हुई ही नहीं।" अनेकों विद्वानों ने इस नाम-करण का समर्पण किया है।

निस्सन्देह यही नाम सर्वाधिक उपयुक्त और समीचीन प्रतीत होता है। क्योंकि इसी काल में हमें हिन्दी भाषा और साहित्य का प्रारम्भ देखने को मिल जाता है। साहित्यिक प्रवृत्तियों की दृष्टि से तो यह काल अपभ्रंश साहित्य का परिष्कृत रूप ही है पर भाषा की दृष्टि से निश्चय ही यह प्रारम्भिक काल है।

प्रश्न 3—रासो शब्द से क्या अभिप्राय है ? हिन्दी साहित्य के प्रारम्भिक काल की प्रतिनिधि रचनाओं का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—हिन्दी साहित्य के आदिकाल या प्रारम्भिक काल में हमें रासो ग्रन्थों की परम्परा मिलती है। रासो शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में विद्वानों में बहुत मतभेद है। विद्वानों ने इसकी व्युत्पत्ति—रहस्य, रसायण, रास, राजसूय, राजयश, रासक और रासत्र से मानी है।

(1) **रहस्य से**—रासो की व्युत्पत्ति रहस्य से मानने वालों में उदयपुर के कविराज श्यामल दास तथा डा० काशी प्रसाद जायसवाल प्रमुख हैं।

(2) **रसायण से**—रसायण से रासो शब्द की व्युत्पत्ति मानने वालों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल प्रमुख हैं।

(3) **रास से**—रासो की व्युत्पत्ति रास से मानने वालों में काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो के सम्पादक पंडित नन्द दुलारे बाजपेयी हैं। डाक्टर दशरथ शर्मा का मत है कि रासो मूलतः गान युक्त नृत्य विशेष था। जो कालान्तर में विकसित होते होते पुनः वीररस युक्त पदात्मक प्रबन्ध काव्य के रूप में परिणत हो गया। ब्रजभूमि मे राधाकृष्ण के नृत्य अभिनय को भी रास की संज्ञा दी जाती है।

(4) **रासक से**—चन्द्रवली पाण्डेय, पंडित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी, रासो की व्युत्पत्ति रासक से मानते हैं। मूल रूप में यह अभिनय कृतियाँ थीं जो कालान्तर में अपने अभिनेय के रूप को त्यागकर मात्र चरित काव्य रह गयीं।

(5) **राजसूय से**—गासी द तासी के मत में रासो राजसूय या राजसूर्य से व्युत्पन्न हुआ है।

(6) **राज यश से**—डा० हरप्रसाद शास्त्री रासो राजयश से मानते हैं।

(7) **रासा से**—ब्रज भाषा के रासा जिसका अर्थ झगड़ा होता है। से भी कतिपय विद्वान रासा की व्युत्पत्ति मानते हैं मूल रूप में ग्रन्थों में लड़ाई झगड़ों का बाहुल्य होने के कारण इन्हें यह नाम प्राप्त हुआ है।

उपर्युक्त इन मतों से एक सामान्यध्वनि यह निकलती है कि 'रासो' शब्द किसी एक ऐसी घटना के लिए प्रयुक्त होता आया है जो ऐतिहासिक महत्व रखती हो और ओज एवं शौर्य से परिपूर्ण हो। इनसे भी अधिक इन में युद्धों का सजीव वर्णन हुआ हो।

प्रारम्भिक काल में अनेक ग्रन्थों की रचना की गयी उनमें से प्रमुख प्रतिनिधि ग्रन्थ निम्नलिखित हैं—

1. **सन्देश रासक**—इसके रचियता अब्दुल रहमान है। यह वियोग श्रृंगार की रचना है। इसकी प्राप्ति से विद्वानों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा प्रति स्थापित वीर गाथा काल का नामकरण सन्देहास्पद हो गया है। यह 10 वीं शताब्दी की अपभ्रंश की रचना है।

2. **पउम चरिउ**—इसके रचयिता स्वयंभू कवि माने जाते हैं। यह अपभ्रंश भाषा में रचित 14वीं शताब्दी की रचना है। यह उच्चकोटि की साहित्यिक कृति है तथा इससे हिन्दी की प्रारम्भिक कालीन प्रवृत्तियों के समझने में सहायता प्राप्त होती है।

3. **भविस्सयत्त कहा**—इसके रचयिता धनपाल कवि है। यह अपभ्रंश भाषा में रचित 14वीं शताब्दी की रचना है यह उच्चकोटि की साहित्यिक कृति है तथा इससे हिन्दी की प्रारम्भिक कालीन प्रवृत्तियों को समझने में सहायता मिलती है।

4. **परमात्म प्रकाश**—यह भी अपभ्रंश की एक अध्यात्म प्रधान रचना है। इसके कवि जोइन्दू हैं।

5. **पाहुड़ दोहा**—यह भी अपभ्रंश भाषा की कृति है इस में रहस्यवादी प्रवृत्ति का चित्रण हुआ है। इसके रचयिता मुनि रामसिंह है।

6. **बौद्ध गान दोहा**—सरहपा कन्हपा आदि सिद्धों की देशी भाषाओं की रचनाओं को महामहोपाध्याय पंडित हरप्रसाद शास्त्री ने बौद्धगान दोहा शीर्षक से संकलित किया है।

7. **प्राकृत पैङ्गलम**—यह एक प्रामाणिक कृति है। इसके संकलनकर्त्ता लक्ष्मीधर है। इसमें हमें परवर्ती रासो साहित्य का मूल स्वरूप दृष्टिगोचर होता है।

8. **पृथ्वीराज रासो**—इसके रचनाकार महाकवि चन्द वरदायी है यह एक अर्द्ध प्रामाणिक रचना है। इसकी ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में विद्वानों में अत्यधिक मतभेद है।

9. **परमाल रासो**—यह आल्हा खण्ड का मूल रूप माना जाता है। यह कृतिपूर्णतः लोक काव्य का रूप लेकर प्रकट हुयी है। इसके रचियता कवि जगनिक हैं।

10. **विद्यापति की पदावली**—यह कृति मैथिल कोकिल विद्यापति द्वारा रचित है। यह मैथिली हिन्दी की सरस, सरल, श्रृंगार एवं व्यक्ति परक रचना है।

11. **कीर्ति पताका**—यह भी विद्यापति द्वारा रचित मैथली हिन्दी की कृति है। इसमें प्रेम विषयक कविता है। यह एक चरित काव्य है।

12. **कीर्तिलता**—यह भी विद्यापति द्वारा रचित अपभ्रंश की रचना है जिसमें कवि ने आश्रयदाता राजा कीर्तिसिंह की कीर्ति का गुणगान किया है। यत्र तत्र युद्ध वर्णनों में वीरत्व का सुन्दर स्वर मुखरित हुआ है।

13. **हेमचन्द्र के व्याकरण में उद्धृत अपभ्रंश के फुटकर दोहे**—ये दोहे 11वीं शती तक के हैं। इन दोहों में नीति, वीर एवं शृंगार आदि का वर्णन मिलता है। इसमें वीर रस की दर्पपूर्ण उक्तियाँ हैं तो शृंगार की सरस उक्तियाँ भी।

14. **अमीर खुसरो का काव्य**—अमीर खुसरो ने सम्वत् 1340 के आस-पास मनोरंजक साहित्य की रचना की। इन्होंने जिन मुकरियों और पहेलियों की रचना की है वह काफी लोकप्रिय हुयीं।

15. **बीसल देव रासो**—नरपत नाल्ह द्वारा रचित यह 100 पृष्ठों का एक छोटा सा ग्रन्थ है। यह वीर गीतों के रूप में है। यह एक प्राभाणिक कृति है इसका रचनाकाल सम्वत् 1212 वि० माना जाता है।

प्रश्न 4—रासो शब्द की व्युत्पत्ति बताते हुए उसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—इस प्रश्न के प्रथम खण्ड के उत्तर के लिए देखें प्रश्न संख्या 3 का प्रथम खण्ड तथा प्रश्न नं० 1

प्रश्न 5—हिन्दी साहित्य के प्रारम्भिक काल की समकालीन परिस्थितियों का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—साहित्य लोक चेतना का संवाहक होता है, और लोक चेतना युग विशेष की राजनीति धर्म दर्शन समाज और संस्कृति से सम्बन्धित होती है। अतः किसी काल के साहित्य के मूल्यांकन के लिए उसकी राजनैतिक, धार्मिक सामाजिक, साहित्यिक एवं भाषागत पृष्ठ भूमि से अवगत होना आवश्यक है।

राजनैतिक स्थिति—10वीं शताब्दी का वीर सामन्त युग था। इस समय भारत छोटे छोटे राज्यों से विभक्त था और यह राजा आपस में लड़ते झगड़ते रहते थे। वे परस्पर द्वेष व ईर्ष्या के कारण आपस में ही विघटित हो रहे थे। पारस्परिक संघर्षों की अग्नि में झुलसा हुआ यह देश मुसलमानों के आक्रमण का प्रयुत्तर देने में असमर्थ था। दिल्ली और अजमेर पर पृथ्वीराज चौहान का राज्य था। कन्नौज में जयसिंह का राज्य था। गुजरात में गुर्जर राजा भीमदेव का राज्य था। इन राजाओं के पारस्परिक बैर ने भारत को विदेशियों के हाथ सौंप दिया था। कन्नौज के राजा जयचन्द ने पृथ्वीराज चौहान से बदला लेने की नीयत के मुहम्मद गोरी के आक्रमण करने के लिए आमंत्रित किया था। इस प्रकार उत्तर भारत की राजनैतिक अवस्था केन्द्रीय सुदृढ़ शासन व्यवस्था के अभाव में छिन्न भिन्न व शिथिल थी। राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने वाली चेतना लुप्त थी।

उपर्युक्त विषम परिस्थिति में जनता का एक ऐसा वर्ण था। जो साहस और वीरता के साथ लड़ कर भी जीतना चाहता था। एक दूसरा वर्ग इस विनाश की लीला से क्षुब्ध लेकर वैराग्य की बातें सोचने में लगा था, एक तीसरा वर्ग ऐसा भी था जो मरते दम तक जीवन का रस भोग लेना चाहता था इस विचित्र मनःस्थिति के फलस्वरूप ही इस काल से साहित्य में एक ओर स्त्री भोग, हठयोग से लेकर और आध्यात्मिक पलायन और उपदेशों तक का साहित्य लिखा गया और दूसरी ओर ईश्वर की लोक कल्याण कारी सत्ता में विश्वास करने, लड़ते लड़ते जीने और संसार को सरस बनाने की भावना भी साहित्य रचना के मूल में सन्निहित हुयी। उस समय में जो कवि धार्मिक भावना से अनुप्राणित थे। वे ही किसी की परवाह किए बिना काव्य साधना करते थे, किन्तु जो

कवि राज्याश्रित हो जाते थे उन्हें अपने राजा को प्रसन्न करने के लिए काव्य रचना करनी पड़ती थी। धर्म और राज्याश्रय से मुक्त रह कर कविता करने वाले कवियों की प्रतिभा के विकास के लिए उचित वातावरण नहीं था।

धार्मिक स्थिति—वीरगाथा काल के समय में धार्मिक स्थिति भी बड़ी शोचनीय थी। समाज में अनेकानेक धर्म सम्प्रदाय फैल गये थे। धार्मिक अनुष्ठान उस समय की जनता को प्रेरणा देने के स्थान पर गुमराह अधिक करते थे। धर्मों में पारस्परिक विद्वेष और प्रतिद्वन्द्विता बढ़ी हुयी थी। उस समय बौद्ध धर्म का प्रायः पतन हो चुका था। वह सिद्ध और नाथ पंथ के रूप में विकृत होकर उत्तर पश्चिम में फैल चुका था इन लोगों ने अपनी साधना में विलास की भावना की व्यवस्था कर दी थी, यह लोग साधना पर अधिक बल देते थे। वे अपनी साधनात्मक प्रक्रियाओं को अधिकतर गुप्त रखते थे। हिन्दू धर्म में भी शैव शाक्त एवं वैष्णव सम्प्रदायों का उदय हो चुका था जो क्रमशः शिव, विष्णु एवं शक्ति के उपासक थे। इन सम्प्रदायों में परस्पर कोई सामंजस्य नहीं था।

इस प्रकार इस काल की धार्मिक परिस्थिति अत्यन्त विषम और संकुल थी। जन-मानस पर गहरा असन्तोष क्षोभ तथा भ्रम छाया हुआ था या कवियों ने इसी मानसिक स्थिति के अनुरूप खण्डन मण्डन, हठयोग वीरता और श्रृंगार का साहित्य लिखा।

सामाजिक परिस्थिति—इस काल की सामाजिक स्थिति बड़ी अस्त-व्यस्त थी इस काल का समाज विभिन्न जातियों में पूरी तरह से बटा हुआ था। सामाजिक रीति रिवाज और विधि विधानों का कट्टरता के साथ पालन होता था। समाज की संगठन शक्ति नष्ट-भ्रष्ट हो गयी थी इस समय बौद्ध एवं जैन मतानुयायियों ने समाज सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत अस्पृश्य और नीच कही जाने वाली जातियों को अपनाने का आन्दोलन चलाया था। उस समय के समाज में नारी की स्थिति अत्यन्त दीन हीन थी, वह पुरुषवर्ग के लिए भोग्या रह गई थी। इस रूप में वह क्रय विक्रय एवं अपहरण की वस्तु बनती जा रही थी। सती प्रथा तथा बाल-विवाह, बहु विवाह आदि कुरीतियाँ भी प्रचलित थी। आंतरिक युद्ध का कारण भी कोई न कोई सुन्दरी होती थी।

सामाजिक परिस्थिति की इस विषमता में भारतीय जनता भाव के स्तर पर शान्ति और सांत्वना प्रदायक विचारों की तृषा से आतुर थी। हिन्दी के तत्कालीन कवियों ने युगानुरूप काव्य रचना करके युगधर्म का निर्वाह किया।

साहित्यिक एवं भाषागत रूप—इस समय साहित्य रचना की तीन धाराएँ हो रही थीं—

(1) **परम्परागत संस्कृत साहित्य की धारा**—नवीं से ग्यारहवीं शताब्दी तक कन्नौज और कश्मीर संस्कृत साहित्य की रचना के केन्द्र रहे। आनन्दवर्धन, अभिनव गुप्त, कुन्तक क्षेमेन्द्र, भोजदेव, मम्मट, राजशेखर तथा विश्वनाथ प्रभृति काव्य शास्त्री आचार्य शंकर, कुमारिल भट्ट, भास्कर तथा रामानुज प्रभृति दार्शनिक मनीषी, भवभूति श्री हर्ष तथा जयदेव प्रवृति कवि नाटककार इस अवधि की देन हैं।

(2) **प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य की धारा**—इस युग में प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा का भी उच्च कोटि के साहित्य की रचना होने लगी थी जैनाचार्यों ने मध्य देश के पश्चिमी सीमान्त क्षेत्र में रहकर संस्कृत पुराणों को नये रूप में प्रस्तुत करना आरम्भ कर दिया था राजशेखर की कपूर मंजरी, अमरूक का अमरु शतक तथा हाल की आर्या शप्तशती अपभ्रंश की उत्तम कृतियाँ हैं।

(3) **हिन्दी भाषा साहित्य**—इस काल में सिद्धों ने अपभ्रंश के साथ ही साथ लोक

भाषा हिन्दी का प्रयोग भी आरम्भ कर दिया था उनकी तथा परवर्ती चारण कवियों की रचनायें इसके अन्तंगत हैं।

इन तीन धाराओं में संस्कृत ने राज्याश्रय की भाषा का रूप ले लिया था। इस भाषा के लेखक युग की परिस्थितियों से सर्वथा अनभिज्ञ रहकर काव्य और शास्त्र के विनोद में अपनी प्रतिभा का उपयोग कर रहे थे। प्राकृत धर्म भाषा बन चुकी थी। इसके लेखक धर्म प्रचार में लगे हुए थे साहित्य तत्व तो उनकी रचनाओं का सहायक और गौण अंग थे। केवल हिन्दी ही उस समय ऐसी लोक भाषा थी जिसमें तत्कालीन परिस्थितियों की प्रतिक्रिया प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से मुखर हो रही थीं।

इस प्रकार आदिकाल से हिन्दी साहित्य के सामान्तर यद्यपि संस्कृत और अपभ्रंश साहित्य की भी रचना हो रही थी तथापि केवल अपभ्रंश साहित्य का ही सामान्य जनता और कवियों पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ रहा था। शुक्लजी ने अपभ्रंश काल के अन्तर्गत अपभ्रंश और हिन्दी साहित्य दोनों की रचनायें सम्मिलित करली हैं। नवीन खोजों ने यह सिद्ध कर दिया है कि उनमें से कुछ रचनाएँ आरम्भिक हिन्दी साहित्य के अन्तंगत और शेष अपभ्रंश साहित्य के अन्तर्गत आती हैं।

प्रश्न 6 —सिद्ध एवं नाथ सम्प्रदायों की हिन्दी साहित्य को क्या देन थी ? विवेचित कीजिए ?

उत्तर—सिद्धों और नाथ पंथियों में हठयोग का महत्वपूर्ण स्थान है। नाथ पन्थ में आचरण पवित्रता एवं वीर्य की रक्षा पर बहुत बल दिया है। इस योग साधना और भक्ति साध्य स्वीकृत है। इसमें सिद्धों की तान्त्रिक साधना को कोई महत्व प्राप्त नहीं है।

सिद्ध और नाथ पंथियों ने हिन्दी साहित्य में जो काव्य प्रवृत्तियाँ आरम्भ की उनका प्रभाव भक्तिकाल तक चलता रहा। रूढ़ियों के विरोध का अक्खड़ पन जो कवि आदि की कविता में मिलता है, वह सिद्ध कवियों की ही देन है सिद्धों और योगियों ने सामाजिक जीवन के जो चित्र उभारे, वे भक्तिकाल की रचनाओं के लिए सामाजिक चेतना की पीठिका बन गये। कृष्ण भक्ति के मूल काव्य में विद्यमान प्रवृत्ति मार्ग की प्रेरणा के सूत्र भी सिद्ध साहित्य में उपलब्ध हैं। सिद्ध और नाथ सम्प्रदायों से हिन्दी साहित्य को जो उपलब्ध हुआ उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

(1) **बौद्ध धर्म का प्रभाव** – परवर्ती हिन्दी साहित्य में सर्वभूत हितवाद, महाकरुणा महामैत्री आदि को महत्व देने की प्रवृत्ति के बोधिसत्वों और सदाचार पर विश्वास की भावना के जगत को शून्य एवं नश्वर वर्णन करने के मूल में सिद्ध एवं नाथ कवियों के बौद्ध धर्म मूलक वर्णनों का ही प्रभाव है।

(2) **रहस्यवादी परम्परा का विकास**—हिन्दी साहित्य में ईश्वर के निगुर्णत्व स्वीकृति और उसके फलस्वरूप भक्ति में रहस्यवादी प्रवृत्ति के उद्‌भव मूल में भी सिद्धनाथ कवियों का स्पष्ट प्रभाव है।

(3) **पारिभाषिक रूपकों का प्रयोग**—हिन्दी काव्य में विशेषतः सन्तकाव्य में जिन पारिभाषिक रूपकों का प्रयोग हुआ उसकी परम्परा सिद्ध और नाथ साहित्य में विद्यमान है।

(4) **परकीया भाव की उपासना**—सिद्धगण नारी योग में विश्वास करते थे और प्रेम को चरमोत्कर्ष परकीया भाव में स्वीकार करते थे। इसी के प्रभाव के अन्तर्गत कृष्ण भक्ति शाखा में परकीया भाव को अत्यधिक निष्ठापूर्वक अपनाया गया है।

(5) **गुरु की महिमा**—विद्वानों के अनुसार सन्तों और भक्तों द्वारा सामान रूप से गुरु के महत्व की स्वीकृति के मूल में भी सिद्धनाथ का परम्परागत प्रभाव है।

(6) **लोकतान्त्रिक भावना का विकास**—सिद्धों नाथों ने निम्न वर्ग के लोगों को समता के भाव से सम्मानित किया था इस रूप में उन्होंने एक प्रकार के सामाजिक आन्दोलन का सूत्रपात किया था, जिसमें, समता, स्वतन्त्रता तथा बन्धुत्व के आधुनिक भावों की किसी न किसी रूप में मान्यता थी परवर्ती हिन्दी साहित्य में इन भावों की स्पष्ट स्वीकृति मिलती है।

(7) **रूढ़ियों का विरोध**—सिद्धों और नाथों ने पहली बार भेदमूलक शास्त्र कर्म काण्ड समस्त वाह्य उपदेश एवं आडम्बरपूर्ण, भेदभावपूर्ण मर्यादाओं को चुनौती दी हिन्दी में कबीर आदि सन्तों एवं अन्य समाज सुधारकों में सिद्धों नाथों का स्वर कुछ मृदु और व्यापक रूप में सुनाई पड़ता है।

(8) **उलट बासियों की परम्परा**—सिद्धों और नाथों में शून्यवाद, रहस्यवाद तथा अन्तर साधना आदि के कारण साधना को छिपाने की प्रवृत्ति प्रचलित थी। इसी प्रवृत्ति के फलस्वरूप प्रतीकों तथा उलटवासियों का जन्म हुआ हिन्दी में कबीर और सूर प्रभृति कवियों में उलटवासियों और प्रतीकों के प्रयोग की परम्परा इसी प्रभाव के अन्तर्गत देखी जा सकती है।

(9) **लोकोन्मुखता की प्रवृत्ति**—सिद्धों और नाथों के साहित्य में लोक भाषा, दोहा चौपाई राग रागनियों एवं लोक गीतों के प्रयोग की परम्परा का प्रवर्तन उनकी लोकोन्मुखी प्रवृत्ति का द्योतक है। हिन्दी में आगे चलकर इसी के विकास और पोषण की परम्परा मिलती है। यह भी सिद्धनाथ साहित्य का स्पष्ट प्रभाव है।

इस प्रकार सिद्धनाथ साहित्य ने विषय भाव भाषा तथा शैली आदि सभी की दृष्टियों से परवर्ती हिन्दी साहित्य को प्रभावित किया है। हिन्दी साहित्य में विकसित इन धाराओं की परम्परा को समझने के लिए सिद्ध नाथ साहित्य की महत्ता असन्दिग्ध है।

प्रश्न 7—पृथ्वीराज रासो काव्य की प्रामाणिकता सिद्ध करते हुए अन्य रासो काव्यों तथा उनके लेखकों का संक्षिप्त परिचय दीजिए ?

उत्तर—'पृथ्वीराज रासो' आदि काल का गौरव ग्रन्थ होते हुए भी प्रामाणिकता की दृष्टि से विवादास्पद रहा है। कर्नल टाड ने पृथ्वीराज रासो की वर्णन शैली और काव्य सौन्दर्य पर मुग्ध होकर इस ग्रन्थ के लगभग तीस हजार छन्दों का अंग्रेजी में अनुवाद कराया था परन्तु सन् 1875 ई० में डा० बूलर ने पृथ्वीराज विजय ग्रन्थ के मिलते ही उसके आधार पर इसे अप्रमाणिक घोषित कर दिया। तब से अब तक इसकी प्रामाणिकता के पक्ष विपक्ष में बहुत कुछ कहा जाता रहा है।

इसकी प्रामाणिकता को लेकर प्रमुख तीन वर्ग हैं—

प्रथम वर्ग—के अनुसार पृथ्वीराज रासो का नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण पूर्णतः प्रामाणिक है। इस मत के समर्थकों में डा० श्याम सुन्दर दास, मोहनलाल विष्णुलाल पाण्डया, मिश्र बन्धु, कर्नल टाड आदि प्रमुख हैं।

द्वितीय वर्ग—के विद्वान रासो को सर्वथा अप्रमाणिक एवं परवर्ती रचना मानते हैं आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, कवि राजा श्यामलदास, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, डा० बूलर तथा मुन्शीदेवी प्रसाद इस मत के समर्थक महानुभाव हैं।

तृतीय वर्ग—इस वर्ग के समीक्षक यह मानते हैं कि पृथ्वीराज चौहान के दरबारी कवि चन्दवरदायी ने ही पृथ्वीराज रासो लिखा था किन्तु उसका मूलरूप आज उपलब्ध नहीं है इस प्रकार यह अर्ध प्रामाणिक रचना है। मुनि जिन विजय, डा० सुनीति कुमार चटर्जी तथा आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इसी विचार के समर्थक हैं।

चौथा मत—नरोत्तम स्वामी का है उनके अनुसार चन्द कवि ने पृथ्वीराज चौहान के दरबार में रहकर मुक्तक काव्य के रूप में इसकी रचना की थी। उनके मत से कोई भी विद्वान सहमत नहीं।

अप्रमाणिकता के लिए तर्क—रासो को सन्दिग्ध परवर्ती और अप्रमाणिक रचना मानने वालों के तर्कों को निम्न रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है—

(1) **पृथ्वीराज रासो में उल्लिखित घटनाएँ इतिहास विरुद्ध**—पृथ्वी रासो में बहुत सारी घटनाओं का इतिहास विरुद्ध पड़ना यह सिद्ध करता है कि यह कृति तत्कालीन कवि की रचना न होकर परवर्ती है पृथ्वीराज का दिल्ली में गोद लिया जाना, संयोगिता स्वयंवर पृथ्वीराज की बहिन प्रथा का मेवाड़ के राजा समरसिंह के साथ विवाह पृथ्वीराज द्वारा गुजरात के राजा भीमसिंह तथा सोमेश्वर का वध, पृथ्वीराज के चौदह विवाह पृथ्वीराज द्वारा गौरी की मृत्यु आदि घटनाएँ इतिहास से सर्वथा विपरीत हैं।

(2) **पृथ्वीराज रासो में उल्लिखित पृथ्वीराज का जन्म इतिहास विरुद्ध**—पृथ्वीराज रासो में कतिपय विशिष्ट पात्रों के नाम भी इतिहास में प्रसिद्ध नामों से भिन्न हैं उदाहरणार्थ पृथ्वीराज की मां का नाम इतिहास ग्रन्थों में कर्पूरी है, रासो में उसे कमला बताया गया है। रासो में परमार, चौहान तथा चालुक्य अग्नि वंश माने गये हैं, परन्तु शिला लेखों और प्राचीन ग्रन्थों से वे सूर्यवंशी ठहरते हैं। रासो में पृथ्वीराज की माता को अनंगपाल की पुत्री बतलाया गया है परन्तु वह कलचुरी वंश की थी रासो में जयचन्द को राठौर वंशीय राजा कहा है परन्तु शिला लेखों से वह गहरवार सिद्ध होता है।

(3) **पृथ्वीराज रासो में उल्लिखित तिथियाँ इतिहास विरुद्ध हैं**—रासो में दी गयी तिथियाँ भी इतिहास से मेल नहीं खातीं उदाहरणार्थ रासो में पृथ्वीराज का जन्म संवत 1115 तथा मृत्यु संवत 1158 दिया है। इतिहास से यह क्रमशः संवत् 1220 और संवत् 1248 सिद्ध होता है। इसी प्रकार कन्नौज प्रस्थान, शहाबुद्दीन गौरी से युद्ध की तिथियाँ इतिहास में दी गयी तिथियों से विपरीत जान पड़ती हैं।

(4) **पृथ्वीराज रासो की भाषा**—पृथ्वीराज रासो की भाषा में एक तो दस प्रतिशत शब्द अरबी फारसी के पाये जाते हैं, दूसरे इनकी भाषा में अनुस्वारान्त शब्दों की अधिकता है। इससे रासो की भाषा का स्वरूप 16वीं शती का ही प्रतीत होता है।

उपर्युक्त तर्कों का खण्डन—पृथ्वीराज रासो को चन्द्र वरदायी द्वारा रचित और बारहवीं शती की रचना मानने वालों में उपर्युक्त तर्कों का बड़ी तत्परता के साथ खण्डन किया है इनकी युक्तियाँ इस प्रकार से हैं—

(1) पृथ्वीराज रासो इतिहास ग्रन्थ न होकर एक काव्य ग्रन्थ है। काव्य में कल्पना और अतिशयोक्ति को सदैव स्थान दिया जाता है। कल्पना के अधिकार और अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन प्रायः इतिहास विरुद्ध हो ही जाया करते हैं। यह कोई असम्भव बात नहीं है।

(2) नामों के सम्बन्ध में समर्थकों का उत्तर यह है कि कदाचित चन्द कवि ने अन्तः पुर में प्रचलित घरेलू नामों का ही प्रयोग किया है इसके अतिरिक्त चन्द कवि पृथ्वीराज का अंतरंग मित्र होने के कारण कतिपय मूल बातों को भी जाना था परन्तु इतिहासकारों को सम्भवतः उन बातों का स्वरूप ज्ञात नहीं हो सका था।

(3) तिथियों की इतिहास से विरुद्धता से तर्क के उत्तर में पं० मोहनलाल विष्णुलाल पाण्डया ने एक आनन्द सम्वत की कल्पना की है जिसका विक्रमी सम्वत् से 80,100 वर्षों का अन्तर है, उसके अनुसार चन्द कवि के समय यही सम्वत प्रचलित था और चन्द ने इसी सम्वत का प्रयोग किया है। इससे रासो की सभी तिथियाँ इतिहास के अनुकूल जान पड़ती हैं।

(4) रासो की भाषा के सम्बन्ध में मिश्र बन्धुओं ने दो कारण दिए हैं पहली बात तो यह कि भारत पर उस काल से बहुत पहले ही मुसलमानों के आक्रमण शुरू हो गये थे। सिन्ध और मुल्तान पर उनका अधिकार हो चुका था। अतः मुस्लिम शासन के प्रभाव वंश उनकी भाषा में अरबी फारसी के शब्द स्वतः ही आ गये थे।

आचार्य द्विवेदी रासो को मूलतः बारहवीं शताब्दी की चन्द कवि रचना मानते हैं। उसमें प्रक्षिप्त अंशों की बहुलता के कारण वह उसे अर्द्ध-प्रमाणिक मानते हैं। वस्तुतः प्रक्षिप्त अंश के आधार पर ग्रन्थ की अप्रमाणिकता का सिद्धान्त यदि स्वीकार किया जाए तो सूर सागर तथा रामचरित मानस प्रभृत्ति ग्रन्थों की प्रमाणिकता के आगे भी प्रश्न चिन्ह लगाना पड़ेगा। अतः रासो को अप्रमाणिक मानना उचित नहीं। आचार्य द्विवेदी का उस अर्द्ध प्रामाणिक मानना ही आज वैज्ञानिक एवं सर्वाधिक उपयुक्त होने के कारण सर्व सम्मत हो गया। पृथ्वीराज रासो के अतिरिक्त इस रासो परम्परा में और भी ग्रन्थ लिखे गये जिनकी चर्चा इस प्रकार है।

(1) **खुम्माण रासो**—इस रासो काव्य के रचयिता दलपति विजय थे इस ग्रन्थ में नवीं शताब्दी के चितौड़ नरेश खुमाण के युद्धों का वर्णन है यह पाँच हजार छन्दों का विशाल काव्य ग्रन्थ है। इस काव्य में राजाओं के युद्ध और विवाहों का सरल वर्णन किया गया है। यह राजस्थानी भाषा में लिखा गया है। तथा इसमें दोहा, सवैया तथा कवित्त आदि छन्दों का प्रयोग किया है।

(2) **परमाल रासो**—इसके रचयिता जगनिक नामक कवि थे यह महोबा के राजा परमर्दिदेव के आश्रित थे। इन्होंने इस काव्य में आल्हा ऊदल दो वीर सरदारों की लड़ाई का वर्णन है। उत्तर प्रदेश में आल्ह-खण्ड के नाम से जो काव्य प्रचलित है वही परमाल रासो के मूल रूप का विकसित रूप माना जाता है। यह रासो लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध काव्य है।

(3) **बीसल देव रासो**—इसके रचयिता नरपत नाल्ह हैं। हिन्दी के आदिकाल की सर्वश्रेष्ठ कृति बीसल देव रासो का रचनाकाल सन्दिग्ध है इसमें भोज परमार की पुत्री राजमती और अजमेर के चौहान राजा बीसल देव के तृतीय विवाह, वियोग एवं पुनर्मिलन की कथा सरस शैली में प्रस्तुत की गयी है।

भक्ति काल

प्रश्न 8—भक्ति काल की समकालीन परिस्थितियों को उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—साहित्य जनता की चितवृत्तियों का सच्चा प्रतिबिम्ब है जनता की चित्त-वृत्तियाँ राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ परिवर्तित होती रहती हैं। अतः साहित्य की युगानुरूपता की परख के परिस्थितियों का विवेचन करना आवश्यक है।

राजनैतिक परिस्थिति—पूर्व मध्यकाल अथवा भक्तिकाल के आते आते मुस्लिम राज्य पूरी तरह स्थापित हो चुका था। हिन्दू शासकों में शक्ति के अभाव के कारण मुस्लिम आक्रमणकारियों के प्रतिरोध अथवा विरोध की भावना समाप्त हो गयी थी मुसलमानों से मुसलमानों का बराबर युद्ध चलता रहता था। अतः पानीपत के युद्ध के जहीरुद्दीन मुहम्मद भारत का शासक बन गया परन्तु फिर बाहरी आततायियों तथा भीतरी संघर्षों से प्रजा में पूर्ण शान्ति व्याप्त न थी परन्तु अकबर के शासन काल तक आते आते प्रायः शान्ति हो गयी थी।

इस प्रकार इस काल में भारत के राजनैतिक क्षेत्र में युद्ध, विद्रोह तथा संघर्ष की

स्थिति बनी रही । शासकों ने प्रजा के लिए बहुत से कल्याणकारी कार्य किए शासन में सुधार करके तथा कर नीति में भी संशोधन किए गये । फिर भी इन मुगल शासकों की नीति हिन्दू विरोधी तथा पक्षपातपूर्ण बनी रही । दारा की मृत्यु का एक कारण उसका हिन्दूओं के प्रति सद्भाव था ।

सामाजिक परिस्थिति—भारतीय समाज की रचना में वर्णों और जातियों का विशिष्ट स्थान है इस देश में समय समय पर जो जातियाँ अपने धर्म विचार, रीति नियम लेकर आती रहीं, वे कालान्तर में यहाँ पहले से ही विद्यमान जातियों के साथ समन्वय की भावना अपना कर उनके साथ घुल मिल जाती थीं । परन्तु इस्लाम में आस्था विश्वास, आधार विचार और जीवन प्रणाली की कुछ ऐसी विशेषताएँ थीं जिनसे आपसी मेल मिलाप सम्भव न हो सका, फलस्वरूप दोनों पक्षों के बीच परस्पर सन्देह, जुगुप्सा और पवित्रता, जनित भेद भाव प्रबल हो उठे । इस्लाम भ्रातृत्व भाव का सन्देश लेकर चला था परन्तु हिन्दुओं के यहाँ धर्म परिवर्तन की कोई व्यवस्था न थी इसलिए उनके संस्कार विपरीत पड़ते थे ।

हिन्दू समाज में वर्णाश्रम धर्म के उचित रूप से पालन न करने के कारण जातियों उप-जातियों की संख्या बढ़ गयी थी, और उनमें आत्मीयता का अभाव हो गया था । समाज में दास प्रथा, स्त्री अपहरण, बहुविवाह तथा पुर्नविवाह की प्रथा में प्रचलित थी । छुआछूत के नियम बड़े कठोर एवं व्यापक थे कि शूद्रादि जातियों में भी परस्पर भेदभाव बरता जाने लगा । भारतीय समाज इस समय अपने मूल रूप में नहीं रह गया था । मुगल बादशाहों का व्यवहार भ्रातृत्व पूर्ण होता जा रहा था धर्म परिवर्तन करने वालों को पुरस्कार स्वरूप जागीरें भी भेंट करते थे । जिसके कारण भी समाज में ऊँच-नीच का भेद भाव बना रहा । फिर भी जन समाज में शान्ति व्याप्त थी ।

धार्मिक स्थिति—उस समय में भक्ति प्रेम आदि हृदय के प्रकृत भावों का उनकी अन्तर साधना का कोई स्थान न था । इस प्रकार मुसलमानों के भारत प्रवेश के समय सच्चे धर्म भाव का अभाव था । ऐसी विषम परिस्थिति में कालदर्शी भक्त्याचार्यों तथा भक्त कवियों ने भक्ति भागीरथी के अजस्त्र प्रवाह के द्वारा जिनका हृदय को संभालने और उन्हें लीन रखने में अपूर्व योग दिया । इस भक्ति धारा के प्रवाह ने बिना किसी भेदभाव के हिन्दुओं और मुसलमानों को समान रूप से आप्लावित किया । सर्वप्रथम दक्षिण भारत में यह भक्ति आन्दोलन आरम्भ हुआ । दक्षिण भारत के भक्ति आन्दोलन को उत्तर भारत तक फैलाने का श्रेय रामानन्द के प्रयासों को है ।

प्रश्न 9—भक्ति काल की प्रवृत्तिगत सामान्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—भक्तिकालीन साहित्य को चार भागों में बाँटा जाता है—सन्तकाव्य, सूफी काव्य, राम भक्तिकाव्य, कृष्ण भक्ति काव्य । यद्यपि इनके पारस्परिक विभाजक तत्व अत्यन्त स्पष्ट है तथापि इनमें प्रवृत्तिगत जो सामान्य विशेषताएँ हैं इन्हें एक सूत्र में आबद्ध करती हैं । इसकी प्रवृत्तिगत विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. **भक्त भावना का प्राधान्य**—आचार्य शुक्ल ने श्रद्धा और प्रेम के मिश्रित भाव को ही भक्ति माना है । शुक्ल जी के अनुसार भक्ति में से श्रद्धा का अवयव निकल जाने से प्रेमालक्षणा भक्ति समय पाकर कलुषित हो जाती है । भक्ति काल में निष्कलुष भक्ति का सर्वोत्कृष्ट रूप तो राम भक्ति शाखा में मिलता है । परन्तु भक्ति की चारों शाखाओं में प्रधान तत्व भक्ति ही है । चाहे ज्ञान मार्गी सन्त कवि हों या सूफी, चाहे राम भक्त कवि, हो, या कृष्ण भक्त कवि हो, भक्ति सभी को मान्य एवं प्रिय है । उनकी कविता का मूल उद्देश्य ही भक्ति है ।

(2) **संसार की असारता का प्रतिपादन**—भक्ति काव्य की चारों शाखाओं में संसार की असारता तथा मानव जीवन की नश्वरता का समान रूप से वर्णन हुआ है इसका कारण यह है कि भक्ति के मूलतत्व, ईश्वर के प्रति अनुराग के लिए भौतिकता के प्रति विराग आवश्यक है और विराग को उत्पन्न करने और दृढ़ बनाने के लिए क्षण भंगुरता का वर्णन एक मात्र उपाय है। यही कारण है कि सन्तों ने इस संसार को बूँद पड़ते ही गलजाने वाली 'कागद की पुड़िया' कहा है और मानव जीवन को पानी के बुलबुले के समान बतलाया है। सगुण भक्तों ने इस जीवन को किसी प्रकार पुण्य से प्राप्त इस नश्वर शरीर की उपयोगिता प्रभु भजन में मानी है।

(3) **निरहंकारिता के महत्व का चित्रण**—भक्तिकाल के सभी कवियों में विनय, दीनता तथा निरहंकारिता का भाव पाया जाता है वस्तुतः अहंकार भक्ति का शत्रु है, प्रेम की गली में अहं को नष्ट किए बिना प्रवेश ही सम्भव नहीं। इसके अतिरिक्त नश्वर संसार की कौन सी अहंकार जन्य वस्तु? यही कारण है कि कबार मनुष्य को सचेत करते हुए कहते हैं : 'कबिरा गर्व न कीजिए'। जायसी अत्यन्त विनम्रतापूर्वक अपने को पण्डितों का पिछ-लग्गू कहते हैं। सूरदास और तुलसी दास अपने को पतितों का शिरोमणि बताते हैं। यह शब्द निरहंकारिता के ही सूचक हैं।

(4) **सदाचार तथा नैतिक की भावना**—अनुभवाश्रय निर्गुण साहित्य की मूल प्रेरणा का स्रोत श्रमण संस्कृति है और उनका मूल उद्देश्य व्यक्तिगत उत्कर्ष के लिए आध्यात्मिक दृष्टि का सहारा लेना था, परन्तु कालान्तर में महायानियों द्वारा उसे बहुजनहिताय का नया मोड़ दे दिया गया, जिसमें वैदिक आदर्श 'सर्वेभवन्तु सुखिनः, प्रतिध्वनित था। इस आदर्श की प्राप्ति के लिए सदाचार तथा नैतिक भावना पर यथेष्ट बल दिया जाने लगा और आगे चलकर यह भक्ति काव्य की एक प्रमुख विशेपता बन गयी।

(5) **समन्वय एवं सहयोग की भावना**—पूर्व मध्यकाल में विदेशी तथा विजातीय मुस्लिम आक्रमणकारियों के प्रबुद्धवर्ग का ध्यान परिस्थिति परीक्षण और तदनुसार आत्म-रक्षा के लिए उपाय सोचने का ओर प्रवृत्त हुआ। इसका फल यह हुआ कि बड़े-बड़े मन्दिरों के स्थान पर घरों में देवी-देवताओं की प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा होने लगी। यह अपने ढंग की सामूहिक जागृति थी, जिसमें व्यक्तिगत साधना की अपेक्षा सामूहिक पूजन अर्चन का महत्व बढ़ गया था और भजन कीर्तन की प्रवृत्ति बल पकड़ने लगी थी। इसी भावना के अन्तर्गत आपसी भेदभाव को कम करने के लिए सुगम मार्ग ढूँढे जाने लगे और परस्पर टकराव के प्रति सावधानी बरती जाने लगी। इससे समन्वय की भावना को बहुत बल एवं प्रोत्साहन मिला।

(6) **नाम की महिमा**—भक्तिकाल के सभी कवियों ने भगवान की उदारता, दया-लुता तथा भक्त वत्सलता का शतमुख से गुणगान किया है और जीव के कल्याण के लिए नाम भजन की आवश्यकता पर बल दिया है। यद्यपि निर्गुण पन्थियों ने ईश्वर के निर्गुण निराकार रूप को माना है तथापि उसकी महिमा के वर्णन में रामकृष्ण द्वारा किए गये भक्त वत्सलता के कृत्यों का उल्लेख किया है। सगुण भक्तों ने तो हरि से भी बड़ा हरि का नाम माना है। राम नाम की महिमा का वर्णन भक्तिकाल के सभी कवियों ने किया है, चाहे वे भक्तिकाल की किसी भी धारा से सम्बन्धित रहे हों।

(7) **गुरु की महत्ता**—सभी भक्त कवियों ने गुरु की महत्ता को समान रूप से स्वीकार किया है। सभी ने गुरु को हरिदर्शन कराने में सहायक तथा सच्चा पथ प्रदर्शक माना है।

(8) **लोकभाषाओं को ग्रहण करने की प्रवृत्ति**—भक्तिकाल के सभी कवियों ने तत्का-

लीन लोकभाषाओं को ही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। कबीर ने उस समय प्रचलित अन्यान्य भाषाओं का प्रयोग किया है। जायसी की भाषा भी बोल-चाल की अवधी भाषा है। सूरदास की लोक धारा में बहती ब्रजभाषा है। तुलसी की भाषा साहित्यिकता लिए होने पर भी लोकभाषा अवधी है। नन्ददास तुलसीदास तथा केशव आदि कवियों ने साहित्यिक भाषा को अवश्य अपनाया है परन्तु उन्होंने संस्कृत को न अपना कर लोक भाषा—ब्रज अवधी को ही अपनाया है।

(9) **प्रचारात्मकता की प्रवृत्ति**—इस काल के सभी कवियों की रचनाएँ मूलतः लोक प्रचारार्थ रचित हैं। कबीरदास धर्मोपदेशक थे। जायसी प्रचारक थे। सूरदास कीर्तनिया तथा तुलसी लोकोद्धार के लिए आतुर थे। यही कारण है कि चारों शाखाओं के कवियों की रचनाओं में लोक प्रचलित एवं परिचित दृष्टान्तों रूपकों, प्रतीकों, लोकोक्तियों का प्रयोग हुआ है इससे रचना के लोकरुचि के अनुकूल पड़ने के कारण उसकी लोकप्रियता बढ़ गयी है और रचयिता का उद्देश्यपूर्ण हो गया।

(10) **रचना में नामोल्लेख प्रवृत्ति**—इस काल के सभी कवियों में अपनी प्रत्येक रचना पद, दोहा, कवित्त, सवैया आदि में अपना नाम अंकित करने की एक सामान्य प्रवृत्ति मिलती है। इसका मूल भले ही बौद्ध सिद्धों की रचनाओं में हो अथवा अन्य प्रभाव परन्तु यह निश्चित है कि कवियों में व्यक्तित्व के समावेश की प्रवृत्ति सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। प्रत्येक कवि के काव्य में अपने नाम का प्रयोग इसी प्रवृति के अन्तर्गत है।

प्रश्न 10—भक्ति काल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग क्यों माना जाता है ?

उत्तर—डा० श्यामसुन्दर दास के अनुसार जिस युग में कबीर, जायसी, तुलसी, सूर जैसे रससिद्ध कवियों और महात्माओं की दिव्यवाणी उनके अन्तःकरणों से निकल कर देश के कोने-कोने में फैली थी। उसे साहित्य के इतिहास में सामान्यतः भक्तिकाल कहते हैं। भक्ति कालीन साहित्य निश्चय ही हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग था इस काल में जितना साहित्य रचा गया उतना (आधुनिक काल को छोड़कर) अन्य कालों में नहीं रचा गया। साथ ही इस काल के साहित्य का जितना प्रचार प्रसार एवं अनुवाद (देशी व विदेशी भाषाओं में) हुआ, उतना किसी काल के साहित्य का नहीं हुआ। और आज भी भक्ति कालीन साहित्य हमारे जन-जीवन का आदर्श बना हुआ है। इन्हीं सब कारणों से भक्तिकाल को हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग माना जाता है।

इस काल के साहित्य की वे विशेषताएँ, जिन्होंने इस युग को स्वर्णयुग का नाम दिलाया वे इस प्रकार हैं—

(1) **समन्वय की भावना**—भक्ति कालीन साहित्य की प्रमुख विशेषता समन्वय की भावना है और यह समन्वय निम्नलिखित क्षेत्रों में पाया जाता है—

(i) **ज्ञान और भक्ति में समन्वय**—इस काल के कवियों ने ज्ञान एवं भक्ति का समन्वय प्रस्तुत किया है ज्ञान मार्गी कबीर ने भी भक्ति की महिमा बतलाई है।

(ii) **दार्शनिक क्षेत्र में समन्वय**—कबीर के रहस्यवाद पर अद्वैतवादी सूफी दर्शन एवं नाथपंथी हठयोग का प्रभाव परिलक्षित होता है स्वयं तुलसी ने विविध दर्शनों एवं मतों का समन्वय प्रस्तुत किया है।

(iii) **धार्मिक भावनाओं का समन्वय**—इस काल के साहित्य में विविध धार्मिक भावनाओं का समन्वय देखा जा सकता है।

(iv) **लोक परलोक का समन्वय**—भक्ति कालीन साहित्य में लोक एवं परलोक का समन्वय देखा जा सकता है।

(v) **शील एवं सदाचार का समन्वय**—इस काल के काव्य में शील एवं सदाचार का सुन्दर समन्वय देखा जा सकता है।

(vi) **कलापक्ष के अन्तर्गत विभिन्न शैलियों का समन्वय**—कलापक्ष के अन्तर्गत-भाषा, छन्द, अलंकार आदि आते हैं। इस काल के साहित्य में भाषा के क्षेत्र में ब्रज एवं अवधी का समान रूप से प्रयोग देखा जा सकता है। प्रबन्ध एवं मुक्तक दोनों ही काव्य शैलियों का प्रयोग हुआ है। पद रचना में संगीत को विशेष महत्व दिया गया। सूर और मीरा के पद आज भी विभिन्न राग रागनियों में गाये जाते हैं। छन्द की दृष्टि से वीरगाथा कालीन दूहा छप्पय आदि छन्दों से लेकर अनेकानेक छन्दों का प्रयोग इस काल के साहित्य में किया गया है। अलंकारों के भी विविध प्रयोग इस काल के साहित्य में किये गये हैं।

(2) **भावपक्ष और कलापक्ष में समन्वय**—भक्ति काल के कवियों के साहित्य में भावपक्ष और कलापक्ष का मनिकांचन संयोग मिलता है। इस युग के साहित्य में मनुष्य और हमारी संस्कृति के उदात्त पक्ष का चित्रण हुआ है। वहीं दूसरी ओर भाषा की उत्कृष्टता एवं विविध शैलियों का सफल प्रयोग देखने को मिलता है इस काल के कवियों ने अभिव्यक्ति सम्बन्धी दिखावा नहीं किया है तुलसी ने जहाँ विविध काव्य शैलियों को अपनाया, वहीं सूर के काव्य में भक्ति, साहित्य और संगीत का समन्वय मिलता है। मीरा और कबीर का काव्य बिना अलंकारों के भी अपना अप्रतिम स्थान रखता है।

(3) **भक्ति और काव्य में समन्वय**—इस युग में रचा गया साहित्य भक्ति भावना से पूर्ण था। इसलिए इस युग को भक्ति काल कहते हैं। कबीर निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे, जायसी ने प्रेम की उत्कृष्टता प्रमाणित की है। तुलसी ने दास्य भक्ति भाव का प्रतिपादन किया और सूर ने सख्य भक्ति भाव का। तुलसी और सूर ने इन भक्ति भावों का श्रेष्ठता से निरुपण किया। इनके अतिरिक्त भी इस युग में भक्ति ही काव्य की मूल प्रेरणा थी। भक्ति काल के सब कवि भक्त पहले थे और कवि बाद में।

(4) **भाषा का उत्कर्ष**—भक्ति कालीन साहित्य में तुलसी ने अवधी भाषा का साहित्यिक संस्कार किया है और सूर ने ब्रज भाषा को काव्योचित गरिमा प्रदान की। कबीर की भाषा खिचड़ी होते हुए भी भावाभिव्यक्ति में पूर्ण समर्थ थी इन भक्त कवियों ने भाषा को भावों के अनुगत रखा उसे कहीं भी चमत्कारिक प्रवृत्ति से बोझिल नहीं होने दिया है। भक्त कवि तुलसी की भाषा में माधुर्य एवं प्रसाद गुण अधिक देखने को मिलता है, तो सूर की भाषा में लक्षण और व्यंजना के उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं।

(5) **कलापक्ष की दृष्टि से**—भक्ति कालीन साहित्य में अधिकतर सभी रसों की सुन्दर छटा देखने को मिलती है। सूर के काव्य में जहाँ श्रृंगार को रस राजत्व प्राप्त हुआ वही वात्सल्य को भी उत्कृष्ट स्थान प्राप्त हुआ है। तुलसी ने प्रायः सभी नौ रसों का सामन्जस्य अपने काव्य में किया है। भक्ति कालीन साहित्य में भक्ति भावना का भी इतना विस्तृत निरुपण हुआ है कि विद्वानों ने भक्ति को रस मान लेने की सिफारिश की है। इस काल में दोहा, सोरठा, पद, चौपाई कविता छप्पय, सवैया आदि छन्दों का अधिक प्रयोग किया है।

उपर्युक्त अपनी सभी विशेषताओं के कारण ही भक्ति काल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग माना जाता है। भक्ति की दृष्टि से यह काल अपना उच्चतम स्थान रखता है। साहित्यिक दृष्टि से भी यह अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

प्रश्न 11—निर्गुण भक्ति काव्यधारा की सामान्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—भक्ति काल की निर्गुण काव्य धारा में दो शाखाएँ हैं—

(1) ज्ञानमार्गी धारा (2) प्रेममार्गी धारा।

ज्ञानमार्गी धारा में संत साहित्य आता है। प्रेममार्गी धारा के कवि सूफी संत थे।

जबकि ये दोनों धाराएँ एक ही पेड़ की दो शाखाएँ हैं, फिर भी दोनों की उपासना पद्धतियों में काफी अन्तर है। परन्तु इन दोनों धाराओं की कुछ विशेषताएँ ऐसी भी हैं जो इन दोनों धाराओं को एक स्थान पर जोड़ती हैं। और ये दोनों शाखाएँ मिल कर निर्गुण-काव्य धारा के रूप में हमारे सामने आती हैं इसकी विशेषताएँ निम्न हैं।

(1) **नाम की महत्ता**—ईश्वर के नाम स्मरण की महत्ता को दोनों धाराओं में महत्व प्रदान किया है। नाम स्मरण का महत्व निर्गुण धारा में सबसे अधिक माना गया है। नाम स्मरण मानव के सभी दुखों का विनाश करने वाली तथा अज्ञान के अंधकार को दूर करने वाली ज्योति है।

(2) **गुरु की महत्ता**—निर्गुण काव्य धारा में गुरु को सर्वाधिक महत्व प्रदान किया गया है। गुरु के बिना साधना में सफलता नहीं मिल सकती। गुरु ही परमात्मा तक पहुँचने का मार्ग बताता है। बिना गुरु के कोई भी साधक परमात्मा का साक्षात्कार नहीं कर सकता। गुरु को परमात्मा तक पहुँचने की सीढ़ी बताया गया है।

(3) **निर्गुण ब्रह्म की उपासना**—इस काव्य धारा के कवियों ने निर्गुण निराकार परब्रह्म की उपासना की थी। इन्होंने ईश्वर को अनादि, अरूप, अनन्त, सर्वव्यापी, अभेद अखण्ड आदि माना है। उन्होंने कण-कण में परमात्मा का अस्तित्व माना है इसी कारण उन्होंने उस परब्रह्म के किसी साकार रूप की कल्पना नहीं की थी।

(4) **ज्ञान और प्रेम की प्रधानता**—निर्गुण भक्त कवियों ने ज्ञान और प्रेम को बहुत महत्ता प्रदान की है। कबीर, दादू, आदि ने ज्ञान साधना पर बल दिया, परन्तु उन्होंने ज्ञान के साथ ही साथ प्रेम तत्व को भी प्रधानता प्रदान की है। जायसी कुतुबन मझन आदि की तो आस्था ही प्रेम में थी। उन्होंने भक्ति मार्ग ही प्रेम को चुना था। कबीर ने तो यहाँ तक कह दिया ? 'ढाई आखर प्रेम का पढ़ै सो पंडित होय" उन्होंने ज्ञान मार्ग होते हुए प्रेम को अत्यधिक महत्व दिया। प्रेम और ज्ञान की प्रधानता होने के कारण ही यह निर्गुण भक्ति धारा दो मार्गों में बँट गयी (1) ज्ञान मार्गी (2) प्रेम मार्गी।

(5) **भौतिकवादिता का विरोध**—निर्गुण भक्त कवियों ने संसार को नश्वर माना है। उनके मतानुसार भगवान की प्राप्ति वैराग्य धारण कर लेने पर ही होती है। जब सब भौतिक सुखों को त्याग कर कोई साधक भगवद भक्ति में ही अपना चित्त लगा देता है तभी वह ब्रह्म के दर्शन कर पाता है। इन भौतिक सुखों में लिप्त रहना मनुष्य की अज्ञानता है।

(6) **साधना पद्धति**—हिन्दू मुसलमान व सूफी सन्तों के काव्य में साधना पद्धति के भी उदाहरण मिलते हैं। हठ योग, समाधि, षट चक्र, इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना आदि का उल्लेख इसी बात का प्रमाण है। कबीर और जायसी दोनों के ही काव्य इसके उदाहरण है।

(7) **आडम्बरों का विरोध**—निर्गुण काव्य धारा की दोनों शाखाओं के कवियों ने आडम्बर हीन उपासना को ही श्रेष्ठ बताया है। आडम्बर युक्त उपासना केवल बाहरी दिखावा मात्र होता है। ईश्वर को सच्ची भक्ति की आवश्यकता है। उसके लिए सच्ची भावना की आवश्यकता है किसी दिखावे की नहीं।

(8) **कला पक्ष**—निर्गुण काव्य धारा के कवियों का कलापक्ष भी भावपक्ष के समान उत्कृष्ट है। इन कवियों ने किसी प्रकार के आडम्बर और चमत्कार को नहीं अपनाया,

परन्तु फिर भी यह काव्य अपनी अभिव्यक्ति का श्रेष्ठ उदाहरण है। इन कवियों के काव्य में अनावश्यक कलात्मकता का बोझ नहीं है।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य में भक्तिकाल की निर्गुण काव्य धारा अपनी उत्कृष्ट विशेषताओं से अलंकृत थी।

प्रश्न 12—भक्ति काल की निर्गुण काव्यधारा के संत साहित्य के प्रमुख कवियों का परिचय देते हुए सन्त काव्य की विशेषताएँ बतलाइए ?

उत्तर—इस शाखा के सभी कवि सन्त थे। इसी कारण इस ज्ञान मार्गी भक्ति धारा का नाम सन्त काव्य धारा भी पड़ा है। इन सन्त कवियों में कबीर, दादू, मलूक, सुन्दर आदि प्रमुख हैं—

कबीर—संतमार्गी शाखा के प्रतिनिधि कहे जाते हैं। यह बहुत ही सन्तोषी जीव थे और कपड़ा बुनकर अपनी जीविका चलाते थे और आय का अधिकांश भाग साधु-सत्कार में खर्च कर देते थे। यह अपना अधिकांश समय साधु संगति में व्यतीत करते थे। इनका सम्पूर्ण साहित्य बीजक के नाम से जाना जाता है। जिसमें साखी, सबद और रमैनियाँ है।

रैदास—इनको रविदास के नाम से जाना जाता है ये गुरु रामानन्द जी के शिष्य थे तथा जाति से चमार थे इनके पदों से मीरा बहुत प्रभावित थी। इनके पद गुरु ग्रन्थ साहिब में संग्रहीत हैं।

गुरु नानक—यह सिक्ख सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। इनके पिता का नाम कालूचन्द और माता का नाम तृप्ता था। इनके पद गुरु ग्रन्थ साहिब में संग्रहीत हैं। यह भी निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे इनकी भाषा पंजाबी तथा सधक्कड़ी थी।

दादू—यह गुजरात के रहने वाले थे। इन्होंने निर्गुण ईश्वर की उपासना कर अपना एक अलग पंथ दादू पंथ चलाया था। ये सन्त नाम के उपासक थे। इनकी भाषा पंजाबी, राजस्थानी तथा पश्चिमी हिन्दी थी। ये खण्डन-मंडन से दूर रहते थे।

सुन्दरदास—अन्य सन्त कवि तो प्रायः अशिक्षित थे पर सुन्दरदास शिक्षित थे, आप दादू दयाल के शिष्य थे। आपने शुद्ध ब्रजभाषा का प्रयोग किया है ये खण्डन-मण्डन से दूर रहे। इनकी रचना 'सुन्दर विलास' अत्यन्त श्रेष्ठ रचना है।

मलूकदास—आप कड़ा निवासी थे। ये मनमौजी कवि थे। इनकी भाषा शुद्ध संस्कृतमय है। यह खण्डन-मण्डन से दूर रहे हैं। इन्होंने नीति विषयक दोहे भी लिखे हैं।

संत काव्य धारा में आध्यात्मिक विषयों की अभिव्यक्ति हुयी है। यह अभिव्यक्ति जन-जीवन की अनुभूतियों के साथ सीधी सादी जन भाषा में हुयी है। सन्त साहित्य साधना, भावपक्ष तथा कलापक्ष सभी दृष्टियों से अत्युत्तम बन पड़ा है। सन्त काव्य में स्वाधीन चित्त न स्वयं की अनुभूति पर आधारित है। निर्गुण काव्य धारा में ज्ञानाश्रयी शाखा की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार है—

(1) **निर्गुणोपासना**—भक्ति काल की प्रारम्भिक अवधि में ब्रह्म के सगुण साकार रूप का प्रतिष्ठापन सम्भव नहीं था क्योंकि ऐकेश्वरवादी मुसलमानों को यह ग्राह्य नहीं था उस समय ऐसे सहज सामान्य धर्म की आवश्यकता थी जो दोनों को सहज स्वीकार्य हो अतः सन्त कवियों ने हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करने के लिए निर्गुण उपासना को अपनाया।

(2) **ज्ञान की प्रतिष्ठा**—निःसन्देह ज्ञान और भक्ति में कोई अन्तर नहीं है ज्ञान की अनुभूति भक्ति है और बिना अनुभूति के ज्ञान मात्र वाक्य ज्ञान हैं, जिससे कुछ भी सिद्ध

नहीं होता। सन्त कवियों में हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों के लिए समान रूप से उपादेय ज्ञान को ब्रह्म प्राप्ति के साधन के रूप में अपनाया। इन सन्तों में किसी भक्त से कम विह्वलता नहीं फिर भी इनमें विचारतत्व प्रबल है। इसी विचारतत्व के अन्तर्गत ही इनका सुधारक रूप है।

(3) **गुरु की महत्ता**—सन्त कवियों ने ब्रह्म प्राप्ति के मार्ग पर साधक को लक्ष्य सिद्धि तक पहुँचाने वाले गुरु की अनिवार्य आवश्यकता बतलाई और उसकी महत्ता का मुक्त कंठ से वर्णन किया है।

(4) **एकान्तिक साधना**—सन्त कवियों ने बाह्य साधना की अवहेलना करके वैयक्तिक और आन्तरिक साधना पर बल दिया है उसकी इस साधना में समाज की उपेक्षा का भाव नहीं। सन्तों ने जहाँ वैयक्तिक साधना के रूप में आत्म शुद्धि, इन्द्रिय निग्रह और आचरण की पवित्रता पर बल दिया है। वहाँ सामाजिक क्षेत्र में समदृष्टि परोपकार, भेद-भाव का परित्याग, परोपकार आदि की आवश्यकता प्रतिपादित की है।

(5) **रहस्यवादी प्रवृत्ति**—सन्त काव्य में सर्वप्रथम रहस्यवाद के दर्शन होते हैं। सन्तों का रहस्यवाद शंकर के अद्वैत और सूफियों के प्रेम तत्व से प्रभावित है। सन्तों ने परमात्मा को पुरुष और आत्मा को स्त्री के रूप में चित्रित करके भारतीय परम्परा का निर्वाह किया है। सन्तों के ज्ञान मूलक रहस्यवाद में सूफियों के प्रेम तत्व के मिश्रण से रमणीयता और सरसता आ गयी है।

(6) **रूढ़ियों एवं आडम्बरों का विरोध तथा सुधारवादी प्रवृत्ति**—सन्त काव्य लोक संग्रह की भावना से ओत-प्रोत है सन्तों ने कविता की सृष्टि लोकहित के लिए की है। यही कारण है कि उनके काव्य में समाज में व्याप्त रूढ़ियों एवं मिथ्याडम्बरों की प्रखरता एवं उग्रता से खंडन हुआ है। जप, माला, छापा, तिलक, नमाज, रोजा, इत्यादि बाह्य साधनों को धर्म मानने की प्रवृत्ति का सन्तों ने तीव्र खण्डन किया है।

(7) **जाति-पाँति की अमान्यता**—सुधारवादी प्रवृत्ति के कारण सन्तों ने हिन्दू-मुस्लिम भेद-भाव तथा वर्ण व्यवस्था को भी अमान्य घोषित कर दिया है। उनका स्पष्ट कथन हैं कि सभी एक तत्व से उत्पन्न हुए हैं। अतः भेदभाव का कोई आधार नहीं है।

(8) **अभिव्यक्ति की सरलता**—सन्तकवियों ने प्रायः अशिक्षित होने की बात कही है। आज के सन्दर्भ में इसे वरदान कहा जाए तो अत्युक्ति न होगी। शिक्षा मनुष्य को चालाक एवं कृत्रिम बनाती है। सन्तों की वाणी इस दोष से रहित है। उनकी वाणी में सरलता तथा सहजता है। यह ठीक है कि उसमें उच्च कोटि का कवित्व अपेक्षाकृत कम है, परन्तु इससे सन्तों का कुछ बनता बिगड़ता नहीं है। उनके कवित्व का उद्देश्य भव सागर में डूबते हुए जीवों का उद्धार करना है। इसके लिए वाणी में आडम्बर लाग लपेट के लिए कोई अवकाश ही नहीं है।

(9) **पारिभाषिक शब्दावली**—सन्त काव्य पर विभिन्न प्रभावों की चर्चा के प्रसंग ने यह बताया जा चुका है कि सन्त काव्य तथा सन्त दर्शन पर औपनिषिदिक तत्ववाद, शंकर के अद्वैतवाद, वैष्णव भक्ति धारा, सिद्धों नाथ पंथी एवं हठयोगियों के तनयोग, इस्लाम की उग्रता तथा सूफियों के प्रेमतत्व का प्रभाव है। यह प्रभाव भाव और कला दोनों पक्षों पर समान रूप से है। यही कारण है कि सन्त काव्य में पारिभाषिक शब्दावली का बाहुल्य है। सन्तों ने विभिन्न तत्वों को ग्रहण करते हुए उनकी अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त शब्दावली को भी उसी रूप में ग्रहण कर लिया है। इससे भाव बोध में कहीं-कहीं कठिनता अवश्य आ गयी है, परन्तु उसके लिए इससे अधिक उपयुक्त शब्द न होने के कारण सन्तों की यह विवशता रही।

प्रश्न 13—निर्गुण काव्य धारा का प्रेमाश्रयी शाखा का तथा उसके कवियों का संक्षिप्त परिचय देते हुए उसकी विशेषताओं की उल्लेख कीजिए।

उत्तर—हिन्दी प्रेमाख्यानक परम्परा की नींव किसने डाली। इस प्रश्न का कोई उत्तर उपलब्ध नहीं है। इस परम्परा का प्रथम कवि और उसका ग्रन्थ कौन सा है, विद्वानों में मतभेद हैं। इस काव्य धारा का सबसे प्राचीन तथा प्रेमाख्यानक ग्रन्थ हँसावली सामने आता है।

सूफी शब्द सूफ से बना है। सूफ एक प्रकार की ऊन होती है, जिसका बना कनटोप या टोपा एक विशेष सम्प्रदाय के अनुयायी पहना करते थे। हजरत मुहम्मद साहब से लगभग ढाई सौ वर्षों बाद यह सम्प्रदाय चला। विद्वानों का दूसरा वर्ग सूफी शब्द का अर्थ ज्ञान से लेता है। तीसरा वर्ग सूफी शब्द का अर्थ मस्जिद के चबूतरे पर बैठने वाला कहते हैं। जो भी हो हमारे मत में (सफा) पवित्र आचरण वाले ज्ञानी लोग ही कहलाए। इन लोगों ने प्रेमाश्रयी शाखा का सूत्रपात किया। ये सूफी फकीर प्रेम तत्व का निरूपण अपनी लौकिक कहानियों के द्वारा करते थे। कुछ प्रमुख सूफी कवि इस प्रकार हैं—

(1) **असाइत (हंसावली)**—यह प्रेमाख्यानक परम्परा के पहले कवि माने जाते हैं। इन्होंने अपने काव्य ग्रन्थ हंसावली में राजस्थानी भाषा के प्राचीन रूप का प्रयोग किया है। कवि ने इस कृति का स्रोत विक्रम एवं बेताल की कथा का माना है। इस कथा को नायक राजकुमार हसावली को स्वप्न में देखकर उस पर मुग्ध हो जाता है। और योगीवेश में उसकी खोज के लिए निकल पड़ता है तथा अनेक बाधाओं को पार करके वह राजकुमारी को पाने में सफल हो जाता है।

(2) **मुल्ला दाऊद—(चंदायन)** प्रेमाख्यानक परम्परा का दूसरा काव्य मुल्ला दाऊद का चन्दायन है यह अवधि भाषा में लिखा गया है। इसकी विषय वस्तु में भारतीय प्रेमाख्यानकों की परम्परा की मुख्य प्रवृत्तियाँ मिलती हैं।

(3) **ईश्वरदास—(सत्यवती कथा)**—सत्यवती कथा के रचयिता ईश्वरदास सगुणोपासक भक्त थे। सत्यवती कथा के लेखक होने के कारण हिन्दी प्रेमाख्यानक परम्परा के उच्चकोटि के कवि माने जाते हैं।"

(4) **कुतुबन (मृगावती)**—इन्होंने मृगावती काव्य में नायक नायिका के प्रथम दर्शनजन्य प्रेम का निरूपण अत्यन्त भावपूर्ण शैली में किया है। मृगावती की प्राप्ति के लिए राजकुमार योगी का वेश धारण कर अनेक बाधाओं को पार करके मार्ग में एक सुन्दरी को राक्षस के चंगुल से छुड़ाकर उससे विवाह कर मृगावती को पाने में सफल हो जाता है। इस काव्य में परम्परागत प्रेमाख्यानों की विभिन्न प्रवृत्तियों का कुशलतापूर्वक समन्वय हुआ है।

(5) **गणपति (माधवा नल काम कन्द)**—गणपति द्वारा रचित माधवा नल काम कन्दला राजस्थानी भाषा की रचना है। यह दोहा छन्द में रचित है इस कथा में माधव और नृत्यांगना काम कन्दला का प्रेम निरुपण अत्यन्त रोमांचक शैली में हुआ है। नायक नायिका की नृत्य कला पर मुग्ध होकर उससे प्रेम करने लगता है। अनेकों कठिनाइयों का सामना करने के उपरान्त वह उसे प्राप्त करने में सफल हो जाता है।

(6) **मलिक मोहम्मद जायसी (पद्मावत)**—मलिक मोहम्मद जायसी कृत पद्मावत इस परम्परा की प्रौढ़तम रचना है। इसमें चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहल की राजकुमारी पद्मावती के प्रेम, विवाह एवं विवाहोत्तर जीवन का चित्रण है। इसमें हीरामन तोते से पद्मावती के सौन्दर्य का वर्णन सुनकर रत्नसेन के हृदय में प्रेम भावना की उत्पत्ति होती है और वह राज उपभोग आदि अनेक सुखों का परित्याग कर योगी के वेश

में जंगलों में भटकता हुआ अनेक बाधाओं को पार करता हुआ पद्मावती को प्राप्त करने में सफल होता है।

पद्मावत के अतिरिक्त जायसी के अखरावट, कहरनामा आखिरी कलाम, मसाला-नामा, चित्रलेखा उल्लेखनीय हैं।

(7) **जलालुद्दीन**—जायसी के उपरान्त जलालुद्दीन का नाम आता है इन्होंने जमाल पच्चीसी की रचना की।

(8) **मंझन कृत मधुमालती**—इस काव्य ग्रन्थ में मंझन ने प्रथम दर्शन जन्म प्रेम का वर्णन किया है। इसमें प्रेम के साथ-साथ पूर्व जन्म के प्रणय संस्कारों की महत्ता भी उल्लिखित की गयी है। इस काव्य में हिन्दो प्रेमाख्यानों की भाँति बहुपत्नीवाद परम्परा के विपरीत इसमें नायक के एक पत्नी व्रत प्रेम होने के रूप मे प्रेम की गम्भीरता एवं एकोन्मुखता का वर्णन है कवि का लक्ष्य प्रायः प्रेम के उच्च एवं उदात्त स्वरूप की व्यंजना करना ही है।

(9) **उसमान (चित्रावली)**—उसमान कवि द्वारा रचित चित्रावली में नायक नायिका के चित्र दर्शन जन्य प्रेम का वर्णन है। इसमें प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा की परम्परागत रुढ़ियों का वर्णन है। इसकी भाषा अवधी है तथा चौपाई की सात अद्र्धालियों के पश्चात् एक दोहे का प्रयोग किया है।

उस्मान के पश्चात भी यह धारा निरन्तर चलती रही इसके उल्लेखनीय कवि और उनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं—

(1) ज्ञान दीप में शेखनवी ने राजा ज्ञानदीप और रानी देवरानी की कथा वर्णित हुयी है।

(2) जटमल ने गोरा, बादल की बात तथा प्रेमलता चौपाई ग्रन्थ लिखा। इनकी भाषा में पंजाबीपन है तथा काव्य सौष्ठव का अभाव नहीं है। इसमें प्रेम और विरह का मर्मस्पर्शी वर्णन है।

(3) कासिम शाह का हंस जवाहिर,

(4) नूर मौहम्मद की इन्द्रावती और फाजिल शाह की प्रेम रतन। यही प्रेमाश्रयी काव्य धारा तो आगे भी चलती रही परन्तु उसका रूप परिवर्तित हो जाने से उसे सूफीकाव्य परम्परा में स्थान नहीं दिया जा सकता।

प्रेमाश्रयी सूफी काव्य धारा की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं—

(1) **मसनवी एवं भारतीय पद्धति के सम्मिश्रण पर आधारित रचनाएँ**—पहले विद्वानों का यह मत था कि सूफी प्रेम गाथाएँ सब की सब फारसी की मसनवी पद्धति पर रची गयी हैं। इन गाथाओं में फारसी की मसनवी पद्धति के अनुसार ईश्वर वन्दना, मुहम्मद साहब की स्तुति और सामयिक शासक की प्रशंसा आदि मिलती है। उपलब्ध तर्कों के आधार पर यह साबित हो चुका है कि इन सूफी प्रेम गाथाओं की यह भी विशेषता है कि इनकी रचना भारतीय प्रेमाख्यानकों की अखण्ड परम्परा के रूप में भी हुयी है।

(2) शुक्लजी आदि आलोचकों ने प्रेमगाथाओं के रचयिता प्राय: सभी मुसलमान ही माने हैं। उनके अनुसार इन मुसलमानों को हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों, हिन्दुओं के आचार विचारों, रीति रिवाजों और रहन-सहन की विस्तृत एवं गहन जानकारी थी। जिस कारण वे अपनी रचनाओं में अत्यन्त स्वभाविक चित्रण करने में सफल हो सके, परन्तु आधुनिक शोधों के आधार पर गणपति चन्द्रगुप्त आदि ने इस धारणा को गलत बताया है। उन्होंने

कहा है शुक्लजी के समय तक केवल आठ आख्यान ही प्राप्त हुए थे। परन्तु अब 53 आख्यान उपलब्ध हो चुके हैं जिनमें से 36 हिन्दू आख्यान हैं। इस प्रकार शुक्ल के अनुसार उपर्युक्त मान्यता को बदलने की आवश्यकता है। **सूफी काव्य की दूसरी विशेषता यह कही जा सकती है कि इस काव्यधारा** के विकास में हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों ने संयुक्त रूप से योग दिया।

(3) प्रेम गाथाओं में अधिकांशतः हिन्दू घरानों की कहानियाँ हैं सूफी प्रेमाख्यानों में ऐसी कथा को चुना गया है। जो लोक कथाओं के रूप में प्रचलित थीं। इनमें कुछ ऐतिहासिक भी थी। इसके अतिरिक्त इन गाथा काव्यों में कल्पना और इतिहास का सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है।

(4) प्रेम गाथाओं में चित्रित प्रेम कथाओं का उद्देश्य अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति करना था। धार्मिक प्रतिबन्धों के कारण सूफी कवि सीधे ही अलौकिक प्रेम का चित्रण नहीं कर सकते थे। अतएव उन्होंने लौकिक प्रेमाख्यानों की सहायता से उस अलौकिक प्रेम को अभिव्यक्त किया। इन गाथाओं का नायक मानव की आत्मा है और नायिका ब्रह्म है। प्रेम आत्मा और परमात्मा के मिलन का साधन है। साधक के मार्ग की कठिनाइयों को नायक के मार्ग की कठिनाइयों के रूप में चित्रित किया गया है। सूफी सन्तों के अनुसार आत्मा और परमात्मा के मिलन में शैतान बाधक है। इसे गुरू के द्वारा दूर किया गया है। गुरू की सहायता से साधक ईश्वर तक पहुँचने का यत्न करता है इसी प्राप्ति का वर्णन इन गाथाओं में किया गया है।

(5) सूफी प्रेमाख्यानों में दोनों हिन्दू और मुस्लिम साहित्य धाराओं का प्रभाव स्पष्ट है। हिन्दू साहित्य धारा का प्रभाव कथा, वर्णन, प्रेम चित्रण तथा महाकाव्यात्मक शैली के अपनाने में है। मुस्लिम साहित्य धारा का प्रभाव नायक को नायिका की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होना दिखाया गया है।

(6) सूफी प्रेम कथाओं में किसी भी सम्प्रदाय का खण्डन मण्डन नहीं किया गया है। अपने साम्प्रदायिक भावों का प्रतिपादन भी सरल एवं हृदय स्पर्शी ढंग से किया गया है। यही कारण है कि सूफी-काव्य हिन्दुओं और मुसलमानों में समान रूप से लोकप्रिय हो गये।

(7) प्रेम कथाएँ अधिकांशतः प्रबन्ध शैली में रची गयी हैं इनमें अलौकिक प्रेम की अभिव्यंजना के साथ ही कथा प्रबन्ध के निर्वाह का सफल प्रयत्न हुआ है।

(8) भाव व्यंजना सूफी काव्य की एक अत्यन्त विशेषता है। इन प्रेमाख्यानक कथाकारों की पहुँच मानव हृदय के सूक्ष्म भावों तक थी और यही कारण है कि इनके संयोग वियोग के वर्णन अत्यन्त मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी बन पडे हैं। इन कवियों ने प्रेम को जीवन का सर्वोपरि तत्व मानते हुए उसके प्रति अत्यन्त उच्च एवं उदार दृष्टिकोण का परिचय दिया है।

(9) सूफी आख्यान काव्यों की एक प्रमुख विशेषता रहस्यवाद है। इन काव्यों में रहस्यवाद की बड़ी सुन्दर एवं सरल व्याख्या हुयी है। इनमें दार्शनिकता के स्थान पर रागात्मक अनुभूति को प्रश्रय दिया गया है। सूफी कवियों ने समान जगत को असत्य एवं उपेक्षणीय ठहरा कर नहीं अपितु प्रेम के साधन द्वारा अव्यक्त सत्ता को व्यक्त रूप से प्रकट किया है। यही कारण है कि इसमें सन्तों की दुर्बोधता तथा नीरसता के स्थान पर मधुरता और स्पष्टता आ गयी है।

(10) प्रेमगाथा के कवियों ने प्रायः लो प्रचलित अवधी भाषा को ही अपने काव्य में अपनाया है छन्दों के प्रयोग में भी इनमें समानता पायी जाती है। सभी कवियों ने दोहा

और चौपाइयों में ही ग्रन्थ रचना की है। यही छन्द आगे चलकर इतने लोकप्रिय हुए कि तुलसी ने अपने पूरे काव्य ग्रन्थ रामचरित मानस की रचना के लिए इन्हीं छन्दों को परम्परा के रूप में लिया है।

उपर्युक्त विशेषताओं से स्पष्ट है कि इस काव्यधारा के कवि जहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनों हैं, वहाँ दोनों वेदान्त तथा सूफी दर्शनों की भी अवतारक हुयी है। इसकी अवधी भाषा, फारसी लिपि, प्रबन्धात्मकता तथा मसनवी शैली, हिन्दू कथा तथा मुस्लिम आध्यात्मिकता दोनों धर्मों के समन्वित रूप के ग्रहण के सूचक तत्व हैं।

प्रश्न 14—सूफी मत के सिद्धान्तों का उल्लेख करते हुए सूफी मत में वर्णित चार अवस्थाएँ कौन-सी हैं। उनकी भारतीय भक्ति-मार्ग के साथ संगति बैठती है या नहीं ?

उत्तर—भारत में आकर सूफी मत ने भारतीय संस्कृति के प्रभाव से कोमलतम दार्शनिक रूप धारण करके धीरे-धीरे हिन्दू जाति का विश्वास और आदर प्राप्त कर लिया था। अपने धर्म प्रचार के लिए इन सूफियों ने साहित्य को विशेष साधन बनाया। हिन्दी का सूफी साहित्य दो भाषाओं में मिलता है (1) हिन्दवी (2) अवधी। इन भाषाओं में रचित काव्य का साहित्यिक दृष्टि से बड़ा महत्व है। सूफी साहित्य के दार्शनिक सिद्धान्त इस प्रकार हैं—

(1) **ईश्वर**—सूफी काव्य में ईश्वर की परिभाषा हिन्दू-मुस्लिम सिद्धान्तों के अनुरूप पड़ती है। उसका नाम हक है। वह निराकार, अजन्मा, बेमिसाल है वह व्यापक और सृष्टि कर्त्ता भी है, परन्तु आत्मा से भिन्न नहीं है। आत्मा, साधना की चार अवस्थाएँ पार कर उस तक पहुँच जाती हैं। सूफियों के ईश्वरवाद पर वेदान्त के अद्वैतवाद का प्रभाव है। यही प्रभाव उन्हें सन्तमत के निकट लाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सूफियों ने ईश्वर की कल्पना भारतीय विचारधारा के प्रतिकूल स्त्री रूप में की हैं। यहाँ इस्लामी प्रभाव स्पष्ट है।

(2) **जीव**—सूफी मत में ब्रह्म और जीव का सम्बन्ध कुरान सम्मत है। स्वामी सेवक का मान्य न होकर वेदान्त सम्मत ऐक्य सम्बन्ध स्वीकृत है सूफियों के अनुसार आदमी अल्ला का प्रतिरूप है।

(3) **सृष्टि**—सूफियों ने इस संसार और संसार के सभी उपकरणों को अल्लाह के अंग प्रत्यंग की झलक माना है। सूफी साधकों के अनुसार जीव सृष्टि में प्रतिबिम्बित अल्लाह के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उसमें तन्मय हो जाता है और इस प्रकार वह उस तक पहुँच जाता है। इस प्रकार संसार सूफी साधकों के अनुसार मिथ्या न होकर साधना स्थल है। ब्रह्म का प्रतिरूप होने से सत्य है।

(4) **प्रेम**—सूफी साधना में प्रेम के अत्यधिक महत्व के कारण ही इन सूफियों को प्रेम मार्गी कहा है। सूफियों ने ईश्वर की स्त्री रूप में कल्पना की है। इन्होंने प्रेम को ईश्वर प्राप्ति का एक साधन स्वीकार किया है। सूफियों ने ईश्वर की स्त्री रूप में कल्पना करके साधक की प्रियतमा के प्रति ललक का अनूठा चित्रण किया है।

(5) **शैतान**—सूफियों ने वेदान्त की माया के समान ब्रह्म और जीव के मिलन में बाधक शैतान की कल्पना की है। शैतान साधक को अपने पथ से विचलित कर देता है।

(6) **गुरू**—शैतान के प्रभाव को समाप्त करने, साधक में प्रियतमा की प्राप्ति की ललक उत्पन्न करने साधना मार्ग की विकट कठिनाइयों ने उसे सम्भालने तथा लक्ष्य सिद्धि तक पहुँचाने के लिए सूफी मत में गुरू की महत्ता स्वीकृत है। सूफी गुरू के बिना साधक की गति नहीं मानते।

(7) **ब्रह्म और जीव का एकत्व**—सूफी सिद्धान्त के अनुसार जीव में छद्म भाव के दूर होते ही उसमें ज्ञान का उदय होता है और उसे सोऽहम की अनुभूति होने लगती है। इसे सूफियों ने अनहलक कहा है। कुछ सूफी जीव का ब्रह्म में सर्वथा लोप हो जाना मानते हैं, और कुछ अंशतः। प्रायः सूफियों ने शराबी और पानी के समान ही ब्रह्म और जीव का ऐक्य माना है।

स्पष्ट है कि सूफी मत भारतीय तथा अभारतीय सिद्धान्त एक साथ लिए हुए हैं। सूफी मत में साधक की चार अवस्थाएँ वर्णित की गयी हैं। जो इस प्रकार हैं—

(1) शरीयत
(2) तरीकत
(3) हकीकत
(4) मारफत।

उपर्युक्त चारों अवस्थाओं का साम्य भारतीय पद्धति से बैठ जाता है। शरीयत को हमारे यहाँ विवेकपूर्ण आचरण कहा गया है। तरीकत को उपासना एवं वैराग्य भाव का विकास कहा गया है। हकीकत को ज्ञान की प्राप्ति, सत्य का सम्यक बोध कराने वाला माना जाता है और मारफत सिद्धावस्था या, प्रेमावस्था में लीन हो जाने को कहा जाता है इस प्रकार सूफी मत की साधना पद्धतियाँ भारतीय भक्ति पद्धति से पूर्णतया मेल खाती है। इसी को तुलसीदास ने श्रुति सम्मत विवेक कहा है।

प्रश्न 15—प्रेमाश्रयी एवं ज्ञानाश्रयी शाखा के काव्यों की प्रमुख विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।

उत्तर—निर्गुण काव्यधारा की दो प्रमुख शाखाएँ हैं: ज्ञानाश्रयी काव्यधारा और प्रेमाश्रयी काव्यधारा, यह धाराएँ अलग-अलग हैं। परन्तु फिर इसमें कुछ समानताएँ हैं जो दोनों को एक-दूसरे से जोड़ती हैं। और कुछ विषमताएँ भी हैं जो दोनों को एक दूसरे से अलग करती हैं।

समानताएँ—इन दोनों धाराओं में जो भी समानताएँ हमें देखने को मिलती हैं। निम्नलिखित हैं—

(1) **गुरू का महत्व**—दोनों ही धाराओं के काव्यों में गुरू को महत्व दिया गया है। गुरू साधक को सिद्धि तक पहुँचाने का माध्यम है। गुरू की कृपा से दोनों ही माया या शैतान के द्वारा उपस्थित किए गए व्यवधानों से मुक्ति पाते हैं दोनों ही बात को स्वीकार करते हैं कि गुरू के बिना ज्ञान नहीं और ज्ञान के बिना सिद्धि नहीं हैं।

(2) **प्रेम का महत्व**—निर्गुण काव्य धारा की प्रेमाश्रयी धारा तो भी ही प्रेम काव्य को अधिक महत्व देते परन्तु ज्ञान मार्गी सन्त काव्य धारा में प्रेम के महत्व को स्वीकारा गया है। दोनों ही निराकार परम ब्रह्म के प्रेम के साधक है।

(3) **साधक**—दोनों ही प्रकार के कवि साधक हैं जिसकी साधना पर हठ योग तथा अद्वैतवाद का प्रभाव पड़ा है।

(4) **माया या शैतान**—दोनों ही काव्यों में साधना के मार्ग में माया या शैतान को व्यवधान के रूप में स्वीकार किया गया है। लेकिन सन्त जहाँ इसे पूर्ण त्याज्य मानते हैं वहीं सूफी इसे प्रेम की दृढ़ता के लिए आवश्यक मानते हैं।

(5) **रहस्यवादी**—दोनों ही धाराओं के कवियों के काव्य में रहस्यवाद की झलक मिलती है। आचार्य शुक्ल के अनुसार भेद बस इतना है "कि सूफियों का रहस्यवाद शुद्ध भावात्मक कोटि में आता है जबकि सन्तों का रहस्यवाद साधनात्मक कोटि में आता है।

(6) **विरह का उन्मक्त वर्णन**—दोनों ही काव्यों में विरह का उन्मुक्त वर्णन हुआ है। दोनों ही काव्यों में विरह की पीड़ा की अनुभूति की गयी है। दोनों मतों में प्रचारात्मक भावना की प्रचुरता है।

वैषम्य—निर्गुण काव्य धारा की इन दोनों शाखाओं में जहाँ हमें समानता देखने को मिलती है वहीं कुछ विषमताएँ भी दृष्टि गोचर होती है जिनके कारण यह दोनों धाराएँ अलग-अलग दिखाई देती हैं यह विषमताएँ इस प्रकार हैं—

ज्ञानमार्गी शाखा	प्रेममार्गी शाखा
1. इसमें ज्ञान को प्रधानता दी गयी है। सन्तों ने आत्म ज्ञान द्वारा ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग बताया है।	1. इसमें प्रेम तत्व को प्रधानता दी गयी है। परमात्मा को प्रेयसी तथा जीव को प्रियतम मानकर प्रेम द्वारा परमात्मा के दर्शन की बात कही है।
2. ज्ञान मार्गी काव्य धारा में प्रबन्ध काव्य की रचना का अभाव है, वहाँ मुक्तक रचना प्राधान्य है।	2. प्रेमाश्रयी धारा के सभी कवियों ने प्रबन्धात्मक रचनाएँ की हैं।
3. ज्ञानमार्गी सन्तों ने ज्ञान माया, ब्रह्म संसार, मोक्ष आदि पर स्वतन्त्र विचार व्यक्त किए हैं।	3. प्रेममार्गी कवियों ने प्रचलित लौकिक कथाओं के माध्यम से अपनी बात कही है।
4. सन्त काव्य में ऐसा कुछ नहीं मिलता।	4. प्रेममार्गी काव्य में प्रेम और शृंगार का विस्तृत वर्णन मिलता है प्रेममार्गी कवियों ने संयोग एवं वियोग दोनों पक्षों का विस्तृत वर्णन किया है।
5. प्रेम काव्यधारा के समान काव्य में किसी प्रकार की रूढ़ियों का वर्णन नहीं है।	5. प्रेम काव्य धारा के कवियों ने अपनी रचनाओं में कथानक रूढ़ियों का भी बहुत प्रयोग किया है।
6. सन्त काव्य में सामाजिक रूढ़ियों, अन्ध विश्वासों और भेदभावों पर गहरा प्रहार किया गया है। सन्त कवियों का लक्ष्य समाज सुधार करना था।	6. प्रेम काव्य में खण्डन मण्डन की यह प्रवृत्ति नहीं मिलती उनका लक्ष्य सन्त कवियों की भाँति समाज सुधार करना नहीं था।
7. सन्त कवियों की भाषा का रूप खिचड़ी था।	7. प्रेम काव्य परम्परा के कवियों ने प्रायः अवधी भाषा में काव्य रचना की है।
8. सन्त काव्य में धार्मिक एकता द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता के उद्देश्य की पूर्ति की है, कबीर ने केवल भिन्न प्रतीत होती हुई परोक्ष सत्ता की एकता का आभास दिया था।	8. सूफी कवियों ने इस उद्देश्य की पूर्ति सांस्कृतिक एकता द्वारा की है। प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता जायसी ने पूरी की।
9. सन्त काव्य में प्रकृति को उदासीन भाव से देखा गया।	9. सूफी काव्य में प्रकृति का समस्त सौन्दर्य ईश्वर के सौन्दर्य की छाया मात्र है। अतः प्रकृति सूफियों के लिए आकर्षक तथा स्पृहणीय बनी रही।

	प्रकृति का इनके काव्य में रागात्मक चित्रण किया गया है।
10. सन्त काव्य में कलापक्ष प्रायः उपेक्षित ही रहा।	10. परन्तु सूफी काव्य में कलापक्ष भी अपने उत्कर्ष के साथ व्यक्त हुआ है।

प्रश्न 16—सगुण भक्ति काव्य की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में जो धाराएँ दिखाई देती हैं। उनमें से निर्गुण काव्य धारा अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। तथा सगुण भक्ति धारा उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है। हिन्दी साहित्य की दृष्टि से हिन्दी साहित्य जितना सगुण भक्ति धारा से समृद्ध हुआ उतना अन्य किसी से नहीं। यह वह भक्ति धारा है जो ईश्वर के सगुण रूप की उपासना करती है। सगुण भक्ति धारा के अन्तर्गत राम भक्ति और कृष्ण भक्ति की धाराएँ प्रमुख हैं। इस काव्य में ज्ञान, कर्म और भक्ति में से भक्ति को प्रमुखता दी है। इन भक्तों ने सगुण भक्ति का सीधा मार्ग जनता के समक्ष प्रस्तुत किया। नाथ पंथी सिद्ध आदि के हठयोग आदि से दुर्गम और दुसाध्य हुई भक्ति को एक नई सहज और सरल राह मिली जिसे पाकर जन सामान्य ने सन्तोष की साँस ली। सगुण भक्ति काव्य की अनेक विशेषताएँ हैं। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

(1) **ईश्वर का सगुण रूप**—मध्यकालीन सगुण भक्त कवियों का उपास्य ईश्वर रहा है। वैष्णव आचार्यों की मान्यता है कि सगुण ईश्वर के गुण अलौकिक और अप्राकृत हैं। वे मानते हैं कि लौकिक गुण परिवर्तनशील होते हैं तथा अस्थिर व कार्य कारण जनित होते हैं। सगुण ईश्वर के दिव्य गुण इन स्थितियों से बचे हुए हैं। सगुण भक्ति काव्य में ईश्वर को संसार का सृष्टा, पालनकर्त्ता और विध्वंसकर्त्ता बतलाया है। विष्णु के रूप में ईश्वर के तीनों ही रूप आकर मिल गये हैं। सगुण भक्त कवियों के लिए ईश्वर चल भी है, अचल भी, मूर्त भी है और अमूर्त भी वावन भी है और विराट भी सगुण भी है और निर्गुण भी।

(2) **अवतारी दृष्टिकोण**—सगुण भक्ति काव्य में अवतारवाद की प्रधानता है। इस काव्य धारा के प्रायः सभी कवियों की मान्यता यह रही है कि ईश्वर असीम सीमा को स्वीकार करके अपनी इच्छा से लीला करने के लिए अवतार ग्रहण करता है। वैष्णवों की अवतार भावना में गीता का ऐश्वर्य योग कार्यरत दिखलाई देता है।

(3) **लीला रहस्य**—सगुण भक्ति काव्य के अन्तर्गत लीलावाद का विशेष महत्व रहा है। यही कारण है कि तुलसी के मर्यादा पुरुषोत्तम राम भी लीलाप्रिय है और सूर के नटखट कृष्ण भी। सूर के कृष्ण व तुलसी के राम दोनों का अवतार का उद्देश्य ही लीला करना है। तुलसी का रामचरित मानस राम की तथा सूर का सूरसागर कृष्ण की लीला चरित्रों से भरा हुआ है।

(4) **सौन्दर्योपासना**—सगुण भक्ति साधना में सौन्दर्य की उपासना का विशेष महत्व है। प्रारम्भ में सगुण भक्ति का उपासक नाम रूप मुक्त मूर्ति के सामने उपासना करता है, फिर निरन्तर भावना, चिन्तन और गुण कीर्तन से अपने आराध्य में ऐसा रम जाता है कि उसे किसी भौतिक उपकरण की आवश्यकता ही नहीं रहती है। कृष्ण भक्ति और राम भक्ति दोनों में ही सौन्दर्य की उपासना के लिए ममत्व दिखलाया गया है। कृष्ण भक्ति के अन्तर्गत कृष्ण का सौन्दर्य चंचल है तो राम भक्ति में राम का सौन्दर्य शक्ति और शील से युक्त हो गया।

(5) **अद्वैतवाद का विरोध**—सगुण भक्ति काव्य के अन्तर्गत शंकर के अद्वैतवाद का विरोध किया गया है। भागवत के अतिरिक्त हिन्दी के सगुण भक्ति काव्य पर रामानुज, निम्बार्क, मध्वाचार्य तथा बल्लभाचार्य के दार्शनिक विचारों का प्रभाव पडा है। रामानुज के विशिष्ट द्वैत में ब्रह्म प्रकारी हैं। और जीव तथा प्रकृति उसके प्रकार हैं। जीव की कृत-कृत्यता इसी में है कि वह स्वयं को भगवान का विशेषण मानें। आत्म-समर्पण के द्वारा जीव को यह स्थिति प्राप्त हो सकती है। परमात्मा अंशी है और जीव को परतन्त्र माना है।

(6) **जाति भेद का तिरस्कार**—सगुण भक्ति काव्य में प्रायः जाति भेद को अमान्य ठहराया है। यह काव्य विश्व मानवतावाद सांस्कृतिक एकता के साथ साथ लोक मंगल की भावनाओं का प्रसारक और व्याख्याकार बन कर आया है। निश्चय ही जहाँ जाति-पाँति के बन्धन अस्वीकार किए गये हैं, वहीं यह भी स्पष्ट कह दिया गया है कि भक्ति करने का अधिकार सभी को है चाहे वह ब्राह्मण हो या शूद्र हो।

(7) **विविध स्रोतों से अनुप्राणित**—मध्यकालीन भक्ति काल के प्रमुख उपजीवी ग्रन्थों में रामायण और भागवत का प्रमुख स्थान है। सगुण-भक्ति काव्य पर रामायण की अपेक्षा भागवत का प्रभाव अधिक दिखलाई देता है। हिन्दी के भक्ति साहित्य पर प्राकृत अपभ्रंश का प्रभाव नाम मात्र को है। हाँ संस्कृत का प्रभाव अवश्य ही दिखाई देता है। संस्कृत के भागवत, गीता, विष्णु पुराण और अनेक संस्कृत काव्यों और नाटकों का प्रभाव सगुण भक्ति काव्य पर देखा जा सकता है। परन्तु इस बात से वह अर्थ लगा लेना गलत होगा कि इस काल के साहित्य में मौलिकता का अभाव है। यह काव्य भक्तों की अनुराग मयी भक्ति प्रधान और महत्वपूर्ण मौलिक अनुभूतियों से भरा पड़ा है।

(8) **नवधा भक्ति**—प्रायः सभी भक्तिकालीन कवियों ने नवधा भक्ति को विशेष महत्व दिया है। ऐसी स्थिति में यह कहना उचित प्रतीत होता है कि राम काव्य और कृष्ण काव्य में भी इसी प्रकार की भक्ति को महत्व प्राप्त है। कृष्ण भक्ति का मूल आधार रागानुगा भक्ति है।

(9) **लोक जीवन का चित्रण**—सगुण भक्ति धारा में अपने आराध्य देवों को भी लोक जीवन व्यतीत करते दिखाया गया है। तुलसी के राम भी साधारण मानव रूप में पृथ्वी पर रह रहे थे और सूर के कृष्ण भी हमें ग्वालों के साथ गायें चराते हुए बाल हठ करते हुए दिखायी देते हैं। अष्ट छाप साहित्य तथा तुलसी के काव्य में भारतीय जीवन की सुन्दर और सांस्कृतिक झाँकी प्रस्तुत की गयी है।

(10) **भक्ति भावना**—सगुण भक्ति काव्य में हमें दो प्रकार की भक्ति भावना देखने को मिलती है : (1) सेवक सेव्य भाव की दास्य भक्ति और दूसरी सखा भाव की भक्ति राम काव्य परम्परा में सेवक सेव्य भाव की भक्ति की प्रधानता रही है और कृष्णभक्ति काव्य में सखा भाव की रागानुगा भक्ति के दर्शन हुए हैं।

(11) **कलापक्ष सम्बन्धी सौन्दर्य**—सगुण साधकों के काव्य का कलापक्ष सभी दृष्टियों से पुष्ट और काव्यशास्त्र सम्मत है। प्रायः सभी कविशास्त्रीय नियमों से परिचित थे। अतः कलापक्ष की दृष्टि से इनके काव्य में कहीं भी शिथिलता दिखायी नहीं देती। काव्य के भाव और शैली आदि सभी पक्ष पूर्ण रूपेण संयमित और सक्षम हैं। प्रबन्ध और मुक्तक काव्यों के अन्तर्गत आने वाली सभी काव्य विधाओं के सगुण भक्ति काव्य में पूर्ण यौवन पर देखा जा सकता है। गीत शैली का विकसित रूप भी इनके काव्यों में प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। पूर्ववर्ती तथा समी समकालीन काव्य शैलियों को इन्होंने प्रत्यक्षतः प्रश्रय दिया बल्कि विकास के चरम शिखरों तक पहुँचाया। ब्रज और अवधी काव्य में दोनों भाषाओं के सौन्दर्य और माधुर्य की इन कवियों ने पूर्ण रूप से रक्षा की और

इनके सौष्ठव को निखारा। सभी दृष्टियों से भाषा को सजीव तथा सक्षम बनाया। छन्द अलंकारों के प्रयोग करने में भक्त कवि सिद्धहस्त थे। अलंकारों की योजना भी बहुत सुन्दर है। रसों की योजना उत्कृष्टतम है।

सभी दृष्टियों से सगुण भक्ति धारा काव्य निर्मल एवं निर्दोष है। निश्चय ही सगुण भक्ति काव्य एक ऐसा काव्य है जो काव्य की सभी विशेषताओं को अपने में समेटे हुए है।

प्रश्न 17—राम काव्य परम्परा का संक्षिप्त विवेचन करते हुए राम काव्य परम्परा की विशेषताओं को उल्लिखित कीजिए ?

उत्तर—रामभक्त कवियों में तुलसी का स्थान सर्वोपरि है हिन्दी रामकाव्य के विकास में अन्य कवियों का योगदान भी महत्वपूर्ण है, परन्तु तुलसी ने अपनी अनन्त एवं अगाध प्रकाश राशि में उनकी आभा को निमज्जित कर दिया है। हिन्दी रामकाव्य के विकास की परम्परा इस प्रकार है—

1. **अग्रदास**—अग्रदास ने स्वामी रामानन्द के शिष्य कृष्णदास से दीक्षा ली थी। अष्टयाम में इन्होंने सीता वल्लभराम की दैनिक लीलाओं का चित्रण किया है अग्रदास जी स्वयं को अग्रअली नाम से जानकी जी की सखी मानकर काव्य रचना करते थे। राम भक्ति परम्परा में रसिक भावना के समावेश का श्रेय इन्हें ही प्राप्त है। इसी रसिक भावना का चरमोत्कर्ष रीतिकाल में दिखायी देता है।

2. **ईश्वर दास**—इनकी राम कथा से सम्बद्ध रचनाएँ भरत मिलाप और अंगद पैज है भरत मिलाप में भरत राम वनवास के समय अयोध्या में नहीं थे जब उन्होंने यह समाचार सुना और दुःख से भर उठे और विलाप करने लगे, सारी प्रजा के साथ वह राम से मिलने वन गये। इन्होंने इसी कोमल प्रसंग को अपने भरत मिलाप नाम काव्य ग्रन्थ मे व्यक्त किया है। 'अंगद पैज' में अंगद का रावण की सभा में खड़े हो जाने का वीररस पूर्ण वर्णन मिलता है इन ग्रन्थों के आधार पर ही यह राम भक्ति परस्परा में अपना स्थान रखते हैं।

3. **तुलसीदास**—राम भक्त कवियों में गोस्वामी तुलसीदास का स्थान सर्वोपरि है। उनके ग्रन्थों में राम काव्य का चरमोत्कर्ष देखने को मिलता है। तुलसीदास ने अपने राम में शील, सौन्दर्य, और भक्ति का समन्वय करके उन्हें लोक हितकारी आदर्श मानव के रूप में चित्रित किया है। राम के व्यापक चरित्र में हिन्दू जनता अपने जीवन की सम्पूर्ण दशाओं को प्रतिबिम्बित देखती है तुलसी का राम चरित मानस एक उच्चकोटि का महाकाव्य है। इसमें लोक संग्रह की भावना है तथा समन्वय की विराट चेष्टा है राम भक्ति शाखा में तुलसी के पश्चात् उनके समकक्ष अन्य कोई भी कवि दिखाई नहीं देता।

4. **नाभादास**—गोस्वामी जी के समकालीन कवियों में अग्रदास के शिष्य नाभादास का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनका 'भक्तमाल' इस परम्परा का विधायक एवं सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ है।

5. **केशवदास**—तुलसीदास तथा उनके परवर्ती कवियों के पश्चात् राम काव्य की रचना करने वालों में केशवदास का नाम उल्लेखनीय है। केशवदास ने राम काव्य परम्परा में 'रामचन्द्रिका' नामक ग्रन्थ को जोड़ा।

रीति काल में शृंगार रस की प्रधानता कृष्ण के रूप का लोगों ने खूब उपयोग किया राधाकृष्ण प्रेम को उन्होंने अपनी शृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया परन्तु गोस्वामी तुलसीदास ने जो राम के रूप की प्रतिष्ठा की थी। उसे धूमिल करने का किसी भी रीति कवि को साहस नहीं हुआ। राम चरित पर अनेक रचनाएँ तो नहीं हुयो परन्तु यह क्षेत्र सर्वत्र अछूता भी नहीं रहा। राम चरित पर कविता करने वालों में प्रमुख

हैं—महाराजा विश्वनाथ सिंह, महन्त रामचरण दास, जीवाराम। आधुनिक काल में राम-चरित उपाध्याय, रामनाथ ज्योतिषी, मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, बल्देव प्रसाद मिश्र, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला राम चरित पर काव्य लिखने वाले प्रमुख कवि हैं।

इस प्रकार राम कथा भक्तिकाल से लेकर आधुनिक काल तक निरन्तर हिन्दी काव्य को अनुप्राणित करती आ रही है हिन्दी के अनेक कवियों ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र से प्रेरणा प्राप्त की।

राम भक्ति काव्य की विशेषताएँ—(प्रवृत्तियाँ) राम काव्य की प्रवृत्तिगत विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. **आराध्य रूप में राम का रूप ग्रहण**—राम भक्ति शाखा में राम की पूर्ण ब्रह्म के रूप में कल्पना की गयी है तुलसी का स्पष्ट उद्घोष है—

जेहि इमि गावहि वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोई दसरथ सुत भगत हित, कौसल पति भगवान॥

ब्रह्म के अनेक रूपों और नामों में इस शाखा के कवियों ने राम रूप को ही ग्रहण किया है।

2. **ब्रह्म की प्राप्ति के माध्यम के रूप में दास्य भक्ति ग्रहण**—गोस्वामी जी के अनुसार शरीर मे सबसे अधिक दुर्लभ मानव शरीर है, क्योंकि इसके द्वारा जीव सभी अभीष्ट गतियाँ प्राप्त कर सकता है। इस शरीर का सबसे मूल्यवान उपयोग परमार्थ साधन में है, विषयोपभोग में नहीं। इसके तीन मार्गों ज्ञान, कर्म, भक्ति की शास्त्रीय मान्यता है। उनके अनुसार ज्ञान, भवसागर जनित अनेक क्लेशों को नष्ट करने में समर्थ अवश्य है। परन्तु उसका स्वरूप निर्धारण, बोध और साधन आदि सभी कठिन हैं अतः उसकी प्राप्ति सर्वजन सुलभ नहीं है। भक्ति एक मात्र सुगम और सुलभ साधन है। इस राम भक्ति में उन्होंने सेवक की भावना को व्यक्त किया है।

3. **मर्यादा का निर्वाह**—राम काव्य में औचित्य एवं मर्यादा के निर्वाह के प्रति विशेष तत्परता और सतर्कता बरती गयी है। तुलसी ने अन्य रसों के समान शृंगार के संयोग एवं वियोग पक्षों का ऐसा वर्णन किया है' जो बिना लज्जा के सबके सामने पढ़ा जा सके। तुलसी ने शृंगार वर्णन में भी मर्यादा का निर्वाह किया है। उनके राम ही मर्यादा पुरुषोत्तम नहीं हैं वरन् उनके काव्य के सभी पात्र मर्यादा का निर्वाह करने वाले हैं। इस प्रकार आदर्श और मर्यादा का निर्वाह राम काव्य की प्रमुख विशेषता है।

4. **उदारता एवं समन्वय भाव**—राम काव्य में कहीं भी संकीर्णता तथा अनुदारता नहीं मिलती। विष्णु के अवतारी राम को मनुष्य रूप में ग्रहण करते हुए भी तुलसीदास जी ने गणेश की वन्दना की है। शिव और राम को एक-दूसरे के अभिप्रेमी के रूप मे चित्रित किया है। भक्ति को महत्व देते हुए भी ज्ञान और कर्म की अवज्ञा नहीं की वस्तुतः लोक संग्रह की भावना से राम काव्य में समन्वय का ही प्रयत्न हुआ है।

5. **राम के लोक रक्षक रूप का वर्णन**—राम काव्य में राम के लोक रक्षक रूप को ही उभारा गया है। राम भक्त कवियों ने राम को भक्तों का उद्धार करने वाला, पापियों का उद्धार करने वाला तथा दुर्बलों की रक्षा करने वाला बताया है। तुलसी के रामचरित मानस में तो राम को हम रक्षा के लिए सदैव तत्पर देखते हैं।

6. **रस योजना**—राम काव्य में भक्ति भावना की प्रमुखता है। इस परम्परा में भक्ति के सेवक सेव्य भाव का उत्कर्ष हुआ है। इसी कारण राम काव्य परम्परा में

शांत-रस का सर्वाधिक परिपाक हुआ है। तुलसी के काव्य तक तो शांत-रस की परम्परा चली, किन्तु आगे चलकर राम भक्ति में कृष्ण भक्ति के अनुकरण पर माधुर्य भावना बल पकड़ती गयी और सखी सम्प्रदाय तथा रसिक सम्प्रदाय में श्रृंगार रस का यथेष्ट परिपाक हुआ है। राम भक्ति काव्य में यथासम्भव सभी रसों का समावेश हुआ है।

7. **चरित्र चित्रण**—राम काव्य के पात्रों के चरित्र चित्रण अनुकरणीय हैं। राम काव्य में तीनों प्रकार के पात्रों (रजोगुणी, तमोगुणी और सतोगुणी) का विवेचन हुआ है। अन्त में असत्य पर सत्य की विजय दिखायी गयी है। तुलसी के काव्य का उद्देश्य तो समाज में व्याप्त अनेकता का समन्वय करना था जो ऐसी ही पात्रों की सृष्टि से सम्भव था।

8. **ब्रज एवं अवधी भाषाएँ**—राम काव्य प्रमुख रूप से तो अवधी भाषा में ही लिखा गया किन्तु साहित्यकारों ने कुछ रचनाएँ ब्रजभाषा में भी रची हैं। तुलसी की गीतावली और विनय पत्रिका ब्रजभाषा में रचित हैं। तुलसी ने अवधी भाषा का बहुत अधिक विकास किया है। इनका ब्रज और अवधी दोनों ही भाषाओं पर अधिकार था।

9. **छन्द एवं अलंकार योजना**—राम काव्य में दोहा चौपाई, छप्पय, सोरठ कवित्त, सवैया, घनाक्षरी त्रिभंगी, तोमर आदि अनेक छन्दों का प्रयोग हुआ है। तुलसी ने उस समय प्रचलित प्रायः सभी काव्य शैलियों को अपनाया।

छन्दों के अतिरिक्त राम काव्य परम्परा की अलंकार योजना भी बहुत अधिक उल्लेखनीय है। तुलसी के काव्य की समस्त परम्परा अनुप्रासिक है। अनुप्रास अलंकारों के अतिरिक्त उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, विभावना, काव्यलिंग विशेषोक्ति आदि अलंकारों के सुन्दर उदाहरण राम काव्य परम्परा में मिलते हैं।

भाषा-शैली—राम काव्य में उस समय की प्रचलित दोनों भाषाओं—अवधी और ब्रज का तथा आगे चलकर आधुनिक युग में खड़ी बोली का प्रयोग हुआ है। दोहा चौपाई, कवित्त-सवैया आदि विविध शैलियों का प्रयोग राम काव्य में सफलतापूर्वक हुआ है।

प्रश्न 18—कृष्ण भक्ति काव्य के उद्भव और विकास पर प्रकाश डालते हुए कृष्ण भक्ति काव्य के प्रणेता चारों सम्प्रदायों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उत्तर—कृष्ण भक्ति के उद्भव और विकास में धार्मिक दृष्टि निवार्क सम्प्रदाय पर पूर्णतया आधारित है। इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक जयदेव और विद्यापति माने जाते हैं। 12वीं शताब्दी में संस्कृत की सरस कोमलकांत पदावली में जयदेव ने कृष्ण की लीलाओं का गीत गोविन्द काव्य में गान किया तत्पश्चात 14वीं शताब्दी में मैथिल कोकिल विद्यापति ने इसी धारा को आगे बढ़ाया और विद्यापति इसी कारण अभिनव जयदेव कहलाए। महाप्रभु चैतन्य ने विद्यापति के पदों का ब्रजभाषा क्षेत्र में भी खूब प्रचार व प्रसार किया। कहा जाता है कि महाप्रभु चैतन्य विद्यापति के गीतों को गाते-गाते भक्ति रस से आप्लावित होकर मूर्च्छित हो जाया करते थे। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विद्यापति ही हिन्दी के प्रथम कृष्ण भक्त कवि हुए हैं।

विद्यापति के पश्चात् इस धारा को आगे ले जाने वालों में सन्त नामदेव का नाम आता है। तदनन्तर श्री भट्ट का नाम आता है श्री भट्ट द्वारा रचित 'युगल शतक' निम्बार्क सम्प्रदाय में आदिबाणी के रूप में विख्यात है। श्री भट्ट का समय 16वीं शती है। तदनन्तर तो कृष्ण भक्तों की एक अविछिन्न धारा चल निकली जिनके अन्तर्गत से सूर, नन्ददास, कुंभनदास-छीतस्वामी मीरा रसखान आदि प्रमुख हैं।

इसी प्रकार धर्म के क्षेत्र में निम्बार्क ने द्वैत-अद्वैत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया उसके पश्चात् तीन सम्प्रदाय विकसित हुए—माधव सम्प्रदाय, विष्णु सम्प्रदाय और बल्लभ सम्प्रदाय।

माधव सम्प्रदाय के प्रवर्तक मध्वाचार्य थे। इन्होंने सेवक सेव्य भाव की भक्ति की है। इनके द्वारा प्रचारित मत द्वैत सिद्धान्त कहलाया। विष्णु सम्प्रदाय के प्रवर्तक विष्णु स्वामी हुए इन्होंने कृष्ण की आह्लादिनी शक्ति के रूप में राधा की प्रतिस्थापना की। तत्पश्चात् श्री बल्लभाचार्य ने कृष्ण भक्ति के क्षेत्र में पुष्टि मार्ग की स्थापना की और उनका दार्शनिक मत शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद कहलाया। आचार्य बल्लभ ने ही कृष्ण भक्ति को सर्वाधिक लोकप्रिय और लोकग्राह्य बनाया। हिन्दी में कृष्ण भक्ति को उत्कर्ष इसी सम्प्रदाय के कवियों ने प्रदान किया। ये अष्टछाप के कवि श्रीनाथ जी के मन्दिर में भजनकीर्तन गाया करते थे। ये सभी उच्चकोटि के कवि एवं संगीतज्ञ थे इन्हीं कवियों ने श्रेष्ठ कृष्ण काव्य की सृजना की इनकी कविताओं में कृष्णधारा आसक्तियों, वात्सल्यासक्ति, संख्या सक्ति एवं परम विरहासक्ति का निरुपण हुआ है।

हिन्दी के कृष्ण काव्य प्रणेताओं के चार सम्प्रदाय हैं—बल्लभ सम्प्रदाय, राधाबल्लभी सम्प्रदाय, चैतन्य या गौड़ीय सम्प्रदाय, हरिदासीय सम्प्रदाय।

बल्लभ सम्प्रदाय—इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य बल्लभ थे। कालान्तर में सूरदास, नन्ददास, कुंभनदास आदि अष्ट छाप कवि दीक्षित हुए तथा कृष्ण काव्य का बहुत बड़ा अंश इन्हीं कवियों के द्वारा विरचित है।

राधाबल्लभ सम्प्रदाय—इसके प्रमुख कृष्ण भक्त कवि हैं—हित हरिवंश ध्रुवदास, हरिराम व्यास, नागरीदास तथा वृन्दावनदास।

हरदासीय सम्प्रदाय—इस सम्प्रदाय के कवि स्वयं हरिदास हैं यह तानसेन, बैजू तथा सूर के संगीत गुरु थे।

चैतन्य सम्प्रदाय के प्रमुख भक्त कवि हैं—भट्ट जी, सूरदास, मनमोहन।

उपर्युक्त साम्प्रदायिक कवियों के अतिरिक्त भक्तिकालीन कृष्ण काव्य को आगे की ओर बढ़ाने में मीरा, रसखान, नरहर, नरोत्तमदास आदि महत्वपूर्ण हैं।

प्रश्न 19—कृष्ण काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ बताते हुए उसकी कमियों का भी उल्लेख कीजिए।

उत्तर—हिन्दी साहित्य के भक्तिकालीन काव्य में कृष्ण भक्ति काव्य धारा का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। कृष्ण भक्ति का प्रारम्भ श्री बल्लभाचार्य ने किया था। बल्लभाचार्य ने ही पुष्टि मार्ग का प्रवर्तन किया। कृष्ण भक्तिशाखा में सूरदास, नन्ददास आदि प्रमुख कवि हुए हैं। इस काव्य की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) **कृष्ण की लीलाओं का गान**—कृष्ण काव्य की प्रथम प्रवृत्तिगत विशेषता कृष्ण की सगुण ब्रह्म रूप में कल्पना और कृष्ण को माधुरी का चित्रण है। कृष्ण कवियों ने कृष्ण के बाल और किशोर जीवन को लेते हुए उसकी मधुर लीलाओं के गान को अपने काव्य का विषय बनाया।

(2) **वात्सल्य एवं शृंगार रस की प्रधानता**—कृष्ण भक्त कवियों में सूर ने शृंगार का रस राजस्त्व स्थापित किया। आचार्य शुक्ल के अनुसार सूरदास वात्सल्य और शृंगार का कौना-कौना झाँक आये थे। सूर के अतिरिक्त अन्य कवियों में शृंगार का विस्तृत एवं गहन निरूपण अन्यत्र कहीं नहीं मिलता है। वात्सल्य के चित्रण में जितने विविध प्रसंगों और उनके अनेक भावों की उद्‌भावना सूर ने की है उतनी अन्य किसी भी कवि ने नहीं की। सूर के वात्सल्य वर्णनों को देखकर उसे काव्य का दसवाँ रस माना जाने लगा। वात्सल्य और शृंगार के अतिरिक्त सूर के काव्य में शान्तरस का अंकन भी हुआ है। कृष्ण भक्ति काव्य में रस की दृष्टि से सर्वाधिक लोकप्रिय क्षेत्र है। शृंगार रस का वर्णन।

शृंगार के दोनों पक्षों संयोग और वियोग का मार्मिक चित्रण कृष्ण काव्य में हुआ है। माधुर्य का कोई भी पक्ष सूर की दृष्टि से बच नहीं पाया है।

(3) **भक्ति का स्वरूप**—कृष्ण काव्य की द्वितीय विशेषता वात्सल्य, सख्य और माधुर्य भाव की भक्ति अपनाना है। आचार्यों ने भक्ति के शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और माधुर्य पाँच भेद बताये हैं और इनमें शान्त से दास्य दास्य से सख्य सख्य से वात्सल्य और वात्सल्य से माधुर्य उत्तरोत्तर उत्कृष्ट माना है। कृष्ण काव्य में सख्य और वात्सल्य का सुन्दर वर्णन तो हुआ है पर सर्वाधिक व्यापकता माधुर्य भाव के वर्णन की ही रही है।

(4) **उत्कट प्रेम का वर्णन**—कृष्ण काव्य की तीसरी विशेषता कृष्ण के प्रति उत्कट प्रेम का चित्रण है। कृष्ण का चरित्र ही प्रेममय है। कृष्ण भक्त कवि भी सच्चे प्रेमी थे। प्राय: कृष्ण भक्त सभी कवियों ने लौकिक प्रेम को हीं आध्यात्मिक प्रेम में परिवर्तित किया है। अत: उनके वर्णन कल्पना प्रसूत न होकर सच्चे प्रेमियों के निश्छल एवं उदात्त भावों का अभिव्यंजन हैं। ये कृष्ण भक्त के कवि कृष्ण की रूप माधुरी पर आसक्त होकर इस अनन्य भाव से काव्य रचना करते थे कि उनके काव्य का एक एक अक्षर कृष्ण की रूप माधुरी के मिठास में डूबा हुआ है।

(5) **संगीतात्मकता**—कृष्ण काव्य की कलागत विशेषता उसका संगीत प्रधान होना है। कृष्ण भक्त कवि संगीत विद्या में निपुण थे और अधिकांश कीर्तनियाँ थे। वे विविध राग-रागनियों के कुशल प्रयोक्ता थे। यही कारण है कि कृष्ण काव्य राग-रागनियों से निबद्ध है और उसमें समृद्ध गेयता है। आलोचकों का कथन है कि राधा और कृष्ण हैं ही विशुद्ध गीति काव्यात्मक पात्र। अत: कृष्ण काव्य में संगीत तत्व के समावेश में आश्चर्य की कोई बात नहीं।

(6) **मुक्तक शैली**—कृष्ण काव्य मुक्तक शैली में रचित है। यद्यपि कृष्णचरित महाकाव्योचित है। उसके जीवन के कितने ही पक्षों पर कितने ही महाकाव्यों की रचना की जा सकती है। कृष्ण कवियों ने प्राय: उसके रसिक रूप को ग्रहण करते हुए मुक्तक शैली को अपनाया है। इसमें कवियों ने अपनी रुचि के अनुसार कवित्त, सवैया, दोहा, रोला आदि छन्दों का प्रयोग किया है। ये छन्द इतने उपयुक्त सिद्ध हुए हैं कि उनका छन्दत्व ही निखर उठा है।

ब्रजभाषा का प्राधान्य—कृष्ण काव्य की अन्तिम विशेषता ब्रजभाषा का काव्य की भाषा के रूप में प्रयोग है। ब्रजभाषा कृष्ण काव्य में ऐसी उपयुक्त सिद्ध हुई कि अवधी के सिद्ध कवि तुलसीदास भी कृष्णलीला का वर्णन करने में इस भाषा के प्रयोग करने के लोभ का संवरण नहीं कर पाये। कृष्ण काव्य ने ब्रजभाषा को और ब्रजभाषा ने कृष्ण काव्य को माधुर्य प्रदान कर एक दूसरे को उपकृत किया।

कृष्ण भक्ति काव्य की न्यूनताएँ (त्रुटियाँ)

(1) **कृष्ण के लोक रंजक रूप का ग्रहण**—श्रीकृष्ण के विभिन्न रूपों-गीता का दार्शनिक, महाभारत का कर्मयोगी और भागवत का रसिक रूप में—कृष्ण भक्तों ने कृष्ण के रसिक रूप को ही ग्रहण किया। ये भक्त गीता में धर्म की रक्षा और पाप के विनाश के लिए युग-युग में अवतार लेने वाले कृष्ण को भूलकर गोलोक में नित्य बिहार करने वाले कृष्ण को ही ले बैठे। इन कवियों ने कृष्ण के बाल तथा किशोर जीवन को ही अपनाया। इसके कारण काव्य में आपेक्षित सात्विकता न रह सकी। शील और शक्ति से रहित सौन्दर्य किस प्रकार पतन का कारण बनता है यह सर्व साधारण से छिपा नहीं है।

(2) **श्रद्धातत्व का त्याग**—आचार्य शुक्ल के शब्दों में भक्ति की निष्पत्ति श्रद्धा और

प्रेम के योग से होती है। जहाँ श्रद्धा या पूज्य बुद्धि का अवयव जिसका लगाव धर्म से होता है छोड़कर केवल प्रेम लक्षणा भक्ति ली जाएगी। वहाँ अवश्य ही विलासिता से ग्रस्त हो जाएगी। वैष्णवों की शाखा ने केवल प्रेम लक्षणा भक्ति ली, फल यह हुआ कि उसने अश्लीलता की प्रवृत्ति जगाई। जिस राधा और कृष्ण के प्रेम को भक्तिकालीन कवियों ने गूढ़ातिगूढ़ चरम भक्ति का व्यंजक बनाया, उसको लेकर आगे के कवियों ने शृंगार की उन्माद कारिणी उक्तियों से हिन्दी काव्य को भर दिया।" जिसके फलस्वरूप आराध्य के प्रति मर्यादा एवं शालीनता का भाव लुप्त हो गया।

(3) **दार्शनिक जटिलता**—वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत और पुष्टिमार्ग के रूप में शंकर के अद्वैतवाद के विरुद्ध जिस नवीन दार्शनिक मत की प्रतिष्ठा की थी, उसके अनुसार कृष्ण गोपियों (नित्य मुक्तिन आत्माओं) के साथ गो लोक में नित्य रास करते हैं। इस रास को कृष्ण भक्तों ने रूपक मानकर ही प्रस्तुत किया और उससे अपनी भक्ति को पुष्ट किया परन्तु परवर्ती कवि रास के पीछे छिपे दार्शनिक तत्व को समझ न सके और इसे लौकिक लीला के रूप में ही ग्रहण करने लगे और भक्ति की आड़ में वासना परक अभिव्यक्ति होने लगी।

भक्त कवियों में वैराग्य भावना—भक्ति कालीन कवि विरक्त प्रकृति के साधु सन्त थे। ये प्राकृत गुणगान और सीकरी से काम को अपमान और भक्ति के सर्वथा प्रतिकूल मानते थे। उन्हें चने खाकर जीवन व्यतीत करना अभीष्ट था, किन्तु अपने आराध्य के अतिरिक्त किसी अन्य पर लेखनी चलाना उन्हें कदापि प्रिय नहीं था। परन्तु दरबारी कवियों ने इस प्रकार के जीवन को न चुनकर लक्ष्मी के आश्रय का स्थान चुना। भगवान की भक्ति उनके लिए परोक्ष वस्तु थी और इधर सामन्त लक्ष्मी की वर्षा कर रहे थे इस वातावरण में भक्त कवियों की वैराग्य-भावना, निरीह वृत्ति सन्तुष्टि बनाये रखना परवर्ती कवियों के लिए सम्भव न हुआ। अतः परवर्ती कवि भक्ति के व्याज से विलासमयी भावना को अभिव्यक्ति देने लगा। कृष्ण भक्ति में इसके लिए अवकाश पहले से ही था।

लोक मर्यादा का त्याग—बल्लभाचार्य ने प्रेम साधना में लोक मर्यादा को विशेष महत्व नहीं दिया। उन्होंने जिस उपासना पद्धति को ग्रहण किया, उसमें भोग राग तथा विलास की प्रभूत सामग्री के प्रदर्शन की प्रधानता थी। भोग विलास के इस आकर्षण का प्रभाव सेवक सेविकाओं पर कहाँ तक अच्छा पड़ सकता था। इसके अतिरिक्त कुछ लोग श्रद्धावश अथवा विवशतावश अपनी तरुण कन्याओं का विवाह ठाकुरजी की मूर्तियों से करने लगे। चल और अचल माया से प्राप्त आपूर्ण मन्दिरों में पवित्रता, संयम तथा आचार मर्यादा के निर्वाह की कल्पना कैसे की जा सकती थी?

समाज विमुखता—यद्यपि बल्लभाचार्य ने हिन्दुओं को मुसलमानों के उत्पात से बचाने के हित से एक मार्ग बनाया था। तथापि कृष्ण भक्तों का ध्यान समाज और समाज की समस्याओं के चित्रण की ओर नहीं गया। समाज किधर जा रहा है और साहित्य क्या अपेक्षा रखता है इस ओर कृष्ण कवियों ने देखने का कष्ट ही नहीं किया। तुलसी के काव्य में जो लोक संग्रह की भावना मिलती है। उसकी झलक भी हमें कृष्ण भक्ति काव्य में नहीं मिलती।

अत्यधिक शृंगारिकता—कृष्ण काव्य में माधुर्य भाव की भक्ति के ग्रहण होने के कारण कृष्ण भक्त कवियों ने राधा कृष्ण की रति विलास के अत्यन्त नग्न चित्रण किए हैं। सूरदास और नन्ददास के काव्य में भी यह प्रायः मिल जाते हैं।

इस प्रकार कृष्ण काव्य की उपर्युक्त त्रुटियों ने हिन्दी साहित्य में शृंगार की प्रकृति के उद्भव और विकास में योग दिया। इसके फलस्वरूप भक्तों के परम साध्य कृष्ण राधा

शृंगार की कलुषित वृत्तियों की अभिव्यक्ति के माध्यम नायक नायिका बनकर रह गये ।

प्रश्न 20—अष्टछाप से क्या अभिप्राय है। अष्टछाप कवियों की प्रमुख काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—हिन्दी साहित्य के कृष्ण मार्गी काव्य धारा के मूल प्रेरक आचार्य बल्लभ थे। उन्होंने 16वीं शती में पुष्टि मार्ग की स्थापना की थी। आचार्य वल्लभ की मृत्यु के उपरान्त उनके पुत्र विठ्ठलनाथ ने पुष्टि मार्ग का नेतृत्व किया। उन्होंने 1602 में अपने पिता बल्लभाचार्य के चौरासी शिष्यों में से चार श्रेष्ठ शिष्य छाँटे और अपने दो सौ बावन शिष्यों में से चार शिष्य छाँटकर आठ भक्त कवियों की मंडली की स्थापना की। इसी भक्त मंडली को अष्ट छाप की संज्ञा प्रदान की है।

कवि का नाम	गुरु का नाम
(1) सूरदास	महाप्रभु बल्लभाचार्य
(2) कुभंनदास	महाप्रभु बल्लभाचार्य
(3) परमानन्ददास	महाप्रभु बल्लभाचार्य
(4) कृष्णदास	महाप्रभु बल्लभाचार्य
(5) नन्ददास	विठ्ठलनाथ
(6) गोविन्द स्वामी	विठ्ठलनाथ
(7) छीत स्वामी	विठ्ठलनाथ
(8) चतुर्भुजदास	विठ्ठलनाथ

ये सारे ही कवि श्री नाथ मन्दिर में आठों पहर की हरिस्वरूप सेवा में भाग लिया करते थे। इन कवियों का कार्यक्रम समयानुसार बँटा हुआ था।

अष्टछाप कवियों की काव्यगत विशेषताएँ—अष्टछाप के सभी कवि कृष्ण माधुर्य रूप के उपासक थे। इनकी रचनाओं में जो कृष्ण भक्ति की बहुरूपिणी अवस्था का चित्र मिलता है। वह हिन्दी साहित्य के लिए बहुमूल्य धरोहर है। इनमें भक्ति भावना की सच्ची अनुभूति विद्यमान थी। इसलिए इन कविताओं में भक्ति की जो रसमयी धारा प्रवाहित हुयी है। वह इन्हें अपनी सांसारिक परिस्थितियों से बहुत दूर, श्रद्धा मिश्रित प्रेम के आलोकमय लोक में पहुँचा देती है। यद्यपि भक्ति भाव की तरंग सबमें एक तरह की थी, सबका प्रेरणा स्रोत एक था परन्तु सबकी व्यवहारिक परिस्थितियाँ अलग अलग थीं। अष्टछाप के कृष्ण भक्त कवियों के काव्य में भक्ति के परमोज्जवल रूप की अभिव्यक्ति हुयी है। इनकी काव्य प्रवृतियाँ इस प्रकार थीं।

1. **पुष्टिमार्गीय साम्प्रदायकता**—ये आठों कवि पुष्टि मार्गीसम्प्रदाय में विधिवत् दीक्षित थे। इन्होने ब्रह्म, जीव, जगत माया के विषय में पुष्टि मार्ग के सिद्धान्तों का अनुकरण किया। पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों के अनुरूप ही अष्ट छाप के कवियों के काव्य में ब्रह्म की व जगत तथा जीव की तात्विक एकता का प्रतिपादन हुआ है बल्लभ दर्शन ही इन कवियों का मुख्य आदर्श था।

2. **शृंगार भक्ति का समन्वय**—इन सभी कवियों ने कृष्ण की माधुर्य भाव से भक्ति की है। इसी कारण इनकी भक्ति में शृंगार रस का अनूठा समन्वय देखने को मिलता है। परमानन्ददास जी ने तो कृष्ण की अनन्य आसक्ति के समक्ष बैकुण्ठ को भी त्याज्य बताया है।

3. **रागानुगा भक्ति**—अष्ट छाप काव्य में अभिचित्रित भक्ति, रागानुगा कोटि की है। इन भक्त कवियों में भक्ति की तन्मयता का प्राचुर्य है। इनमें से सूर और नन्ददास के

काव्य में तो भक्ति भावना की तल्लीनता एवं तन्मयता के भाव चरम सीमा पर दिखायी देते हैं। रागानुगा भक्ति में नियमन का सर्वथा अभाव रहता है। वह विशुद्ध भावात्मक तरलता से प्रेरित रहती है।

4. **संगीत तत्व की प्रधानता**—अष्टछाप के सभी कवि कीर्तन कार थे। इन्होंने कीर्तन हेतु अपने पदों को लिखा। इस कारण इनके काव्य में उत्कृष्ट कोटि का संगीततत्व पाया जाता है। ये कवि आनन्द मग्न रहने वाले उन्मुक्त प्रवृत्ति के प्राणी थे। कीर्तन इनके जीवन क्रम तथा उपासना पद्धति का प्रधान अंग था। ये लोग एक ऐसे युग में पैदा हुए थे। जो तानसेन, बैजू जैसे गायकों का युग था। अतः संगीत की स्वर लहरी में लहरा उठना ही इस समय के सरस कवियों के लिए विशेष सम्भव था।

5. **उपास्यदेव तथा लीला भूमि की समानता**—अष्टछाप के आठों कवियों के उपास्य देव भगवान श्री कृष्णचन्द्र है। इन सारे ही कवियों में श्रीकृष्ण के प्रति सख्यभाव की भक्ति विद्यमान है। इनमें से प्रत्येक कवि ने श्रीकृष्ण की लीला भूमि का मनोरम और हृदय ग्राही तथा आलौकिक गोलोक रूप में चित्रण किया है। अष्टछाप के कवियों में अपने उपास्यदेव की भाँति ही उनकी लीला भूमि के प्रति भी पूर्ण रागात्मक सामन्जस्य की भावना पायी जाती है।

6. **समाज के प्रति उदासीनता**—अष्टछाप के कवि सामाजिक जीवन से वास्तव दूर गोर्वधन पर्वत पर कुटीरों में निवास करते हुए प्रकृति की अंक से कृष्ण की नित्यलीला का रास रचते हुए भक्ति की गहराई में डुबकी लगाते थे। ये कवि कृष्ण के प्रति इतने अधिक आसक्ति पूर्ण थे कि ये समाज के प्रतिपूर्ण तया विरक्ति पूर्ण हो गये।

7. **ब्रजभाषा का मधुर रूप**—इन कृष्ण भक्तों के काव्य में ब्रजभाषा का कोमल तथा मधुररूप देखने को मिलता है। अष्टछाप काव्य में डा० राजेन्द्र शर्मा के अनुसार "कवित्व की सुरम्य वीथियाँ इन महान भक्तों के सहज अश्रु प्रवाह से आर्द्र हयी है संत। साहित्य की नीरस अक्खड़ भाषा के चाँद कृष्ण भक्तों की ब्रजभाषा का प्रवाह ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे कविता की भागीरथी जमीन से उतरकर एक शस्य श्यामला प्रदेश में बहने लगी हो। ब्रजभाषा का जो सरल तथा सरस रूप इनके काव्य में मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। ब्रज-भाषा का जो सरल और सरस रूप इनके पदों में प्राप्त होता है वह रीतिकालीन आचार्यों के काव्य में भी नहीं है। ब्रजभाषा के सौकुमार्य तथा माधुर्य की दृष्टि से अष्टछाप अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

अष्ट छाप में सौन्दर्य भावना तथा भक्ति की तन्मयता—सम्पूर्ण अष्ट छाप का काव्य सुन्दरम का काव्य है। ब्रह्म की शक्ति शील सौन्दर्य की कलाओं में से केवल सौन्दर्य का अंकन करना ही इन कवियों का इष्ट था। इन्होंने अपने आराध्य कृष्ण का नख शिख सौन्दर्य का वर्णन किया है। इस वर्णन मे अलौकिकता और पवित्रता विद्यमान है। कृष्ण के सौन्दर्य के साथ ही साथ इन कवियों ने राधिका की अपूर्व माधुरी को अत्यन्त सरस रूप में चित्रित किया है। इन अष्ट छाप भक्तों के काव्य में प्रेम की तन्मयता, गम्भीरता भक्ति भाव की दीनता तथा विनय की भावनाएँ उच्च कोटि की हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अष्ट छाप के कवियों के काव्य में भक्ति की तन्मयता की पावन भूमि पर राधा और कृष्ण के सौन्दर्य का चित्रण हुआ है। यही नहीं इन्होंने उनकी लीला भूमि तथा ब्रज के सौन्दर्य का भाव भीना वर्णन किया है।

प्रश्न 21—सगुण भक्ति काव्य तथा निर्गुण भक्ति काव्य की प्रवृत्तियों का तुलना-त्मक अध्ययन कीजिए।

उत्तर—हिन्दी के भक्ति कालीन साहित्य की निर्गुण तथा सगुण काव्य धाराओं की तुलना निम्नलिखित शीर्षकों के आधार की जा सकती है—

(1) **ईश्वर**—निर्गुण मार्गी ईश्वर के निराकार रूप को मानते थे व सगुण शाखा में ईश्वर के साकार रूप की भक्ति की गयी। पहले वर्ग का अवतारवाद में विश्वास नहीं था पर दूसरे वर्ग में अवतारवाद प्रमुख था।

(2) **उपासना**—निर्गुण काव्य धारा में ज्ञान और प्रेम प्रधान साधना पद्धति अपनाई गयी है। इसमें मूर्ति पूजा आदि का कोई अस्तित्व नहीं है अपने आत्मरूप में ही परमात्मा के दर्शन पर बल दिया गया है। पर सगुण भक्ति में ईश्वर के साकार रूप से भजन, गुणगान, लीला आदि का प्राधान्य है।

(3) **आस्था**—निर्गुण मार्ग में पुराण तथा अन्य धर्म शास्त्रों की चर्चा नहीं मिलती है। वह किसी मन्दिर या मस्जिद की बात भी नहीं करते हैं। उनका ब्रह्म तो घट-घट बासी है।

परन्तु सगुण मार्गी भक्त कवियों को पुराण वेद आदि में अटूट विश्वास था। तुलसी के काव्य में नाना पुराण निगमागम का सार मिलता है। ईश्वर के पौराणिक रूप में उनकी अटूट आस्था थी।

(4) **व्यवस्था व नियम**—निर्गुण मार्ग में जाति पाँति का कोई अस्तित्व नहीं है। उनकी उपासना सब धर्म व जाति वर्ग के लिए खुली पड़ी है। पर सगुण मार्ग में ऐसी बात नहीं है। वे अछूत को मन्दिर में लाकर भक्ति करने की अनुमति नहीं देते।

(5) **कलापक्ष**—निर्गुण काव्य की तुलना में सगुण काव्य का कलापक्ष अत्यन्त श्रेष्ठ है सूर और तुलसी जितने प्रभावशाली कवि निर्गुण काव्य धारा में नहीं हुए।

इस प्रकार दोनों काव्य धाराओं में अनेक अन्तर है।

प्रश्न 22—राम भक्ति शाखा और कृष्ण भक्ति शाखा के काव्यों की सामान्य प्रवृतियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कीजिए ?

उत्तर—राम भक्ति काव्य और कृष्ण भक्ति काव्य में निम्नलिखित अन्तर है—

(1) रामकाव्य परम्परा के आराध्य राम है पर कृष्ण भक्ति काव्य में आराध्य कृष्ण थे।

(2) राम काव्य में राम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप वर्णन किया है, पर कृष्ण भक्ति में कृष्ण लीलाओं का रुचिकर वर्णन मिलता है।

(3) राम काव्य परम्परा पर रामानुज का प्रभाव है और कृष्ण भक्ति शाखा पर बल्लभाचार्य व मध्वाचार्य का प्रभाव है।

(4) राम भक्ति शाखा में दास्य भक्ति का प्राधान्य है और कृष्ण भक्ति शाखा में सख्यभाव की भक्ति प्रमुख है।

(5) राम काव्य में प्रबन्ध काव्य के अतिरिक्त कवित, पद, छप्पय, दोहा, धनाक्षरी आदि विविध छन्दों का प्रयोग हुआ हैं पर कृष्ण भक्ति काव्य में मुक्तक पद अधिक लिखे गये हैं। रसखान ने सवैया लिखे हैं। राम भक्ति काव्य में ब्रज अथवा अवधी भाषा का प्रयोग हुआ है ? और कृष्ण भक्ति काव्य में केवल ब्रज भाषा का।

(6) भारतीय संस्कृति के उदात्त और व्यापक रूप के दर्शन रामभक्ति काव्य में मिलते हैं। कृष्ण काव्य में केवल शृंगार और वात्सल्य का ही निरूपण है।

(7) श्रृंगार का रस राजत्व कृष्ण भक्त कवि सूर ने स्थापित किया है। वात्सल्य रस के भी वे सम्राट थे पर रामकाव्य में किसी भी रस का इतना गहन एवं विस्तृत निरुपण नहीं मिलता।

(8) कृष्ण भक्ति काव्य में संगीतात्मकता के उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं, जबकि राम-काव्य में केवल तुलसीकृत 'गीतावली' ही गीत तत्वों से पूर्ण है।

(9) राम काव्य में लोकपक्ष का व्यापक चित्रण हुआ है पर कृष्ण भक्ति काव्य लोकपक्ष से शून्य है।

इस प्रकार राम काव्य और कृष्ण-काव्य में पर्याप्त अन्तर है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1—हिन्दी साहित्य को कितने कालों में बाँटा जा सकता है ?

उत्तर—हिन्दी साहित्य को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने चार कालों में विभाजित किया है ? उनके द्वारा किया गया विभाजन इस प्रकार है—

1. वीर गाथा काल	1050 से 1375
2. भक्ति काल	1375 से 1700
3. रीति काल	1700 से 1900
4. आधुनिक काल	1900 से आजतक

प्रश्न 2—हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास किसने और कब लिखा है ?

उत्तर—हिन्दी साहित्य का इतिहास सर्वप्रथम फान्सीसी विद्वान श्री गार्सा द तासी ने इस्तवारद ला लिटरेत्यूर ऐन्दुई ऐदुस्तानी के नाम से लिखा और यह सन् 1839 में फ्रांसीसी भाषा में ही प्रकाशित हुआ।

प्रश्न 3—सिद्ध कीजिए कि चन्द वरदायी मात्र दरबारी कवि ही नहीं थे अपितु वे सजग प्रहरी भी थे ?

उत्तर—कवि चन्द वरदायी अन्य वीर गाथा कालीन कवियों के समान अपने आश्रय दाता की झूठी प्रशंसा या चापलूसी में ही रत नहीं रहते थे अपितु वे एक सजग प्रहरी के रूप में समय-समय पर पृथ्वीराज को उद्‌घोधित भी किया करते थे कम मास वध की आलोचना चन्द ने भरे दरबार में करके अपनी कर्तव्य निष्ठता का परिचय दिया है। इसी प्रकार राजा पृथ्वीराज को संयोगिता के साथ अतिशय भोग विलास में मग्न रहने पर वह खुलकर उनकी भर्त्सना करता है। निश्चय ही चन्द चापलूस और राजा की इच्छानुसार चलने वाला कवि नहीं था, अपितु, वह एक सजग प्रहरी था जो अपने आश्रयदाता को समय-समय पर सचेत करता रहता था।

प्रश्न 4—विद्यापति के विषय में आप क्या जानते हैं ?

उत्तर—विद्यापति आदिकाल के अन्तिम कवि थे ये दरभंगा जिले के विसथी ग्राम के निवासी थे। इनके पिता गणपति ठाकुर थे। ये अनेक राजाओं के आश्रय में रहें। इनके आश्रयदाताओं ने शिवसिंह, लखिमा देवी, विश्वासदेवी प्रमुख इन्होंने कीर्तिलता, कीर्ति पताका तथा पदावली नामक रचनाएँ की पदावली के पदों को तीन वर्गों में भिवक्त कर सकते हैं।

(1) श्रृंगार सम्बन्धी (2) भक्ति सम्बन्धी और काल सम्बन्धी।

विद्यापति मूलतः शैव थे। अतः इनके शिव की प्रार्थना सम्बन्धी पद भक्ति के है,

पर राधाकृष्ण विषयक पद शृंगार के हैं। इनके पदों में शृंगारी पदों की संख्या अधिक है। विद्यापति ने मैथिली को अपने काव्य की भाषा बनाया।

प्रश्न 5—अमीर खुसरो के विषय में आप क्या जानते हैं ?

उत्तर—अमीर खुसरो का अविर्भाव वीर गाथा काल की संध्या में हुआ था। वीर गाथा काल में अधिकांश कविता राज्याश्रय में लिखी जा रही थी, जबकि अमीर खुसरो ने उसको स्वतन्त्र रूप से लिखा। इन्होंने विनोद और मनोरंजन की प्रवृत्तियों को जन्म देने वाले साहित्य का सृजन किया है। खड़ी बोली को सर्वप्रथम प्रयोग करने का श्रेय भी अमीर खुसरो को है। अतः यह कहना कि खड़ी बोली का आविभाव 19वीं सदी में हुआ ठीक नहीं हाँ उस काल में इसका प्रयोग इतना उन्मुक्त न था जितना कि आजकल।

अमोर खुसरो प्रतिभा के धनी कवि थे और उन्होंने विभिन्न विषयों पर अपनी लेखनी चलाई उनके प्रमुख विषय हैं—(1) गजल (2) इतिहास (3) कोष (4) संगीत (5) पहेलियाँ (6) मुकरियाँ (7) दो सुखूने (8) बराबरी (9) ठकोसले, इनकी ख्याति का कारण इनके द्वारा लिखी गयी पहेलियाँ मुकरियाँ हैं।

प्रश्न 6—भक्ति काल को कितनी धाराओं में विभाजित किया जा सकता है ?

उत्तर—भक्ति काल को हम दो धाराओं में विभक्त कर सकते हैं—निर्गुणधारा और सगुण धारा आगे चलकर निर्गुण के भी दो भेद हो गये (1) ज्ञान मार्गी (2) प्रेम-मार्गी। इसी भाँति सगुण धारा के भी दो भेद हो गये (1) राम मार्गी (2) कृष्ण मार्गी प्रत्येक प्रकार की भक्ति को लेकर हिन्दी में काव्य रचना हुयी। निर्गुण भक्ति की ज्ञान मार्गी शाखा के प्रमुख कवि कबीर हैं और प्रेम मार्गी काव्य धारा के जायसी। राम भक्ति काव्य धारा के प्रमुख कवि तुलसी दास हैं तो कृष्ण मार्गी काव्य धारा के प्रमुख कवि सूरदास हैं।

प्रश्न 7—भक्ति काल की सामान्य विशेषताओं को बतलाइए जो चारों धाराओं में प्राप्त होती है ?

उत्तर—भक्ति काल की ज्ञान मार्गी प्रेम मार्गी राम मार्गी और कृष्ण मार्गी काव्य धारा में सम्मिलित रूप में जो विशेषताएँ देखने को मिलती हैं (1) नाम की महत्ता (2) गुरु की महिमा (3) भक्ति भावना का प्राधान्य अहंकार का त्याग (4) और बाह्य डम्बरों का विरोध।

प्रश्न 8—भक्ति काल के उदय में निराशावादी प्रवृतियाँ कहाँ तक उत्तरदायी हैं ?

उत्तर—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति के उदय की परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए लिखा है। कि "अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था।" पर वस्तु स्थिति इससे भिन्न थी। भक्ति की परम्परा तो लगभग 400 वर्षों पल्लवित और पुष्पित हो रही, थी हाँ इतना अवश्य है कि तत्कालीन परिस्थितियों ने उस भक्ति की परम्परा को विशेष बल प्रदान किया था।

प्रश्न 9—सिद्ध कीजिए कि भक्ति का स्रोत दक्षिण भारत से प्रस्फुटित होकर भारत में आया था ?

उत्तर—संवत् 1073 वि० में दक्षिण में आचार्य रामानुज ने शास्त्रीय पद्धति पर सगुण भक्ति का निरूपण किया था। 13 वीं शताब्दी के अन्त में गुजरात में मध्व ने द्वैत सम्प्रदाय की स्थापना की। इसी समय विष्णु स्वामी, निम्बकाचार्य आदि आचार्य भी

दक्षिण में भक्ति का प्रचार कर रहे थे। यही भक्ति धारा शनै-शनै दक्षिण से उत्तर की ओर उमड़ती चली आ रही थी। दूसरी ओर पूर्व भारत में बंगाल के जयदेव कवि 'गीत गोविन्दम्' की रचना करके राधा कृष्ण की उपासना को आधार बनाकर रामनुजा भक्ति का संगीत सुनाया उन्हीं के अनुकरण पर विद्यापति ने कृष्ण प्रेम की काव्य धारा प्रवाहित की।

इस प्रकार 15वीं शती के अन्त तक उत्तर भारत इन दो धाराओं से प्रभावित हो गया। आचार्य रामानुज के शिष्य रामानन्द ने विष्णु के अवतार राम की उपासना पर बल दिया एवं जाति-पाँति विरोधी कट्टर सम्प्रदाय को जन्म दिया।

दूसरी ओर आचार्य बल्लभ ने भी कृष्ण की उपासना को आधार बनाकर एक सशक्त कृष्ण मार्गी सम्प्रदाय खड़ा कर दिया।

महाराष्ट्र में नामदेव 13वी शताब्दी में हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों के लिए एक सामान्य भक्ति मार्ग का रास्ता बताया। नाथपंथी योगियों से प्रेरणा प्राप्त करके कबीर ने बाह्य विधि विधानों के व्यर्थ बताकर अन्तः साधना पद्धति पर जोर दिया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि काव्य परम्परा के मूल में एक परम्परागत विशाल परम्परा पहले से ही विद्यमान थी।

प्रश्न 10—प्रेममार्गी भक्ति धारा का उदय होने के कारणों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—प्रेममार्गी भक्ति के उदय होने के निम्नलिखित कारण थे—

1. कबीर आदि संत कवियों ने जिस खण्डन मण्डन प्रणाली को अपनाया उससे हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ही धर्मों के पुजारी और मौलवी रुष्ट हो गये और वे कबीर के सिद्धान्तों का विरोध करने लगे। फलतः प्रेम मार्ग ने इस पद्धति के विपरीत मण्डन की पद्धति अपनाई प्रेम मार्गी कवियों ने हिन्दुओं की कहानियों और मुसलमानी मत के अनुसार रखकर दोनों ही धर्मावलम्बियों को सन्तुष्ट किया।

2. कबीर आदि सन्त कवियों ने जिस ज्ञानमार्ग का प्रवर्तन किया था, वह जन साधारण के लिए सुगम न था। पण्डित ही उस मार्ग का अनुसरण करके परमात्मा को प्राप्त कर सकते थे। फलतः धर्म में सरसता लाने के लिए प्रेम मार्ग आया।

3. ज्ञान मार्ग में जो एक प्रकार की नीरसता आ गयी थी। उसे प्रेम मार्गी कवियों ने दूर कर धर्म में सरसता का समावेश किया। ज्ञानमार्ग में जो नारी त्याज्य और हेय थी, वही प्रेममार्ग में परमात्मा के पद पर आसीन हुई।

4. इस मार्ग द्वारा इस्लाम धर्म का प्रतिपादन हो रहा था। फलतः यह तत्कालीन शासकों द्वारा भी सहारा प्राप्त कर रहा था इस परिस्थिति ने इसके प्रचार प्रसार में महत्व पूर्ण योगदान दिया।

5. ज्ञानमार्ग में साहित्य का स्थान गौण था प्रेममार्ग में साहित्य एवं धर्म दोनों को समान स्थान प्रदान किया गया।

उपर्युक्त कारणों से प्रेम मार्ग का आर्विभाव हुआ है।

प्रश्न 11—कबीर का वर्ण्य विषय क्या है ?

उत्तर—कबीर का वर्ण्य विषय है ज्ञानोपदेश और इसके अन्तर्गत उन्होंने योगाभ्यास विनय, प्रार्थना, नाम, महिमा, सत्य निरूपण, माया का दर्पण, गुरुमहिमा एवं सत्संगति आदि विविध विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है।

प्रश्न 12—कबीर का दार्शनिक चिन्तन अद्वैतवादी है अथवा एकेश्वरवादी ?

उत्तर—अद्वैतवाद आध्यात्मवादी जीवन दर्शन है जबकि एकेश्वरवादी भौतिक-वादी जीवन दर्शन। अद्वैतवाद में जीव अपने अज्ञान का नाश करके ब्रह्म रूप बन जाता है एकेश्वर वाद में परमात्मा और जीवात्मा एवं जगत की अलग-अलग सत्ता मानी है। बन्दे को खुदा कहना एकेश्वरवाद में कुफ्र की बात है। अनहलक (अह्मं ब्रह्मास्मि) की आवाज लखानेवर मंसूरहल्लाज को फासी का तख्ता चूमना पड़ा।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् हम देख सकते हैं कि कबीर की वाणी में भौतिकवाद नहीं है अपितु ब्रह्मवाद ही है। यथा—

पांणी ही ते हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाई।
जो कुछ था सोई भया, अब कुछ कह्या न जाई

कबीर का परमात्मा नाम रूप दोनों से परे हैं। अतः हम कह सकते हैं कि उनका दार्शनिक चिन्तन अद्वैतवादी है, एकेश्वर वादी नहीं.......।

प्रश्न 13—प्रेमगाथा काव्य परम्परा का परिचय दीजिए।

उत्तर—चारण काल में अन्तिम चरण में हमको मुल्ला दाऊद कृत लोरिक चन्द की कहानी मिलती है। सम्भवतः इसी से प्रेम काव्य की परम्परा का विकास माना जाता है। यह परम्परा सम्वत् 1912 तक चलती है।

प्रश्न 14—सूफी अथवा प्रेम काव्य परम्परा की विशेषतायें बतलाइए।

उत्तर—(1) सूफी कवि मुसलमान थे पर उन सभी ने हिन्दू राजा रानियों की प्रेम कहानी का वर्णन किया है।

(2) सभी कवियों ने प्रबन्ध काव्य रचे हैं।
(3) सभी कवियों ने मसनवी शैली पर अपने काव्यों की रचना की है।
(4) इन कवियों की भाषा अवधी है।
(5) इन कवियों ने लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की व्यंजना की है।
(6) इन कावियों ने खण्डन मण्डन प्रणाली से अपने को दूर रखा।

प्रश्न 15—जायसी का पद्मावत लिखने के पीछे क्या उद्देश्य था ?

उत्तर—जायसी ने स्वयं पद्मावत को एक अन्योक्ति रचना बताया है पद्मावत एक प्रेम काव्य है जिसमें कवि ने लौकिक प्रेम पथ के त्याग कष्ट सहिष्णुता तथा विघ्न बाधाओं का चित्रण करके भगवत प्रेम की उस साधना का वर्णन किया है, जिसके माध्यम से मनुष्य की वृत्तियाँ विश्व का रजंन करने वाली परम वृत्ति में लीन हो जाती हैं।

प्रश्न 16—कबीर एवं जायसी के रहस्यवाद में क्या अन्तर है ?

उत्तर—कबीर का रहस्यवाद साधनात्मक है तथा वह भारतीय योग मार्ग से प्रभावित है। उसमें यत्र-तत्र भावनात्मक रहस्यवाद का पुट प्राप्त हो जाता है जायसी का रहस्यवाद भावात्मक है। तथा वह सूफी मत से उद्भूत है। भारतीय योग मार्ग से प्रभावित साधनात्मक रहस्यवाद का पुट उसमें यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है।

कबीर अपने ईश्वर को अपने अन्तःकरण में ही छिपा हुआ मानते थे। कबीर के इस मत में सिद्धों और योगियों का प्रभाव है। परन्तु जायसी अपने ईश्वर की सत्ता प्रकृति के नाना रूपों में देखते हैं। आकाश के तारे, झरने, पुष्प आदि सभी में वह ईश्वर की सत्ता के दर्शन करते हैं। उनकी मान्यता है विश्व में जो कुछ भी सुन्दर प्रतीत होता है उसमें ईश्वर

का ही प्रतिबिम्ब है। इसके साथ ही ईश्वर की उपस्थिति अपने अन्तःकरण में भी मानते हैं।

प्रश्न 17—राम कथा लिखने वाले प्रमुख कवियों के नाम बताइए।

उत्तर—राम भक्ति के प्रवर्तक रामानुजाचार्य समझे जाते हैं, परन्तु उनकी शिष्य परम्परा में रामानन्द जी ने रामभक्ति का प्रचार जन साधारण के लिए किया। तुलसी ने राम भक्ति काव्य के प्रचार और प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस शाखा के अन्य कवियों में सदन, वैनी, अग्रदास, नाभादास, प्राणचन्द चौहान, हृदयराम, केशव दास, लाल दास, प्रिया दास, महाराज विश्व नाथ, मैथिलीशरण गुप्त इत्यादि हैं।

प्रश्न 18—तुलसी के 'रामचरित मानस' को छोड़कर अन्य ग्रन्थों के नाम बताइए।

उत्तर—तुलसी के अन्य काव्य निम्नलिखित हैं—

(1) रामलला नहछू (2) पार्वती मंगल (3) जानकी मंगल (4) वैराग्य संदीविनी (5) वरवै रामायण (6) रामाज्ञा प्रश्नावली (7) कवितावली (8) दोहावली (9) गीतावली (10) कृष्ण गीतावली (11) विनय पत्रिका।

प्रश्न 19—तुलसी की भक्ति भावना पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—तुलसी की भक्ति भावना वेद विहित भक्ति थी जिसमें विवेक, वैराग्य एवं शील सदाचार का पूरी तरह निर्वाह किया गया है।

प्रश्न 20—तुलसी का दार्शनिक मत बताइए।

उत्तर—तुलसी वस्तुतः सामान्यवादी थे अतः दार्शनिक क्षेत्र में भी हमें इसी भावना के दर्शन होते हैं। इसी कारण कतिपय विद्वान् उनके दार्शनिक मतवाद के सम्बन्ध में मतभेद रखते हैं।

सिद्धान्त रूप में तुलसी अद्वैतवादी ही थे। अनेक स्थलों पर उनके विशिष्टाद्वैतवादी रूप के भी दर्शन होते हैं, यथा—

"सिया राम मय सब जग जानी।
करौं प्रणाम जोरि जुग पानी॥"

निष्कर्ष रूप में तुलसी सामान्यवादी दार्शनिक थे।

प्रश्न 21—वैष्णव भक्ति के सात अंग कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—वैष्णव भक्ति के सात अंग निम्नलिखित हैं—

(1) दीनता (2) मान भर्षण (3) भय दर्शन (4) भर्त्सना (5) आश्वासन (6) मनोराज्य और (7) विचारणा।

प्रश्न 22—सूरदास के ग्रन्थों के नाम बताइए।

उत्तर—सूरदास द्वारा रचित ग्रन्थों की संख्या 25 बताई जाती है, पर उनकी केवल तीन कृतियाँ ही प्रामाणिक मानी जाती हैं। जो इस प्रकार है सूर सागर, सूर सारावली और साहित्य लहरी।

प्रश्न 23—प्रत्येक युग का काव्य अपने पूर्ववर्ती काव्य से प्रभावित रहता है इस दृष्टि से रीतिकालीन काव्य पर उसके पूर्ववर्ती काव्य-कृष्ण काव्य का क्या प्रभाव पड़ा है ?

उत्तर—रीतकालीन काव्य पर उसके पूर्ववर्ती काव्य-कृष्ण काव्य का अग्रलिखित तत्वों पर प्रभाव देखा जा सकता है—

(1) मुक्तक रचना (2) नखशिख वर्णन (3) संयोग श्रृंगार का अनमुक्त वर्णन (4) विरह व्यथा का मार्मिक एवं व्यापक चित्रण (5) आलंकारिक शैली वक्रोति वाग्वैदग्ध्य एवं अनूठी उत्प्रेक्षाओं आदि का प्रभाव।

प्रश्य 24—मीराबाई का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उत्तर—मीराबाई कृष्ण भक्त परम्परा में आती हैं। आपका जन्म संवत् 1555 और मृत्यु सं० 1620 में मानी जाती है। आप मेंडता के राव रत्नसिंह की पुत्री एवं राणा सांगा के पुत्र भोजराज की पत्नी थी। बाल्यकाल से ही कृष्ण भक्ति का शौक था। विवाह के सात वर्ष बाद ही वह विधवा हो गयी थीं। उनके देवर ने उन्हें बहुत सताया। कभी विष का प्याला पीने को भेजा कभी सर्प की कोठरी में बन्द कर दिया। वह अपने देवर से दुःखी होकर वृन्दाबन आयी और वहाँ से द्वारिका तक पैदल यात्रा की। यहीं रणछोड़जी के मन्दिर में अपना शरीर त्याग दिया।

आपके ग्रन्थों में 'मीरा पदावली' प्रमुख है अन्य ग्रन्थ में 'नरसी जी का भायरा'; गीत गोविन्द का टीका 'रामगोविन्द' और 'राग सौरठा' आदि। पर दुर्भाग्य से इनके और ग्रन्थ मिलते ही नहीं।

प्रश्न 25—कृष्ण भक्त कवि रूप में रसखान का परिचय दीजिए ?

उत्तर—रसखान कृष्ण भक्त कवि थे इनका जन्म संवत् 1617 में दिल्ली के एक पठान सरदार कुल में हुआ था। दिल्ली में से किसी बनिये के पुत्र पर आशिक थे कालान्तर में इन्हें वैराग्य हो गया और यह वृन्दावन चले गये जहाँ गोसाई विट्ठलनाथ से दीक्षा लेकर भक्ति पूर्ण कविता करने लगे। इन्होंने दो पुस्तकें लिखीं।

(1) सुजान रसखान (2) प्रेम वाटिका।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1—हिन्दी साहित्य का इतिहास सर्वप्रथम किसने लिखा ?

(क) गासी दतासी
(ख) जार्ज ग्रियर्सन
(ग) रामचन्द्र शुक्ल
(घ) श्याम सुन्दरदास
(ङ) गुलाब राय।

प्रश्न 2—आदि काल का उपयुक्त नामकरण कौन-सा है ?

(क) वीरगाथा काल
(ख) चारण काल
(ग) वीर काल
(घ) प्रारम्भिक काल
(ङ) आदिकाल।

प्रश्न 3—पृथ्वीराज रासो के रचयिता कौन थे ?

(क) नरपति नाल्ह
(ख) जगनिक
(ग) चन्दवरदायी
(घ) परमाल
(ङ) जैन कवि।

प्रश्न 4—अमीर खुसरो ने अपनी काव्य कृतियों में कौन-सा प्रयोग किया है ?

(क) ब्रज भाषा
(ख) अवधी
(ग) मैथली
(घ) अरबी फारसी
(ङ) खड़ी बोली।

प्रश्न 5—आदिकाल का समय कहाँ से कब तक है ?

(क) 1100—1400 (ख) 1700—1900
(ग) 1650—1850 (घ) 1050—1375
(ङ) 1375—1700.

प्रश्न 6—तुलसी ने अपने काव्य में कौन-सी भाषा का प्रयोग किया ?

(क) अवधी (ख) ब्रज
(ग) खड़ी बोली (घ) अवधी तथा ब्रज
(च) बुन्देली।

प्रश्न 7—भक्ति काल किस कारण से सबसे अधिक प्रसिद्ध था ?

(क) क्योंकि उसमें बहुत से भक्त थे
(ख) उसमें भक्ति की कई धारायें प्रचलित हुई
(ग) वह हिन्दी काव्य का स्वर्ण युग था, उसमें हिन्दी साहित्य की सबसे अधिक उन्नति हुई
(घ) उसमें सूर और तुलसी जैसे महान कवि थे
(ङ) इस काल में अनेक कवि हुए हैं ।

प्रश्न 8—सूर की भक्ति भावना कौन से भाव की थी ?

(क) दास्य भाव (ख) माधुर्य भाव की
(ग) सख्य भाव (घ) विनय भाव की।

प्रश्न 9—भक्तिकाल के सबसे अधिक ख्याति प्राप्त कवि कौन से थे ?

(क) नन्द दास (ख) कुंभन दास
(ग) रामचरित उपाध्याय (घ) सूर और तुलसी
(ङ) हरि दास।

प्रश्न 10—ऐसे मुसलमान कवि कौन थे जिन्होंने कृष्ण की अनन्य भक्ति की ?

(क) जायसी (ख) कबीर
(ग) रहीम (घ) रसखान
(ङ) मुल्ला दाऊद।

उत्तरमाला

1. (क) 2. (घ) 3. (ग) 4. (च) 5. घ 6. (घ) 7. (ग) 8. (ग) 9. (घ) 10. (घ)।

कथा विसर्जन

व्याख्यात्मक प्रश्न

(1) "हे भगवान ! देखो तो सही पढ़ाई के नाम पर कमर टेढ़ी किये दे रहे हैं। यह पढ़ाई का बस्ता है या कुली का बोझ ?" पृष्ठ (46)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—श्री लक्ष्मीनारायण लाल द्वारा रचित 'कथा विसर्जन' नाटक के प्रथम अंक के दृश्य से अवतरित है।

इस गद्यांश में "माँ" जो उदास थी, आशू बिटिया के स्कूल से आने पर किंचित हल्कापन तो महसूस करती है किन्तु साथ ही वे उस छोटी सी बच्ची की पीठ पर लदे बस्ते के बोझ से परेशान भी हो जाती हैं।

व्याख्या—वे कह रही हैं शिक्षा-पद्धति भी बड़ी अजीबोगरीब हो गयी है। छोटी सी उम्र में बच्चों पर किताबों का बोझ लाद दिया जाता है। आज की शिक्षा में किताबें तो वजन-दार हो गयी है, किन्तु शिक्षा हल्की होती जा रही है। बच्चों के मष्तिष्क पर अनावश्यक बोझ डाल दिया जाता है। यह बोझ यदि कम होता और शिक्षा गहरी होती तो अलग ही बात होती। आज तो पढ़ाई नाम पर मात्र किताबों का बोझ रह गया है। बस्ते भारी हो गये हैं और शिक्षा हल्की हो गयी है। तात्पर्य यह है कि किताबी ज्ञान दिये जाने के कारण शिक्षा ज्ञान और संस्कार से रहित होती जा रही है। बच्चे भारी-2 किताबों का बोझ लादे स्कूल से आते-जाते हैं किन्तु सच्ची शिक्षा जीवनोपयोगी शिक्षा के सूत्रों से अलग रहते हैं। उनके भारी-भारी बस्ते कुली की कमर पर लदे बोझ की याद दिलाते हैं। भाव यह है कि शिक्षा में बाहरी बोझ बढ़ गया है, और असली ज्ञान का बोझ-कम हो गया है।

विशेष—आधुनिक युग की किताबी शिक्षा के आगे प्रश्नचिन्ह लगाया गया है। शिक्षा पद्धति पर किया गया व्यंग्य अत्यन्त स्पष्ट है। पढ़ाई का बस्ता है या 'कुली का बोझ' वाक्य बड़ा अर्थगर्भित है। भाषा में सरलता है शैली में व्यंगपरकता स्पष्ट है।

(2) "जो बहुत से लोग करते हैं, क्या वही ठीक होता है ? सुनो तुमने स्कूल से आते ही मुझसे अपनी टीचर की शिकायत की थी कि टीचर रोज अपनी बात बदल देती हैं तो हम क्या जानें किसी शब्द का सही अर्थ क्या है? सच्चाई जानना चाहती हो ? तुम्हारी टीचर यही पत्रिका पढ़कर और फिलम देखकर ऐसी बनी है, जिसे रोज अपनी बात बदलनी पड़ती है। पृष्ठ (51)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—'कथा विसर्जन' नाटक के प्रथम अंक के पहले दृश्य से अवतरित है। यह गद्यांश लक्ष्मीनारायण लाल द्वारा लिखित है।

सोनू अपने दोस्त के जन्म दिन की पार्टी में शामिल होने का बहाना बनाकर बाहर घूमने जाता है। आशा के बस्ते में फिल्मी पत्रिका मिलने पर 'माँ' उससे कारण पूछती है तो वह कहती है कि फिल्मी पत्रिका को तो बहुत से लोग पढ़ते हैं। उसकी अनुकरणात्मक प्रवृति तथा अध्ययन की कमजोरी की ओर संकेत करती हुई माँ कहती है।

व्याख्या—जो काम बहुत से लोग करते हैं जरूरी नहीं है कि वह काम उचित होता है। अर्थात् एक दूसरे की देखा-देखी कोई काम करना उचित नहीं है। इससे कोरी नकल करने की प्रवृति बढ़ती है और व्यक्ति को वास्तविक ज्ञान नहीं होता है, उसमें अपनी विवेक बुद्धि का विकास नहीं होता है। आशा ने स्कूल से आते ही कहा था कि उसकी टीचर ने प्रतिभा का अर्थ प्रत्येक दिन बदल-बदलकर बताया है, वह सही अर्थ नहीं बता सकी। इसी प्रसंग को लक्ष्य करके माँ आशा से कहने लगी कि तुमने अपनी टीचर की शिकायत की थी कि वह रोज अपनी बात बदल देती है और शब्दों के सही अर्थ नहीं बता सकती है। प्रत्येक शब्द का अर्थ हर दिन बदलकर बताती है। इस सम्बन्ध में सच्चाई यह है कि वह तुम्हारी टीचर पढ़ने लिखने में कमजोर है उसमें विवेक बुद्धि का अभाव है वह भेड़-चाल की तरह पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करती है। वह फिल्मी पत्रिका पढ़कर और फिल्में देखकर ऐसी अध्यापिका बनी है। उसे अपनी भाषा, संस्कृति और परम्परा का जरा भी ज्ञान नहीं है। इस कारण वह प्रतिदिन शब्दों का गलत अर्थ बतलाती है और अपनी बात सदा बदलती रहती है। अनुकरणात्मक प्रवृत्ति के कारण वह ज्ञान शून्य है।

विशेष—नाटककार ने वर्तमान समय में प्रचलित शिक्षा की कमियों की ओर संकेत करते हुए पाश्चात्यानुकरण पर व्यंग्य किया है। जब शिक्षक ही शब्दों के अर्थ नहीं बता सकेगा। तो छात्रा को सही अर्थ कौन बतायेगा। आजकल शिक्षा को फैशन के साथ जोड़ दिया है। और चारित्रिक विकास का इसमें कोई स्थान नहीं है।

भाषा सरल सुबोध, शैली विवेचनात्मक एवं कथोपकथन द्वारा चारित्रिक विशेषता को प्रकट किया है।

(3) "नहीं बहू ! नहीं। यहाँ तो कोई सोचता ही नहीं। स्त्री दिखाती है। नकल करती है। पुरुष अपनी कुर्सी और फाइलों से बाहर नहीं निकलता है। यहाँ सोचने-विचारने से क्या मतलब ?" पृष्ठ (52)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—कथा विसर्जन नाटक से अवतरित यह गद्य-खण्ड 'माँ' का कथन है।

जब नीलम माँ जी द्वारा प्रस्तावित 'संगीत कला मण्डल' का यह कहकर विरोध करती है कि यह शहर की आफीसर्स कालोनी है अतः यहाँ कुछ भी करने से पूर्व बहुत कुछ सोचना समझना पड़ता है।

व्याख्या—तब माँ जी कहती हैं—देखो बहू ! तुम जो सोचती हो वह बात नहीं है। कारण यह है कि आज दुनियाँ इतनी बदल गयी है कि कोई कुछ भी नहीं सोचता है। सोचने की प्रक्रिया जैसे समाप्त हो गयी है। अब यही देखलो कि स्त्री प्रदर्शन करने लगी है। वह कृत्रिमता में विश्वास करती है साथ ही नकल करने को अपना धर्म और कर्त्तव्य मानती है। भाव यह है कि नारी प्रदर्शन, कृत्रिमता और नकल के विश्वास करते रहने के कारण अपने धर्म से अपनी संस्कृति से हटकर अलग हो गयी है। उसने अपने ढंग से अपनी एक दुनियाँ बनाली है। पुरुष भी पहले जैसा पुरुष नहीं रह गया है। वह कुर्सी और फाइल से चिपका रहता है। वह भी अपनी सीमित दुनिया से बाहर आना नहीं चाहता है। संकेत यह है कि पुरुष यदि पदलोभी और संकीर्ण विचारों का हो गया है तो नारी भी अनुकरणप्रिय, कृत्रिम और प्रदर्शनी वृति की शिकार होकर रह गई है। जब यह दोनों अपने-अपने ढंग से जीने और समझने पर विश्वास करते हैं तो सोचने-समझने के लिए स्थान ही कहाँ रह जाता है ? स्पष्ट ही कही नहीं। इसलिए मैंने कहा कि आज सोचने-समझने कि फुर्सत ही किसे है ? जाहिर है कि किसी को भी नहीं है।

विशेष—माँजी का संतुलित और सूक्ष्म चिंतक रूप प्रकट हुआ है। भाषा शैली में सादगी, सरलता और व्यंजकता का गुण स्पष्ट झलकता है। कुर्सी और 'फाइल' लाक्षणिक प्रतीक है।

(4) "बाहर से न जाने कितनी चीजें इस घर में आती हैं। कौन सी चीज कैसी है माता-पिता को चिन्ता होनी चाहिए। तुम्हें कोई चिन्ता है? न अपनी, न अपने बच्चों की, न पति की। चिन्ता है तो केवल भविष्य की। आज की नहीं कल की। बेटा प्रश्न करता है, यह तो बड़े सौभाग्य की बात है।"

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

माँ 'शोनू' और नीलम के वार्तालाप को आधार बनाकर कह रही है कि 'शोनू' अब बच्चा नहीं है। उससे कुछ भी न कहो तो अच्छा है। यदि वह अपने अस्तित्व के विषय में प्रश्न करता है कि वह कौन है? तो तुम्हें उसकी माँ होने के नाते उसके प्रश्न का उत्तर देना चाहिए।

व्याख्या—'नीलम' के यह कहने पर 'शोनू' के मानस में ऐसे प्रश्न कहाँ से आते हैं? माँ जी कहती हैं कि अब तो इस हमारे घर में बाहर से बहुत सी चीजें आती रहती हैं, फिर ऐसा प्रश्न आ भी गया तो आश्चर्य की कोई बात नहीं है। इसी क्रम में वे कह रही हैं कि माता-पिता को घर में रहते हुए हर चीज का ध्यान रखना चाहिए। उन्हें यह भी जानना और समझना चाहिए कि बच्चों की रुचियाँ क्या हैं? इच्छायें और माँगें कौन-कौन सी हैं। यह सब जाने समझे बिना घर परिवार ठीक ढंग से चल ही नहीं सकता।

माँ जी ने कहा कि मैं स्पष्ट रूप से देख रही हूँ कि हजारों घरों में बाहरी वस्तुओं का आना प्रारम्भ हो गया है। अनगिनत चीजें, उनसे सम्बन्धित आदतें और प्रवृतियाँ भी हमारे घर में प्रविष्ट हो गई हैं। माता-पिता का दायित्व है कि वे इन सभी चीजों को जानें और समझें। इतना ही नहीं माता-पिता को यह भी जानकारी रखनी चाहिए कि कौन सी वस्तु कैसी है? उपयोगी है अथवा अनुपयोगी हितकर या अहितकर। मैं स्पष्ट अनुभव कर रही हूँ कि तुम माँ होकर भी सब चीजों से अनभिज्ञ हो। तुम्हें तो अपनी भी चिन्ता नहीं है और बच्चों की भी नहीं है। तुम स्त्री हो, माँ हो और पत्नी किन्तु तुम इन तीनों रूपों में से किसी एक रूप का भी ठीक तरह निर्वाह नहीं कर पा रही हो। तुम्हें घर की बिल्कुल चिन्ता नहीं है। तुम तो सिर्फ भविष्य की चिन्ता में निमग्न हो, वर्तमान को तो जैसे तुमने भुला दिया है उसे उपेक्षित कर दिया है। तुम भूल गयी हो कि वर्तमान से ही भविष्य का निर्माण होता है। माँ जी का कहने का तात्पर्य यह है कि जिसका वर्तमान नहीं होता उसका भविष्य भी नहीं बन पाता। तुम आज को भुलाकर कल की चिन्ता में लगी हो लेकिन वह नहीं मालूम कि 'आज' ही तो कल का रूप धारण करता है। आज तुम जो इन बच्चों को दोगी वही तो कल मिलेगा। आज की ही स्थितियाँ इनके भविष्य का निर्माण करेंगी। यदि आज तुम्हारा बेटा 'शोनू' प्रश्न करता है कि "मैं कौन हूँ"? तो तुम्हें इसका उत्तर एक माँ के रूप में देना ही चाहिए। माँ के आदर्शों से ही बालक आगे बढ़ता है।

विशेष—माँजी के माध्यम से नाटककार ने नारी, माँ और पत्नी के कर्तव्यों की ओर संकेत किया है। वास्तव में माँ इस नाटक की एक जीवंत-पात्र है।

छोटे-छोटे वाक्यों के सहारे गंभीर सांस्कृतिक बोध जगाया गया है। भाषा सहजता है। किन्तु साथ ही गहरी व्यंजना भी है। हर छोटा वाक्य जीवन की सच्चाइयों व मूल्य परक दृष्टि से जुड़ा हुआ है।

(5) "क्या है अपना? देखो न। यह बंगला सरकार का है तुम्हारे पति की नौकरी सरकार की कृपा पर है। ये फर्नीचर, ये सामान, ये चीजें दूसरों को दिखाने और प्रभावित

करने के लिए है। तुम्हारे बच्चे........? एक अमेरिका का है........एक इंगलैण्ड की........ एक इंजीनियर........एक लेडी डॉक्टर। दूसरों की नकल में सब कुछ नकली है।"

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

'नीलम' और 'माँ' के मध्य वार्तालाप चल रहा है। वार्तालाप के दौरान 'नीलम' माँ जी से कहती है कि आप ने अपने ढंग से अपने बच्चों का पालन किया और अब मुझे मेरे बच्चों को अपने ढ़ंग से पालने दीजिए। तब दादी माँ कहती है कि तुम्हारा क्या है। यह तो सब कुछ पाश्चात्य संस्कृति की नकल है।

व्याख्या—दादी माँ कहती है जिसे तुम अपना कह रही हो वह वास्तव में तुम्हारा कुछ नहीं है। तुम जिस भवन में रह रही हो वह सरकार का है, तुम्हारे पति की नौकरी भी सरकार की कृपा पर अर्थात तुम्हारा अपना कुछ नहीं है। तुम स्वावलम्बी नहीं हो, तुम्हारा जीवन एक दम पराश्रित है। तुम्हारे संस्कार भी अपने नहीं हैं वो भी पाश्चात्यानुकरण पर आरोपित है। इसलिए तुम्हारा कुछ भी अपना नहीं है। इस भवन में जो कीमती फर्नीचर है, सुख सुविधा का सामान या अन्य चीजें है वे सभी दूसरों को दिखाने के लिए और उसे प्रभावित करने के लिए है। तुम्हारे इस कीमती सामान और गृह राज्य को देखकर लोग समझे तुम बड़े हो और तुमसे प्रभावित हो, और तुम्हें आधुनिक सभ्यता का आदर्श माने। यही कोरा दिखावा तुम्हारा अपनापन है। क्या तुम इसे अपना मानती हो ?

माँजी पुनः नीलम से कहती हैं कि तुम बच्चों विदेशी संस्कृत में ढालने की चेष्टा कर रही हो। इस कारण यह तुम्हारे अपनेपन और अपनी संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं और इनमें पाश्चात्य संस्कारों का नकलीपन आ गया है। तुम जिन बच्चों को अपना मानती हो तुम्हारे अपने कहाँ 'शोनू' अमेरिका का, आशा इंग्लैण्ड की। तुम्हारी भावी योजना के अनुसार 'शोनू' अमेरिका जाकर इन्जीनियर बनेगा, तो आशा इंग्लैण्ड में पढ़कर लेडी डाक्टर बनेगी। वहाँ जाकर यह भारतीय संस्कृति भूल जायेंगे। अतः इनमें भौतिक स्वरूप नहीं रह पायेगा। इसलिए अपने पन को लेकर तुम भ्रम में हो।

विशेष—वर्तमान काल में भारतीय समाज में 'मॉडर्न' बनने की होड़ पर व्यंग्य किया गया हैं। पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण करने से वह अपनी संस्कृति भूलते जा रहे हैं। इस कारण वह अपनापन खोते जा रहे हैं। भाषा शैली व्यंग्यात्मक है।

(6) "बाहर केवल चीजें........सामान........ पदार्थ है........। बाहर कोई सुख नहीं है। सुख का श्रोत अगर बाहर है, दूसरों का दिया हुआ, बताया हुआ वह सुख हो ही नहीं सकता है। सुख तो अपना ही है। अपना कमाया हुआ। अपने से आप पाया हुआ, अपने से, अपने घर, परिवार से, अपनी जड़ से- अपने श्रोत से" पृष्ठ (65)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

यहाँ सुख को बाहर की उपेक्षा अपने भीतर बताया गया है। प्रकाश के बॉस सेठी एक दिन नीलम के घर आते हैं। प्रणाम के उत्तर में माँजी सेठी साहब को 'सुख पाओ' कहकर आर्शीवाद देती है। इस पर सेठी साहब कहते हैं।

व्याख्या—माँजी आपने भी क्या आशीर्वाद दिया है ? कि आपको तो देना चाहिए था- 'सुखी रहो'। उसके उत्तर में माँजी सेठी साहब को समझाती कि 'सुख कहीं नहीं है' वह तो पाना ही होता है। वह सुख हमारे भीतर छिपा रहता है। हमें उसे भीतर छिपे सुख को तलाश करना होता है। बाहर का सुख तो भौतिक और क्षणिक होता है। सच्चा सुख तो हमारे ही भीतर है, असली सुख भीतर होता है बाहर नहीं। कारण सुख का असीमित भण्डार हृदय में छिपा रहता है। बाहर तो भौतिक वस्तुएं हैं जो क्षणभर में अपने सुख की झलक दिखाकर नष्ट हो जाती हैं। यदि मनुष्य अपनी आत्मा को जाग्रत करले तो

सुखानुभूति कर सकता है। अपने आपको जगाना अनिवार्य है। यह कहना सत्य है कि सुख श्रोत बाहर न होकर अपने भीतर है।

वास्तविकता यह है कि सुख को हम अपने भीतर ही पा सकते हैं। वहाँ सुख अपना होता है। अपने को जाग्रत करके जो सुख पाया जाता है शत-प्रतिशत अपनी उपलब्धि है। हम ऐसे सुख को अपना कमाया हुआ सुख कहते हैं। यह सुख अपने परिवार अपनी संस्कृति रूपी जड़ से ही प्राप्त होता है। आधुनिक बनकर बिदेशी सभ्यता और उसके उपकरणों से मिलने वाला सुख न हो तो अपना होता है, न असली और न स्थायी ही होता है। माँजी ने यह कहकर भी संकेत कर दिया कि 'नीलम' अपनी संस्कृति की जड़ से कट चुकी है। और सेठी साहब की भी वही स्थिति है। अर्थात् बाहरी आर्कषण से सच्चे सुख की प्राप्ति असम्भव है।

विशेष—सुख बाहर नहीं भीतर है। ठीक उस कस्तूरी की तरह जो हिरण की नाभि में बसती है। कबीर ने कहा भी है—

"कस्तूरी भीतर बसै मृग ढूँढें वन माँहि।
'ऐसे घट-घट राम है दुनियाँ देखे नाँहि।।"

बाहर का सुख अस्थायी होता है और भौतिक इसके विपरीत सच्चा सुख आत्मिक और स्थायी होता है।

भाषा शैली सरल व्यवहारिक और प्रसाद गुण से सम्पन्न है।

(7) "परस्पर संवाद बड़ा कठिन है रे! संवाद वहाँ नहीं हो सकता जहाँ घमण्ड है। संवाद के लिए दो जन—हाँ एक नहीं दो। दोनों में समानता हो। मालिक और नौकर में संवाद नहीं हो सकता है। छोटे-बड़े संवाद नहीं हो सकता है।"

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

प्रकाश के चले जाने के बाद आशा और शोनू स्कूल से आते हैं तथा दादी माँ से कहते हैं कि हमारे अध्यापक ने 'डायलॉग' और संवाद का एक ही अर्थ बताया है। तब दादी माँ इस सम्बन्ध में समझाती हुई कहती है—

व्याख्या—'संवाद' का अर्थ पारस्परिक समान-भावना से बातें करना है। आपस में संवाद करना अर्थात् परस्पर समान भाव से बात करना बड़ा कठिन है क्योंकि इसके लिए समान-भाव होना बहुत जरूरी है। जहाँ एक आदमी स्वयं को बड़ा और दूसरे को छोटा मानता है वहाँ समानता नहीं रहेगी। जिस व्यक्ति में घमण्ड अभिमान अहंभाव रहता है वह दूसरों से संवाद नहीं कर सकता। इसलिए संवाद वहाँ नहीं होता जहाँ घमण्ड है। संवाद के लिए दोनों व्यक्ति एक साथ होने चाहिए, एक व्यक्ति का संवाद नहीं होता है। अर्थात् दोनों व्यक्तियों में घमण्ड न हो तो एक दूसरे को समान समझे अहंभाव से ग्रस्त न रहे जितना स्वयं को समझते हैं उतना दूसरे को समझे संवाद तभी हो सकता है।

इस सम्बन्ध में दादी माँ उदाहरण देती हुई कहती है कि मालिक और नौकर में असमानता रहती है। मालिक स्वयं को बड़ा आदमी और नौकर को छोटा आदमी मानता है इस कारण नौकर के सामने मालिक अहंभाव से ग्रस्त रहता है। नौकर भी हीन भावना से ग्रस्त रहता है। इस कारण उन दोनों में समानता नहीं है। इसलिए इन दोनों में संवाद नहीं हो सकता अर्थात संवाद के लिए हर समानता जरूरी है।

विशेष—संवाद को समानता का प्रतिपादक बतलाया गया है। पारस्परिक संवाद आचरण, कार्य, विचारधारा एवं व्यक्ति की समानता पर निर्भर करती है 'डॉयलाग' से संवाद का अन्तर बताते हुए भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है।

भाषा सरल-सुबोध एवं शैली विवेचनात्मक व्याख्यात्मक है।

(8) "सबका अपना-अपना स्वभाव होता है। मसलन, माँ, तुम्हें हर जगह हर चीज में भगवान ठाकुरजी दिखाई देते हैं। तुम्हारा अपना जीवन है। अपने संस्कार हैं। तुम्हारी बहूरानी नीलम विज्ञान की छात्रा रही है। वह हर वक्त विकास, भविष्य की चिन्ता करती है। एक ओर भगवान् ठाकुर जी है, दूसरी ओर वह नहीं है। (पृष्ठ 18)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

प्रकाश के दोनों बच्चे उम्र से अधिक समझते हैं आवश्यकता और परिस्थिति की माँग पर अपने माता-पिता पर व्यंग भी करते हैं। एक दिन प्रकाश के अचानक घर पर आ जाने से शोनू पिता के एक प्रश्न के उत्तर में कह देता है कि 'डैडी' आप लोग बड़े समझदार हैं, चुप रहते हैं। 'नीलम' उसके व्यंग को समझ जाती है और कहती है पहले ऐसा नहीं था। माँ भी सारी स्थिति को समझती है और वह मानती है कि माँ के सम्पर्क में रहने से बच्चे बिगड़ गये हैं। प्रकाश भी सब देखता सुनता है। अपनी माँ को सम्बोधित करके वह अपने विचार प्रकट करता है—

व्याख्या—प्रकाश कहता है कि माँ तुम दुखी मत हो। तुम अच्छी तरह से जानती हो कि हरेक व्यक्ति का अपना-अपना स्वभाव होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने उसी स्वभाव के अनुरुप ही आचरण करता है। उदाहरण के लिए तुम अपने आप को ही लो। तुम धर्म पर अधिक विश्वास करती हो। ईश्वर की अपने अन्दर से भक्ति करती हो। अतः तुम्हें हरेक वस्तु एवं स्थान पर ठाकुर जी के दर्शन होते हैं। भाव यह है कि तुम्हें समूची सृष्टि में भगवान सर्वत्र दिखाई देते हैं। तुम उनके बिना किसी चीज की कल्पना भी नहीं कर सकती। इस का कारण तुम्हारा अपना स्वभाव, अपना जीवन और अपने संस्कार हैं। तुम सर्वत्र और जीवन के प्रत्येक बिन्दु पर अपने इन्हीं धार्मिक संस्कारों से प्रेरणा एवं शक्ति पाकर आचरण करती हो। इसके विपरीत तुम्हारी बहूरानी नीलम है। उसके अपने संस्कार हैं अपना स्वभाव है। वह धर्म से कम विज्ञान से अधिक जुड़ी हुई है। वह विज्ञान की छात्रा भी रही है। अतः उसके तुम्हारे जैसे संस्कार नहीं है। इस कारण तुम आस्थावादी हो और नीलम तर्कवादी है। उसे सदैव विकास और भविष्य की चिन्ता रहती है।

तुम दोनों के स्वभाव में जमीन-आसमान का फर्क है। अर्थात् सारा मामला स्वभावगत वैषम्य का है।

विशेष—नाटककार ने मानव स्वभाव पर प्रकाश डाला है। भाषा शुद्ध एवं परिष्कृत है। धर्म और भक्ति विज्ञान का अन्तर भी संकेतित है।

(9) "अजीब स्त्री है! सब की चिन्ता अपने ऊपर। चाहती है सब इसी के अनुसार हो मेरी माँ ने मुझे नहीं बनाया। यह कहती है—मैं बनाऊँगी अपने बच्चों को आधुनिक, कर्मठ, महत्वाकांक्षी। पर अजीब खेल है दोनों बच्चे माँ से आकृष्ट हैं। नीलम को यह बर्दाश्त नहीं। जब देखो तब वही तीनों। तीनों की दोस्ती हम दो अकेले।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

रात्रि में प्रकाश को नींद नहीं आती है। वह अपनी माँ के सम्बन्ध सोचता रहता है। नीलम उससे चिन्ता का कारण जानना चाहती है। तब प्रकाश अपनी पिछली बातें बताते हैं, परन्तु नीलम को एकाएक नींद आ जाती है। उसे देखकर प्रकाश सोचने लगता है कि—

व्याख्या—यह नीलम भी अजीब स्त्री है सबकी चिन्ता अपने ऊपर रखती है। यह निरन्तर मेरे और बच्चों के भविष्य के बारे में सोचती रहती है। यह चाहती है कि दोनों बच्चे मार्डन बने, पढ़कर नौकरी करें। मेरी पदोन्नति हो और घर में सभी सुख-सुविधा उपलब्ध हो। हमारी विचारधारा, संस्कार और व्यक्तित्व इसकी इच्छानुसार हो। यह मेरा

ही नहीं, अपने बच्चों के भविष्य का निर्माण अपनी आकांक्षा के अनुरुप बनाना चाहती है। प्रकाश सोचता है है कि मेरी माँ ने मुझे अपनी इच्छा के अनुसार नहीं बनाया और मेरे व्यक्तित्व का स्वतन्त्र निर्माण हुआ। परन्तु नीलम चाहती है कि मैं अपने बच्चों को स्वयं बनाऊँगी। इसी चिन्ता में वह हर दम और हर समय कोशिश करती रहती है।

अपने बच्चों के स्वभाव एवं संस्कारों का चिन्तन करते ही प्रकाश कहता है कि यह अजीब खेल है। नीलम बच्चों को अपनी ओर आकृष्ट करना चाहती है अपने संस्कारों में उन्हें ढालना चाहती है परन्तु दोनों बच्चे अपनी दादी माँ की तरफ आकृष्ट रहते हैं और उन्हीं के संस्कार ग्रहण कर रहे हैं। यह बात नीलम को जरा भी बर्दाश्त नहीं है। इस कारण घर में हर समय मतभेद टकराव और संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। जब देखो दोनों बच्चे और माँ एक तरफ हो जाते हैं, उन तीनों का एक पक्ष बन जाता है उनकी दोस्ती पक्की हो रही है। नीलम को यह बिलकुल बर्दाश्त नहीं है। और मैं भी नीलम की हाँ में हाँ मिलाते उनसे दूर हो गया हूँ इस तरफ एक ओर वो तीन हैं, दूसरी तरफ हम दो अकेले। उनके सामने हमारी एक भी नहीं चलती है।

विशेष—शहरी समाज की सभ्य एवं माडॅन बनने की अभिलाषा रखने वाली स्त्रियाँ चाहती हैं कि उनके बच्चे एकदम आधुनिक बनें और पाश्चात्य संस्कारों को अपने जीवन में ढाले। नाटककार ने प्रकाश के कथन ऐसी आधुनिकता पर व्यंग्य किया है।

(**10**) "शोनू की उम्र सोलह साल। हालांकि मैंने रजिस्टर में दो साल कम लिखा रखी है। आशा की उम्र चौदह साल। उसकी भी उम्र मैंने ढाई साल कम कर रखी है। मतलब यह है कि इस उम्र में धर्म और पूजा पाठ इनमें 'कम्पलेक्स' पैदा करेगा। इनका नोर्मल ग्रोथ रुक जायेगा। इनकी पर्सनाल्टी स्पिलिट हो जायेगी। मैं समझती हूँ आपको"।

(पृष्ठ 83-84)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

नीलम नहीं चाहती कि उसके बच्चे माँ जी के साथ पूजा-पाठ में रुचि लें अथवा धार्मिक कर्म में प्रवृत्त हों। एक दिन सुबह जब आशा और सोनू को माँ जी के साथ रामायण की चौपाइयाँ गाते सुनती है तब वह माँजी से इस सम्बन्ध में कहने लगती है—

व्याख्या—नीलम माँजी से कहती है कि इस उम्र में बच्चों के लिए पूजा पाठ ठीक नहीं है। अभी सोनू की उम्र सोलह साल है हालांकि मैंने रजिस्टर में ये दो साल करवा दी है। और आशा की उम्र चौदह साल है उसकी ढाई साल कम करवा दी है। अर्थात् रजिस्टर के हिसाब से और वास्तविक जन्म तिथि से देखी जाये तो अभी ये दोनों बच्चे हैं। साठ साल की उम्र के बाद पूजा-पाठ और कर्म काण्ड ठीक रहते हैं, परन्तु इस उम्र में ये ठीक नहीं है क्योंकि इस उम्र में इनमें धर्म और पूजा पाठ से कॉम्पलेक्स पैदा होगा—इनका जीवन नवीन और पुरानी विचारधारा से मिश्रित हो पायेगा तथा इनके संस्कार पेचीदे हो जायेंगे। इस कारण इनका शारीरिक और मानसिक विकास रुक जायेगा क्योंकि जब ये साठ साल के वृद्धों जैसा आचरण करने लगेंगे, तो इनकी विचारधारा नवयुवकों जैसी नहीं रहेगी और पुराने संस्कारों के कारण इनके व्यक्तित्व में आधुनिकतम विचार नहीं आ सकते। नीलम कहती है कि इस तरह के आचरण से इनकी पर्सनाल्टी अर्थात व्यक्तित्व स्थिर अथवा अविकसित रह जायेगा। मैं आपको अच्छी तरह समझाती हूँ कि बच्चों को पूजा-पाठ में लगाने से मुश्किल होगी।

(**11**) माँ मेरी केवल माँ नहीं है। वह मेरी जननी है। पिता है, भाई है, मित्र है, और सबसे ऊपर मेरी आचार्या है। प्रातः चार बजे से पहले माँ उठती थीं। भजन गाते हुए घर भर में झाड़ू लगाती थीं। मैं भी उठकर गाने लगता था। महीने में कई ऐसे पर्व के दिन आते जब माँ सवेरे उठकर नदी स्नान को जाती। इनकी उँगली पकड़कर मैं साथ हो लेता।

माँ के साथ उनका पल्ला पकड़कर काशी, अयोध्या, मथुरा, वृन्दावन, कुम्भ मेला, गंगास्नान ऐसी अनेक यात्राएँ की। अनुभव और प्रसादी मिलती। घर में प्रीतिभोज होता। कोई वृक्ष फलता तो सबसे पहले आस-पड़ोस में बाँटा जाता"। (पृष्ठ 87-88)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

नीलम कहती है दिल्ली पोस्टिंग होते ही माँजी को हरिद्वार या ऋषिकेश के किसी अच्छे आश्रम में रख देंगे। परन्तु प्रकाश इस बात का विरोध करता है। वह नीलम के प्रस्ताव का विरोध करते हुए मातृ भक्ति का परिचय देता है।

व्याख्या—प्रकाश नीलम से कहता है कि माँ को घर से अलग नहीं किया जा सकता। वह केवल मेरी माँ नहीं अपितु वह मेरी पूज्या जननी है—मेरे व्यक्तित्व का निर्माण तथा विकास करने वाली, मुझे इस संसार में जन्म देने वाली है। माँ ही मेरे लिए पिता, मित्र, तथा भाई के समान प्रिय आराध्य एवं सुसेव्य है। इन सबसे ऊपर वह मेरी आचार्या है अर्थात् उसने ही मुझे बचपन में संस्कारों की शिक्षा दी है, अपनी संस्कृति से परिचय कराया है, और मेरे मस्तिष्क का विकास किया है। मुझे अच्छी तरह याद है कि जब मैं छोटा था तो मेरी माँ प्रातः चार बजे से पहले उठती थीं, घर की मैं सफाई करती थी तथा साथ ही भक्तिमय भजन गाती रहतीं थी मैं भी उठकर भजन गाने लगता था। उस समय घर का वातावरण सुमधुर बन जाता था। महीने में कई ऐसे पर्व त्यौहार व्रत आदि के दिन आते जब माँ सवेरे उठकर स्नान करने को जाती थीं। तब मैं भी उनकी उँगली पकड़कर उनके साथ मैं चल देता था। इस तरह घर के वातावरण से ही मैं भारतीय संस्कृति और परम्परा की शिक्षा ग्रहण करता रहा। किशोरावस्था में ही मुझे माँ के साथ काशी, अयोध्या, मथुरा वृन्दावन, कुम्भ मेला, गंगा स्नान आदि अनेक तीर्थों का अवसर मिला। उन यात्राओं से मेरा अनुभव बढ़ा, मुझे अपनी संस्कृति का परिचय मिला तथा देवताओं की प्रसादी प्राप्त हुई।

प्रकाश ! पुनः कहता है कि माँ ने मुझे जीवन के अनेक अच्छे अनुभव प्रदान किये और मेरे संस्कार का परिस्कार किया। उस समय हमारे घर मे अनेक मांगलिक तथा धार्मिक कार्य सम्पन्न होते थे और प्रीतिभोज में सभी लोग सम्मिलित होते थे। यदि बगीचे तथा खेत में कोई वृक्ष फलता, तो सबसे पहले उसके फल आस पड़ोस में बांटे जाते हैं ? फिर स्वयं लेते हैं। इस तरह हमारे घर का वातावरण में मुझे अपना जीवन बहुत अच्छा लगता था। बचपन मे उक्त संस्कारों का प्रभाव आज भी मेरे ऊपर है। इस कारण मैं माँ को किसी आश्रम में नहीं भेज सकता उनकी सेवा-सुश्रूषा इसी घर में होनी चाहिए।

विशेष—नाटककार ने प्रथम बार प्रकाश को अपनी पत्नी की अनुचित बात का विरोध करते हुए दर्शाया है। इससे पहले तक प्रकाश एकदम न्यूट्रल बना रहता था, परन्तु अब उसके पुराने संस्कार जागने लगे हैं। इसलिए वह नीलम के संस्कार को अनुचित बतलाता है। भाषा-शैली सरल एवं भावपूर्ण है। भारतीय संस्कृति के अनुसार माँ के गौरव का चित्रण हुआ है।

(12) मैं आचरण करूँ या न करूँ दूसरे जैसा मैं कहूँ, वैसा आचरण जरुर करें, नहीं तो उन्हें मारा पीटा जाये। यह समझ हमें कहाँ से मिली ? एक सिखाने वाला दूसरा आचरण करने वाला। यही है बाहर, जो भीतर आया। अपने बच्चों के साथ-समान रूप से अभिन्नता अनुभव होती हैं। इस आत्मीयता के रंग में माँ को सबके दोष अपने से लगते हैं। (पृष्ठ 88)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

नीलम के द्वारा माँ को हरिद्वार या ऋषिकेश के किसी आश्रम में भेजने का प्रस्ताव सुनकर प्रकाश उसका विरोध करता है। इसी प्रसंग में वह माँ के चरित्र तथा आचरण को

अनुकरणीय बतलाकर नीलम के व्यवहार पर आपेक्ष करता है। वह नीलम से कहता है कि—

व्याख्या - परिवार तथा बच्चों के साथ तुम्हारा व्यवहार उचित नहीं है। तुम चाहती हो कि जैसा मैं कहूँ वैसा ही परिवार के लोग तथा बच्चे जरूर करें। तुम अपनी बात मनमाने की पूरी कोशिश करती हो। अपने बच्चों को तुम अपनी आकांक्षा के अनुरूप ढालना चाहती हो, यदि वे तुम्हारी बात नहीं मानते हैं। तुम्हारे आदेशा अनुसार आचरण नहीं करते हैं, तो तुम उन्हें मारता-पीटती हो। तुम्हें इस प्रकार की समझ कहाँ से मिली। अर्थात यह ना समझ लोग करते हैं। वे अपने आचरण को तो नहीं देखते और दूसरों से अपने अनुकूल आचरण की अपेक्षा रखते हैं। एक स्वयं को सिखाने वाला और दूसरों को आचरण करने वाला माने, तो कहाँ तक उचित है? तुम्हारा यह आचरण सर्वथा आरोपित है क्योंकि तुम पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण कर अपने बच्चों का व्यक्तित्व बनाना चहाती हो। कोरे दिखावे तथा बाहरी आचरण से अपना चरित्र तथा आचरण अनुकरणीय नहीं बन पाता है। अपनी सभ्यता परम्परा और संस्कारों से ही वह अपने व्यक्तित्व का सही विकास कर सकता है।

प्रकाश उदाहरण देता हुआ नीलम से कहता है कि तुम अपने बच्चों पर मन चाहे संस्कार थोप रही हो ,उनमें और स्वयं में सिखाने और सीखने वाला जैसा अन्तर मानती हो। इसलिए तुम्हारी अपने बच्चे में अभिन्नता भी नहीं है। लेकिन माँ के हमारे प्रति अभिन्नता की भावना है। इसलिए अगर आशा शोनू या हम कोई गलती भी करते हैं, तो माँ हमारा दोष न मानकर अपना दोष मानती है। अपने बच्चों के साथ ऐसी अभिन्नता तुम में नहीं है। फलस्वरुप बच्चे तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन करते हैं। अपनी दादी माँ से अधिक स्नेह करते हैं। उनके व्यक्तित्व का निर्माण बाह्य तत्वों से नहीं आन्तरिक तत्वों से हो रहा है।

विशेष — नाटककार ने प्रकाश के कथन से बाह्य आचरण को खोखला तथा आरोपित बताया है। अपने बच्चों के साथ आत्मीयता का व्यवहार होना चाहिए तभी उनमें अपने अनुकूल संस्कारों का विकास होगा।

भाषा शैली सूत्रात्मक है। भाव व्यंजना एवं कथन की महत्ता प्रशंस्य है।

(13) फास्ट माने डाइटिंग—मोटापा कम करने के लिए। व्रत माने अपनी भूख—प्यास—लालच—डर से ऊपर उठना। जो हमें प्रिय है उन्हें ईश्वर ने चरणों में अर्पित करना मनुष्य अपने अहंकार में जमकर पत्थर न हो जाये, इससे बचने के लिए अपनी कठोरता को पिघलाता रहता है—भाव से, आँसुओं से, संगीत से, और सेवा से परम पूज्य के चरणों में नवसिर होकर अपने अंहकार का समन करना, यही ठाकुरजी की पूजा है। हम भाव बने रहें पदार्थ न हो जाये, यही मेरी माँ का भजन है"। (पृष्ठ 90-91)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

नीलम कहती है कि ठाकुरजी तो पत्थर की मूर्ति है। जरूरत पड़ने पर मैंने डेढ़ साल तक फास्ट किया है। तब प्रकाश उसे फास्ट और व्रत का अन्तर बताता है, साथ ही वह पूजा—भजन का आशय समझता है। यह कथन प्रकाश का है।

व्याख्या—प्रकाश नीलम को बताता है कि फास्ट और व्रत में अत्यधिक अन्तर है। फास्ट का अर्थ डाइटिंग होता है। जिसे मोटापा कम करने के लिए किया जाता है। आधुनिकाएँ अपने शारीरिक सौन्दर्य और मोटापा कम करने के लिए फास्ट करती हैं। व्रत का अर्थ उपवास रखना है। इसमें व्यक्ति अपनी भूख-प्यास लालच तथा डर से ऊपर ऊपर उठकर आत्मा का परिष्कार करता है। व्रत आत्मा के कल्याण के लिए, ईश्वर के प्रति

समर्पण के भाव से किया जाता है, जिसमें भौतिक सुख का लालच तथा शरीर रक्षा का भय नहीं रहता है। फास्ट केवल बाहरी शरीर पर प्रभाव डालता है उसमे भूख प्यास बनी रहती है शरीर को सुन्दर बना का लालच और कुरूप होने का भय रहता है। इस तरह व्रत और फास्ट में अन्तर होता है।

प्रकाश अपनी बात को स्पष्ट करता हुआ कहता है कि व्रत उपवास में व्यक्ति अहंभाव का त्याग कर देता है। उस दशा में उसे जो बहुत प्रिय है। उन वस्तुओं को भी वह अपने आराध्य के चरणों में समर्पित कर देता है उपवास रखने से मनुष्य अपनी कठोरता को पिघलाता है और अपने अहंकार को सर्वथा परित्याग कर देता है। अंहकार के कारण व्यक्ति पत्थर जैसा असहृदय बन जाता है। परन्तु उपवास, व्रत रखने से कठोरता समाप्त हो जाती है। और व्यक्ति अपने आराध्य की भक्ति—भावना, संगीत, भजन सेवा पूजा तथा निवेदन आदि से अपने अहंकार को शान्त कर देता है। वही ठाकुर जी की सच्ची पूजा है। मेरी माँ भी इसी भावना से पूजा करती है। वे चाहती है हमें आत्मिक - भाव बने रहें, कठोर पत्थर की तरह शुष्क हृदय न रहें और आत्मिक सुख शान्ति से समन्वित हो।

विशेष—प्रकाश का कथन है कि आत्मिक—सुख शान्ति एवं कल्याण के लिए व्रत—उपवास एवं भजन पूजा का अत्यधिक महत्व है। इसके विपरीत फास्ट या डाइटिंग से अंहभाव का आधिक्य है।

इस अवतरण में नाटक के कथ्य का सशक्त प्रतिपादन किया गया है। भाषा—शैली प्रसंग एवं भावानुकूल है।

(14) मुझे तरक्की नहीं चाहिए। मैंने नौकरी कर ऐसी धर्म माँ को खो दिया। निरपेक्ष रहने की इतनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी पता नहीं था। नौकरी पेट के लिए है, अन्नमय कोष के लिए। जीवन मनोमय कोष का भोजन है— इसलिए वह धर्म है। धर्म सर्व जीवन के साथ एकाकार होना"। (पृष्ठ 98)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत। (चतुर्थ अंक) अपनी धार्मिक आस्था का अन्त तक निर्वाह करते हुए माँजी का निधन हो जाता है। इससे प्रकश हृदय का परिवर्तन होता है। तब वह नौकरी के तरक्की की बात छोड़ देता है। वह अपनी पत्नी नीलम से कहता है कि —

व्याख्या—'प्रकाश' घर लौटकर नीलम से कहता है कि उसने दिल्ली जाने से इन्कार कर दिया है। मैंने नौकरी करके अपनी धर्म परायणा। भक्त हृदया और पावनता की धर्म-मूर्ति माँ को खो दिया है। माँ खोकर आज मेरी आँखें खुल गयी हैं। मैं इस घर में रहकर निरपेक्ष रहा। कभी कुछ बोला नहीं। इसी का परिणाम है कि आज मुझे स्पष्ट बोलना पड़ रहा है। मेरी यह स्पष्ट कथन-वृति यदि पहले ही शुरू हो गयी होती तो कम से कम बहुत सी अनहोनी और अवांछित बातें तो न होती। मैंने निरपेक्षता की बड़ी कीमत चुकायी है। मुझे पहले इसका अहसास नहीं था। नौकरी तो उदर-पूर्ति के लिए की जाती हैं। इससे हमारे अन्नमय कोष का ही पोषण होता हैं। जीवन मात्र अन्नमय कोष भौतिक सुख सुविधाओं के जुटाने का नाम नहीं है। वह तो उससे काफी आगे जाने की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है।

विशेष—'प्रकाश' की साहसिक व स्पष्टवादिनी मनोवृति की स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है।

'अन्नमय कोष' व 'मनोमय कोष' दार्शनिकता व्यक्त करते हैं।

ये पारिभाषिक शब्द शैव-दर्शन के हैं।

भाषा प्रायः सरल है। इसमें प्रवाह विद्यमान है।

(15) "माँ मेरा भय लेकर चली गई। इस नौकरी ने मेरा सत्यानाश किया, पर माँ के आर्शीवाद से मैं इतना नहीं गिरा कि माँ के विश्वास को अपनी तरक्की के लिए बाजार में बेच दूँ"।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत (चतुर्थ अंक)

माँ की मृत्यु के बाद प्रकाश कहता है कि अब मुझे नौकरी में तरक्की नहीं चाहिये। अब मैं निरपेक्ष नहीं हूँ। इस बात पर नीलम उसे कहती है कि यह अच्छा नहीं रहेगा। तब प्रकाश नीलम से कहते हैं कि—

व्याख्या—माँ के जीवित रहने तक तुम्हारा और सेठी का पक्ष अच्छा लगता था मैं तुम्हारी और सेठी की बात का विरोध भी नहीं कर पाता था। अब माँजी की मृत्यु हो जाने के कारण मेरा भय खत्म हो गया है। सेठी सहाब से मुझे भय था वह माँ साथ ले गयी है, इस नौकरी ने मुझे पूरी तरह बर्बाद कर दिया है। यदि में ऊँची नौकरी पाने के लालच में चुप नहीं रहता और माँ का पक्ष लेता तो यह बुरा कभी नहीं देखना पड़ता। यद्यपि मेरा अत्यधिक अहित हो गया है, तथापि मैं माँ के आर्शीवाद से इतना नहीं गिरा कि उनके विश्वास को नाही कर दूँ या अपनी तरक्की के लिए माँ के विश्वास को बाजार में बेच दूँ। माँ ने मुझे जन्म देकर जिन संस्कारों को स्वतन्त्रता पूर्वक ढलने दिया मैं उनको भूल चुका था। परन्तु जिस तरह माँ का निधन हुआ, उसका मुख्य कारण मेरा निरपेक्ष रहना था। मैं उस समय सेठी साहब और तुम्हारा विरोध कर लेता तो यह दिन नहीं देखना पड़ता। अब में माँ के विश्वास को रखने के लिए मैं ऊँचे पद और नौकरी भी त्याग दूँगा पर माँ के विश्वास को ठेस नहीं पहुँचाऊँगा।

विशेष—प्रकाश जीवन के धर्म के महत्व को स्वीकार करता है। वह जीवन को केवल साधन न मानकर साध्य मानता है अन्त में निरपेक्षता का विरोध करने से प्रकाश का चरित्र उठ गया है।

भाषा सरल-सुबोध एवं भावात्मक है।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. हिन्दी के समसामयिक नाटकों का विकास रंग मंचीय दृष्टि से हो रहा है। जबकि इससे पूर्व के नाटकों-में इस दृष्टि की प्रायः उपेक्षा ही है।

उत्तर—यह ठीक है कि जयशंकर प्रसाद के नाटको से नाटय साहित्य को गति मिली है। उन्होंने अपने नाटकों के माध्यम से भारतीय आदर्श और संस्कृति का रूप दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किया उन्होंने अपने नाटकों के द्वारा दर्शकों की रुचि परिष्कृत एवं परिमार्जित किया। विद्वानों ने प्रसाद जी के नाटकों की हर दृष्टि से प्रशंसा की परन्तु एक स्थान पर आकर उनकी प्रशंसनीय वार्णी ने विश्राम किया। वह स्थान था प्रसादजी के नाटकों रंगमंचीयता के गुणों की कमी होना। प्रसादजी इस मान्यता के बिलकुल विरोधी थे कि रंगमंचीयता को ध्यान में रखकर नाटक लिखे जाए उनके अनुसार रंगमच में वे सभी गुण बनाये जाये जो नाटक के लिए आवश्यक है। परन्तु यदि इस विचार पर दृष्टि डाली जाए तो ऐसा संभव नहीं कि नाटक में वर्णित हर वस्तु रंगमंच पर प्राप्त ही हो जाए प्रसादजी से पूर्व भी जो नाट्य परम्परा हमें मिलती है उसमें भी रंगमंचीय तत्वों का प्रायः अभाव ही ही रहता है।

परन्तु साठोत्तर काल के नाटक जो हमें देखने को मिलते हैं उसमें हम पाते हैं कि वह रंगमंचीय दृष्टिकोण से लिखे गये है। आज परिस्थितियों के अनुसार नाटक लिखे जा रहे हैं। जो नाट्य साहित्य प्रेम सौन्दर्य और कल्पना के आकाश के नीचे विकसित हुआ था वह अब यथार्थ की भूमि पर आकर खड़ा हो गया है जहाँ उसमें माटी की भीनी महक

भर गयी है समाज के स्थान को व्यक्ति ने ले लिया है। आदर्श का दायरा टूट गया। यही नाटक अब अनेक समस्याओं को अपने में समेटे जब रंग मंच पर प्रस्तुत किए जाते हैं तो श्रोता उसमें अपने जीवन की यथार्थ झलक पा जाता है।

हिन्दी के समसामयिक नाटककारों में हम जिस नाटककार को स्थान दे सकते हैं वह इस प्रकार है भुवनेश्वर, लक्ष्मी नारायण लाल, मोहन राकेश, सुरेन्द्रवर्मा, सत्यव्रत सिन्हा जगदीश चन्द्रमाथुर इन नाटककारों ने जहाँ एक और अपने नाटकों का क्षमताओं का विकास किया है। वहीं दूसरी और यह भी देखने में आया है कि सभी नाटककार रंगमंच को ध्यान में रखकर नाटक लिख रहे हैं। लक्ष्मीनारायण लाल ने प्रायः सभी नाटक रंगमंच की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। कथानक, चरित्र संवाद और भाषा शैली, रंग विधान संगीत, सजावट, दृश्य दिधान, अभिनय स्थल सभी उपकरणों का ध्यान आज के नाटकों में रखा जाता है। समसामयिक नाटकारों का रंगमचीय दृष्टि से विवेचन करना तो संभव नहीं किन्तु उससे सम्बन्धित कुछ बातों पर दृष्टिपात किया जा सकता वह इस प्रकार है—

(1) **समकालीन जीवन की कथा**—सम सामयिक हिन्दी नाटकों में जो कथा वस्तु चुनी जाती है वह सम कालीन जीवन का किसी सन्दर्भ को संकेतित करती है। किसी भी संकेतिक नाटक पर दृष्टिपात किया जाए तो हमें यह बात पर स्पष्ट हो जाती है इन नाटकों में ऐसी कथा वस्तु रखी जाती है जिसे आसानी से रंगमंच पर प्रस्तुत किया जा सके इस सन्दर्भ में मादा कैक्टस, द्रौपदी, गंगामाटी यक्ष आदि नाटक रखे जा सकते हैं।

(2) **अंकों का अपेक्षाकृत कम होना**—सम सामयिक नाटकों की कथा वस्तु अधिक अंकों में प्रस्तुत न करके कम अंशों में प्रस्तुत की जाती है। हाँ उसमें कुछ दृश्य ऐसे अवश्य रखे जाते हैं जो नाटक के केन्द्र बिन्दु को प्रकट कर सकें। ऐसे कथा वस्तु विधान रंग-मंच पर आसानी से प्रस्तुत किया जा सकता है।

(3) **रंगमंचीयता**—मोहन राकेश तथा लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में सभी रंगमंचीय आवश्यकताएँ पूरी होती दिखायी देती हैं। इन दोनों के नाटकों को रंगमंच पर सबसे अधिक प्रस्तुत किया जा चुका है।

(4) **सरिलष्ट संवाद**—साठोत्तर नाटकों में जिन संवादों का प्रयोग हुआ नहीं है उसकी तुलना समसामयिक नाटकों में संवाद अधिक संक्षिप्त, अधिक प्रभावी तथा अधिजक होते है। कहीं-कहीं तो पात्र एक शब्द बोलता है और जब वह शब्द रंगमंच पर बोलता है तो उसकी व्यंजना दर्शक के हृदय में उतर जाती है संवाद कला की ये विशेषताएं समसामयिक हिन्दी नाटकों का रंगमंच के अनुकूल बना सकी है।

(5) **आकार की लघुता**—समसायियक हिन्दी नाटकों का आकार लघु है उनमें आये घटना सन्दर्भ एक-दूसरे से इस प्रकार जुड़े हुए हैं कि सन्दर्भ के हट जाने से नाटक की कथा का महल गिरने लगता है। नाटकों को रंगमंचीय आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के लिए समसामयिक नाटकों में पात्रों की संख्या सीमित होती है।

(6) **संकलन त्रय**—स्थान काल और प्रभाव की एकता भी समसामयिक नाटकों की विशेषता है इतना ही नहीं इन नाटकों में रंगमंच की सज्जा न केवल आधुनिक है अपितु आकर्षक और प्रभाव शाली भी है।

(7) **संगीत व रंग विधान**—समसामयिक हिन्दी नाटकों में संगीत योजना, नियोजन और सन्दर्भ योजना भी पूरी कलात्मक के साथ की गयी है। अमुक दृश्य के लिए अमुक रंग अमुक ध्वनि, संकेत और अमुक सजावट उपयुक्त रहेगी। इन सभी उपकरणों का विधान सम समयिक नाटकों में किया जाता है।

(8) **भाषा शिल्प**—किसी नाटक के सफल होने में तथा उसके प्रभाव शाली होने में जो योगदान भाषा और शैली हो सकता है, वह किसी अन्य तत्व का नहीं। सम साम-

यिक हिन्दी नाटकों में ऐसी भाषा रखी जाती जो दर्शकों को आसानी से समझ में आ सके लक्ष्मी नारायन लाल के नाटकों में इसी प्रकार की सरल सहज और बोध गम्य भाषा का प्रयोग हुआ है।

समग्र रुप से विवेचन करने के उपरान्त हम कह सकते हैं कि सम सामयिक नाटकों का निर्माण रंगमंचीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जा रहा है आज के सभी नाटककार इस तथ्य से परिचित हो चुके हैं नाटक का अनिवार्य सम्बन्ध रंगमंच से है उनके नाटकों में रंगमंचीय अनुष्ठान सुविचारित तथा सुनियोजित है।

प्रश्न 2—कथा विसंजन की विषय वस्तु उद्देश्य में सांस्कृतिक बोध से परिपूर्ण होकर भी सम सामयिक सन्दर्भों के रंगों से रंजित है।" बस कथन की युक्ति पूर्वक व्याख्या कीजिए।

उत्तर—प्रसादोत्तर नाटक जो लिखे गये हैं और लिखे जा रहे हैं वह बौद्धिकता से से प्रेरित होकर समस्यात्मक होता जा रहा है आजकल जो नाटक लिखे जा रहे हैं उनमें भावना से अधिक बुद्धि के आदर्श से अधिक जीवन के यथार्थ को शब्दांकित किया जा रहा है इस प्रक्रिया में नाटक का रंगमंचीय रूप भी पर्याप्त निखर उठा है। डा० लक्ष्मी नारायण लाल एक ऐसे नाटककार हैं जो अभिनेय नाटक लिखने में तो सिद्धहस्त हैं ही सांस्कृतिक बोध से भी परिपूर्ण हैं।

प्रस्तुत नाटक में नाटक कार ने यह प्रयास किया है वह अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन सन्दर्भों को भी नाटक में जोड़े जिनके कारण आज भारतीय समाज सस्कृति को छोड़कर कृत्रिमता भौतिक की ओर बढ़ता जा रहा है इसी उद्देश्य की दृष्टि में रखकर एक ओर अपनी संस्कृति जुड़ा मां जी की वे चरित्र का रहता है तो दूसरी ओर आधुनिकता के मोह से जकड़ी नीलम की अवतारणा की गयी । इन दोनों बिन्दुओं को मिलाने के लिए प्रकाश व उसके बच्चों को प्रस्तुत किया गया है।

उन्होंने स्पष्ट कहा भी है कि आदमी बेघर तभी होता है जब वह अपनी संस्कृति से उखाड़ा जाता है। जब वह अपने जीवन स्वेत से करता है। आधुनिकता ने इसी धरातल पर हमें उखाड़ा है इस नाटक में सम सामयिक सन्दर्भ उभारे गये हैं वह इस प्रकार हैं—

(1) **दूषित शिक्षा पद्धति**—प्रस्तुत नाटक में नाटकार से हमारे देश की वर्तमान शिक्षा पद्धति पर आक्षेप करते हुए इसे दूषित बतलाया है आजकल अधिकांश सभ्य लोग अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा दिलाकर पाश्चात्य जीवन पद्धति में ढालना चाहते हैं, वर्तमान शिक्षा पद्धति में कृत्रिम व्यक्तित्व का निर्माण किया जा रहा है। बच्चों पर पुस्तकों का बोझ अधिक जिनसे उनका मानसिक विकास नहीं हो पा रहा है। प्रथम अंक में आशा और शोनू की ऐसे ही बालकों के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो फिल्मी पत्र पत्रिकाएँ पढ़ते हैं। बाहर घूमना अच्छा मानते हैं और अपनी अध्यापिका से अधकचरी शिक्षा प्राप्त करते हैं। उन्होंने उन बच्चों के माध्यम से बतलाना चाहा है कि यह छात्र अपनी संस्कृति से परिचित नहीं हो पाते हैं। उन्हें जीवन की वास्तविक शिक्षा नहीं मिल पाती है और वे बाहर ही बाहर भटकते रहते हैं।

(2) **आधुनिकता का मोह**—नाटककार ने प्रस्तुत नाटक सम सामयिकता के सन्दर्भ प्रस्तुत करते हुए कहा वर्तमान काल में हमारे देश में सभ्य समाज में आधुनिकता का मोह बराबर बढ़ता जा रहा है। आज के युग रहन-सहन आचार-विचार की वेशभूषा आदि में आधुनिकता का भूत सवार है। इस आधुनिकता के कारण हम अपनापन खो चुके हैं। और हम अपने ही घर से बेघर हो रहे हैं। इस सम्बन्ध में नाटक का कथन स्पष्ट है हमें अपनी संस्कृति से उखाड़कर उन्होंने हमारी सूखी जड़ पर आधुनिक के वाक्य की कुलपत्ती सजाने की कोशिश की है। यह है कि भारत वर्ष की आधुनिकता और आधुनिक कला।"

इस नाटक की पात्र नीलम आधुनिक जीवन को ही श्रेष्ठ जीवन मानती है। यही नहीं वह अपने बच्चों को भी आधुनिक बनाना चाहती है। इसलिए वह अपनी बेटी को पूजा-पाठ करने पर फटकारती हुयी कहती है—तेरी यह हिम्मत। मुँह तोड़ कर रख दूंगी। भक्तिन नहीं बनना है। आधुनिक लड़की बनना है तुझे कान खोलकर सुनते—तुझे माडर्न बनना है। मिडिल नहीं।" इसी प्रकार नीलम अपने पुत्र को इंजीनियर बनाना चाहती है वह अपने पति व बच्चों को अपनी महत्वाकांक्षा के अनुसार प्रेरित करती रहती हैं। प्रकाश और सेठी साहब भी आधुनिकता के मोह में रहते। वास्तव में समसामयिक तथ्य यह है आधुनिकता के मोह ने सभी भारतीयों को जकड़ रखा है जिस से आज भारतीय नागरिक अपनी पहचान खो बैठा है और उसका रूप बन्द रंग हो गया है।

(3) **सांस्कृतिक ह्रास**—प्रस्तुत नाटक में इस सामयिक सत्य का उद्घाटन किया गया है कि आधुनिकता के मोह में भारतीय अपनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव भारतीयों पर हावी हो रहा है। नाटककार ने स्वयं लिखा है कि हम अपनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। अपने देश संस्कृति से यूरोप की संस्कृति को श्रेष्ठमान रहे हैं। अन्धानुकरण की प्रवृत्ति ने हमें पाश्चात्य संस्कृति का गुलाम बना दिया है प्रस्तुत नाटक में नीलम अपने पति व अपने बच्चों को पाश्चात्य संस्कृति के आवरण में ढक देना चाहती है। वह पूजा पाठ आदि हीनता और देहातीपन का सबूत कह देती है।

प्रस्तुत नाटक में अनेक कथन नीलम के ऐसे मिसालें हमें संस्कृति के ह्रास का प्रमाण मिलता है। अपनी सास से कठोर व्यवहार, अपने पति को अपनी प्रतिभा के समय तुच्छ समझना आदि नाटक के अन्त में अपनी माँ के बिधान पर प्रकाश भारतीय सांस्कृतिक परम्पराओं से जुड़ना चाहता है।

(4) **भौतिकता की प्रधानता**—वर्तमान भारतीय जन जीवन में भौतिकता की भावना प्रबल होती जा रही है इसका सके नाटककार प्रस्तुत नाटक से कर दिया है इस लोग मशीन की तरह रात दिन अपने कार्यों में व्यस्त रहते हैं उस कार्य के पीछे उनकी लालसा यही होती है कि उन्हें अधिक से अधिक भौतिक सुख मिले नीलम रात दिन बाहर भटकती रहती अनेकों सपने संजोती है। वह अपनी इस प्रकार की लालसा प्रकट करते हुए कहती है-माँ जी हम लखनऊ से दिल्ली पहुँच जायेंगे तो हमारे सारे सपने पूरे हो जायेंगे दिल्ली से ही सब कुछ ही है × × नई कार की बुकिंग करा दी है। डी० डी० ए से एक जमीन के लिए कोशिश कर रही हूँ" इस प्रकार नीलम पर भौतिक सुख-सुविधाओं की लालसा का अत्यधिक प्रभाव दिखायी देता है।

प्रकाश भी इसी मोह व जकड़ा हुआ है वह नौकरी की तरक्की के लिए अनेक प्रयत्न करता है परन्तु अन्त में उसे इस सबसे वितृष्णा हो जाती है। नाटककार इस प्रसंग में यह संकेत किया है। कि व्यक्ति अध्यात्मक से दूर रहकर आत्मिक सुख की प्राप्ति नहीं कर सकता जब तक वह भौतिक सुखों की मारी चिता में दौड़ता रहेगा। तब तक वह आत्मिक सुख की प्राप्ति नहीं कर सकता।

(5) **पारिवारिक जीवन में अलगाव**—आधुनिक बोध के विकास का परिणाम यह कि दाम्पत्य जीवन मे एक नीरसता, एक बेगानगी और एक तरह की बेचारगी विकसित हो गयी, पत्नी के मध्य एक सरलता आ गयी है जैसे दोनों ही एक दूसरे से उखड़े हुए हैं। बच्चे, माँजी, सभी अलगाव को झेलते हुए दिखाए गये हैं।

यथा

शोनू—कहाँ जाएँ ? बाहर जाए तो कहती हो घूमता है। घर में रहें तो क्या मुँह सिल लें सुई धागे से !

नीलम-शोनू

शोनू—मम्मी तुम्हारे पास वक्त नहीं है कि तुम से बात कर सकें। पापा को अपने दफ्तर से कभी फुर्सत नहीं। तो क्या हम दादी से बात न करें ? तुम दादी से इतना घबराती क्यों हो

(6) **पति-पत्नी के सम्बन्ध और अलगाव**—'कथा विसर्जन' नाटक में पति-पत्नी के सम्बन्धों में विकसितनाव, अलगाव और बेगानेपन को दिखलाया गया है। 'नीलम' को बाहर घूमने से फुर्सत नहीं है तो प्रकाश को अपने दफ्तर और फाइलों से दोनों में से किसी को भी एक-दूसरे के पास बैठने की फुर्सत नहीं है। कई बार यह फुर्सत होती है तो भी दोनों अलग-अलग बने रहते हैं।

माँजी इस अलगाव को महसूस करती है।

प्रकाश—नाथू ! गाड़ी ठीक करो, दफ्तर जाना है।

माँ—बीमार बहू को छोड़कर दफ्तर जाओगे ?

प्रकाश—जल्दी आ जाऊँगा माँ। तुम तो हो ही माँ।

माँ—मेरे भरोसे पत्नी को छोड़ना नौकरों के भरोसे माँ को छोड़ना यह कौन सा जीवन है।

(7) **मानवीय सम्बन्धों की स्थिति**—समकालीन परिवेश में मानवीय सम्बन्धों का विकृत रूप देखने को मिलता है मनुष्य संवेदना हीन होता जा रहा है किसी को किसी से संवेदना या अलगाव नहीं रहा। सब अपनी-अपनी महत्वकांक्षाओं को पूरा करने में व्यस्त हैं यह आपस में मानसिक तनाव बच्चे भी महसूस करते हैं आशा जैसी छोटी सी बालिका भी इस तनाव को महसूस करती है वह अपने पिता से कहती है—आपस में हम सब बोलते क्यों नहीं ? क्यों एक दूसरे से डरते हैं। हर बात में माँजी को बीच में क्यों खींच लिया जाता है।

(8) **अकेलापन और रिक्तता**—रिक्तता और अकेलापन भी आधुनिक परिवेश की एक देन है आज आदमी भरे पूरे समाज में तथा परिवार में रहकर भी अकेलापन महसूस करता है। इस नाटक में भी नाटककार ने इस समस्या को चित्रित किया है। इस नाटक में प्रत्येक पात्र अकेला और रिक्तता महसूस करता है भरापूरा घर होने पर भी किसी में अपनापन नहीं बच्चे भी स्वयं को बहुत अकेला महसूस करते है। बच्चे अपनी माँ जी के पास ज्यादा रहते हैं परन्तु यह बात नीलम को पसन्द नहीं है वह कहती है "जब देखो वह तीनों हम दो अकेले।"

अन्य समसामयिक सन्दर्भ और समस्याएँ—(1) नीलम आधुनिक परिवेश में साँस ले रहे अन्य मनुष्यों की तरह अपने दोनों बच्चों की उम्र रजिस्टरों में कम लिखाती वह उम्र कम लिख कर उनके जीवन को अधिक आकर्षित बनाना चाहती है।

(2) नीलम बच्चों के लिए पूजा पाठ को ठीक नहीं मानती। वह उनकी धारणा है कि साठ साल की उम्र के बाद धर्म-कर्म ठीक है।

(3) धर्म कर्म और पूजा पाठ को व्यक्तित्व के विकास में अवरोध मानना, समकालीन परिवेश में धार्मिकता, उदात्तता और पावनता के लिए कोई स्थान नहीं है। तभी तो नीलम कहती है "यह धर्म, ज्ञान, गीता रामायण पिछड़ेपन यहाँ तक कि देहातीपन का सबूत है। माफ कीजिए तरक्की के लिए धर्म नहीं शक्ति चाहिए।

(4) वर्तमान परिवेश में सब कुछ सिफारिश से होता है बिना सिफारिश के कुछ भी संभव नहीं तभी तो नीलम प्रकाश के बॉस सेठी साहब को बार-बार आमन्त्रित करके अपने पति की तरक्की के लिए जोर डालती है यह स्थिति सम सामयिक परिवेश की विशेषता है।

(5) समकालीन परिवेश में भ्रष्टाचार और विदेशी माल खरीदने और बेचने की प्रवृत्ति बहुत पनप रही है 'कथा विसर्जन' में नीलम और प्रकाश का वार्तालाप यही घोषित करता है।

नीलम—चलो बाहर घूम आएं

प्रकाश—हम बाहर ही तो घूम रहे हैं। घर में कहा है ? अब तो दिल्ली भी जाना है।

नीलम—घर दिल्ली में ही बनायेंगे। दिल्ली नौकरी कोई आसान चीज नहीं है। कुल चार महीने हिन्दुस्तान में आठ महीने विदेश में हिन्दुस्तानी माल बेचना विदेशी माल खरीदना।

(6) आधुनिक परिवेश से प्रभावित व्यक्ति सांस्कृतिक बोध को कृषि सभ्यता की बातें कह कर टाल देते हैं। नीलम का प्रकाश के प्रति कथन इसका प्रमाण है।

निष्कर्षतः समग्र विवेचन पर दृष्टिपात करने पर हम कह सकते हैं कि प्रस्तुत नाटक में समाज सभी सम सामयिक समस्याओं को उभारा गया है समसामयिक सन्दर्भों पर विस्तृत चर्चा की गयी है अन्त में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को ही अच्छा कहा गया है।

प्रश्न 3—संवाद नाटक का प्राण है।" इस कथन को स्पष्ट करते हुए कथा विसर्जन की संवाद योजना पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—संवाद शब्द से तात्पर्य है परस्पर वार्तालाप ! नाटक का प्राण तत्व संवाद को कहा गया। नाटक की पूरी सफलता उसके संवाद सौष्ठव पर आधारित है। नाटक में नाटकीयता का गुण संवादों के माध्यम से आती है। नाटक में आङ्गिक, आहार्य, सात्विक अभिनय और अभिनेता की अनुभूति का आधार ही परस्पर संवाद होता है और दर्शक इन्हीं संवादों के द्वारा भावों को ग्रहण करने में समर्थ हो पाता है। नाटक में इसका विशेष महत्व है इसी कारण इसे नाटक का प्राण तत्व कहा जाता है।

संवाद के द्वारा भावों का परस्पर सम्प्रेक्षण किया जाता है नाटक में संवाद सौष्ठव एवं कला है नाटककार की सफलता अच्छे सशक्त और रोचक संवाद लिख सकने के कारण ही है। नाटक में हृदय परिवर्तन के साथ-साथ संवाद भी अपना महत्व रखते हैं। अच्छे संवाद भावाभिव्यक्ति के द्वारा दर्शक के मानस पर प्रभाव डालते हैं। कुछ संवाद हमारे जीवन पर स्थायी प्रभाव डालते हैं।

श्रीलक्ष्मी नारायण लाल के कथा विर्सजन नाटक में नाटक के तत्वों तथा रंग शिल्प का पूरा ध्यान रखा गया है। इसमें संवाद सौष्ठव बहुत उच्च कोटि का है। प्रस्तुत नाटक के संवादों की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं।

संक्षिप्त और सरल संवाद—कथा विर्सजन नाटक में प्रायः सभी संवाद संक्षिप्त और सरल हैं। यद्यपि नीलम और प्रकाश के कुछ संवाद बड़े हैं लेकिन उनसे कथानक की गतिशीलता में कोई बाधा नहीं आयी है। ये संवाद चिन्तन और घटना की माँग के अनुरूप हैं। अर्न्तद्वन्द एवं कथन का तारतम्य स्थापित करने में सक्षम है। वह सहज और सरल है। उनकी भाषा में सम्प्रेषणीयता है।

उदाहरणार्थ

आशा—मम्मी

नीलम—यहाँ खड़ी-खड़ी क्या कर रही हो, जाकर पढ़ाई करो।

सरसतापूर्ण संवाद—जहाँ सवादों में सरसता का प्रश्न है कथा विसर्जन में इस सरसता का भी कोई अभाव नहीं है। इनमे सरसता और रोचकता के गुण एक साथ देखे जा सकते हैं।

शोनू—हम चलें घूमने बाहर

आशा—ना ना ना दीदी का डर। इत्यादि

चरित्रोद्घाटक संवाद—प्रस्तुत नाटक में संवादों के माध्यम से पात्रों की चारित्रिक विशेषता का उद्घाटन हुआ है माँ का चरित्र भारतीय संस्कृति पर आस्था रखने वाला तथा आत्मबोध से युक्त है। प्रकाश, नीलम, बच्चे सभी के संवाद उनके व्यक्तित्व को उद्घाटित करने वाले हैं।

—माँजी "चाहती हैं मैं भी बाहर घूमूँ? मेरा स्थान मेरी वाणी है मेरा मन्दिर मेरा आचरण है। मेरा दुर्ग मेरा चरित्र मेरा सत्संग मेरा घर मेरा आस पड़ोस

× × × ×

नीलम शोनू की उम्र सोलह साल।.........मतलब कि इस उम्र में धर्म और पूजा पाठ इनमें काम्पलेक्स पैदा करेगा। इनका नार्मल ग्रोथ रुक जाएगा। इनकी पर्सनैलेटी स्पिलिट है। जाएगी मैं समझाती हूँ आपको

माँजी—समझ रही हूँ बहू ! इतनी अंग्रेजी तो जानती ही हूँ।

प्रकाश—जिद नहीं करते

आशा—मम्मी क्यों जिद करती है ? सब कुछ मम्मी है क्या ? नहीं सब कुछ ईश्वर है। उपर्युक्त संवादों से माँ की आस्था वादिता, आशा की बाल सुलभता नीलम की अत्याधुनिकता स्पष्ट हो जाती है। नीलम का चिन्तन भौतिक वादी है किन्तु माँ अपनी संस्कृति से जुड़ी रहना चाहती है।

3. **गतिशील संवाद**—नाटक में कथानक को आगे बढ़ाने में कथोपकथनों या संवादों का अत्यधिक महत्व है। संवाद के द्वारा नाटककार के बिखरे हुऐ सूत्रों को जोड़ता है और भारी घटनाओं का संकेत करता हुआ कथा को गति प्रदान करता है। कथा विसर्जन में नाटक के संवाद इस दृष्टि से अत्यन्त सफल है। उदाहरण के लिए प्रस्तुत नाटक के प्रथम अंक में सर्वप्रथम माँ आशा और शोनू के संवादों से आधुनिक शिक्षा की अनुपयोगिता आदि का संकेत मिलता है माँ और नीलम के संवाद अत्यन्त गतिशील हैं। नीलम को भविष्य की चिन्ता अधिक रहती है उसमें अपनी कल्पना में जिस संसार की रचना कर रखी है वह अत्यन्त भ्रष्ट है। मार्डन बनाना ही उसकी सभ्यता है। उसके संवादों में जहाँ चारित्रिक कमजोरी व्यक्त हो रही है वहाँ कथानक भी अपने उद्देश्य की ओर अग्रसर होता हुआ दिखाई देता है। अन्त में प्रकाश और नीलम की संवाद योजना में नाटककार में चिन्तन शीलता और गतिशीलता तथा भावात्मकता का समावेश किया है।

4. **उद्देश्योन्मुख संवाद**—'कथा विसर्जन' नाटक में उद्देश्य अत्यन्त स्पष्ट है। इस नाटक की मूलसमस्या समसामयिक भारतीय जीवन में पाश्चात्यानुकरण की होड़, व्यस्तता एवं सुख-सुविधाओं का मोह तथा अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं का विसर्जन है। आज के परिपेक्ष्य में यदि देखा जाए तो भारतीय संस्कृति का स्थान पाश्चात्य संस्कृति ले रही है भारतीय संस्कृति प्रायः लुप्त होती जा रही है। आधुनिकता की होड़ में वह यह भी भूल गये है कि वास्तविक सुख क्या है।

इस नाटक में लेखक का उद्देश्य अपनी संस्कृति और सभ्यता के प्रति पात्रों में चेतना जाग्रत करना है और इस उद्देश्य को वह अपने संवादों द्वारा प्राप्त कर सकता है।

यथा—सेठी—सच, सुख अपने में है वैशिष्ट्य न यहाँ अपना क्या है ? न अपना घर है, न अपनी नौकरी है न अपनी परम्पराएं न अपना रहन-सहन है।

प्रकाश—न अपनी शिक्षा है न अपनी भाषा

सेठी—तो सुख कहाँ से प्राप्त हो ?

प्रकाश के आत्म साक्षात्कार पहले तो दबे रहते हैं परन्तु माँ के आसामयिक निधन पर उसकी चेतना जाग्रत हो जाती है तब नाटककार ने संवादों के माध्यम से उद्देश्य स्पष्ट करने की चेष्टा की है।

अन्तिम संवाद से अपनी संस्कृति को अपनाकर पाश्चात्य संस्कृति का विसर्जन किया है।

मूल संवेदना व्यंजक संवाद—नाटककार ने भूमिका भाग में प्रस्तुत नाटक की मूल संवेदना पर प्रकाश डाला है इस सम्बन्ध में उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि आज हमारे ऊपर बाहरी तत्व हावी होते जा रहे हैं अपने सांस्कृतिक मूल्य समाप्त हो रहे हैं। आधुनिकता के मोह ने हमें आत्म केन्द्रित और घोर स्वार्थी बना दिया है पश्चिम देश हर कीमत पर अपनी संस्कृति को जीवित रख रहे हैं और भारतीय लोग अपनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। इसी मूल संवेदना को व्यक्त करने के लिए माँ के संवाद अत्यन्त प्रभावशाली है।

माँ—बहू रानी। क्या है तुम्हारा अपनापन, मैं धन्य हो जाऊँगी जानकर

नीलम—मेरा अपना कुछ नहीं है। इत्यादि

कथा के सूत्रों को जोड़ने वाले—कथा विसर्जन के संवाद नाटक की कथा में आये विखण्डित सूत्रों को जोड़ने वाले है। इन सम्वादों में ऐसी क्षमता है कि छूटे हुए और टूटे सन्दर्भ स्वत: जुड़ते चले गये शानू और आशा के सम्वादों में यही विशेषता मिलती है।

भावागत सरलता—प्रस्तुत नाटक के संवादों की भाषा सरल सहज और प्रवाह पूर्ण है। उसमें सम्प्रेक्षण का गुण भी विद्यमान है। वे कहीं भी भाषण नहीं बने हैं। वह पाठक के हृदय को छूने वाले हैं।

कथा विसर्जन नाटक के संवाद अत्यन्त रोचक व भौतिक हैं इसके सभी संवाद पात्र परिस्थिति और विषय वस्तु की माँग के अनुरुप बन पड़े हैं। प्रकाश के प्रारम्भिक संवाद जहाँ उसके दब्बूपन के सूचक हैं वहीं अन्तिम सम्वाद में अत्यन्त भावात्मकता व्यंजकता और चिन्तन शक्ति के गुण है संक्षेप में कथा विसंजन नाटक की संवाद योजना प्रशस्य है इसमें कथोपकथन की सभी विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं। संवादों की भाषा सरल और पात्रानुरूप हैं। ऐसे स्थलों पर संवाद अत्यन्त पैने तथा व्यजंना पूर्ण है। निश्चय ही संबाद योजना की दृष्टि से यह एक सफल नाटक है।

प्रश्न 4. कथा विसर्जन नाटक की तात्विक विवेचना कीजिए ?

अथवा

नाटक के तत्वों के आधार पर कथा बिसर्जन नाटक का मूल्यांकन कीजिए ?

उत्तर—कथा बिसर्जन नाटक लक्ष्मी नारायण लाल का समस्या मूलक नाटक है जिसकी कथा वस्तु सभी सम सामयिक सन्दर्भों को अपने में समेटे हुए है। इस नाटक का लेखन रंग मंचीयता के दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर हुआ है।

नाटक के तत्व—कथा बस्तुत पात्र चरित्र-चित्रण, संवाद, देशकाल उद्देश्य और शैली शीर्षक और रंग मंचीयता भी इन्हीं तत्वों के साथ विवेचित किए जाते हैं।

कथानक—'कथा विसर्जन' नाटक की कथा चार अंकों में बिभाजित है। प्रत्येक अंक में दृश्यों का विधान सुन्दर ढ़ंग से प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत नाटक में ऐसे परिवार की कथा को चित्रित किया गया है। जिसमें तीन पीढ़ियाँ एक साथ हैं। दादी

माँ की पीढ़ी अपनी संस्कृति से जुड़ी हुयी है और उसी से जीवन का रस प्राप्त करती रहती है। दादी माँ इस नाटक का प्रधान पात्र है दूसरी पीढ़ी में प्रकाश और उसकी अत्याधुनिक पत्नी नीलम है ये दोनों आधुनिक जीवन की व्यस्तता, उसमें समाहित आधुनिकता और उसके तौर तरीकों में जीने वाल लोग हैं वह अपने बच्चों की ही, सारी दुनिया को एक ही चश्मे से देखती है और अपने स्वयं के बनाये माप दण्ड पर नापकर प्रत्येक निर्णय लेती है। उसका अपनी संस्कृति से कोई सम्बन्ध नहीं है, तीसरी पीढ़ी में आशा और शोनू आते हैं। पहले पहल तो ये नई पीढ़ी के लगते हैं परन्तु दादी माँ के प्रभाव की सघनता के कारण धीरे धीरे वे अपनी संस्कृति से जुड़ते हैं।

कथा विसर्जन समय लेखक के मन में कथा तत्व के प्रति विशेष लगाव दिखायी देता है। उन्होंने भूमिका में लिखा है कि संस्कृति को जोड़े रखने में मुख्य, कथा नृत्य, संगीत, नाटक, मूर्ति, स्थापत्य कला, लोगों का मिलना-जुलना, कर्म, दुख सुख सबके बीच में वही कथा सूत्र था।

इसके कथानक की निम्न विशेषताएँ हैं :

1. प्रस्तुत नाटक की कथा वस्तु संक्षिप्त, सुगठित, सुव्यवस्थित और प्रवाहपूर्णता के गुण से युक्त है।

2. कथा वस्तु में क्रमिकता है, एक आवश्यक, किन्तु सहज गति विद्यमान है।

3. कौतूहल और रोचकता कथा वस्तु की विशिष्टताएँ हैं।

4. कथा का निश्चित प्रारम्भ, मध्य और अन्त है। कहीं भी विखण्डित सी प्रस्तुत नहीं होती है।

5. कथा वस्तु में देशकाल आदि सभी का ध्यान रखा गया है। कोई भी घटना कृत्रिम व आरोपित नहीं है सभी कुछ सहज भाव से घटित होता चला गया है।

6. प्रस्तुत नाटक की कथा में आकर्षण, मौलिकता यथार्थ परकता जैसे गुण विद्यमान हैं। कथा वस्तु की दृष्टि से यह एक सफल नाटक कहा जा सकता है।

पात्र चरित्र-चित्रण—प्रस्तुत नाटकों में पात्रों की सीमित संख्या है। सभी पात्र अपनी भूमिका की कसौटी पर खरे उतरते हैं। कथा विसर्जन में मुख्यतः छः पात्र हैं माँ, नीलम, आशा तीन स्त्री पात्र है; प्रकाश, सेठी, शोनू तीन पुरुष पात्र हैं, गोपी और नाथू सामान्य पात्र हैं प्रारम्भ में नट और नटी कथा के उपस्थापक पात्र हैं। आशा और शोनू में अल्पवय किशोरी वाली चंचलता और जिज्ञासा है। नीलम और सेठी आजकल के तथा कथित सभ्य समाज के प्रतीक पात्र हैं। प्रकाश का व्यक्तित्व एक व्यस्त और न्यूट्रल अफसर जैसा है। माँ अपनी संस्कृति और परम्परा से जुड़ी हुयी है उनमें भारतीयता की मूल चेतना विद्यमान है इस प्रकार पत्र योजना की दृष्टि से यह नाटक एक सशक्त रचना है।

कथोपकथन—संवाद सौष्ठव किसी नाटक के पात्र होते हैं। संवाद योजना, पात्र, कथानक, देश काल और परिस्थिति के अनुरूप होने के कारण नाटक में अभिनेयता का गुण आ जाता है। इस दृष्टि से यदि देखा जाए तो 'कथा विसर्जन, नाटक में संवाद संक्षिप्त, सहज, रोचक, सरल हैं। सभी पात्र अपने-अपने चरित्र के अनुसार बोलते हैं। प्रकाश नीलम और सेठी पाश्चात्य प्रभाववश बीच-बीच में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करते हैं, दादी माँ और बच्चे शुद्ध हिन्दी का प्रयोग करते हैं, गोपी और नाथू अपने-अपने स्तर के अनुरूप हैं। कथोपकथन, वाक्य योजना प्रभावशाली है। पात्रों के संवादों पर शिष्टाचार का पूर्ण ध्यान रखा गया है।

कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

नीलम—माफ कीजिए माँ जी आप इन्हें बिगाड़ रही हैं।

आशा—मम्मी, दादी माँ को क्या कहा ?

नीलम—बीच में मत बोल ।

आशा—मैं कहाँ बोल रही हूँ ?

नीलम—जुबान लड़ाती है।

माँ—ईश्वर के लिए अब बस करो।

प्रस्तुत नाटक की संवाद योजना दर्शकों पर अपना प्रभाव छोड़ने में सक्षम है, संवाद चुटीले और प्रभावपूर्ण हैं। ये संवाद नाटक को गति प्रदान करते हैं।

उद्देश्य—कथा विसर्जन नाटक उद्देश्यपूर्ण नाटक है। प्रस्तुत नाटक में भारतीय जीवन में व्याप्त आधुनिकता, पाश्चात्यानुकरण, सांस्कृतिक ह्रास तथा भौतिक सुखवाद को सामयिक समस्या के रूप में चित्रित किया है। नाटक में नीलम, प्रकाश और सेठी साहब इनके प्रतीक पात्र हैं। ये तीनों पात्र आत्म संस्कारों और सांस्कृतिक परम्पराओं से रहित हैं। पश्चिम की नकल करना और उसी की तरह जीवनचर्या अपनाना आज एक भ्रान्त परम्परा बन गयी है, अधिकतर भारतीय अपनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं।

डॉ० लाल इससे क्षुब्ध रहे हैं अपने इसी क्षोभ को व्यक्त करने और आधुनिकता के रंग में डूबे हुए समाज को अपनी संस्कृति व परम्परा से जोड़ने के उद्देश्य से प्रेरित होकर ही डा० लक्ष्मी नारायणलाल ने इस नाटक की सृष्टि की है। इस नाटक को लिखने का उद्देश्य विदेशी सभ्यता की आधुनिक चमक एवं अतिरिक्त आधुनिकता के रंगों में डूबी हुयी पीढ़ी को अपनी संस्कृति का रास्ता दिखाना है। उन्होंने अतीत के बोध को आवश्यक बतलाते हुये जीने का सांस्कृतिक मार्ग दिखाने की कोशिश की है जिसमें भटके हुए भ्रमित भारतीय नागरिकों को सही मार्ग बताया है। कथा विसर्जन नाटक का यही उद्देश्य है। इस उद्देश्य की प्रस्तुति आकर्षक पद्धति से की गयी है।

नाटकीयता—कथानक को गति प्रदान करने के लिए नाटकीय घटनाएँ आवश्यक होती हैं। अभिनय में तारतम्य बनाये रखने तथा आगे आने वाली घटना का संकेत देने के लिए नाटकीयता का होना आवश्यक है। प्रस्तुत नाटक में नट-नटी का संवाद नाटक में नाटकीयता की योजना करता है। आशा व शोनू का स्कूल से घर लौटना, प्रकाश का आगमन, सेठी से वार्तालाप, पूजा पाठ का विरोध करना, बच्चों को डांटने के चक्कर में माँ को चोट आना आदि बातें अत्यन्त नाटकीय हैं। इन सभी प्रसंगों में नाटकीयता का पूरा ध्यान रखा गया है अन्त में प्रकाश का पदोन्नति को अस्वीकार करना और ठाकुर जी की पूजा करना अत्यन्त नाटकीय है। ये सभी घटनाएँ कथानक को गति प्रदान करती हैं।

सशक्त दृश्य योजना—नाटक की अभिनेयता उसकी दृश्य योजना पर भी निर्भर करती है प्रस्तुत नाटक की दृश्य योजना सशक्त है उसके दृश्य ऐसे हैं जो आसानी से रंग मंच पर प्रस्तुत किए जा सकते हैं। प्रस्तुत नाटक में लखनऊ के आधुनिकतावादी सुसभ्य परिवार की कथा है। सारे दृश्य घर के एक या दो कमरों में घटित होते हैं। संध्या, रात्रि और दिन में सारी घटनाएँ घटित होती हैं। इनको रंगमंच पर सरलता से दिखाया जा सकता है। प्रस्तुत नाटक के चारों अंकों के दृश्य यद्यपि अलग-अलग हैं परन्तु उनकी प्रस्तुति एक जैसी है।

भाषा-शैली—प्रस्तुत नाटक की भाषा-शैली अत्यन्त प्रभावशाली है। इस नाटक की भाषा, पात्र, प्रसंग परिस्थितियों के अनुकूल है। उसमें कहीं भी बनावटीपन नहीं है। सामान्यतः कथा-विसर्जन नाटक में भाषा के दो रूप हैं। नाटक की भाषा के दो रूप देखने को मिलते हैं।

(1) परिष्कृत शब्दावली से युक्त (2) सामान्य बोलचाल की शब्दावली से संयुक्त बोल चाल की शब्दावली में भी भाषा के दो रूप हैं—

पहला वह जिसमें प्रयुक्त शब्दावली अँग्रेजी के वाक्यों, शब्दों या वाक्यांशों से युक्त है, दूसरा वह जिसमें सरलतम और दैनिक जीवन की शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इस नाटक का शब्द विधान बड़ा डेमोक्रेटिक है। प्रसंग, परिस्थिति और पात्र के व्यक्तित्व स्वभाव की मांग पर शब्द स्वतः ही आते चले गये हैं।

शीर्षक का औचित्य—डा० लक्ष्मीनारायण लाल का नाटक 'कथा विसर्जन' आधुनिकता के रंग में रंगे हुए, संस्कृति से टूटे हुए—उखड़े हुए लोगों की स्थिति, परिस्थिति और परिणाम दर्शी स्थिति को उद्घाटित करता है। अपने मूलमन्तव्य की अभिव्यक्ति नाटककार ने शीर्षक के सहारे भी की है। अतः इसका शीर्षक औचित्य पूर्ण एवं साभिप्राय है। इस नाटक का शीर्षक दो शब्दों से मिलकर बना है—कथा और विसर्जन। 'कथा' का अर्थ सामान्यतः कहानी लिया जाता है, किन्तु नाटककार का मत है कि कथा हमारे भीतर से गुजरती है और क्रीड़ा भाव से मुस्कराती है। कहानी का स्रोत इतिहास है, कथा का स्रोत जीवन की सनातनता है। कथा का आदि है, कथा का समापन है, सुमिरन है, कथा का विसर्जन है, संस्कृति से जुड़ना कथा से जुड़ना है और उसको छोड़ देना या उपेक्षित कर देना कथा का विसर्जन है।

नाटककार की कोशिश यह रही है कि वह अतिरिक्त आधुनिकता की केंचुल उतार कर अपने मूलरूप में जीने का संकल्प लेने का सन्देश दे आज की नयी पीढ़ी के लिये यह सन्देश उपयुक्तता रखता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि कथा विसर्जन नाटक नाटकीय तत्वों की कसौटी पर खरा उतरता है। कथानक, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, भाषा, शीर्षक, उद्देश्य प्रस्तुति, शीर्षक चयन और अभिनेयता आदि सभी दृष्टियों से इन नाटक का विशेष महत्व है।

प्रश्न 5 कथा विसर्जन नाटक का केन्द्र बिन्दु माँ जी हैं। इस कथन के परिप्रेक्ष्य में उनका चरित्र-चित्रण विश्लेषित कीजिए।

उत्तर—लक्ष्मीनारायण लाल का यह कथा विसर्जन नाटक समसामयिक भारतीय जीवन पर आधारित है। वर्तमान समय में अधिकतर भारतीय पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण कर रहे हैं। वे पाश्चात्य संस्कृति को श्रेष्ठ मान कर अपनी श्रेष्ठ सांस्कृतिक परम्पराओं से करते जा रहे हैं। परन्तु ऐसे वातावरण में भी कुछ ऐसे लोग हैं जो अपनी संस्कृति से जुड़े रहना चाहते हैं। कथा विसर्जन नाटक की माँ जी ऐसी ही पात्र हैं। वह अन्त तक अपनी संस्कृति से जुड़ी रहती हैं और अन्त में उसके लिए अपने प्राण भी त्याग देती हैं। उनका सारा जीवन संस्कृतिमय एवं भारतीयता से ओत प्रोत है अपने मूल से जुड़ाव की स्मृति का सारा श्रेय इस नाटक की माँ को है। यह नाटक अपनी संस्कृति का सुमिरन है और पाश्चात्य कथा का विसर्जन है।

'माँ' की चरित्रगत विशेषताएँ इस प्रकार हैं:—

(1) **भारतीय संस्कृति की पोषिका**—प्रस्तुत नाटक में 'माँ' वस्तुतः भारतमाता का स्वरूप है। वह अनेक धार्मिक, पावन, उदात्त और संयम, त्याग व कर्मठता की प्रतीक है नाटक में उनका यही रूप व्यक्त हुआ है। माँ अपनी संस्कृति और परम्पराओं को श्रेष्ठ मानती है आज कल सभ्य समाज में पाश्चात्य शिक्षा और संस्कृति का बोलबाला है इस बात से माँ जी बहुत दुःखी हैं वह इस प्रवृत्ति को पराश्रितता मानती हैं।

(2) **वात्सल्यमयी**—प्रस्तुत नाटक में माँ का चरित्र अत्यन्त ही वात्सल्यमयी माँ का चरित्र है। वह अपने बच्चों के साथ बड़ा स्नेह भरा आचरण करती है आशा, शोनू के साथ स्नेह भरा आचरण है। वह उन्हें श्रेष्ठ इन्सान बनाना चाहती हैं। इसी लिए वह उन बच्चों को अपनी संस्कृति और परम्पराओं का परिचय देना चाहती है और उसके अनुसार उनको पालना चाहती है। नीलम के द्वारा अपना अपमान करने पर भी वह उससे नाराज नहीं होती अपितु कहती है कि तुम भी तो बच्ची हो। तुम्हारी बातें मुझे बुरी नहीं लगतीं। इस तरह उनका रूप अन्त तक वात्सल्यमयी माँ का ही रहता है।

(3) **तर्क शीला**—माँ जी में तर्क शक्ति भी अद्भुत है। उनके तर्क बड़े सजीव हैं कहीं भी निर्जीव और बेनामी नहीं है। वे तर्क तो प्रस्तुत करती है किन्तु कहीं भी अनावश्यक और अवांछित नहीं। उनकी इस तर्क शक्ति से उनका व्यक्तित्व का संतुलन स्पष्ट होता है।

(4) **धार्मिक और पवित्र विचारों से युक्त**—माँ जी के चरित्र में धार्मिकता और पवित्रता का गहरा रंग है। वे धर्म, कर्म, पूजा पाठ और पवित्र संस्कारों को महत्व देती हैं। उन्होंने स्थान-स्थान पर अपनी धार्मिकता पुष्ट पावन विचार धारा को स्पष्ट किया है वे अपने धार्मिक विचारों के कारण ही अपने पास-पड़ोस में मुहल्ले में सम्मानित होती रहती हैं। उनकी यह धार्मिक भावना किसी के ऊपर थोपी नहीं जाती वरन् अपनी तर्क शक्ति के बल पर वह अपनी धार्मिक भावना को उत्कृष्ट सिद्ध करती है।

(5) **कर्मशील**—माँ जी कर्मशीला हैं वह परिश्रम को सबसे बड़ा मानती हैं। वे अपने कर्म को आनन्द भावना से जोड़कर जीती रही हैं। इस अवस्था में आकर वह निरन्तर कर्मरत बनी रहती हैं। वे कभी बेकार नहीं बैठतीं। प्रकाश माँ की तारीफ करता हुआ नीलम से कहता है तुमने कभी माँ को देखा है, माँ कभी भी बेकार नहीं बैठती। इस उम्र में भी सिलाई-बुनाई, घर की सफाई, बच्चों की सेवा, रसोई पकवान कितना कुछ इतने शौक-उत्साह से माँ करती है।"

(6) **संयम-सादगी, त्यागशीलता**—माँ जी का जीवन और व्यक्तित्व संयम-सादगी और त्यागशीलता से परिपूर्ण है। वह सांस्कृतिक बोध की प्रतिमा हैं और भारतीया की प्रतीक हैं। पूजा पाठ तथा धर्म कर्म करने वाली महिला का व्यक्तित्व संयम और त्याग से ही परिपूर्ण हो सकते हैं।

(7) **निर्भीक और स्पष्टवादिनी नारी**—माँ जी सटीक और स्पष्ट बात कहने में नहीं चूकती हैं उनके व्यक्तित्व में निर्भीकता और दृढ़ता विद्यमान है। वे अपनी सही बात को कहने में किसी से नहीं डरतीं चाहे नीलम हो और चाहे प्रकाश के बॉस सेठ साहब हों वह स्पष्ट बात बड़ी दृढ़ता और अडिगता के साथ कहती हैं।

यथा—मेरे भगवान सजावट की वस्तु नहीं है। सावधान बहू ! अगर ऐसी गलती फिर हुयी तो मैं अपने प्रभु के लिए प्राण त्याग दूँगी।

(8) **उदात्त विचारशीला महिला**—प्रस्तुत नाटक में माँ का चरित्र अत्यन्त उदात्त एवं चिन्तनशील चित्रित हुआ है। वह शोनू को संवाद का आशय समझाती हैं, वह प्रकाश और नीलम के विषय में काफी सोचती हैं तथा कहती है कि वर्तमान की चिन्ता छोड़कर भविष्य की चिन्ता में मग्न रहना व्यर्थ है। वह आचरणगत पवित्रता पर अधिक बल देती हैं। वह किसी प्रकार के ढोंग व दिखावे घमण्ड लिप्सा, गर्व आदि को वह अनुचित मानती हैं। वह किसी प्रकार के ढोंग व दिखावे में विश्वास नहीं रखतीं चाहे वह सामाजिक क्षेत्र में हो या धार्मिक क्षेत्र में।

(9) **सुशिक्षित नारी**—प्रस्तुत नाटक में प्रकाश के कथन से ज्ञात होता है कि वह किसी विद्यालय में अध्यापिका थीं। उनको वेदों के मन्त्र कंठस्थ थे। वे आशा और शोन् को इन मंत्रों के अर्थ भी बताती हैं। वह अंग्रेजी शिक्षा का इसलिए विरोध करती थीं कि उसमें चारित्रिक शिक्षा का कोई विद्यमान नहीं है। वह अपने बच्चों को सदाचारी बनने की शिक्षा देती है। सेठी साहब से अध्यात्मक और धर्म के वार्तालाप में वह अपने अर्थात् ज्ञान का परिचय देती हैं। यही कारण था कि सेठी साहब जैसे आधुनिक विचारों वाले भी उनके सामने नत मस्तक होते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रस्तुत नाटक में माँ का चरित्र अत्यन्त आदर्श और उदात्त रूप में वर्णित है वह पूरे नाटक का प्रतिनिधित्व करती है। वह नाटक का मुख्य केन्द्र बिन्दु है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. रंगमंचीयता की दृष्टि से नाटक के मुख्य गुणों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—रंगमंचीयता की दृष्टि से कुछ प्रमुख विशषताएँ इस प्रकार बतलाई जा सकती हैं—

(1) नाटक की कथावस्तु स्पष्ट सार्थक तथा सुसंगठित हो।

(2) नाटक का विस्तार अधिक न हो तथा उसे अंकों व दृश्यों में ठीक प्रकार से विभाजित किया गया हो।

(3) घटनाओं में नाटकीयता हो जो रोचकता और कौतूहल बढ़ाये।

(4) पत्रों की संख्या अधिक न हो।

(5) संवाद सार्थक, संक्षिप्त, गतिशोल, चुटीले, उद्देश्योन्मुख, पात्रानुकूल तथा कथा के वाहक हों

(6) अनावश्यक दृश्य न हों तथा गीत आदि का उचित स्थान पर समावेश हो।

प्रश्न 2. नाटक के प्रमुख तत्वों का विवेचन कीजिए।

उत्तर—(1) कथानक—(i) कुतुहल वर्धक, (ii) कथा का स्रोत, (iii) आदर्श तथा यथार्थवादी कथानक, (iv) कथानक का विषय, (v) कथानक की अवस्थाएँ, (2) पात्र चरित्र-चित्रण, (3) कथोपकथन, (4) देश काल वातावरण, (5) भाषा-शैली, (6) उद्देश्य, (7) नाटकीयता, (8) शीर्षक की उपयुक्तता।

प्रश्न 3. संकलनत्रय से आप क्या समझते हैं?

उत्तर—पाश्चात्य नाटक शास्त्रियों ने संकलनत्रय के अन्तर्गत स्थान संकलन, काल संकलन और कार्य संकलन का वर्णन किया है।

नाटक रचना का यह नियम यूनान से इटली, फ्रांस, इंग्लैण्ड होता हुआ भारतवर्ष में आया।

नाटक में इसका उपयोग तो है परन्तु यदि हम यह समझें कि इसके बिना नाटक रचना हो नहीं सकती तो यह बात भ्रामक है।

प्रश्न 4. नाटक में पताका और प्रकरी से आप क्या समझते हैं?

उत्तर—प्रांसगिक कथा वस्तु के दो भेद होते हैं (i) पताका और (ii) प्रकरी।

पताका—यह वह कथा होती है जो निरन्तर चलती रहती है यथा रामचरितमानस में सुग्रीव की कथा।

प्रकरी—यह वह कथा होती है जो कुछ काल तक चलकर फिर बन्द हो जाती है

यथा—शबरी की कथा।

प्रश्न 5. नाटक की अवस्थाएँ क्या होती हैं तथा कितनी होती हैं ?

उत्तर—कार्य अथवा व्यापार शृंखला की भिन्न-भिन्न स्थितियों को नाटक की अवस्थाएँ कहते हैं। ये पाँच होती हैं।

(1) आरम्भ, (2) प्रयत्न, (3) प्राप्तयाशा, (4) नियताप्रिप्त और फलागम।

प्रश्न 6. नाटक की अर्थ प्रकृतियों के विषय में आप क्या जानते हैं।

उत्तर—कथा वस्तु को प्रधान फल की ओर अग्रसर करने वाले चमत्कार युक्त अंशों को अर्थ प्रकृति कहते हैं ये कथा वस्तु के तत्वों का सूचक होती हैं। इनके पाँच भेद किये गये हैं : (1) बीज, (2) बिन्दु, (3) पताका, (4) प्रकरी, (5) कार्य।

प्रश्न 7. नाट्य सन्धियों से आप क्या समझते हैं ?

उत्तर—नाटय सन्धियाँ नाटक के रचना विभागों का निर्देशन करती है। ये पाँच प्रकार की होती हैं।

(1) मुख सन्धि, (2) प्रति मुख सन्धि, (3) गर्भ सन्धि, (4) विमर्श सन्धि और (5) निर्वहण सन्धि।

प्रश्न 8. 'कथा विसर्जन' नाटक के नायक प्रकाश की चरित्रगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—प्रकाश की चरित्रगत विशेषताएँ निम्नलिखित बिन्दुओं में स्पष्ट हैं।

(1) दब्बू एवं मूक दर्शक (2) भौतिक लालसा से ग्रस्त

(3) विवशता से ग्रस्त (4) मातृ भक्त

(5) आस्था वादी (6) भारतीयता का मोह

(7) विवेकशील एवं ज्ञानवान (8) द्वन्द्वात्मक स्थिति।

प्रश्न 9. 'कथा विसर्जन' नाटक की स्त्री पात्र नीलम की चरित्रगत विशेषताएँ बतलाइए।

(1) आधुनिकता से ग्रस्त, (2) दिखावा पसन्द, (3) अंहकारी स्वभाव, (4) नास्तिक प्रवृत्ति, (5) पाश्चात्यानुकरण की प्रवृत्ति, (6) असत्यवादी, (7) महत्वाकांक्षी, (8) स्वार्थी व कठोर स्वभाव वाली।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. 'कथा विसर्जन' नाटक किस प्रकार का नाटक है।

(क) कल्पना प्रधान, (ख) आधुनिकता बोध वाला, (ग) सम सामयिक दृष्टि कोण से लिखा गया, (घ) समस्या नाटक, (च) आदर्श नाटक।

प्रश्न 2. माँ जी किस प्रकार के चरित्र वाली नारी है।

(क) चरित्रवान (ख) भारतीय संस्कृति की पोषिका और धर्म परायण।

(ग) धार्मिक वृत्ति वाली, (घ) कर्तव्य परायण, (च) आधुनिक।

प्रस्तुत 3. प्रस्तुत नाटक में प्रकाश का चरित्र किस प्रकार का है ?

(क) दब्बू आदमी का, (ख) स्वार्थी वृत्तिका, (ग) अत्याधुनिक, (घ) न्यूट्रल ऑफीसर की भाँति, (च) लालची।

प्रश्न 4. बच्चे अपने माता-पिता से अधिक मां जी को क्यों चाहते थे ?

(क) बच्चे अपने माता-पिता से आतंकित थे।
(ख) माँ जी उन्हें लालच देती थीं।
(ग) माँजी उन पर अपना सारा ममत्व उड़ेल देती थीं और अधिक से अधिक समय देती थीं।
(घ) माँजी उन्हें कहानी सुनाया करती थीं।

प्रश्न 5. लेखक ने नीलम के रूप में किस प्रकार की नारी का चित्रण किया है ?

(क) विवाहिता नारी
(ख) झूठा शान व पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित अत्याधुनिका नारी के रूप में।
(ग) परित्यक्ता के रूप
(घ) धार्मिक प्रवृत्ति वाली नारी के रूप में
(च) महत्वाकांक्षिणी।

(1) ग (2) ख (3) घ (4) ग (5) ख

एकांकी-रत्नाकर

1 दीपदान

(1) "तलवार से डर। चित्तौड़ में तलवार से कोई नहीं डरता, कुँवर जैसे लता में फूल खिलते हैं वैसे ही यहाँ वीरों के हाथों में तलवार खिलती हैं।" पृष्ठ (35)

सन्दर्भ सहित प्रसंग – प्रस्तुत अवतरण डॉ रामकुमार वर्मा के दीपदान एकांकी से अवतरित है।

पन्ना धाय कुँवर के संदेह का निवारण कर रही है। उदय सिंह तलवार साथ में लेकर सोना चाहता है किन्तु पन्ना उसे ऐसा करने से मना करती है। उदय सिंह कुछ उपहास और आश्चर्य से पूछता है कि क्या धाय माँ तलवार से भय लगता है ? तब पन्ना उदय सिंह की बात का समाधान करती हुई कहती है।

व्याख्या – पन्ना ने कहा कि चित्तौड़ में तलवार से भयभीत होना किसी ने नहीं सीखा। तात्पर्य यह है कि चित्तौड़ वीरों की भूमि है यहाँ अपनी आन मान पर जन्मभूमि पर और अपने स्वामी पर मर मिटने को तैयार हैं। वह आगे समझाती हुई कहती है कि जिस प्रकार एक लता की शोभा पुष्प युक्त होने से द्विगुणित हो जाती है। इसी प्रकार यहाँ

के वीरों के हाथों में तलवार सुशोभित होती है । तात्पर्य यह है कि चित्तौड़ रास रंग की भूमि नहीं बलिदान की भूमि है । चित्तौड़ की भूमि का कोई व्यक्ति चाहे तो स्त्री हो या पुरुष तलवार से भयभीत नहीं होता । डर तो उनके रक्त में है ही नहीं मातृ भूमि के प्रति अटूट अनुराग और बलिदान की भावना ही चित्तौड़ की विशेषता है ।

विशेष—इस अंश में पन्ना के माध्यम से रचनाकार ने चित्तौड़ की विशेषता को साकार कर दिया है । चित्तौड़ की वीरता ओजस्विता इन पंक्तियों में प्रकट हुई है । पन्ना के चरित्र की अनेक विशेषताएँ भी इस अंश में उद्घाटित हुई हैं । स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से इन पंक्तियों का सौन्दर्य और अधिक बढ़ गया है ।

(2) "उन्होंने कहा महल में धाय माँ अरावली पहाड़ बनकर बैठ गयी है । अरावली पहाड़ । तो तुम बनास नदी बनकर बहो न ! खूब नाचो गाओ । यों आज कोई उत्सव नहीं था, फिर भी उन्होंने कहा, मेरे बनवाये हुए मयूर पक्षकुण्ड में दीपदान करो, मालूम हो जैसे मेघ पानी हो गये हो और बिजलियाँ टुकड़े-टुकड़े हो गयी हों ।" पृष्ठ (36)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत ।

सोना धाय माँ से बात कर रही है । धाय माँ सोना से कहती है कि बनवीर की उस पर बहुत कृपा है तब अपनी प्रशंसा से आनन्दित होकर सोना बनबीर के सन्देश को बताती हुए कहती है कि—

व्याख्या—सोना ने कहा कि महाराजा बनवीर सिंह ने ही इस नाच गान का आदेश दिया है । उन्होंने कहा है कि महल में धाय माँ अरावली का पहाड़ बनकर स्थापित हो गयी है । आशय है कि धाय माँ ही बनवीर के रास्ते का व्यवधान है । उसके रहते बनवीर का कोई षड़यन्त्र कामयाब नहीं हो सकता इसलिए धाय माँ से निपटने के लिए पहले कोई सशक्त माध्यम खोजना होगा । इसलिए वह सोना को समझाता हुआ कहता है कि यदि धाय माँ अरावली का पहाड़ है तो तुम बनास नदी बनकर बहो । अपने आवेग से पहाड़ के प्रभाव और शक्ति को समाप्त करदो । मयूर पक्ष- कुण्ड में अनेक दीपक जलाओ नाच-गान करो और सबका ध्यान उस उत्सव की ओर आकृष्ट करो । नाच-गान में इतनी तीव्रता होनी चाहिए कि अन्य कोई बात सुनायी न दे लोग समझ ही न सकें कि इसके पीछे क्या रहस्य है । ऐसा लगे बादल पानी बन गये हों और बिजलियाँ टुकड़ों में दिखायी दे ।

विशेष—भाषा की गत्यात्मकता, भावात्मकता और काव्यात्मकता दर्शनीय है । दीपोत्सव के माध्यम से बनवीर के मलिन मनोभावों का परिचय भी इन पंक्तियों में मिलता हैं । लाक्षणिकता के कारण इस अंश का सौन्दर्य बढ़ गया है ।

(3) "आँधी में आग की लपटें तेज ही होती हैं, सोना । तुम भी उसी आँधी में लड़खड़ा कर गिरोगी । तुम्हारे सारे नुपूर बिखर जाएँगे । न जाने किस हवा का झोंका तुम्हारे इन गीतों की लहर को निगल जाएगा । चितौड़ रागरंग की भूमि नहीं है, जौहर की भूमि है । यहाँ आग की लपटें नाचती हैं, सोना जैसी रावल लड़कियाँ नहीं (पृ० 39)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत ।

जब पन्नाधाय के पास सोना राज्य की हलचलों से बेखबर अपने रागरंग में डूबी हुयी आती है तो पन्नाधाय उसे बनवीर की कूटनीति का संकेत करती तो सोना धाय माँ को बिद्रोहिनी बताती है तब धाय माँ कहती है—

व्याख्या—जब आँधी आती है तो आग की छोटी सी चिनगारी तेज होकर विकराल लपटों का रूप धारण कर लेती है । इसी प्रकार जब कूटनीति का विष फैला कर विद्रोह करेंगे तो एक दिन वह इसी प्रकार की आँधी का जब रूप धारण कर लेगी

और इस आँधी में महाराणा वंश सदा-सदा के लिए नष्ट हो जाएगा। उस आँधी में तुम भी लड़खड़ा कर गिर जाओगी और तुम्हारे ये सारे नूपुर भी बिखर जाएँगे विद्रोह की आँधी से इस नगर में कुछ नहीं बचेगा उस समय न जाने किस हवा का झोंका तुम्हारे गीतों की मधुरता को निगल जाएगा। यह चितौड़ की भूमि वीरों की भूमि है यह राग रंग की भूमि नहीं है। यहाँ नूपुरों की ध्वनि नहीं तलवारों के स्वर गूँजते हैं। इसलिए जब विद्रोह की लपटें उठेंगी तो तुम्हारे नुपूर स्वतः ही बिखर जाएँगे इसलिए तुम्हारा नाचना गाना और उत्सव मनाना मुझे अच्छा नहीं लगता।

विशेष—पन्ना धाय के कथन से भावी अनिष्ट की ओर संकेत किया गया है। इसमें राजपूतनियों के जौहर की महिमा एवं शौर्य परम्परा का गौरवशाली उल्लेख हुआ है।

(ii) भाषा—शैली सरल, भावात्मक और प्रसंगानुकूल है। आँधी और आग का व्यंग्यात्मक प्रयोग दर्शनीय है।

(4) भवानी तुमने मेरे हृदय को कैसा कर दिया! मुझे बल दो कि मैं राज वंश की रक्षा में अपना रक्त दे सकूँ। अपने लाल को दे सकूँ। यह राजपूतनी का व्रत है, यही राजपूतनी की मर्यादा है, यही राजपूतनी का धर्म है, मेरा हृदय वज्र का बना दो, ममता का स्रोत बन्द हो जाए। भवानी मैं चित्तौड़ की सच्ची नारी बनूँ। (47—48)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

बनवीर विद्रोह पर उतर आता है और वह राजकुमार उदय सिंह को मारना चाहता है। तब पन्ना धाय उदय सिंह की शैय्या पर अपने पुत्र चन्दन को सुलाने का निश्चय करती है। उसके प्रस्ताव को सुनकर सामली आश्चर्य में पड़ जाती है, और पन्ना स्वयं से कहती है—

व्याख्या—हे कुलदेवी, तुलजा भवानी। इस समय मेरा हृदय अनिश्चय की स्थिति से घिरा हुआ है। मैं पुत्र के मोह में पड़कर अपने कर्तव्य को पूरा करने में संकोच कर रही हूँ। तुमने मेरे हृदय को इतना कमजोर कैसे बना दिया है। हे माता ! तुम मुझे इतनी शक्ति दो कि मैं महाराणा राजवंश की रक्षा अपने रक्त से कर सकूँ मैं राजकुमार उदय सिंह के स्थान पर अपने पुत्र चन्दन को लिटाकर बनवीर की नंगी तलवार की प्यास बुझा सकूँ. यही राजपूतनी का धर्म है। जिस एकार राजपूत स्त्रियाँ अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी अपना धर्म पूरा करती हैं उसी प्रकार मैं भी अपने पुत्र का बलिदान कर अपना धर्म निर्वाह कर सकूँ।

पन्ना धाय निवेदन करती हुयी कहती है कि हे भवानी तुम मेरे हृदय को वज्र के समान कठोर बना दो ताकि मैं अपने हृदय के टुकड़े अपने पुत्र चन्दन को उदय सिंह के स्थान पर लिटा सकूँ, ऐसा कार्य करने में माता के हृदय की ममता बाधक बन सकती है परन्तु मेरे हृदय को पत्थर के समान कठोर बना दो ताकि उससे ममता का स्रोत बन्द हो जाए पन्ना धाय अपनी अभिलाषा व्यक्त करती हुयी कहती है कि हे तुलजा भवानी ! चितौड़ की नारियाँ सदा वीरांगना रही हैं और अपने चितौड़ के लिए उन्होंने अपना सर्वस्व बलिदान किया है। मैं भी चितौड़ की सच्ची नारी बन सकूँ, मुझे ऐसी शक्ति प्रदान करो।

विशेष—(i) यहां एकांकीकार में पन्ना धाय के त्याग और स्वामिभक्ति का विकास दिखाया है। इससे राजपूती शौर्य और बलिदान की भावना का सहज परिचय मिल जाता है। भाषा प्रसंगानुकूल है।

(5) तुम्हारे अगूँठे से रक्त की धार बही। अब हृदय से रक्त की धारा बहेगी तो मैं कैसे रोक सकूँगी मेरे लाल ! मेरे चन्दन। जाओ, यह रक्त की धारा अपनी मातृभूमि पर चढ़ा दो। आज मैंने भी दीपदान किया है। दीपदान, अपने जीवन का दीप मैंने रक्त की

धारा पर तैरा दिया है। ऐसा दीपदान भी किसी ने किया है। एक बार तुम्हारा मुँह तो देख लूँ। कैसा सुन्दर भोला मुख है। (पृष्ठ 52)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत।

प्रस्तुत अवतरण पन्ना धाय का आत्म कथन है वह राजकुमार उदय सिंह के स्थान पर अपने पुत्र चन्दन को लिटाती है। इसी अवसर पर वह भावावेश में आकर कहने लगती है—

व्याख्या—धाय माँ अपने मन में सोचती है कि आज मेरे पुत्र के पैर से रक्त की धारा बही, तो मुझे इतना कष्ट हुआ है परन्तु जब पापी बनवीर अपनी तलवार से इसके हृदय को चीर देगा तो इसके हृदय से बहने वाली रक्त की धारा बहेगी तो मैं किस प्रकार अपने आप को रोक सकूँगी क्योंकि पैर की चोट पर तो मैंने पट्टी बाँध दी परन्तु अपने पुत्र के हृदय के घाव को कैसे भर सकूँगी आशय यह है कि पन्ना अपने इकलौते पुत्र चन्दन का जीवनांत देखने की हिम्मत नहीं बांध पा रही है वह कहती है उस समय मेरा हृदय शोक से फट जाएगा भावी अनिष्ट की आशंका से उसका हृदय अत्यन्त कातर हो रहा है। परन्तु जब उसके सामने उसके कर्तव्य पथ का मार्ग आता है, चित्तौड़ के राजवंश की रक्षा करने के लिए वह अपने हृदय पर पत्थर रखकर सर्वस्व बलिदान करने को तत्पर हो जाती है। और वह अपने पुत्र को अपने हृदय से लगाकर कहती है कि मेरे लाल तुम अपनी मातृ-भूमि पर स्वयं को बलिदान कर दो अपने रक्त की धारा से मातृभूमि का अभिषेक करो आज दीपदान का उत्सव है लोग इस अवसर पर पवित्र दीपक दान कर रहे हैं। तुम भी मेरे कुल के दीपक हो तुम मेरे कुल का उजाला करने वाले थे आज आज मैं अपने दीप को रक्त धारा में तैराने का प्रयास कर रही हूँ ऐसा दीपदान शायद ही किसी ने किया हो यदि इस प्रयास में मैं सफल हो जाऊँगी तो अपने को धन्य मानूँगी। वह कहती है कि "मैं अन्तिम बार अपने उस कुल दीपक का मुख तो देख लूँ कैसा सुन्दर और भोला मुख है, जिसका आज मैं दान कर रही हूँ देश की रक्षा करने हेतु रक्त तो तलवार की शोभा है पन्ना! अनन्त सुहाग से भरी है। यह तो उसके सिन्दूर की रेखा है बिना रक्त के तलवार कभी तलवार कहला सकती है।"

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

जब बनवीर नंगी तलवार लेकर पन्ना के कक्ष में पहुँचता है तो पन्ना से वह उदयसिंह के विषय में पूछता है तब पन्ना तलवार पर रक्त लगा हुआ देखकर पन्ना धाय शंकित हो जाती है और बनवीर से पूछती है कि इस तलवार पर रक्त क्यों लगा हुआ है। तब बनवीर उस उत्तर देता है।

व्याख्या—बनवीर पन्ना से कहता है रक्त तो तलवार की शोभा है अर्थात् जिस तलवार में रक्त न लगा हो वह एक लौह खण्ड मात्र है। रक्त तो तलवार का आभूषण है उसका श्रृंगार है अर्थात् तलवार रूपी सुहागिनी की माँग तो रक्त से भरी हुयी है। अभि-प्राय यह है कि रक्त को चिरसंगिनी तलवार जिस प्रकार किसी सुहागन की सूनी माँग शोभा नहीं देती उसी प्रकार तलवार भी बिना रक्त के सुशोभित नहीं होती। रक्त ही तलवार की सार्थकता बतलाता है उसके पराक्रम और शौर्यगाथा को उस पर लगा हुआ रक्त ही बतलाता है।

विशेष—एकांकीकार ने बनवीर के माध्यम से तलवार की शोभा और उसकी सार्थकता को रूपायित किया है। यह अंश चित्तौड़ जैसी वीरभूमि के लिए सर्वथा उपयुक्त है किन्तु विचारणीय यह है कि रक्त कौन-सा हो? यदि निर्दोष और निरीह मनुष्यों के रक्त से तलवार सनी हुई है तो वह उसकी शोभा नहीं कलंक है। उसका उपयोग शत्रुओं के विनाश और मातृभूमि की रक्षा के लिए ही होना चाहिए। भाषा में अद्भुत प्रयास और प्रेषणीयता विद्यमान है।

(6) धाय माँ तो मंगल-कामनाओं की देवी है। वे दीपदान करके चित्तौड़ का कल्याण करेंगी। मैं भी चित्तौड़ का कल्याण करूँगा। एक बात और कहूँ पन्ना ! मैं तुम्हें मारवाड़ में एक जागीर देना चाहता हूँ वहाँ तुम्हारे लिये तुलजा भवानी का मन्दिर बनेगा। मन्दिर। सारे लोग तुम्हें इतनी श्रद्धा से देखेंगे कि तुलजा भवानी और तुममें कोई अन्तर भी न होगा।

सन्दर्भ व प्रसंग—पूर्ववत्।

यह अवतरण बनवीर का कथन है। वह राजकुमार उदयसिंह का वध करने के लिये महल में आता है और पन्ना धाय से कहता है कि आज तुमने दीपदान नहीं देखा। तब पन्ना धाय कहती हैं कि मैं दीपदान देखने की नहीं, उसे करने की बात पर विश्वास करती हूँ। इसी प्रसंग में बनवीर अपना अभिप्राय प्रकट करता हुआ कहता है—

व्याख्या—धाय माँ अपने लाड़ले पुत्र की तरह राजकुमार उदयसिंह का मंगल करना चाहती है। वह तो मंगल कामनाओं की देवी मानी जाती है। यदि वह राजकुमार उदयसिंह को मेरे अधीन कर देगी, तो यह सच्चा दीपदान होगा और इससे चित्तौड़ का ही कल्याण होगा। मैं भी चित्तौड़ का कल्याण करना चाहता हूँ और इस राजसिंहासन पर पर आसीन होकर महाराजा वंश की परम्परा को आगे बढ़ाना चाहता हूँ।

पन्ना धाय को लोभ लालच में डालता हुआ बनवीर कहता है कि यदि तुम मेरा कहना मान जाओगी और राजकुमार उदयसिंह को मेरे हवाले कर दोगी तो मैं तुम्हें मारवाड़ की एक बहुत बड़ी जागीर दे दूँगा। वहाँ तुम्हारा जीवन अत्यधिक सुखमय बीतेगा। तुम्हारे लिये तुलजा भवानी का मन्दिर बनेगा। वह ऐसा भव्य मन्दिर होगा कि सारे लोग तुम्हें और उस मन्दिर को श्रद्धा से देखने आयेंगे। तुम्हीं देवी के इस मन्दिर में रहोगी और लोग तुम्हें पूज्य देवी की तरह मान कर श्रद्धा से तुम्हारी ही पूजा करेंगे। इस तरह मैं तुम्हें अमर बनाना चाहता हूँ। मेरे कथनानुसार चलने पर तुम्हारा यश बढ़ेगा और चित्तौड़ राजवंश की परम्परा भी चलती रहेगी।

विशेष—(1) इससे बनवीर की कूटनीति तथा छल-कपट का सहज पता चल जाता है। वह पन्ना धाय को लालच देकर अपनी ओर करना चाहता है। इसलिए वह उसकी अनावश्यक प्रशंसा करता है। व्यंग्य रूप में इस अवतरण का यह भी आशय है कि यदि पन्ना धाय ने राजकुमार उदयसिंह को बचाने की चेष्टा की तो, बनवीर उसे भी मौत के घाट उतार देगा।

(2) भाषा शैली सरल होते हुए भी व्यंग्य और आक्षेपात्मक है।

प्रश्न 1. 'दीपदान' एकांकी के आधार पर पन्ना धाय का चरित्र चित्रण कीजिए।

उत्तर—डॉ० रामकुमार वर्मा द्वारा रचित 'दीपदान' एकांकी में इतिहास प्रसिद्ध पन्नाधाय के त्यागमय जीवन का चरित्र-चित्रण किया गया है। यह एकांकी उत्कृष्ट राष्ट्र प्रेम और बलिदान का आदर्श प्रस्तुत करता है। पन्ना धाय जैसी स्वामिभक्त नारी का चरित्र इस युग में भी प्रेरणादायी माना जाता है, विशेषकर राजस्थान के इतिहास में उसका नाम बड़े गौरव के साथ लिया जाता है।

पन्ना धाय की चारित्रिक विशेषतायें

(1) **स्वामिभक्त**—प्रस्तुत एकांकी में पन्ना धाय को सच्ची स्वामिभक्त चित्रित किया किया गया है। वह महाराणा वंश के कुलदीप कुँवर उदयसिंह की रक्षा करने के लिये अपना सर्वस्व बलिदान करने को तैयार रहती है। उसे राजवंश में पनप रहे आन्तरिक विद्रोह का पूरा ज्ञान है, इसलिये वह अपने स्वामी की धरोहर को अपने पुत्र से भी अधिक मानती है और उसकी सुरक्षा के लिये हर समय प्रयत्नशील रहती है। सोना उसके सम्बन्ध में कहती है—"महल में धाय माँ अरावली पहाड़ बनकर बैठ गई है।" वह बनवीर द्वारा जागीर

का लोभ दिये जाने पर भी राजवंश के प्रति अपनी पूरी निष्ठा रखती है और कुँवर उदयसिंह को बचाने के लिये हर सम्भव प्रयास करती है। वह कहती है "महाराज बनवीर तुम राज्य करो, पर कुँवर उदयसिंह को छोड़ दो।" लेकिन बनवीर के न मानने पर वह अपने पुत्र का बलिदान देकर राजकुमार की रक्षा करती है और कीरतबारा के सहयोग से सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देती है। इस तरह प्रस्तुत एकांकी में पन्ना की स्वामिभक्त अत्यन्त प्रखर रूप में व्यक्त हुई है।

(2) **त्याग-बलिदान की मूर्ति**—प्रस्तुत एकांकी में पन्ना धाय को ऐतिहासिक कथानक के अनुसार त्याग और बलिदान से युक्त बनाया गया है। जब बनवीर राजकुमार उदयसिंह की हत्या करने आता है, तो वह कुंवर की शय्या पर अपने पुत्र चन्दन को सुला देती है। वह सामली से कहती है—"उसी को सुला दूँगी जो मेरी आँखों का तारा है.........चन्दन... चन्दन को सुला दूँगी। उस नन्हे लाल को हत्यारे की तलवार के नीचे रख दूँगी।" त्याग और बलिदान के कारण उसका वीर राजपूतानीयों में आदर्श व श्रेष्ठ स्थान माना जाता है। इस विशेषता के कारण वह इतिहास में अमर हो गई है।

(3) **ममतामयी**—पन्ना धाय को इतिहास में माँ का गौरव प्राप्त है। प्रस्तुत एकांकी में वह राजकुमार उदयसिंह को अत्यधिक प्यार करती है अपने पुत्र चन्दन के प्रति भी अत्यधिक ममतामयी दिखायी देती है। एक ओर वह पापी बनवीर से कुंवर की रक्षा करना चाहती है तो दूसरी ओर वह अत्यधिक दुःखी होकर अपने पुत्र को राजवंश पर न्यौछावर कर देती है। जब चन्दन को कुँवर की शय्या पर लिटाती है तो उस समय वह अत्यन्त भावुक हो उठती है। वह स्वयं को धिक्कारती हुई तथा सिसकियाँ लेती हुई कहती है—"तूने अपने भोले बच्चे के साथ कपट किया है, तूने अगारे की सेज पर अपने फूल से लाल को सुला दिया है।.........अपने जीवन दीप को मैंने रक्त की धारा में तैरा दिया है। एक बार तुम्हारा मुख देख लूँ।" अन्त में जब दुष्ट बनवीर चन्दन पर तलवार का प्रहार करता है तो पन्ना ममता के कारण चीख कर मूर्छित हो जाती है। इस तरह उसका चरित्र अत्यन्त ममतामयी दिखाई देता है।

(4) **दूरदर्शी—पन्ना धाय केवल वर्तमान पर ही दृष्टि नहीं रखती वरन् भावी घटनाओं से सचेत रहती है उसे कुँवर की हत्या का षड़यन्त्र पहले ही पता चल गया था इसी कारण उसने कुँवर को सुरक्षित महल से बाहर भिजवा दिया और उसके स्थान पर अपने बेटे चन्दन के बलिदान की बात पहले ही सोचली उसने कीरतवारी के झूठे पत्तों के टोकरे में कुँवर को छुपा दिया और इस प्रकार वह सुरक्षित बाहर चला गया।**

(5) **साहसी एवं दृढ़ प्रतिज्ञ** – पन्ना का चरित्र साहसी एवं दृढ़ प्रतिज्ञ महिला का चरित्र है। वह साहस की जीती-जागती प्रतिमा है। उसने बनवीर के सामने कभी घुटने नहीं टेके। बनवीर ने दीपोत्सव में कुँवर को बुलाने के लिए जब सोना को भेजा तो उसने उसको भी फटकार दिया। यह जानते हुए कि वह बनवीर का कृपापात्र है।

वह दृढ़ प्रतिज्ञ है उसने कुँवर की रक्षा का प्रण किया था और उसे वह पूर्ण करती है। उसके लिए वह अपने पुत्र की बलि दे देती है।

(6) **भावुक नारी**—पन्ना धाय साहसी महिला अवश्य है परन्तु वह कठोर नहीं है। उसमें स्त्री-जन्य कोमलता है। वह भावुक है, वह एक माँ है। जब चन्दन कुँवर की शैय्या पर जाकर सो जाता है और उसे बनवीर के आने का समाचार मिलता है तो वह भावुक हो जाती है और तुलजा भवानी से प्रार्थना करती है।

वह अत्यन्त भावुक होकर कहती है। "ओह पन्ना तूने अपने भोले बच्चे के साथ कपट किया है। तूने अंगारों की सेज पर अपने लाड़ले को सुला दिया है। तू सर्पिणी है।

वह सर्पिणी जो अपने बच्चों को खा डालती है।" इस कथन से उसकी भावुकता का पता लग जाता है।

(7) **कर्त्तव्यनिष्ठ**—प्रस्तुत एकांकी में पन्ना धाय के चरित्र को महाराणा परिवार के प्रति अत्यन्त निष्ठा से युक्त बतलाया गया है। उसे राजकुमार उदयसिंह की देखभाल करने का कार्य जो सौंपा जाता है, उसे वह अन्तिम समय तक पूरा करती है। जब बनवीर कुँवर उदयसिंह को मार कर स्वयं महाराणा बनना चाहता है तो वह दृढ़ता पूर्वक कहती है कुँवर जी की रक्षा अवश्य होगी""मेरे महाराणा का नमक मेरे रक्त से भी महान् है।

(8) **लोभ-लालच से दूर**—पन्ना धाय किसी प्रकार के लोभ-लालच में नहीं आती है, जब कुंवर उदयसिंह की हत्या करने के लिए आता है तो वह पन्ना धाय को विभिन्न प्रकार के लालच देता है। वह उसे मारवाड़ में एक जागीर देने की बात भी करता है, वह उसके लिए सुन्दर मन्दिर बनवाकर उसका नाम अमर कर देने की बात भी करता है परन्तु वह बनवीर के दिये गये किसी भी लालच के सामने घुटनें नहीं टेकती। वह अपने कर्त्तव्य की मर्यादा निर्वाह करती है।

(9) **सजग और चतुर**— पन्ना धाय एक सजग और चतुर महिला है। वह बड़ी सजगता के साथ कुँवर की देखभाल करती है और उसे रात में अकेले नहीं जाने देती। वह अच्छी तरह जानती है कि बनवीर की कूटनीति से विक्रमादित्य का शीघ्र अन्त होने वाला है और यदि कुँवर की देखभाल में असावधानी बरती गई तो उसका भी अहित हो सकता है। इसी कारण वह सोना से कहती है इतने आदमियों के बीच में अकेले कैसे भेज देती ? महाराणा के वंश के एक वही तो उजाले हैं।"

(10) **वीर क्षत्राणी**—पन्ना धाय के मन में वीरता और देशभक्ति की भावना कूट कूट कर भरी हुई है उसे अपनी मातृभूमि पर गर्व है। वह वीर क्षत्राणी की तरह से आवेश में आकर सोना को उसके मद में चूर होने पर वह उसे फटकारते हुए कहती है—चित्तौड़ राग-रंग की भूमि नहीं है, वह जौहर की भूमि है, यहाँ आग की लपटें नाचती हैं सोना जैसी रावल लड़कियाँ नहीं।

निष्कर्ष—प्रस्तुत एकांकी में पन्ना धाय का चरित्र त्याग, वीरता, ममता और बलिदान का प्रतिरूप है।

प्रश्न 2. 'दीपदान' एकांकी की एकांकी तत्वों के आधार पर समीक्षा कीजिए।

उत्तर—हिन्दी एकांकी को महत्वपूर्ण ऐतिहासिक आदान-प्रदान करने वालों में डॉ० रामकुमार वर्मा का नाम उल्लेखनीय है। उनकी अधिकतर एकांकी रचनाएँ सामाजिक विसंगतियों, शाश्वत मूल्यों और आस्थावादी भावनाओं पर आधारित है। ऐतिहासिक एवं पौराणिक एकांकी के लेखन में आपकी रचना सामर्थ्य, अप्रतिम है। वह एक ऐतिहासिक कथानक पर आधारित है।

इस एकांकी में पन्ना धाय के इतिहास प्रसिद्ध त्यागमय चरित्र को माध्यम बनाकर उत्कृष्ट, राष्ट्र प्रेम और बलिदान का आदर्श प्रस्तुत किया गया है। यह एकांकी आज भी अराजकतावादी और अलगाववादी शक्तियों के विरुद्ध देश भक्ति की प्रेरणा का प्रसार करने में सफल माना जाता है। एकांकी के तत्वों के आधार पर इसकी समीक्षा इस प्रकार है—

कथावस्तु—दीपदान एकांकी का कथानक ऐतिहासिक आधार पर आधारित है। ऐतिहासिकता के साथ लेखक ने जो कल्पना का सामंजस्य इसमें किया है। वह बहुत ही अनूठा है। दीपकोत्सव राग-रंग के दृश्य लेखक की कल्पना पर आधारित हैं, परन्तु पन्ना धाय के त्याग और बलिदान का कथानक ऐतिहासिक घटना है।

प्रारम्भ कुँवर उदयसिंह और पन्ना धाय के वार्तालाप से होता है। रात्रि के समय कुँवर उदयसिंह दीपकोत्सव में हो रहे नाच रंग का उत्सव देखना चाहते परपन्ना धाय उसे जाने नहीं देती और सुला देती है। इसी बीच बनवीर का विक्रम को मार कर राजमहल की तरफ आने का समाचार पन्ना धाय को मिलता है और वह कीरतवारी के टोकरे में कुँवर उदयसिंह को महल से बाहर किसी सुरक्षित स्थान पर भिजवा देती है। वह उदयसिंह के स्थान पर अपने पुत्र चन्दन को सुला देती है। जब बनवीर अपने हाथ में रक्त-रंजित तलवार लेकर आता है तो वह उसको शान्त करने का प्रयत्न करती है परन्तु वह शान्त नहीं होता और सोते हुये चन्दन को कुँवर उदयसिंह जानकर उस पर अपनी तलवार से प्रहार करता है। पन्ना यह देखकर मूर्छित हो जाती है।

इस प्रकार इस एकांकी में ऐतिहासिक घटना को चित्रित किया गया है। ऐतिहासिक विवरण में पन्ना धाय का त्याग एक अमर गाथा मानी जाती है। कथानक में पूर्ण स्वाभाविकता का निर्वाह किया गया है एकांकी का अन्त बहुत ही मार्मिक है पन्ना धाय के उज्जवल चरित्र को और अधिक निखारा गया है।

(2) **चरित्र चित्रण**—प्रस्तुत एकांकी के सभी पात्र ऐतिहासिक पात्र हैं लेखक ने ऐतिहासिकता के अनुरूप ही उन पात्रों को और अधिक संवारा है। इसमें पन्ना धाय का चरित्र अत्यन्त सशक्त है। स्वदेश भक्ति, ममतामयी धाय तथा त्यागमयी नारी की मूर्ति हमारे समक्ष सजीव रूप से उपस्थित हो जाती है। उसके मन का द्वन्द्व जो नाटक में दिखाया गया है। उसमें यही दिखाया है कि उसे सबसे अधिक चिन्ता कुँवर उदयसिंह को बचाने की रहती है। अपने पुत्र चन्दन को उदयसिंह की शैय्या पर सुला कर तथा उसका बलिदान देकर वह अपूर्व त्याग का परिचय देती है। वह अपने सर्वस्व (चन्दन) को न्यौछावर कर राणा वंश की अन्तिम निशानी को बचाने में सफल होती है।

बनवीर का चरित्र विलासी, क्रूर तथा भ्रष्ट राजा का चरित्र है। वह विक्रम और कुँवर उदयसिंह को मार कर राज्य की सत्ता अपने-अपने हाथ में लेना चाहता है। वह राणा वंश को समूल नाश के कगार पर पहुँचा देता है। कीरतवारी एक निश्छल स्वामीभक्त सेवक के रूप में चित्रित हुआ है। कीरतवारी अपने टोकरे में लिटाकर सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देता है। सोना एक भोग विलासमयी नारी के रूप में चित्रित हुयी। पन्ना का चरित्र इन सभी पात्रों का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें कुल सात पात्र हैं उनमें पर्याप्त सजीवता विद्यमान है।

लेखक ने वर्तमान राष्ट्रीय परिवेश की समस्याओं का समाधान संकेतित करने की चेष्टा की है।

कथोपकथन—कथोपकथन अर्थात संवाद किसी भी एकांकी या नाटक के प्राण तत्व हैं। नाटक की तुलना में संवाद रोचक, संक्षिप्त, व्यंजनात्मक और चारित्रिक विशेषता के अनुरूप होने चाहिए। प्रस्तुत एकांकी में संवादों की यही विशेषता देखने को मिलती है। इस एकांकी में पन्ना और बनवीर के सम्वादों में ओजस्विता के दर्शन होते हैं। सोना के सम्वादों में वाकपटुता है। सामली के सम्वादों में नारी सुलभ कोमलता व्याप्त है। कीरतबारी के सम्वाद उसकी स्वामिभक्ति तथा सेवक की भावना को व्यक्त करने वाले हैं। दीपदान एकांकी में सम्बादों के द्वारा ही पात्रों का चरित्र उभारा गया है।

उदाहरणार्थ—उदयसिंह—कुलदीप ! कहीं मुझे दान न कर देना धाय माँ वे नाचने वाली लड़कियाँ तुलजा भवानी की पूजा में दीपदान करके ही नाच रहीं हैं।

× × × ×

रूठ गये ! कुँवर, रूठने से राजवंश नहीं चलते।

× × × ×

पन्ना—बड़ी उमंग में हो आज !

सोना—दीपकों के साथ उमंग भी लौ देने लगी है, धाय माँ ! सारा जीवन ही एक दीपावली का त्यौहार बन गया है।

पन्ना—तो यही त्यौहार मना रही हो तुम ?

× × × ×

पन्ना—आधी रात हो चुकी है महाराज बनवीर ! विश्राम करो।

बनवीर—विश्राम मैं करूँ ? बनवीर ! जिसे राज्य लक्ष्मी को पाने के लिए दूर तक यात्रा करनी है मैं अपने साथ कुँवर उदयसिंह को भी ले जाना चाहता हूँ।

पन्ना—यह नहीं होगा, यह नहीं होगा, महाराज बनवीर।

बनवीर—जागीर नहीं चाहती।

पन्ना—नहीं।

बनवीर—तो उदयसिंह के बदले में जो माँगो दिया जाएगा।

पन्ना—राजपूतनी व्यापार नहीं करती, महाराज ! वह या तो रणभूमि पर चढ़ती है या चिता पर।

देशकाल वातावरण—प्रस्तुत एकांकी में ऐतिहासिक वर्णन के अनुसार राजमहल आदि के भीतर के वातावरण का चित्रण किया गया है महाराजा रतनसिंह की मृत्यु के बाद मेवाड़ में अराजकता का साम्राज्य हो गया दासी के पुत्र बनवीर ने विक्रमादित्य की हत्या करके महाराज बन बैठा वह महाराणा वंश के कुलदीपक उदयसिंह को भी समाप्त कर देना चाहता था लेकिन पन्ना धाय ने अपने अपूर्व बलिदान से राणा वंश के कुल दीपक उदयसिंह की रक्षा की। एकांकीकार ने ऐतिहासिक वातावरण को विभिन्न घटनाओं के माध्यम से बड़ी स्वाभाविकता के साथ प्रस्तुत किया है। इसके कथानक में रात्रि के समय चित्तौड़ के महलों में घटित बताया गया है। इसमें वातावरण के उचित समावेश के लिए आवश्यक रंग-संकेत भी दिये गये हैं। पात्रों की वेशभूषा, बोलचाल में प्रयुक्त होने वाले शब्द और इनके व्यवहार देशकाल के अनुरूप प्रस्तुत किये गये हैं। पन्ना धाय के सम्वादों में दृश्यात्मकता और घटनानुकूलता का समावेश हुआ है।

भाषा शैली प्रस्तुत एकांकी में ऐतिहासिक सत्य को लेखक ने प्रभावशाली शैली में उभारा है। प्रस्तुत एकांकी में सर्वत्र सरल सुबोध भाषा का प्रयोग किया गया है, तथापि इसके कुछ स्थल अत्यन्त मार्मिक एवं भावात्मक हो गये हैं। पन्ना धाय की भाषा में ओज और त्याग की छाप है द्वन्दात्मक स्थिति में उसके तर्क वितर्क एक ओर नारी हृदय की कोमलता को व्यक्त करते हैं तो दूसरे ओर बलिदान की भावनाओं की उदात्तता का परिचायक हैं। कहीं कहीं तत्सम शब्दों के प्रयोग की मात्रा बहुत अधिक है।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि भाषा और शैली ऐतिहासिक वातावरण तथा पात्रों के चरित्र के अनुकूल है। शैली की दृष्टि से इसमें काव्यात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, भावात्मक तथा सूत्र शैली का प्रयोग हुआ है।

उद्देश्य—प्रस्तुत एकांकी का उद्देश्य पन्ना धाय के त्यागमय चरित्र के माध्यम से उत्कृष्ट राष्ट्रप्रेम और बलिदान का आदर्श प्रस्तुत करना रहा है, पन्नाधाय ने ऐसे अवसर पर राज कुँवर की रक्षा करके जिस त्यागमयी भावना का परिचय दिया, वह वर्तमान काल

में भी अत्यन्त प्रेरणादायी है। एकांकी ने इसके माध्यम से वर्तमान समय में अलगाव वादी ताकतों के विरुद्ध संघर्ष करते रहने का सन्देश दिया है। राष्ट्र की रक्षा के लिए स्वार्थ का परित्याग और ममता का बलिदान आदि भावनाओं का चित्रांकन करना एकांकीकार का प्रमुख उद्देश्य है।

शीर्षक–प्रस्तुत एकांकी का शीर्षक हर दृष्टि से उपयुक्त है। इसमें प्रारम्भ में दीपोत्सव में सब दीपदान करते। परन्तु पन्ना उत्सव में भाग नहीं लेती। वह राजवंश की रक्षा के लिए अपने कुल दीपक का दान कर देती है। वह कहती है आज मैंने भी दीपदान किया है। दीपदान अपने जीवन का दीप मैंने रक्त की धारा पर तैरा दिया है ऐसा दीपदान किसी ने नहीं किया प्रस्तुत शीर्षक से एकांकी त्यागमयी और बलिदान की भावनाओं का सशक्त चित्रण होता है।

निष्कर्ष—रामकुमार वर्मा द्वारा रचित दीपदान एकांकी, एकांकी तत्वों के आधार पर, एक सफल एकांकी है, पूरे कथानक को इसमें एक ही दृश्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है संवादों के अनुसार इसमें पर्याप्त अभिनेयता विद्यमान है। देश प्रेम तथा त्यागमयी भावनाओं को अपनाने का उत्कृष्ट सन्देश है। इस सभी विशेषताओं की दृष्टि से यह एक सफल एकांकी है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. एकांकी के प्रमुख लक्षण बतलाइए।

उत्तर – एकाकी के प्रमुख लक्षण इस प्रकार निर्धारित किए जा सकते हैं—

(1) एकांकी आकार प्रकार की दृष्टि से संक्षिप्त होता है एकांकी में मानव जीवन की एक घटना की पूर्ण प्रभाव के साथ अभिव्यक्ति की जाती है।

(2) एकांकी एक सुनिश्चित संकलिपत लक्ष्य की ओर तीव्रगति से बढ़ता है उसमें आकस्मिकता और तन्मयता रहती है।

(3) एकांकी एक अंक जिसमें अनेक दृश्य हो सकते हैं; तक ही सीमित रहता है।

(4) एकांकी में पात्रों की संख्या मर्यादित और सीमित होती है। एकांकी एक पात्रीय भी हो सकता है।

(5) एकांकी में संकलनत्रय का निर्वाह सर्वथा अपेक्षित रहता है।

(6) एकांकी का अन्त आकस्मिकता और चरम सीमा पर होता है।

(7) एकांकी का उद्देश्य रंजन नहीं हैं, अपितु उसमें मानव जीवन के विविध संवेदनात्मक, संप्रेषण, संकल्प होता है।

संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि एकांकी विशिष्ट जीवन सत्य की एकाग्र अभिव्यक्ति करने वाली संक्षिप्त रचना है इसमें जीवन का एक पक्ष पूर्णता के साथ व्यंजित होता है।

प्रश्न 2. एकांकी के भेदों का वर्णन करते हुए बताइए कि यह 'दीपदान' एकांकी किस कोटि के एकांकियों में आता है?

उत्तर— एकांकी के कुछ भेदों का आधार ये है—

1. प्रवृत्ति के आधार पर—प्रवृत्ति के आधार पर एकांकी के ये भेद किए गये हैं—

(क) समस्या एकांकी (ख) संवेदनात्मक एकांकी

(ग) प्रगतिशील चिन्तनपरक एकांकी (घ) आदर्शात्मक एकांकी

2. कथ्य सन्दर्भों के आधार—

(क) पौराणिक एकांकी
(ख) ऐतिहासिक एकांकी
(ग) सामाजिक एकांकी
(घ) मनोवैज्ञानिक एकांकी
(ङ) राजनैतिक एकांकी
(च) वैज्ञानिक एकांकी
(छ) सांस्कृतिक एकांकी

3. अभिव्यक्ति के आधार पर—

(क) हास्य प्रधान एकांकी
(ख) गीतात्मक एकांकी
(ग) प्रतीकात्मक एकांकी

4. शिल्पगत आधार पर—

(क) रंग एकांकी
(ख) एक पात्रीय एकांकी
(ग) गीति नाट्य एकांकी
(घ) झलकी
(च) रेडियो एकांकी
(छ) दृश्य श्रव्य एकांकी

प्रस्तुत एकांकी 'दीपदान' ऐतिहासिक एकांकी के अन्तर्गत आता है।

प्रश्न 3. बनवीर कुँवर उदयसिंह को क्यों मारना चाहता था ?

उत्तर—बनवीर निष्कंटक राज्य का स्वामी बनना चाहता था अतः वह राणा वंश के अन्तिम कुल दीपक उदयसिंह को भी अपने मार्ग से हटा देना चाहता था।

प्रश्न 4. रामकुमार वर्मा की एकांकी कला की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उत्तर—रामकुमार वर्मा की एकांकी कला की विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) एक घटना या संवेदना का वर्णन
(2) समस्या प्रधानता और घटनाओं की एकता
(3) विषय वस्तु की प्रधानता
(4) रामकुमार वर्मा के एकांकियों के पात्र पाँच प्रकार के होते हैं : (1) पौराणिक, (2) ऐतिहासिक, (3) सामाजिक तथा अन्य साहित्यिक पात्र।
(5) जीवन के अद्भुत क्षणों का वर्णन।

प्रश्न 5. दीपदान एकांकी की विशेषताओं से परिचित कराइए।

उत्तर—दीपदान एकांकी में निम्नांकित विशेषताएँ हैं—

(1) दीपदान एकांकी एक ऐतिहासिक एकांकी है।

(2) दीपदान एकांकी में राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्र प्रेम की महिमा का बखान किया गया है।

(3) प्रस्तुत एकांकी में राजपूतानी पन्ना धाय की स्वामिभक्ति एवं त्याग का वर्णन है।

(4) इस एकांकी में आये संवाद न केवल कलात्मक हैं, अपितु पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने वाले, कथा को विकसित करने वाले उद्देश्योन्मुख, सरस, सजीव, संक्षिप्त और रोचक गुणों से परिपूर्ण है।

(5) प्रस्तुत एकांकी अपने में महान उद्देश्य को समेटे हुए है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. 'दीपदान' एकांकी किस प्रकार का एकांकी है ?

(क) पौराणिक
(ख) सामाजिक
(ग) साहित्यिक
(घ) ऐतिहासिक
(च) राजनैतिक।

प्रश्न 2. उदयसिंह के साथ पन्ना धाय का क्या सम्बन्ध था ?

(क) माँ का (ख) सेवक सेव्य का
(ग) नौकर का (घ) बहन का
(च) धाय माँ का।

प्रश्न 3. पन्ना धाय के चरित्र की कौन सी विशेषता सबसे अधिक प्रभावित करती है ?

(क) ममतामयी माँ की
(ख) स्वामिभक्ति की
(ग) देश रक्षा हेतु बलिदान और स्वामि भक्ति
(घ) दृढ़ आस्था की
(च) कर्तव्यपरायणता की।

प्रश्न 4. ओह ! पन्ना तूने कपट किया है। तूने अंगारों की सेज पर अपने फूल से लाल को सुला दिया है, तू सर्पिणी है। वाक्य में पन्ना का कौन सा मनोभाव व्यक्त हुआ है ?

(क) वात्सल्य का (ख) प्रेम का
(ग) अन्तर्द्वन्द्व का (घ) कर्तव्य परायणता का
(च) क्षोभ का।

प्रश्न 5. "तू उदयसिंह को छू भी नहीं सकता नीच नारकी।" प्रस्तुत कथन में पन्नाधाय की कौन सी विशेषता प्रकट हुयी है ?

(क) वीरांगना क्षत्राणी (ख) वात्सल्यमयी माँ की
(ग) स्वामिभक्ति की (घ) चतुरता और सजगता

उत्तरमाला

1. (घ) 2. (च) 3. (ग) 4. (ग) 5. (क)

2 दस हजार

"क्या देख हूँ बेटा ! अपनी किस्मत को रोऊँ हूँ। रुपया भी कहाँ धरा है ? अभी अनाज भी तो खरीदना है। कल मुहम्मद बक्स आने रुपये का सूद देकर दो हजार माँगने आया था उसको भी देना ही है। दस हजार के बौण्ड खरीदने हैं ऐसा मौका कब मिलेगा ? इतना सूद क्या छोड़ा जा सके है बेटी ? ओह ! दस हजार देने पड़ेंगे।" पृष्ठ (61)

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण उदय शंकर भट्ट के एकांकी 'दस हजार' से लिया गया है।

विशाखा रामलाल जी कंजूस व्यक्ति हैं। उसके पुत्र का अपहरण कर लिया गया है। खान ने लड़का लौटाने की कीमत दस हजार रुपये माँगी है। पत्र को हाथ में लेकर असमंजस में पड़ा हुआ सोच रहा है—

व्याख्या—विशाखाराम जी को सम्बोधित करते हुए कह रहा है कि मैं तो अपनी तकदीर को कोस रहा हूँ। ऐसे समय में रुपया आयेगा कहाँ से ? अब देखने को क्या रह गया है। अनाज खरीदना भी जरूरी है। मुहम्मद बक्स को ऊँची ब्याज दर पर रुपया देना आवश्यक है। इसके अलावा दस हजार के सरकारी बौण्ड खरीदने हैं। इतना ब्याज छोड़ना भी उचित नहीं है अर्थात् ब्याज पर रुपये देना, बौण्ड खरीदना, अनाज खरीदना विशाखाराम की प्राथमिकताएँ हैं अतः अपने पुत्र को पठान के चंगुल से दस हजार रुपये देकर छुड़ाना उसके लिए आवश्यक नहीं है वह रुपये के पीछे इतने पागल है कि उनके हृदय की संवेदनाएँ भी मृतप्राय हो गयी हैं, वह चिंतित तो है लेकिन रुपये की चिन्ता पुत्र की चिन्ता से अधिक बड़ी है। इसलिए अन्त में वह अफसोसपूर्ण ढंग से सोचता हुआ कहता है कि दस हजार देने ही पड़ेंगे।

विशेष—इन पंक्तियों में विशाखाराम का अन्तर्द्वन्द प्रकट हुआ है। वह रुपये को लेकर जितना चिंतित है उतना पुत्र को लेकर नहीं। यदि पुत्र के प्रति उसके मन में चिन्ता उत्पन्न होती है तो वह भी धन से जुड़ी हुई है। भट्ट जी ने अत्यन्त सहजता से धन लोलुप व्यक्तित्व को अंकित किया है।

"आज चार दिन से मैं इनका रूप देख रही हूँ। कहूँ हूँ रुपये के पीछे लडके को हाथ से न खोओ, रुपया तो हाथ का मैल है। दस हजार की क्या बड़ी बात है ? पर इन्हें तो न जाने क्या हो गया है। खाँड और सूद से इनका विचार छुटे तब न। मुनीम जी, मैं तुम्हारे पैर पड़ूँ हूँ, मेरे सुन्दर को ला दो।" पृष्ठ (65)

संदर्भ व प्रसंग—पूर्ववत्। विशाखाराम अपने पुत्र को रुपये देकर छुड़ाने के लिए तैयार नहीं है। वह सिर्फ रुपयों को बढ़ाने की चिन्ता में लगा है। लेकिन अपहृत पुत्र की माँ अपने पुत्र से मिलने के लिये व्याकुल है। यहाँ वह मुनीम जी से बातें कर रही है।

व्याख्या—राजी की माँ ने कहा। कि मुनीम जी चार दिन से सुन्दर के पिता जी का रूप देख रहे हैं। मैं तो इन्हें समझाकर थक गई हूँ कि रुपये के पीछे लड़के को हाथ से खोना बुद्धिमानी नहीं है। रुपया तो हाथ का मैल है। दस हजार कोई बड़ी बात नहीं है, लेकिन सेठ जी की बुद्धि को न जाने क्या हो गया है। उन्हें रुपयों के अलावा कुछ दिखाई नहीं देता। अन्त में राजी की माँ मुनीम जी से आग्रह करती हुई कहती है कि मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, किसी भी प्रकार मेरे बेटे को ला दो, उसे पठान के चंगुल से छुड़ा दो।

विशेष—इन पंक्तियों में भट्ट जी ने माँ की ममता का भावपूर्ण चित्रण किया है। वह मुनीम जी के चरण छूने को तैयार है। यही मातृ वात्सल्य है। एकांकीकार ने सीधी शब्दावली में पति के प्रति उपेक्षा भाव और पुत्र के प्रति ममत्व को तुलनात्मक रूप से अंकित किया है। भाषा में सहजता, सजीवता और मार्मिकता का अद्भुत समावेश है।

"हां सो तो है ही। मैं भी कब सोया हूँ रात में। दिन-रात चिन्ता लगी रहती है। सुन्दर मेरी आँखों के सामने झूमता रहे। उसके बचपन की बात याद आया करें। इधर इब्राहीम रुपया देने ही नहीं आये। क्या तुमने उसके सूद का हिसाब लगाया मुनीम जी, कितना बने है उसके ऊपर ? खाँड़ कहाँ रखवाई है, गोदाम में न ? देखो तालियाँ अपने पास ही रखना। न हो तो मुझे दे जाओ।" पृष्ठ (66)

संदर्भ—पूर्ववत्।

प्रसंग—विशाखाराम अपने पुत्र के अपहरण से चिंतित है। वह केवल दिखावे के लिए ऐसा कर रहा है। उसे बस रुपयों से ही लगाव है। वह इन पंक्तियों में अपनी पत्नी और मुनीम जी के सामने अपने छद्मरूप को प्रकट कर रहा है—

व्याख्या—विशाखा राम मुनीम को बताना चाहता है कि उसे भी अपने पुत्र की चिन्ता है। वह भी उसे लौटाने को प्रयत्नशील है। वह कहता है कि मैं रात भर सोया नहीं हूँ। दिन रात सुन्दर की ही चिन्ता लगी रहती है। बात-बात में सुन्दर मेरी आँखों के सामने घूमता रहता है। वह पुत्र की चिन्ता के साथ-साथ इब्राहीम के न आने से भी चिन्तित है। वह उसके सूद का हिसाब लगाने के लिये मुनीम जी को ताकीद कर देता है। वह शक्कर की बोरियों के लिये भी चिन्तित है कि उन्हें गोदाम में भली प्रकार से रखा गया है कि नहीं। उसे चाबियों की भी चिन्ता है कि मुनीम जी ने अपने पास रखी हैं अथवा नहीं। विशाखाराम को भरोसा नहीं इसलिये वह मुनीम जी को कहता है कि न हो तो तालियाँ मुझे ही दे जाओ। तात्पर्य यह है कि रुपयों का जिक्र चलते ही वह 'सुन्दर' को भूल जाता है। वह धन के लिये ही जीवित है। पुत्र की बात उसके लिये गौण है।

विशेष—विशाखा राम का लालची रूप इन पंक्तियों में साकार हो उठा है। वह लाख कहना चाहता है कि उसे पुत्र की चिन्ता है लेकिन वह सब दिखावा मात्र है। वस्तुतः वह धन के लिये ही चिन्तित और व्यथित है।

प्रश्न 1—उदयशंकर भट्ट की एकांकी कला की विशेषताओं को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए और एकांकी के प्रमुख पात्र विशाखाराम की चारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—हिन्दी के अनन्य उपासक और साहित्य सृष्टा श्री उदयशंकर भट्ट की प्रतिभा अद्वितीय रही है। वे कवि के रूप में हिन्दी जगत् में प्रविष्ट हुये और बहुमुखी प्रतिभा के लेखक के रूप में उसे छोड़कर चले गये। भट्ट जी के ग्यारह काव्य संग्रह, चौदह नाटक, पच्चीस एकांकी संग्रह, छह उपन्यास और कुछेक साहित्यिक निबन्ध प्रकाशित हुये हैं। भट्ट जी का स्थान हिन्दी के मूर्धन्य लेखकों की श्रेणी में आता है।

एकांकी कला की विशेषतायें—भट्ट जी का एकांकी साहित्य स्वयं में अमूल्य निधि है। यद्यपि उनके एकांकियों के कथानक अधिकांशतः पौराणिक हैं फिर भी उनकी आत्मा को भट्ट जी ने नव चेतना का स्पन्दन दिया है। भट्ट जी के एकांकी कथ्य तथा शिल्प दोनों ही दृष्टियों से उच्च है। उनके एकांकियों के मूल संवेदनों की विशेषता है कि वे नव्य चेतना की सुद्देश्यता से प्रेरित हैं। भट्ट जी संवाद लेखन में निपुण हैं। भट्ट जी की भाषा शुद्ध हिन्दी है और पात्रता के अनुसार परिवर्तनशील है। भट्ट जी के एकांकियों की सर्वोपरि विशेषता है करुण एवं दुःखद परिस्थितियों का सफल चित्रण है।

भट्ट जी के एकांकी साहित्य की प्रमुख विशेषतायें निम्नांकित हैं—

(1) भट्ट जी के एकांकी साहित्य में विषय तथा शिल्प की विविधता है।

(2) भट्ट जी के एकांकियों में एक ओर नवीन समाज की यथार्थ स्थिति का चित्रण किया गया है तो दूसरी ओर उनमें अतीत के उज्जवल जीवन आदर्शों की स्थापना का सफल प्रयास भी दिखलाई देता है।

(3) भट्ट जी के प्रारम्भिक नाट्य लेखन पर पौराणिक आस्थाओं का प्रभाव है और बाद में जनसाधारण के उभरते हुये स्वर तथा अन्त में व्यंग्य और हास्य की तीव्रता है।

(4) एकांकीकार के रूप में भट्ट जी निःसन्देह समाज के यथार्थवादी चित्रकार होने के साथ-साथ विचार निर्माता और पथ-प्रदर्शक भी हैं।

(5) भट्ट जी का एकांकी शिल्प-विधान काव्य की समृद्धि, कला की रोचकता एवं नाटकीय चेतना से परिपूर्ण है।

(6) उदय शंकर जी के एकांकियों में संक्षिप्तता और एकाग्रता के आग्रह से कल्पना की चंचलता कम और नाटकीय संवेदना की शालीनता अधिक स्पष्ट तथा मनोहर है।

(7) भट्ट जी ने व्यक्ति और समाज को साहित्य के माध्यम से क्षुद्रताओं, सीमाओं तथा स्वार्थ व व्यावहारिक विषमताओं के परित्याग का जीवत एवं सजीव ही नहीं वरन् जीवनोपयोगी संदेश भी दिया है। इतना ही नहीं उन्होंने देशभक्ति का अभिनय करने वाले अवसरवादियों को मार्मिक सूक्तियों का लक्ष्य भी बनाया है।

(8) आधुनिक शिक्षा, विवाह, प्रेम, नारी की स्वतन्त्रता, आर्थिक वैषम्य, नूतन एवं पुरातन के मध्य संघर्ष जैसी ज्वलन्त समस्याओं के समाधान भट्ट जी के नाटक साहित्य में विद्यमान हैं।

(9) भट्ट जी के अधिकांश बाद के एकांकियों में आज का सामाजिक यथार्थ बड़े प्रखर रूप में चित्रित हुआ है।

(10) भट्ट जी ने प्रारम्भिक नाटकों के विषय में स्वयं कहा है कि "अभिनव एकांकी नाटक में मैंने नाटक के विस्मयात्मक अन्त और संवाद की प्रगल्भता पर जोर दिया है। उसमें नाटक के सौन्दर्य बोध के साथ मैंने वस्तु की अभिनव ग्रन्थना को नाटक का उत्कर्ष मानकर चलने का प्रयास किया है। चमत्कार जो नाटक की अन्विति का मूल तत्व है, उसको जीवन के साथ घटाकर यथार्थ भावों को लाने की चेष्टा की है।"

(11) भट्ट जी के परवर्ती नाटकों में नाटकीय मोड़, चमत्कार, चरम सीमा और विस्मयात्मक अन्त आदि की ओर लेखक का ध्यान नहीं रहा है। उसका ध्यान मुख्यतः अपने कथ्य पर केन्द्रित रहा है। कहीं-कहीं नाटकीयता के दर्शन अवश्य होते हैं।

(12) भट्ट जी ने संकलन-त्रय को एकांकी नाटक की विशेषता स्वीकार किया है। इतने पर भी वे यह मानते रहे हैं कि विशेष परिस्थिति में विभिन्न रचनाओं और समय के अनेक दृश्य हो सकते हैं। अधिकतर एकांकियों में एक ही दृश्य है पर कुछ नाटकों में एक से अधिक दृश्य भी आये हैं।

डॉ० द्वारिका प्रसाद सक्सैना का मत है कि—"भट्ट जी ने अपने एकांकियों में प्रायः एक ही विचार, एक ही समस्या, एक ही भाव और एक ही पात्र को महत्व दिया है। इसीलिये उनके एकांकियों में अनिवार्य एकता एवं अनिवार्य एकाग्रता के दर्शन होते हैं उनमें अनिवार्य प्रभाव एवं वस्तु ऐक्य विद्यमान है और जीवन के किसी एक पहलू, किसी एक महत्वपूर्ण घटना अथवा किसी एक महत्वपूर्ण परिस्थिति का ही चित्रण प्रभावोत्पादक शिल्प में आकर्षक ढंग से हुआ है।"

यही भट्ट जी की एकांकी कला की विशेषतायें हैं।

बिशाखा राम का चरित्र-चित्रण—

(1) **धन लोलुप व कजूस—**विशाखाराम बहुत ही धन लोलुप और कंजूस है। उसे अपने पुत्र की कम और इब्राहीम अलीबक्स आदि से सूद वसूल करने की चिन्ता ज्यादा रहती है। धन लोलुप होने की वजह से वह फिरौती की रकम देने में आनाकानी करता है। उसका मुनीम कहता है कि तिजौरी में पन्द्रह हजार पड़े हैं, उसमें से दस हजार दिये जा सकते हैं। परन्तु विशाखाराम कजूसी दिखाता हुआ कहता है—"आने रुपये का सूद है मुनीम जी। अपने घर से निकालो तो मालूम हो। गाढ़े पसीने की कमाई है। दस हजार यों ही नहीं आ जाते हैं। हे भगवान ! कगाल कर दिया।"

(2) **चिन्तित और बेचैन—**सेठ अपने पुत्र के अपहरण से कम और इस बात से अधिक चिन्तित और बेचैन दिखलाई देता है कि पुत्र की फिरौती स्वरूप दस हजार की रकम

माँगी गई है। उसकी बेचैन अवस्था का प्रारम्भिक परिचय एकांकी में इस प्रकार दिया गया है—"खाट पर लाला विशाखाराम बेचैनी से लेटा हुआ है। उसकी आँखों में बेचैनी है। चेहरा पिचका हुआ है, रंग गोरा, बाल बिखरे हुये। मालूम होता है बड़ी चिन्ता में है हाथ में चिट्ठी है जिसे बार-बार पढ़ता है, फिर सिरहाने रख देता है। फिर उठा लेता है, पढ़ता है और फिर रख देता है। उठकर बैठ जाता है और छत की ओर ताकता है और धम्म से खाट पर लेट जाता है। वह अपनी इस प्रकार की बेचैनी के क्षणों में भगवान को याद करता है। लेकिन इस विपत्ति से बचने के लिए कोई ठोस उपक्रम नहीं करता।

(3) **अविवेकी**—प्रस्तुत एकांकी में सेठ विशाखाराम विवेकहीन और कठोर स्वभाव का दिखाया गया है। उसकी पत्नी बार-बार आग्रह करती है, लड़के को मुक्त करा लो, तो वह कहता है—"सुना तुमने मुनीम जी ? इसकी अक्ल पर पत्थर पड़ गये हैं। कुछ नहीं सोचते ? बस रुपया, रुपया, मेरा लड़का ला दो मुनीम जी, हाय मेरा सुन्दर, हाय मेरा बच्चा रे।" वह पुलिस को सूचना देने की बात कह कर अपनी मूर्खता का परिचय देता है। उसे इतना नहीं पता कि पुलिस देर से पहुँचेगी और उससे पहले ही अपहरणकर्ता सुन्दर को मार डालेंगे। अविवेक के कारण ही उसे खांड़ खरीदने की चिन्ता लगी रहती है।

(4) **कमजोर हृदय**—प्रस्तुत एकांकी में विशाखाराम को अत्यन्त कमजोर हृदय का व्यक्ति दर्शाया गया है। जब भी फिरौती की रकम की याद आती है तो वह छाती पर हाथ रखकर लेट जाता है। और उसे बार-बार दौरे पड़ते हैं। इसी कारण वह कोई उचित निर्णय नहीं ले पाता है। वह अन्तिम समय तक मुनीम को अपना मन्तव्य नहीं बता पाया है। इस कारण उसका चरित्र अत्यन्त कमजोर दिखाई देता है।

(5) **अविश्वासी**—विशाखाराम व्यापारी है लेकिन उसका सारा व्यापार नौकरों और मुनीमों के द्वारा चलता है। उसका सारा काम मुनीम सँभालता है। लेकिन फिर भी वह उस पर शक करता रहता है। वह राजी की माँ से कहता है—"आग लगे घर में, मुझे क्या ? मुनीम ने आज की बिक्री का हिसाब ही नहीं दिया। बेईमान हो गया है।" इसी प्रसंग में वह मुनीम को तालियाँ संभालकर रखने को कहता है तथा खांड़ की भी उसे चिन्ता है। वह सोचता है कहीं पठान दस हजार रुपये तो रख ले और उसके लड़के को न छोड़े। वह सूद पर रुपया देता है परन्तु कर्ज लेने पर जरा भी विश्वास नहीं रहता। इस लिए वह सभी को बेईमान मानता है।

(6) **स्नेहहीन**—सेठ विशाखाराम का हृदय स्नेह से शून्य है। पुत्र के अपहरण के बावजूद वह व्यापार को बढ़ाने की ही सोचता रहता है। पत्नी और पुत्री के बार-बार कहने के बावजूद वह कोई ध्यान नहीं देता। वह मुनीम से कहता है—"कैसा दुष्ट लड़का है। जरा भी लड़ाई नहीं करी। डोली में नई बहू की तरह उनके साथ चला गया मेरी छाती पर मूँग दलने। कहाँ से लाऊँ दस हजार।"

(7) **परिश्रमी**—व्यापारी वर्ग का प्रतिनिधि होने तथा धन-संचय की प्रवृति के कारण विशाखाराम कुछ परिश्रमी है। वृद्ध हो जाने पर भी वह मेहनत करता है। इस सम्बन्ध में वह कहता है—"खून की कमाई है खून की। आपने चालीस साल में लगातार दिन-रात एक करके रुपया कमाया है।" उसके पास चार आलीशान मकान हैं और बहुत सारा रुपया उधार दे रखा है। यही उसकी एक प्रशस्य विशेषता है।

निष्कर्ष—संक्षेप में विशाखाराम अत्यन्त कमजोर चरित्र का पात्र है। धनार्जन के सामने पारिवारिक सम्बन्धों को वह गौण मानता है। उसे हर समय व्यापार की चिन्ता

रहती है। उसमें विवेक और स्नेह का अभाव है। व्यापारी की तरह दूसरों पर विश्वास न करना वह अपनी बुद्धिमानी मानता है। लेखक ने उसके चरित्र का स्वाभाविक विकास दिखाया है और मनोविश्लेषणात्मक चित्रण द्वारा उसकी यथार्थ झाँकी उपस्थित की है।

प्रश्न 2. 'दस हजार' शीर्षक एकांकी में सामाजिक-मनोवैज्ञानिक व्यंग्य का संवेदनात्मक चित्रण हुआ है।" प्रस्तुत एकांकी के आधार पर इस कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—श्री उदय शंकर भट्ट यथार्थवादी रचनाकार माने जाते हैं। उनके अधिकतर एकांकी पौराणिक एवं सामाजिक विषयों पर आधारित हैं। उन्होंने अपने जीवन की कटु वास्तविकताओं, अन्तर्विरोधों को अपने एकांकियों में व्यंग्य के स्तर पर उपस्थित किया। उनके प्रस्तुत एकांकी में भी सामाजिक यथार्थ का संप्रेषणीयता के साथ चित्रण किया गया है।

सामाजिक-मनोवैज्ञानिक व्यंग्य

प्रस्तुत एकांकी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, व्यंग्य कथा पर आधारित है। एकांकीकार ने इसमें एक ओर धनिक वर्ग की अर्थ लोलुप प्रवृत्ति का चित्रण किया है तो दूसरी ओर वर्तमान समय में बढ़ते हुये कानूनी-व्यवस्था के खोखलेपन और फैलती हुई अराजकता पर तीखा प्रहार किया है। यद्यपि एकांकी पारिवारिक परिवेश में घूमता है तथापि इसमें समाज की उन सभी कमजोरियों की ओर व्यंग्य रूप में संकेत किया गया जिनके कारण समाज में सम्बन्धों का टूटना बढ़ता ही जा रहा है। प्रस्तुत एकांकी में व्यंग्य के जो विभिन्न स्तर दिखायी देते हैं। उनका विवेचन इस प्रकार है।

1. **धनिक वर्ग की मानसिकता पर व्यंग्य**—प्रस्तुत एकांकी में लेखक ने सेठ विशाखाराम धनिक वर्ग की अर्थ-प्रधान मानसिक स्थिति पर सशक्त व्यंग्य किया है। वह अपने पुत्र के अपहरणकर्त्ता को दस हजार की फिरौती न देकर हर समय व्यापार की चिंता में लगा रहता है। बार-बार मुनीम को सूद वसूल करने, तगादा करने तथा अनाज खरीदने का निर्देश देता रहता है। परन्तु वह मुनीम को फिरौती की रकम पहुँचाने के लिए निर्देश नहीं देता है। उसकी पत्नी और पुत्री के बार-बार कहने पर भी वह धन को ही सब कुछ मानकर पुत्र के प्रति निर्दयी ही बना रहता है। उसके पास व्यापार बढ़ाने के लिए रुपयों की गुंजाइश है परन्तु वह उस रकम को परिवार के लिए खर्च करना नहीं चाहता है। एकांकीकार ने ऐसे धन लोलुपों को सामाजिक जीवन के लिए कलंक बताया है।

2. **निजी सम्बन्धों की हीनता पर व्यंग्य**—प्रस्तुत एकांकी में लेखक ने वर्तमान समय में अर्थ की प्रधानता के कारण पारिवारिक सम्बन्धों के टूटने, निजी सम्बन्धों के विघटन पर भी व्यंग्य किया है। प्रस्तुत एकांकी में विशाखाराम धन को ही अधिक महत्व देता है। उसके लिए पारिवारिक जीवन का उतना महत्व नहीं है। वह मुनीम और मालिक के रिश्ते में भी विश्वास नहीं करता। उससे जो रकम माँगी जाती है वह उससे अत्यधिक बेचैन हो उठता है। वह बार-बार व्यापार की बातें करता है और परिवार के प्रति उपेक्षा का भाव दर्शाता है। वह कहता है—"चिन्ता न करूँ, खून पसीने की कमाई है खून पसीने की! आज चालीस साल से लगातार दिन-रात एक करके रुपया कमाया है।"

3. **सामाजिक जीवन में अराजकता पर व्यंग्य**—प्रस्तुत एकांकी में सामाजिक जीवन में व्याप्त अराजकता की ओर भी पर्याप्त संकेत किया है। विशाखाराम के पुत्र का अपहरण हो जाने के चार दिन बाद भी पुलिस कुछ नहीं करती है। सेठ विशाखाराम अपने मुनीम को पुलिस में खबर करने का आदेश देता है, परन्तु मुनीम कहता है कि—"पुलिस भी क्या करेगी सेठ जी, पुलिस भी तो डरे है। और उसे क्या मालूम नहीं, वह करे तब

तो।" इससे पता चलता है कि पुलिस की निष्क्रियता से अथवा शासन-तन्त्र में फैले भ्रष्टाचार के कारण अपराधी तत्वों को बे-धड़क घूमने को छूट मिली है।

4. शोषण की प्रवृति पर व्यंग्य—प्रस्तुत एकांकी में शोषण की प्रवृति का आंशिक चित्रण किया है। प्रस्तुत एकांकी में विशाखाराम धनिक वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है। वह लोगों को मुँहमांगे सूद पर ऋण देता है तथा गहने गिरवी रखता है। वह इब्राहीम को बार-बार परेशान करता है उसके खिलाफ मुकदमा लड़ने की धमकी देता है। मुहम्मद बक्स को वह आने रुपये सूद पर वह दो हजार रुपये देने का वादा करता है।

वह काला धन्धा करके खूब धन कमाता है। वह अनाज को अपने गोदामों में बन्द करके बाद में मनमाने दामों पर बेचता है। एकांकीकार ने विशाखाराम की चारित्रिक विशेषताओं के आधार पर शोषक-वर्ग के काले कारनामों पर प्रकाश डाला है और समाज में चल रही शोषण की प्रवृति के विरुद्ध तीखा स्वर व्यक्त किया है।

निष्कर्ष—संक्षेप में प्रस्तुत एकांकी में वर्तमान सामाजिक जीवन में व्याप्त आर्थिक दृष्टिकोण का चित्रण यथार्थ रूप में किया है। एकांकीकार ने प्रभावोत्पादक शैली में अपने कथ्य को सम्प्रेषित करने की सफल चेष्टा की है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 1. श्री उदयशंकर भट्ट जी की एकांकी कला की प्रमुख 5 विशेषताएँ बताइये।

उत्तर—(1) भट्ट जी के एकांकी साहित्य में विषय तथा शिल्प की विविधता है।

(2) भट्ट जी ने अपने एकांकियों में एक ओर नवीन समाज की यथार्थ स्थिति का चित्रण किया गया है तो दूसरी ओर उनमें अतीत के उज्जवल जीवनादर्शों की स्थापना का सफल प्रयास किया है।

(3) भट्ट जी के प्रारम्भिक नाटकों में पौराणिक आस्थाओं का प्रभाव है और बाद में जन साधारण के उभरते हुये स्वर तथा अन्त में व्यंग्य और हास्य की तीव्रता है।

(4) भट्टजी ने व्यक्ति और समाज को साहित्य के माध्यम से क्षुद्रताओं, सीमाओं तथा स्वार्थ व व्यावहारिक विषमताओं के परित्याग का जीवंत, सजीव और जीवनोपयोगी सन्देश दिया है।

(5) भट्ट जी ने आधुनिक शिक्षा, विवाह, प्रेम, नारी की स्वतन्त्रता, आर्थिक वैषम्य, नूतन एवं पुरातन के मध्य संघर्ष जैसी ज्वलन्त समस्याओं के समाधान अपने एकांकी साहित्य में विद्यमान हैं।

निश्चय ही भट्ट जी आधुनिक एकांकी के स्वतन्त्र व सामर्थ्यवान शिल्पी हैं।

प्रश्न 2. दस हजार नाटक की स्त्री पात्र राजी के चरित्र की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उत्तर—राजी के चरित्र में निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(1) ममतामयी।

(2) श्रद्धाशील नारी।

(3) साहसी।

(4) विवेकशील।

(5) उदारता कातरता ।

प्रश्न 3. उदयशंकर भट्ट ने प्रस्तुत एकांकी में किसका चित्रण किया है ?

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी की कथा सामाजिक, मनोवैज्ञानिक व्यंग्य पर आधारित है। उन्होंने एक ओर तो धनिक वर्ग में बढ़ती हुई अर्थ लोलुप प्रवृत्ति को चित्रित किया है तो दूसरी ओर वर्तमान समाज की खोखली कानून व्यवस्था और फैलती हुई अराजकता पर तीखा व्यंग्य किया है।

प्रश्न 4. 'दस हजार' एकांकी को विशेषताएँ संक्षेप में बतलाइए।

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी में समाज की विद्रूपता अर्थ-प्रधान मानसिकता का चित्रण हुआ है, इसमें निजी सम्बन्धों का महत्व नहीं है।

इसमें कानूनी व्यवस्था के खोखलेपन और बढ़ती हुई अराजकता के भी तीखे स्वर प्रस्तुत किये गये है। प्रस्तुत एकांकी की सरल भाषा और प्रभावोत्पादक शैली के प्रयोग ने कथ्य को सम्प्रेषणीयता प्रदान की है। रंग निर्देश और संकलन-त्रय के सम्यक् निर्वाह ने एकांकी को सफल बनाया है। समीक्ष्य एकांकी को सफल बनाया है। प्रस्तुत एकांकी में संक्षिप्तता और एकाग्रता के आग्रह के साथ-साथ नाटकीय संवेदना भी दिखायी देती है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. विशाखाराम किस प्रकार का व्यक्ति है ?

(क) दयालु (ख) धार्मिक
(ग) लोभी और कंजूस (घ) उदार
(च) सीधा-सादा।

प्रश्न 2. "लो यह पढ़ो, कैसा दुष्ट लड़का है। जरा भी लड़ाई नहीं करी। डोली में नई बहू की तरह उनके साथ चला गया मेरी छाती पै मूँग दलने। कहाँ से लाऊँ दस हजार ? प्रस्तुत कथन में विशाखाराम की कौन-सी प्रवृत्ति स्पष्ट हो रही है ?

(क) कुटिलता (ख) ममता
(ग) वात्सल्य भाव की (घ) कंजूसी
(च) प्रेम।

प्रश्न 3. मैं कहूँ हूँ मेरा गहना बेच दो और मेरे लड़के को बचा लो। प्रस्तुत कथन में राजी के हृदय का कौन-सा भाव व्यक्त हुआ है ?

(क) वात्सल्यमयी माँ (ख) दीनता
(ग) प्रेम (घ) कातरता का
(च) चिन्ता का।

प्रश्न 4. 'आज बेटे को देखकर छाती ठण्डी हुयी'। प्रस्तुत कथन में कौन-सा भाव व्यक्त हुआ है।

(क) वात्सल्य का (ख) खुशी
(ग) सन्तोष (घ) आनन्द का
(च) उत्साह का।

प्रश्न 5. अन्त में मुनीम की बात सुनकर सेठजी क्यों बेहोश हो गये ?

(क) मुनीम ने कुछ भला-बुरा कहा था

(ख) मुनीम के द्वारा सुन्दरलाल को छुड़ाने की फिरौती देने को कहा था

(ग) बेटे के आने की खुशी के कारण

(घ) दुःख के कारण ।

उत्तरमाला

1. (ग) 2. (घ)
3. (घ) 4. (क)
5. (ख) ।

3 ऊसर

"मैं इस भीड़ भड़क्के से बहुत भड़कता हूँ और तुम औरतों को नहीं जानते । जब बाहर के आदमी होंगे तो बिल्कुल दूसरी हो जायेंगी और अपने पति से भी यही उम्मीद करेंगी । आपके टेबल पर फिंगर बोल मैंने सुनी भी न थी पर मेरी मेमसाहब शायद यह दिखलाना चाहती थी जैसे हम लोग हफ्ते में दस दिन फिंगर बोल रखते हैं।"

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत अंश भुवनेश्वर रचित एकांकी ऊसर से लिया गया है। गृह स्वामी और ट्यूटर आपस में बात कर रहे हैं। गृह स्वामी के घर में कोई पार्टी है इसलिए वह परेशान है। वह कहता है—मैं इस भीड़ से भटक जाता हूँ मुझे तुरन्त किसी भी बात पर क्रोध आ जाता है। वह कहता है तुम औरतों के स्वभाव को नहीं जानते। जब घर में आदमी होंगे तो वे बिल्कुल अजनबी की तरह बातें करेंगी। और चाहेंगी कि उनका पति भी इसी तरह अजनबी बना रहे। आपकी टेबल पर मैंने उँगलियों की आवाज सुनी ही नहीं थी लेकिन मेरी पत्नी यह बताना चाहती थी कि हम अधिकांशतः इस तरह के संकेतों का ही प्रयोग करते हैं।

विशेष—भुवनेश्वर यथार्थवादी एकांकीकार हैं। उनकी रचनाओं में पात्रों का चरित्र बिना किसी लाग लपेट के प्रस्तुत होता है। भाषा में स्वाभाविकता के समावेश के लिए वे अंग्रेजी के शब्दों शब्दांशों का प्रयोग करते हैं।

"मेरी जिन्दगी का एटीट्यूड बिल्कुल मुख्तलिफ है। तुम अपने सोशलिज्म-ओशलिज्म के जोश में शायद यह समझ बैठे हो कि जिन्दगी का गहरे से गहरा मतलब तुम्हारे लिये साफ हो गया। जैसे कोई बड़ा सरकस का घोड़ा तुम्हारे काबू में आ गया, पर जिन्दगी इस तरह लटकों और फार्मूलों में बाँधी जा सकती तो आज तक कब की खत्म हो जाती। जी····साहब सोशलिस्ट हैं पर आज जो कुछ भी हम कुत्तों के समाज से आम इन्सानों को मिला है हम वापस ले लें।"

सप्रसंग व्याख्या—उपर्युक्त गद्यांश पूर्वोक्त सन्दर्भ से ही जुड़ा है। गृहस्वामी पूछता है कि तुम साईकिल पर कहाँ गये थे ? तब ट्यूटर कहता है कि वह कहीं नहीं गया। इसके बाद गृहस्वामी ट्यूटर से कहता है—कि जिन्दगी का दृष्टिकोण मेरा अपना है। जिन्दगी को किसी एक दायरे में नहीं बाँधा जा सकता। वह कहता है कि समाजवाद के जोश में तुम शायद ये समझ बैठे हो कि जीवन की प्रत्येक पहेली तुम्हारे लिए आसान हो गयी जैसे तुमने किसी सरकस के घोड़े पर काबू पा लिया हो। यहाँ जीवन की तुलना सरकस के घोड़े से की गई है। वह कहता है कि आज जो कुछ कुत्तों के समाज से इन्सानों को मिल रहा है उसे वापस ले ले। भाव यह है कि जीवन के विविध रूपों में कहीं तालमेल नहीं है।

विशेष—एकांकीकार ने जीवन की व्यापकता और विविधता को व्याख्यापित किया है। भाषा में एक प्रकार की पकड़ है जो जीवन की गहराइयों से जुड़ी प्रतीत होती है।

"यह समझता है कि वह हम लोगों से बहुत ऊँचा है और जो नौकर मालिक का सम्बन्ध हम में है, इस कदर इसको छोटा बना देता है कि वह हमारा मुकाबला भी नहीं करता। उनका पाक ख्याल है कि वह लोगों के साथ इन्टेलेक्चुअल एक्सपेरीमेन्ट कर रहे हैं।"

सप्रसंग व्याख्या—"ऊसर" के इस अंश में गृहस्वामिनी मोटी रमणी से बातें कर रही हैं। बातचीत में ट्यूटर आ जाता है। गृहस्वामिनी उसे जान का बबाल बतलाती है। वह कहती है कि—

ट्यूटर स्वयं को हम लोगों से बहुत ऊँचा समझता है। पता नहीं उसके मन में क्या है ? लेकिन वास्तव में हम मालिक हैं और वह हमारा नौकर है। वह नौकर मालिक का रिश्ता उसकी सारी ऊंचाई को एक साथ समाप्त कर देता है। तब वह इतना छोटा हो जाता है कि हमारा मुकाबला नहीं कर पाता। गृहस्वामिनी के कथन का भाव यह है कि ट्यूटर अपनी अवमानना अथवा छोटेपन को अपने ढंग से ढाँपने का प्रयास कर रहा है। वस्तुतः वह छोटा ही है और छोटा ही रहेगा लेकिन अपने आपको ऊँचा समझने समझाने का उसे विचित्र सा रोग हो गया है जिसे वह बुद्धिजीवी प्रयोग की अभिधा प्रदान कर रहा है।

विशेष—इस अंश में गृहस्वामिनी का पूँजीवादी दर्शन प्रकट हुआ है। भाषा में सरलता और सुबोधता के साथ-साथ शब्द चयन का कौशल और प्रभावक क्षमता विद्यमान है। यथार्थ को संस्पर्श करती हुई इस अंश की पंक्तियाँ साम्प्रतिक चेतना को साकार करने में सक्षम हैं।

"उन्हीं का नहीं आज सब जवान आदमियों का यह हाल है। वे किताबों के अधकचरे असर से बगावत तो करना चाहते हैं पर कर नहीं सकते। और मैं आपसे पूछता हूँ वह बगावत किसके खिलाफ है ? आप नेचर से वैर कर सकते हैं ? नहीं कर सकते। आप छत से गिरेंगे तो दुनियाँ की कोई ताकत आपका सिर फटने से रोक नहीं सकती......तुम उन्हें समझा देना........।"

सप्रसंग व्याख्या—पूर्वोक्त प्रसंग में गृहस्वामी गृहस्वामिनी की बात का समर्थन करता हुआ कह रहा है कि—ट्यूटर की ही नहीं आज हर नौजवान की यही स्थिति है। वे विद्रोह करना चाहते हैं लेकिन कर नहीं पाते। नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के खिलाफ तो है लेकिन विकल्प उसके पास भी नहीं है। मजदूर के मन में आक्रोश तो है लेकिन भूख उसे

चुप रहने को मजबूर करती है। गृहस्वामी कहता है कि नई पीढ़ी का यह विद्रोह किसके प्रति है? प्रकृति से शत्रुता करते हैं तो क्या जीत संभव है। यदि कोई छत से कूदने का उपक्रम करे तो उसका सिर फूटना लगभग निश्चित है। गृहस्वामी के कथन का भाव है कि युवा विद्रोह स्वयं अपने आपसे ही विद्रोह है जिसका परिणाम असफलता है।

विशेष—इस अंश में रचनाकार ने गृहस्वामी के माध्यम से युवा विद्रोह का चित्रण किया है जो दिशाहीन है और यही दिशाहीनता उनकी असफलता का कारण है। भाषा में सहजता, गत्यात्मकता और प्रभाविता विद्यमान है।

प्रश्न 1. भुवनेश्वर की एकांकी कला पर प्रकाश डालते हुए उसकी प्रमुख विशेषताओं का सोदाहरण विवेचन कीजिए।

उत्तर—हिन्दी एकांकी को युग बोध से जोड़ने वाले लेखकों में भुवनेश्वर का नाम प्रमुख है। भुवनेश्वर के एकांकी किसी न किसी समस्या पर आधारित होते हैं। यदि हम इन एकांकियों पर दृष्टि डालें तो यह समस्या हमें पाश्चात्य देशों जैसी लगती है किन्तु अब तो वे स्पष्टतः भारतीय समाज में भी देखी जा सकती हैं। इनकी एकांकी विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) **विभिन्न सामाजिक समस्याओं का चित्रण**—इनके एकांकियों में विभिन्न सामाजिक समस्याओं का अंकन हुआ है इन्होंने पुरानी मान्यताओं के खोखलेपन की ओर भारतवासियों का ध्यान आकृष्ट कराना चाहा है कहीं विवाह कृत्रिम संस्कार और विडम्बना बतलाया है तो कहीं साम्यवादियों को साम्य ही को चित्रित किया इसके साथ ही साथ अनेक समस्याओं पर इन्होंने अनेक समस्याओं की प्रस्तुती की गयी है।

(2) **पात्र चरित्र चित्रण सम्बन्धी विशेषता**—भुवनेश्वर ने अपने एकांकियों को दो प्रकार के चरित्रों के साथ प्रस्तुत किया है इनमें कुछ चरित्र आदर्शवादी हैं किन्तु भीतर से खोखले और कपटी हैं कुछ ऐसे चरित्र हैं जो समाज की रूढ़ियों और परम्पराओं का विरोध करने वाले हैं, जिन्हें साधारण भाषा में क्रान्तिकारी और विद्रोही कहा जाता है। उन्होंने अपने एकांकियों में ऐसे नारी पात्रों का चित्रण किया है जो विलासी जीवन को अधिक श्रेष्ठ मानती है। पाश्चात्य रंग में रंगी स्वच्छन्द जीवन जीने वाली और मुक्त भाव से अपने मनोनुकूल कार्य करने वाली ये नारियाँ भुवनेश्वर के एकांकी साहित्य में आकर्षक शक्ति बन कर आयी हैं।

(3) **संवाद कला की विशेषताएँ**—जिस प्रकार भुवनेश्वर की कथा-वस्तु और पात्र योजना पर पाश्चात्य प्रभाव हैं, वैसे ही संवाद योजना पर भी। कहीं कहीं तो ऐसा लगता है जैसे भुवनेश्वर के नहीं इब्सन के संवाद हैं : इनके संवाद रोचक और प्रभावपूर्ण हैं। उनमें संक्षिप्तता तथा मोहकता का गुण विद्यमान है। भुवनेश्वर के एकांकियों में भावुकता के स्थान पर वाकचातुर्य का गुण दिखायी देता है।

(4) **वातावरण विधान सम्बन्धी विशेषतायें**—भुवनेश्वर के एकांकियों में देश काल का निर्माण बड़ी सतर्कता के साथ हुआ है इन्होंने जिस समाज की कहानी ली है, उस समाज के व्यक्तियों, स्थान व समय का चित्रण इन्होंने बड़ी स्वाभाविकता के साथ किया है। इनके एकांकियों में इसी कारण पाठक को सजीवता और घटनाओं की सत्यता मिलती है।

(5) **भाषा और शिल्प सम्बन्धी विशेषताएँ**—भुवनेश्वर के एकांकियों में हमें भाषा के कई रूप देखने को मिलते हैं। कहीं तो इनकी भाषा में हमें व्यवहारिक भाषा मिलती है तो कहीं अंग्रेजी और उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी है और कहीं इनकी भाषा सरल तथा साधारण बोल-चाल की भाषा हो जाती है। इस भाषा में उर्दू और अंग्रेजी शब्द कम हैं। कहीं-कहीं इनकी भाषा में भावुकता, आलंकारिकता और लाक्षणिकता मिलती है। भुवनेश्वर की एक भाषा का रूप मुहावरों और कहावतों से युक्त है।

6. रंग संकेतों का प्रयोग भी इनके एकांकियों की मुख्य विशेषता है। इससे इनके एकांकियों में आधुनिकता आ गयी है।

7. संकलनत्रय और एकांकी कला—भुवनेश्वर ने सामान्यतः संकलनत्रय के नियम को अपने एकांकियों में स्थान नहीं दिया है उनके लिए यह नियम महत्वहीन ही रहा है।

8 प्रभावन्विति—भुवनेश्वर ने अपने एकांकियों में प्रभावन्विति को विशेष महत्व दिया है नाटकीय मोड़ प्रस्तुत करके पाठकों व दर्शकों की जिज्ञासा और कौतूहल वृत्ति को बराबर बनाये रखने का प्रयास किया है।

9. सोद्देश्यता—भुवनेश्वर के नाटकों की यह भी विशेषता है कि उनमें मध्यम वर्ग के विकृत और कुण्ठाग्रस्त जीवन की झांकियाँ बड़ी सजीवता के साथ अंकित हुयी हैं इनके एकांकी साहित्य में आधुनिक परिवेश है और उनमें कृत्रिमता का बहिष्कार किया गया है।

निष्कर्षतः भुवनेश्वर आधुनिक एकांकी लेखकों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनकी उपर्युक्त विशेषताएँ एकांकी कला को स्पष्ट कर देती हैं।

प्रश्न 2. "ऊसर एकांकी में मध्यम वर्गीय चेतना पर सफल व्यंग्य किया गया है।" प्रस्तुत एकांकी के आधार पर इस कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—भुवनेश्वर प्रसाद का लेखन कार्य सामाजिक जीवन के यथार्थ से जुड़ा हुआ दिखायी देता है। उनके अधिकतर एकांकियों में युग बोध और समकालीनता का स्वर व्यक्त हुआ है। उनका प्रस्तुत एकांकी भी यथार्थवादी चेतना से जुड़ा हुआ है। इसमें उन्होंने वर्तमानकालीन मध्यम वर्गीय परिवार और उसके भीतर की चेतना को प्रस्तुत करते हुये उस पर व्यंग्य किया है।

मध्यम वर्गीय चेतना पर व्यंग्य—प्रस्तुत एकांकी वर्तमान सामाजिक जीवन में व्याप्त खोखली गम्भीरता और नकलीपन को उजागर किया है। वर्तमान काल में मध्यम वर्गीय परिवार स्वयं को सुसभ्य दिखलाने की भरपूर चेष्टा करते हैं और आस्था न रखते हुए भी गाँधीवाद तथा समाजवाद की फैशन के रूप में चर्चा करते रहते हैं। प्रस्तुत एकांकी में मध्यम वर्गीय चेतना के विभिन्न स्तरों का सशक्त चित्रण किया है।

(1) **निरर्थक विचार चर्चा** - प्रस्तुत एकांकी में गृहस्वामी और उसके मेहमानों के मध्य गाँधीवादी और समाजवाद को लेकर निरर्थक चर्चा चलती रहती है। एकांकी का मुख्य पात्र गृहस्वामी कभी समाजवाद का समर्थन करता है और कभी गाँधीवाद का विरोध करने लगता है। वह कहता है—"हिटलर और मुसोलिनी ही क्यों? और ऐसी ताकत मौजूद हैं, मगर हजरत आदमी की औलाद बहुत उछल कूद मचायेगी तो यह ताकत काम में लाई जाएगी। बेचारा गाँधी क्या कहता है………।

प्रस्तुत एकांकी के अन्य पात्र भी इस तरह विचार चर्चा में लगे रहते हैं। वे किसी भी विषय और प्रसंग को लेकर ऊल जलूल बातें करते रहते हैं : और अपनी चेतना शक्ति श्रेष्ठ बताने की चेष्टा करते हैं।

(2) **खोखली गम्भीरता**—"ऊसर" एकांकी में सभी पात्र मध्यम वर्गीय चेतना के अनुसार हर बात को गम्भीरता से गृहण करते हैं। ट्यूटर और लड़के के सम्मुख गृहस्वामी अत्यन्त गम्भीरता दिखाता है। मेहमान के रूप में मोटी रमणी और दो लड़कियाँ हैं तो गृहस्वामी की पत्नी कहती है कि "ये योग आदि बहुत कुछ जानते हैं; लेकिन अब बेचारे भूल गये हैं।" इसी तरह हरेक पात्र अनावश्यक रूप से गम्भीर बना रहता है। दोनों लड़कियाँ एकदम चुप दिखायी देती हैं। वे दूसरों के सामने श्रेष्ठ बुद्धिमान और चिन्तनशील दिखाने की चेष्टा करते हैं जबकि वे ऐसे नहीं हैं।

(3) **दिखावे की प्रवृति**—प्रस्तुत एकांकी में सभी पात्र मध्यम वर्गीय चेतना से सम्बन्धित हैं। वे स्वयं को इस तरह प्रस्तुत करते हैं मानो सम्पन्न वर्ग या परिवारों से सम्बन्धित हों। एकांकी का प्रमुख पात्र गृहस्वामी दूसरों के सामने अपनी सम्पन्नता और बुद्धिमता दिखाने की चेष्टा करता है। एकांकी की प्रमुख स्त्रीपात्र मोटी रमणी का आचरण और वेशभूषा पूरी तरह दिखावटीपन से युक्त है। इस तरह एकांकी के सभी पात्र दिखावे की प्रवृति से ग्रस्त हैं।

(4) **प्रसंगहीनता की स्थिति**—प्रस्तुत एकांकी समाज की स्थिति पर प्रकाश डालने में सफल रहा है। गृहस्वामी ट्यूटर के साथ इसी तरह की प्रसंगहीन बातें करता है। वह कभी तो स्त्रियों के स्वभाव को लेकर चर्चा करता है और कभी अपने वैवाहिक जीवन की बातें करता है। कभी वह समाजवाद तथा गाँधीवाद की प्रसंगहीन बातें करता है और सोशलिस्टों को पशुओं की तरह आचरण करने वाला बताता है। कभी अपनी पत्नी के स्वास्थ्य की चर्चा पर वर्तमान सभ्यता पर भाषण देने लगता है।

इस तरह एकांकी में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक सारा घटनाक्रम प्रसंगहीन बातों से भरा हुआ है। वस्तुतः एकांकी का शीर्षक "असर" इस प्रसंगहीन स्थिति पर व्यंग्य करने वाला है।

(5) **पारिवारिक स्थिति का विघटन**—प्रस्तुत एकांकी में मध्यमवर्गीय परिवारों की सभी कमजोरियों का निरूपण किया गया है। कथानक के अनुसार परिवार का मुखिया भिन्न विचार रखता है। और उसका लड़का उससे भिन्न विचार रखता है। दोनों सामने बैठे रहते हैं लेकिन फिर भी उनमें वार्तालाप कम होता है। युवक अपने पिता के हृदय की बात जानना चाहता है परन्तु इसका पिता कुछ नहीं बताता। उदाहरण के लिए यह संवाद दृष्टव्य है जो कि युवक और ट्यूटर के बीच होता है—

युवक—आज पापा से आपकी बातचीत हुई ?

ट्यूटर—जी हाँ।

युवक—क्या बातचीत हुई ?

ट्यूटर—कुछ नहीं, उन्होंने कहा कि आने वाली जनरेशन चाहे बिल्लियों की हो या साँपों की हम से अच्छी होगी।

युवक—किसने कहा ?

ट्यूटर—मिस्टर सिबल ने।

इस तरह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वर्तमान समय में मध्यम वर्गीय परिवार विघटन की प्रवृत्ति से ग्रस्त है।

निष्कर्ष—संक्षेप में 'ऊसर" एकांकी में मध्यम वर्गीय परिवार और उसके भीतर की चेतना को प्रस्तुत किया है। इस एकांकी का आरम्भ ही जीवन चेष्टा के नकलीपन को उजागर करता है। सामाजिक संवेदना की दृष्टि से यह एकांकी अपने कथ्य का प्रतिपादन करने में सफल रहा है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. ऊसर एकांकी के पात्र विधान की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—ऊसर एकांकी में एक प्रकार के पात्र तो उच्च मध्यम वर्गीय हैं तथा आदर्शवादी भी हैं किन्तु इनका आशीर्वाद खोखला और विश्वसनीय है तथा सिद्धान्तहीन हैं इस एकांकी में गृहस्वामी ऐसा ही पात्र है।

इस एकांकी में दूसरे प्रकार के पात्र वे हैं जो क्रान्तिकारी, विद्रोही और संघर्षशील दिखायी देते हैं।

प्रश्न 2. प्रस्तुत एकांकी की संवाद शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी में संवाद कला पूर्णतया लेखक के वाकचातुर्य, वक्रतापूर्ण शिल्प, व्यंग्य की तीक्ष्णता को प्रकट करते हैं इनके संवाद आकर्षक और रोचक हैं। संक्षिप्तता उनका गुण है। इसके संवादों में भावुकता नहीं है किन्तु वाक् विदग्धता, व्यंग्य की तीक्ष्णता और वक्रोक्ति सौन्दर्य उनकी विशेषता है। ये संवाद पात्रों के चरित्र को उद्घाटित करने वाले हैं तथा कथा को गति प्रदान करने वाले हैं। ऊसर एकांकी के संवाद सरल, संक्षिप्त और वेग से परिपूर्ण हैं।

प्रश्न 3. ऊसर एकांकी के उद्देश्य पर संक्षिप्त रूप में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर—ऊसर एकांकी का उद्देश्य मध्यम वर्गीय परिवारों के यथार्थ चित्रांकन करना है इन्होंने एक उच्च मध्यम वर्ग के परिवार के पति-पत्नी, अतृप्त कामभावना, आडम्बर पूर्ण कृत्रिम जीवन पद्धति एवं विषमता का चित्रण बड़ी कुशलता पूर्वक किया है।

प्रश्न 4. ऊसर एकांकी की समीक्षा संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर—ऊसर मध्यम वर्गीय परिवारों के भीतर की चेतना को प्रस्तुत करने वाला एक संक्षिप्त एकांकी है। गाँधीवाद और समाजवाद जहाँ केवल फैशन के रूप में विचार चर्चा का केन्द्र रह गया है। एकांकी आरम्भ ही जीवन चेष्टा के नकली पत्र को उजागर करता है एकांकी में पात्रों की सन्दर्भ हीन बातें, खोखली और गम्भीरता से प्रस्तुत की गयी हैं। यही है ऊसर बंजर जहाँ विचार की धरती पर कुछ विशेष नहीं है, भीतर केवल खोखलापन प्रसंगहीनता और दिखावा है। यह एकांकी मध्यमवर्गीय चेतना पर सफल व्यंग्य है मनोविश्लेषणात्मक शैली का निर्वाह एकांकी के सफल चरित्र-चित्रण का उपादान बना है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. ऊसर एकांकी किस प्रकार के एकांकियों की कोटि में आता है ?

(क) ऐतिहासिक (ख) पौराणिक
(ग) सामाजिक (घ) राजनैतिक
(च) व्यंग्य।

प्रश्न 2. प्रस्तुत एकांकी में कौन से परिवार का चित्रण हुआ है ?

(क) मध्यवर्गीय परिवार का
(ख) उच्च वर्गीय परिवार का
(ग) उच्च मध्यम वर्गीय परिवार का
(घ) निम्न मध्यम वर्गीय परिवार का
(च) निम्न वर्गीय परिवार का

प्रश्न 3. 'तुम औरतों को बिलकुल नहीं जानते। जब बाहर के आदमी होंगे तो बिलकुल दूसरी हो जायेंगी और अपने पति से भी यही उम्मीद करेंगी' प्रस्तुत कथन में गृहस्वामी औरतों की किस प्रवृति को इंगित कर रहा है।

(क) साधारण व्यवहार की
(ख) दिखावे की प्रवृत्ति को
(ग) आधुनिकता की
(घ) असाधारण व्यवहार करने की

प्रश्न 4. प्रस्तुत एकांकी में आधुनिक समाज की किस विशेषता की ओर संकेत किया गया है ?

(क) नकलीपन (ख) आधुनिकता से युक्त
(ग) नवीन दृष्टिकोण

उत्तरमाला

1. (च) 2. (ग) 3. (ख) 4. (क)

4 बलहीन

"साहित्य और कला के नाम पर स्त्री चाहे जो कहे, पर पुरुष उस क्षेत्र में भी पुरुष रहता है। पुरुष की आँखों में जब स्त्री के आँसू दीख पड़ते हैं, उसके कण्ठ में जब स्त्री की वाणी गूँजती है, उसके अनुराग में जब स्त्री की लज्जा नाचती है, उस दशा में उससे नारी अच्छी है। ऐसे पुरुष को पति बनने का अधिकार कहाँ है। पुरुष जाति का कलंक है वह अभागा।"

प्रसंग—'बलहीन एकांकी से उद्‌धृत यह कथन शिवनाथ का है। इस प्रसंग में शिवनाथ पुरुष की विशेषता बतलाता हुआ स्त्री और पुरुष के सम्बन्धों को स्पष्ट करता है।

व्याख्या—शिवनाथ रजनी से कहता है। साहित्य और कला के क्षेत्र में स्त्री चाहे जैसा आचरण करे, परन्तु पुरुष को हमेशा पुरुष ही रहना चाहिए। पुरुष को दाम्पत्य जीवन में अपने पुरुषत्व का परिचय देना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसे पति या पुरुष कहलाने का अधिकार नहीं है। अधिकतर कवि पुरुष होते हुये भी कविता रचने के बहाने स्त्री की तरह आंसू बहाते हैं। उनके कण्ठ से स्त्री की कोमल आवाज गूँजती है। क्या कविता में अपना प्रेम करते हुए स्त्री की तरह लज्जा अनुभव करते हैं। इस तरह का आचरण करने वाला पुरुष व्यावहारिक जीवन में स्त्री से गिरा हुआ है। ऐसा व्यक्ति तो पुरुष जाति के लिए कलंक है।

विशेष—(1) वर्तमान काल के साहित्यकारों की संवेदनहीनता और दाम्पत्य सम्बन्धों पर आक्षेप किया गया है। क्योंकि आजकल के साहित्यकार अपने पारिवारिक जीवन से दूर होते जा रहे हैं। उनकी बौद्धिकता समाप्त होती जा रही है।

(2) भाषा-शैली विषयानुकूल और विवेचनात्मक है।

"तुम्हारा प्रेम कल्पना का है। जीना और मरना भी तुम्हारी कल्पना का है। कविता में तुम अपने मन की रंगीनी भरते हो। जिन विकारों को दबाकर तुम्हें पुरुष बनना चाहिये, उन्हीं को कुरेद कर तुम समाज के गले मढ़ रहे हो। कला में तुम्हारा पतन हो रहा है।"

प्रसंग—लक्ष्मीनारायण मिश्र द्वारा रचित 'बलहीन' एकांकी से उद्‌धृत यह रजनी का कथन है। वह अपने पति देवकुमार से कहती है कि शिवनाथ तुम्हारा इलाज करने फिर आयेंगे। इस पर देवकुमार नाराज हो जाता है। इसी प्रसंग में रजनी कहती है कि—

व्याख्या—आप कविता की कल्पना में ही घुलते जा रहे हैं। प्रत्येक कवि काल्पनिक जगत में जीवित रहता है, उसी से प्रेम करता है और उसका मरना भी कल्पना पर ही निर्भर करता है। आप कविता करते समय प्रेम की बातें सोचते रहते हैं लेकिन वास्तविक जीवन में आपका प्रेम सूखता जा रहा है।

रजनी देवकुमार को काल्पनिक व्यक्ति न बनने का आग्रह करती हुई कहती है कि आप केवल कला के नाम पर अनेक विकारों को भरते हैं। जिन्हें दबाकर आपको पुरुष बनना चाहिए। सवेदनहीन और खोखलेपन से ग्रस्त आपकी कविता कला नहीं हो सकती। यह आपकी कला का पतन हो रहा है। कला कल्पना पर नहीं, जीवन पर आश्रित रहती है और जीवन यथार्थ का प्रथम आधार है।

विशेष—(1) नारी चेतना और नारी स्वातन्त्र्य का सशक्त चित्रण हुआ है। साहित्यकार के कल्पना प्रधान जीवन पर आक्षेप किया गया है।

(2) भाषा-शैली सरल, सुबोध, भावात्मक और विषयानुकूल है।

"रक्त और मांस की भूख हमारे इस जीवन में सबसे बड़ा सत्य है। वह नरक नहीं है, जहाँ तक एक व्यक्ति की है, जहाँ एक आसक्ति है, पर जहाँ वह विश्व की है, अनासक्त है, वहाँ दैवी है। रसराज श्रृंगार की महिमा हमारे पुराने साहित्य में इसीलिए है। कालिदास की शंकर और पार्वती की प्रणयलीला को सुनकर मनुष्य अपनी अतृप्ति से मुक्त होता है। अतृप्ति से मुक्त होना ही मोक्ष है।"

प्रसंग—यह अवतरण बलहीन एकांकी से उद्धृत है। इसमें लक्ष्मीनारायण मिश्र ने वर्तमान काल के कवियों और कलाकार की कमजोरियों पर प्रकाश डाला है। यह अवतरण शिवनाथ का कथन है।

व्याख्या—प्रोफेसर शिवनाथ देवकुमार को समझाते हुए कहता है कि वर्तमान काल में सामाजिक शोषण और उत्पीड़न चल रहा है, जिससे सामान्य जनता कष्टमय जीवन बिता रही है। इस यथार्थ को यदि कवि अपनी कविता में सच्ची संवेदना के साथ चित्रित करे तो उनकी कविता अत्यन्त प्रभावकारी बन सकती है। लेकिन आज कवि अतृप्त वासनाओं से घिरे हैं, उनमें व्यक्तिगत भावनाओं की आसक्ति है। ऐसे कवि के लिए ये धरती कष्टदायी प्रतीत होती है। मानसिक वासनाओं की अतृप्ति से मुक्त होना ही सच्ची दैवी कल्पना है। जब व्यक्ति अनासक्त रहकर सामाजिक चेतना को महत्व देता है, तब वह सारे विश्व के साथ अपनत्व स्थापित कर लेता है। ऐसे कवि की कविता सारे विश्व को मंगलमय प्रेरणा देती है। हमारे पुराने साहित्य में श्रृंगार रस को इसलिए रसराज माना गया है कि व्यक्ति अपनी अतृप्त वासना से मुक्त होकर सम्पूर्ण प्रकृति से प्रेम करना सीखे। महाकवि कालिदास ने अपने काव्य में शिव और पार्वती की प्रणय लीला का वर्णन करके इसी विश्व सत्य का चित्रण किया है जिन्हें सुनकर मनुष्य की अतृप्त वासनायें स्वतः शान्त हो जाती हैं और अतृप्ति से मुक्त होना ही सच्चा मोक्ष है।

विशेष—(1) संस्कृत साहित्य का प्रसंग उपस्थित करके कविता का उद्देश्य स्पष्ट किया गया है। उसमें जीवन का अनुराग यथार्थ रूप से चित्रित रहता है और अनुराग श्रृंगार रस का स्थायी भाव होने से सभी को आनन्द देता है।

(2) भाषा तत्सम-प्रधान, विषयानुकूल, शैली विवेचनात्मक और सूत्रात्मक है। वर्तमान काल के साहित्यकारों की हीन स्थिति पर किया गया व्यंग्य प्रशस्य है।

प्रश्न 1. एकांकी के तत्वों के आधार पर 'बलहीन' एकांकी की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—समस्यामूलक एकांकी लेखन में श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र का अन्यतम स्थान माना जाता है। उनका प्रस्तुत 'बलहीन' एकांकी सामाजिक समस्या पर आधारित है। इसमें एक ओर वर्तमान साहित्य के गिरते हुए मूल्यों और संवेदनशील स्थितियों पर व्यंग्य किया गया है, तो दूसरी ओर दाम्पत्य सम्बन्धों के टूटने का अहसास कराया गया है। साहित्यिक व्यक्ति के पारिवारिक जीवन का चित्रण सफलता के साथ किया गया है।

इसमें प्रस्तुत एकांकी के तत्वों का बड़ी कुशलता के साथ निर्वाह हुआ है। तात्विक दृष्टि से इसकी समीक्षा इस प्रकार है।

1. **कथावस्तु** – प्रस्तुत एकांकी की कथावस्तु सामाजिक समस्या पर आधारित है। इसके लेखक ने एक ऐसे साहित्यकार के पारिवारिक जीवन का चित्रण किया है जो अपने परिवार से कटा हुआ सा रहता है। वह अपनी कविताओं के द्वारा अमर होना चाहता है। इसीलिए भौतिक जीवन के प्रति उसकी जरा सी भी लालसा नहीं है। रात-दिन यश

पाने की भावनाओं में खोया रहता है। यही उसकी बीमारी मानी जाती है। शिवनाथ देव कुमार की पत्नी रजनी एवं रजनी की माँ सरला, देवकुमार को लेकर काफी देर तक बातें करते हैं। उनके वार्तालाप से यही सिद्ध होता है कि देवकुमार स्वयं को कविता-लोक का निवासी मानकार अमर बनने की लालसा रखता है। इसलिए वह पारिवारिक जीवन से मोह का परित्याग करता है।

(2) **चरित्र-चित्रण**—प्रस्तुत एकांकी में पात्रों की संख्या सीमित है, केवल चार पात्र हैं और उनमें सजीवता, गतिशीलता तथा विश्वसनीयता है। इसमें चरित्र नारी भावनाओं के अनुरूप चित्रित किया गया है। कथानक के प्रारम्भ में देवकुमार की कमजोरियों का चित्रण किया है। इस कारण वह अपनी पत्नी से दाम्पत्य सम्बन्धों का निर्वाह करता है। इस एकांकीकार ने सभी पात्रों का चरित्र-चित्रण अपनी कल्पना के अनुसार प्रभावी ढंग से किया है।

(3) **कथोपकथन**—प्रस्तुत एकांकी की संवाद-योजना कथावस्तु के अनुरूप है। इसके संवादों में रोचकता, वाक्‌पटुता, व्यंजनात्मकता और सजीवता है। शिवनाथ और रजनी के संवादों में पैनापन है। देवकुमार के संवाद प्रारम्भ में द्वन्द्वात्मक हैं। शिवनाथ के कुछ संवाद लम्बे हो गये हैं, परन्तु विषय-विवेचन की दृष्टि से उनमें पर्याप्त रोचकता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है—

देवकुमार—कृपा कर मुझे क्षमा करें।

शिवनाथ—आप अकेले की बात होती तो चिन्ता नहीं थी। पर आप समाज के गले विष उतार रहे हैं। यहाँ मेरा कर्त्तव्य हो जाता है कि आपको रोकूँ। इन गीतों में और रति की भावनाओं के साथ मृत्यु का आकर्षण है, यही पाप है।

(4) **देशकाल या वातावरण**—एकांकीकार ने सामाजिक वातावरण को स्वाभाविकता के साथ प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। पात्रों की वेश-भूषा, बोलचाल में प्रयुक्त होने वाले शब्द और उनका व्यवहार देश-काल के अनुरूप रखा गया है। इसमें स्थान, कार्य और काल की एकता होने से संकलनत्रय का सफल निर्वाह हुआ है। संवादों के मध्य तथा कथानक के प्रारम्भ में अभिनय की दृष्टि से आवश्यक रंग संकेत दिये हैं। दृश्यात्मकता का ध्यान रखकर एकांकीकार ने देशकाल का सफल समायोजन किया है।

(5) **भाषा शैली**—प्रस्तुत एकांकी में कथावस्तु के अनुसार सरल, सुबोध भाषा का प्रयोग किया गया है। शिवनाथ और देवकुमार के संवादों में साहित्यिक भाषा का प्रयोग हुआ है। रजनी और सरला की भाषा साधारण बोलचाल की भाषा है। कहीं-कहीं पर विषय-विवेचन की गम्भीरता दिखाई देती है। बौद्धिकता, तर्क और संवेदना के स्तरों पर इसमें भाषा शैली का प्रौढ़ और परिष्कृत रूप देखा जा सकता है। एकांकी में प्रभावात्मक, मनोविश्लेषणात्मक और काव्यात्मक शैली की प्रमुखता है।

(6) **उद्देश्य**—प्रस्तुत एकांकी का उद्देश्य विभिन्न सामाजिक प्रश्नों पर नये सन्दर्भों के साथ प्रकाश डालना है। वर्तमान काल में साहित्यकार संवेदनहीन स्थितियों और खोखले मूल्यों में जीवनयापन करते हैं। उनमें दाम्पत्य जीवन निर्वाह करने का बोध नहीं है। दूसरी ओर नारी स्वयं को पुरुष की अनुचरी मानकर अपनी स्वतन्त्र चेतना नहीं रख पा रही है। इस तरह प्रस्तुत एकांकी का उद्देश्य तथाकथित अमर कवि बनने का ढोंग रचाने वाले साहित्यकारों के वास्तविक जीवन मूल्यों से परिचित कराना रहा है।

निष्कर्ष—संक्षेप में लक्ष्मीनारायण मिश्र का 'बलहीन' एकांकी सामाजिक चेतना की सफल रचना है। इसमें एकांकी के सभी तत्वों का निर्वाह हुआ है। एकांकी का घटनाक्रम सामाजिक, पारिवारिक है। परन्तु लेखक ने सम-सामयिकता का ध्यान रखकर

इसमें नारी चेतना और पारिवारिक-जीवन से जुड़े सम्बन्धों को सफलता से निरूपित करने का प्रयास किया है। वर्तमान काल के साहित्यकारों की मानसिकता पर व्यंग्य किया है। इन सब विशेषताओं के कारण यह एक सशक्त एकांकी है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. बलहीन एकांकी की मूल संवेदना क्या है ?

उत्तर—बलहीन एकांकी में लक्ष्मीनारायण मिश्र जी ने मूल भावना यह प्रकट की है कि हिन्दी के नये कवि जो कविताएँ लिख रहे हैं वे या तो कृत्रिम भावों से प्रेरित हैं या जीवन से कटी हुई परिस्थितियों को उद्घाटित करते हैं। इसमें न तो कुछ साहित्य का भला हो रहा है और न ही सामाजिक जीवन को ही गति व शान्ति प्राप्त हो रही है। ये कविताएँ जन हित और लोक मंगल में कोई योगदान नहीं दे सकती। इस एकांकी का कवि देवकुमार भी ऐसा ही है।

प्रश्न 2. बलहीन एकांकी के आधार पर शिवनाथ का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर—बलहीन एकांकी के पात्र शिवनाथ की चरित्रगत विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) स्पष्ट वादी, (2) निष्कपट मित्र, (3) संवेदनशील, (4) विवेकशील, (5) वास्तविकता से परिचित, (6) सामाजिक चेतना से युक्त तर्क क्षमता से युक्त, (7) प्रतिभाशाली।

प्रश्न 3. बलहीन एकांकी के आधार पर देव कुमार के चरित्र को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–देवकुमार में हमें निम्नलिखित चरित्रगत विशेषताएँ देखने को मिलती हैं—

(1) कल्पनाशील
(2) भ्रान्ति से ग्रस्त
(3) पुरुषत्वहीन
(4) संवेदनाहीन
(5) सत्य से पलायनवादी
(6) यश प्राप्ति की लालसा
(7) जीवन के प्रति आस्था।

प्रश्न 4. बलहीन एकांकी की विशेषताएँ संक्षेप में लिखें।

उत्तर—बलहीन एकांकी में हमें निम्नलिखित विशेषताएँ देखने को मिलती हैं—

(1) एकांकी में चित्रित खोखले साहित्यिक मूल्यों का अंकन

(2) संवेदनहीन परिस्थितियों का चित्रण

(3) नारी चेतना और नारी स्वातंत्र्य का विवेचन

(4) दाम्पत्य सम्बन्धों के टूटने का अहसास कराया गया है

(5) एक साहित्यिक व्यक्ति के पारिवारिक जीवन से जुड़े सन्दर्भों को समीक्ष्य एकांकी में सफलता के साथ निरूपित किया है। बौद्धिकता और सामाजिक संवेदना का मिश्रजी ने सुन्दर समायोजन किया है।

(6) संकलनत्रय और तात्विक दृष्टि से यह सफल एवं सशक्त एकांकी है।
(7) इसकी भाषा सरल एवं सुबोध है।

प्रश्न 5. लक्ष्मीनारायण मिश्र के नाटकों की विशेषता बतलाइए।

उत्तर—लक्ष्मीनारायण मिश्र समस्या मूलक नाटकों के लिए प्रसिद्ध हैं इनका सूत्रपात ही मिश्रजी ने किया है उन्होंने अपने नाट्य लेखन में भारत के जीवन की, समाज की समस्याओं और उनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति पर गम्भीरता से विचार किया है। इनके नाटकों और एकांकियों में बौद्धिकता समन्वित वैज्ञानिक दृष्टि और भारतीय सांस्कृतिक परम्परा की दो विरोधी विचारधाराओं का अदभुत संगम है। ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, सामाजिक सभी प्रकार के एकांकी नाटकों की रचना इन्होंने की है। सभी एकांकी नाटकों में नारी सुधार से जुड़ी समस्याएँ तथा सामाजिक राजनैतिक क्षेत्रों से जुड़ी समस्याओं को अपना विषय बनाया है उनका कवि व्यक्तित्व भी अनेक एकांकियों में परिलक्षित होता है। शिल्प की दृष्टि से उनके एकांकी सफल हैं भाषा सरल एवं सहज, शैली प्रवाहात्मक और संवाद मनोविश्लेषणात्मक है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. रजनी देव कुमार को नारी बताकर उसके हृदय में कौन-सी भावना उत्पन्न करना चाहती है?

(क) कवि की (ख) साहित्यकार की
(ग) पुरुषत्व की (घ) पति की
(च) सामाजिक उद्धार की।

प्रश्न 2. रजनी किस प्रकार की नारी है?

(क) लज्जालु (ख) सुशील
(ग) पौराणिक विचारों वाली (घ) स्वातन्त्र्य बोधवृत्ति की स्वाभिमानी
(च) अहंकारी।

प्रश्न 3. देवकुमार को लेखक ने किस प्रकार का कवि बताया है?

(क) देशभक्त
(ख) कल्पना लोक में जीने वाला पलायनवादी दृष्टिकोण का
(ग) शृंगारी
(घ) प्रगतिवादी।

प्रश्न 4. शिवनाथ किस प्रकार का व्यक्ति है?

(क) पलायनवादी
(ख) अहंकारी
(ग) स्वाभिमानी
(घ) सच्चा विचारक और दूसरों का चरित्र निर्माता
(च) केवल उपदेशक।

उत्तरमाला

1. (ग) 2. (घ) 3. (ख) 4. (घ)

5 जोंक

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. अश्क जी की एकांकी कला की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—उपेन्द्रनाथ 'अश्क' एकांकी कला के जगत में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उन्होंने विविध प्रकार के एकांकी लिखकर अपनी नाट्यकला और एकांकी लेखन सम्बन्धी प्रतिभा का परिचय दिया है। उनके समस्त एकांकियों के आधार पर उनकी एकांकी कला सम्बन्धी विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. **परिवेश का यथार्थ अंकन**—'अश्क' जी भी सम्पन्न कलाकार हैं। उन्होंने अपने परिवेश का खुली आँखों से निरीक्षण किया और उसकी समस्याओं का अनुभव किया इनके एकांकी मुख्यतः सामाजिक और पारिवारिक पृष्ठभूमि पर ही लिखे गये हैं। उन एकांकियों में इन्होंने समाज की रूढ़ियों दुर्बलताओं और विकृतियों का अपनी व्यंग्य लेखनी से बहुत प्रभावशाली ढंग से अंकन किया है। इससे स्पष्ट होता है कि अश्क ही वर्तमान समय में सशक्त और जागरूक लेखक हैं।

2. **चरित्र विधान का वैशिष्ट्य**—अश्क जी ने अपनी लेखनी द्वारा अपने एकांकियों में जिन पात्रों का चित्रण किया है वह पात्रों की भीड़ के रूप में नहीं है वह आधुनिक भारतीय समाज के जाने पहचाने पात्र हैं यह पात्र अपनी चारित्रिक विशेषताओं से समाज की किसी न किसी ज्वलन्त समस्या को प्रस्तुत करते हैं। इनके पात्र समाज की विषमता, विद्रूपता और अनेक दुर्बलताओं को भी प्रस्तुत करने में सहायक हुए हैं। लक्ष्मी का स्वागत, पापी, तौलिए, चिलमन और जोंक आदि एकांकी इसका प्रमाण हैं। 'जोंक' एकांकी में ही बिना बुलाये मेहमान का जोंक की तरह चिपक जाने का चित्रण बनवारी लाल के माध्यम से कराया है।

3. **कथानक सम्बन्धी विशेषता**—अश्क जी के एकांकियों में सरल और जटिल दोनों ही प्रकार के कथानक हैं। उनके अनेक एकांकियों के कथानकों में जटिलता के दर्शन अधिक होते हैं। प्रारम्भ, मध्य और अन्त किसी न किसी समस्या से विभूषित है। इनका कोई भी एकांकी इस विशेषता के प्रमाण के रूप में लिया जा सकता है।

4. **कथोपकथन सम्बन्धी विशेषता**—अश्क जी का कथोपकथन विधान पात्रों के चरित्रों को उद्घाटित करने में पूर्णतया समर्थ है। इसके माध्यम से कथानक को गति मिलती है। अश्क का संवाद कौशल नैसर्गिकता, सहजता और तीखेपन का गुण लिए हुए है। इनके संवादों में कहीं भी कृत्रिमता की झलक नहीं मिलती। इनके एकांकियों के संवाद सरल, स्वाभाविक और सम्प्रेरणीय है। उनके संवाद पात्रों को पाठक के समक्ष सजीव रूप से प्रस्तुत करने में सहायक हैं। इनके बाद कथोपकथन सरसता की स्थापना व कौतूहल वृद्धि को जगाने में सक्षम हैं।

5. **मनोवैज्ञानिकता**—अश्क जी के एकांकियों की एक महत्वपूर्ण विशेषता उनके एकांकियों में मनोवैज्ञानिकता का होना है। उन्हें पुरुष की अपेक्षा नारी मनोविज्ञान के

चित्रण में अधिक सफलता मिली है उन्होंने अपने एकांकियों में नारी के विभिन्न विरोधी गुणों को चित्रित किया है। उन्होने नारी की विवशता, दीनता, घुटन, कुण्ठा संवेदनशीलता भावुकता, यौनवर्जना, जटिलता, पराधीनता, पतितावस्था, असमर्थता और दुर्बलता आदि का सफलतापूर्वक चित्रण किया है।

6. **व्यंग्यशीलता एवं विनोदप्रियता**—अश्क जी के नाटकों ने हास्य और व्यंग्य के उदाहरण स्थान-स्थान पर मिलते हैं इन्हें अत्यन्त सूक्ष्म, संयत और मार्मिक प्रहसनों के द्वारा ऐसे अचूक निशाने लगवाये हैं जो पाठकों का मनोरंजन तो करते हैं, परन्तु उन्हें उन पर विचार करने को भी विवश करते हैं।

7. **विविध शैलियों का समन्वय**—अश्क जी ने अपने एकांकियों में विविध शैलियों का प्रयोग किया है। शैली विविधता के कारण विषय विविधता इनके एकांकियों में स्वतः ही आ गयी है। इन्होंने प्रतीकों के माध्यम से जीवन के मार्मिक रहस्यों को अभिव्यक्त करने वाली शैली का शुभारम्भ किया है।

8. **सोद्देश्यता**—अश्क जी के एकांकी साहित्य में सोद्देश्यता का गुण विद्यमान है उन्होंने केवल मनोरंजन की दृष्टि से एकांकियों का सृजन नहीं किया है उन्होंने मनोरंजन के साथ-साथ समाज का वास्तविक रूप समझाने का प्रयत्न किया है और उसकी समस्याओं से अवगत कराया है।

9. **रंगमंचीयता**—अश्क जी के सभी एकांकी रंगमंचीयता की दृष्टि से सफल हैं उन्होंने अपने एकांकियों में केवल रंगमंचीय व्यवस्था, पात्रों की वेश-भूषा, पात्रों की चाल-ढाल, हाव-भाव, भाव-भंगिमा, उनके उठने-बैठने की पद्धति आदि का उल्लेख नहीं किया है अपितु उन्होंने रंग संकेतों का प्रयोग किया है।

उपर्युक्त सभी विशेषताओं का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उपेन्द्र जी के एकांकी साहित्य में वह सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं जो उन्हें सफल एकांकीकार की पदवी पर आसीन करती हैं।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. अश्क जी का सामान्य परिचय प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर—अश्क जी का जन्म 14 दिसम्बर 1910 में पंजाब के जालन्धर नगर में में एक मध्यम वर्गीय परिवार में हुआ था वहीं से यह बी.ए. की परीक्षा पास कर अध्यापन कार्य की ओर प्रवृत्त हुए। अपने अध्यापन काल में ही इन्होंने 'भूचाल' का सम्पादन किया। इन्होंने आकाशवाणी तथा फिल्म जगत में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। प्रेमचन्द जी की ही भाँति अश्क जी भी उर्दू से हिन्दी में आये तथा अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा के माध्यम से हिन्दी साहित्य की विभूति बने।

प्रश्न 2. जोंक एकांकी के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर—जोंक एकांकी प्रहसन शैली में लिखा गया एकांकी है। इसमें उस मेहमान की कथा का वर्णन है जो घर में आकर जोंक की तरह चिपक गया है। और जाने का नाम ही नहीं लेता है। मेजवान उसे भगाने के विविध उपाय करता है। परन्तु सभी उपाय निष्फल रहते हैं। ये सभी वर्णन एकांकी में हास्य तत्व को उभारते हैं एकांकी में भाषा परिमार्जित और विषयानुरूप है। अभिनेयता के सभी गुण समीक्ष्य एकांकी में दृष्टव्य हैं।

प्रश्न 3. बनवारी लाल के चरित्र की विशेषताएँ उल्लिखित कीजिए।

उत्तर—बनवारी लाल भोलानाथ के घर मेहमान बनकर आया है उसके चरित्र की विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) प्रबल स्वार्थी
(2) झूठा और चालबाज
(3) मौका परस्त
(4) कार्य कुशल
(5) सेवा भाव से युक्त है खुश मिजाज
(6) कलाकार।

प्रश्न 4. भोलानाथ की चरित्र गत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—भोलानाथ इस एकांकी का प्रमुख पात्र है उसके चरित्र की विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) परिस्थितियों से विवश
(2) रसिक व्यक्ति
(4) समझदार तथा संवेदनशील व्यक्ति
(4) शिष्टाचार सम्पन्न
(5) सनकी स्वभाव
(6) पत्नी भक्त।

प्रश्न 5. प्रस्तुत एकांकी का मूल भाव स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—जोंक एकांकी का मूल-भाव व्यंग्य पर आधारित है और यह हास्य की सृष्टि के साथ एक ज्वलन्त समस्या हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है। इसमें अनचाहे और बिना बुलाये मेहमान जोंक की तरह चिपक जाते हैं। शिष्टाचार के कारण मेजबान उनको कुछ कह नहीं सकता और यह शिष्टाचार कभी-कभी महँगा पड़ता है।

प्रश्न 6. अश्क जी के प्रमुख एकांकी संग्रहों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—अश्क जी के प्रमुख एकांकी संग्रह इस प्रकार हैं।

(1) पक्का खाना
(2) देवताओं की छाया में
(3) चखा है
(4) पर्दा उठाओ
(5) पर्दा गिराओ
(6) अंधी गली और साहब को जुकाम है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. अतिथि के मसाला व घी के माँगने पर कमला और उसके पति खत्म होने की बात क्यों करते हैं?

(क) क्या उनके घर में खत्म हो गया था।
(ख) वह मेहमान जो जोंक की तरह चिपक गया था, भगाना चाहते थे।
(ग) उनके पास पैसे का अभाव था।
(घ) वह खाना बनाना नहीं चाहते थे।

प्रश्न 2. कमला और भोलानाथ मेहमान को भगाना क्यों चाहते थे?

(क) वह अतिथि का आना पसन्द नहीं करते।
(ख) उनके घर में एकता नहीं थी।
(ग) वह मेहमान उन्हें बुरा लगा।
(घ) उस मेहमान का आचरण खराब था।
(च) वह उनके घर में जोंक की तरह चिपक गया था।

प्रश्न 3. प्रस्तुत एकांकी किस प्रकार का है ?

(क) ऐतिहासिक

(ख) सामाजिक

(ग) समस्या मूलक व व्यंग्य मिश्रित

(घ) पौराणिक

(च) राजनैतिक ।

प्रश्न 4. प्रस्तुत एकांकी कौन-सी शैली में लिखा गया है ?

(क) व्यंग्य शैली में

(ख) प्रहसन शैली में

(ग) उदाहरणात्मक शैली में

(घ) उपदेशात्मक शैली में ।

उत्तरमाला

1. (ख) 2. (च) 3. (ग) 4. (ख) ।

6 यह मेरी जन्मभूमि है

"वे विदेशी कपड़ों में, साहबी ठाठ में अकड़े हुए टेसू अपने आपको मानो खुदा समझते हैं, लेकिन जिन्हें अपने मुल्क की गैरत नहीं वे क्या इन्सान हैं ? हमने इस देश के धन्धे छीन लिए, तालीम ने लोगों की धन्धे करने की आदत छुड़ा दी, वे नौकरियों के लिए दर-दर घूमने लगे, अब हम उन्हें जो चाहे जैसे नाच नचाते हैं। मुगलों ने इस देश को सिर्फ फतह किया था, माना नहीं था, हमने इसे फतह नहीं किया बल्कि मार डाला।"

प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण हरिकृष्ण प्रेमी की प्रसिद्ध रचना 'यह मेरी जन्मभूमि है' से लिया गया है। इसमें एक अंग्रेजी अधिकारी की पुत्री अपने पिता के कार्यों का इसलिए विरोध करती है कि उसका जन्म भारत में हुआ है। वह अपनी जन्म-भूमि के लिये बलिदान होने को तत्पर रहती है। वह अपने पिता को अंग्रेज शासन के अत्याचारों से परिचित कराना चाहती है। वह कहती है कि—

व्याख्या—अंग्रेजों ने जो इतिहास लिखवाया है, वह सच्चा इतिहास नहीं है। लोगों के चेहरों से और उनके रहन-सहन देखकर मैं यह कह सकती हूँ कि अँग्रेजी शिक्षा और संस्कृति ने उनमें मौत का पानी भर दिया है। वे विदेशी कपड़ों में अकड़े हुए अपने को खुदा मान बैठे हैं। मिस होम्स अपने पिता से कहती है कि अंग्रेजों ने भारत पर केवल शासन ही नहीं किया वरन् उनका हर तरह से शोषण किया है। अंग्रेजों ने इस देश के उद्योग धन्धे छीन लिये और ऐसी शिक्षा प्रणाली लागू की है कि ये लोग पुरुषार्थी भावना और उद्योग धन्धों को भूल चुके हैं। लोग नौकरियों की तलाश में भटकते हैं तथा पराश्रित होते जा रहे हैं। सरकार जैसा चाहती है वैसा उनसे कराती है। वह कहती है कि अंग्रेजों ने इस देश को बिल्कुल मार दिया है।

विशेष—(1) इसमें अंग्रेजी शिक्षा की कमजोरियों, पराधीनता के काल में किये गये शोषण और अत्याचार का मार्मिक चित्रण हुआ है। इसमें ऐतिहासिक यथार्थ का उद्‌घाटन किया गया है।

(2) भाषा-शैली सरल होते हुए भी अत्यन्त भावात्मक है। सम्प्रेषणीय और प्रवाहमयता द्रष्टव्य है।

"कैसी खतरनाक साजिश है। हिन्दू और मुसलमान अपने ही मुल्क, अपने ही नेशन के खिलाफ बेईमानी क्यों करने चले हैं। कुछ तमगों, कुछ खिताबों और बेईमानी से कमाई हुई जायदादों को कायम रखने के लिये। इन्सानियत का सबसे ऊँचा ख्याल है आजादी, सबसे पहली ख्वाहिश है आजादी, सबसे प्यारी चीज भी है आजादी, उसे चन्द सिक्कों की खातिर ये बेच देना चाहते हैं।

प्रसंग—गुलाम मोहम्मद, राय साहब, सीताराम और कर्नल होम्स कूटनीतिक चाल चलते हैं। वे मुसलमानों को कांग्रेस का साथ न देने के लिए उकसाते हैं। इस चाल को देखकर मिस होम्स आवेश में आकर कहती है कि—

व्याख्या—यह कैसी खतरनाक साजिश है। भारत को आजाद कराने के लिए हिन्दू, मुसलमानों को कांग्रेस का साथ देना चाहिये परन्तु ये लोग अपने देश के खिलाफ गद्दारी कर रहे हैं इनको इससे क्या लाभ होगा ? अंग्रेज सरकार से इन्हें केवल कुछ तमगे या खिताब मिल जायेंगे और इनके द्वारा कमाई गई सम्पत्ति अंग्रेज सरकार छीन लेगी। ये थोड़े से लाभ के लिये देशद्रोह कर रहे हैं। वह स्वगत कथन द्वारा विचार प्रकट करती है—मानवता की सर्वश्रेष्ठ विचारधारा आजादी है, समाज और व्यक्ति के लिए आजादी सबसे प्यारी चीज है। उसे पाने के लिये निर्बल व्यक्ति भी प्राणों की बाजी लगा देता है। परन्तु इतना सब होने के बाद भी कुछ लोग चन्द सिक्कों के खातिर अपनी आजादी बेच देना चाहते हैं। ये लोग निकृष्ट स्वार्थी, धोखेबाज, देशद्रोही और कर्त्तव्यहीन हैं। यही मेरी जन्म-भूमि है, ऐसे बेईमान लोगों के खिलाफ मुझे अपना कर्तव्य निभाना चाहिये।

विशेष—(1) इसमें मिस होम्स के देश प्रेम, त्याग, कर्तव्यनिष्ठा और सजगता का सशक्त चित्रण हुआ है।

यहाँ अंग्रेजों की 'फूट डालो और राज करो' वाली नीति की ओर संकेत किया है।

(2) भाषा सरल, पात्रानुकूल और प्रभावपूर्ण है। बीच बीच में उर्दू और अंग्रेजी शब्दों का सहज प्रयोग हुआ है। शैली आवेशपूर्ण, भावात्मक और ओजस्वी है।

"मेरे वालिद साहब ने जिन लोगों को वहाँ जमा किया है मैं उनके कदमों पर पड़कर दस्त दुआ करूँगा, खुदा के नाम पर अर्ज करूँगा कि वे शैतान न बनें। मुस्लिम कौम पर आजादी की लड़ाई के रोड़े बनने के कलंक को न लगने दें।

प्रसंग—मिस होम्स वली मोहम्मद के साथ एक योजना बनाती है, उसके अनुसार वली मोहम्मद अपने पिता को समझाने जाता है कि वे कांग्रेस का विरोध न करें।

व्याख्या—वली मोहम्मद मिस होम्स और मनोहर से कहता है कि मुझे जो कुछ करना है मैं उसे सोच चुका हूँ। इस समय मैं आपसे आखरी बार मिलने आया हूँ। मेरे पिता ने कुछ लोगों को मस्जिद में इकट्ठा कर रखा है, वे उन्हें भड़का रहे हैं। मैं वहीं जा रहा हूँ। मैं लोगों से प्रार्थना करूँगा कि आप लोग कोई गलत काम न करें। आप मेरे पिता के कहने पर शैतान न बनें। यदि मुसलमानों ने कांग्रेस का विरोध किया और आजादी की लड़ाई में बाधक बने तो मुस्लिम कौम पर बहुत बड़ा कलंक लग जायेगा।

में उन्हें यह सब समझाने की कोशिश करूँगा कि आप लोग मुसलमानों पर कलंक न लगने दें ।

विशेष—(1) एकांकीकार ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के अनुसार कुछ लोगों की देश-द्रोही करतूतों पर प्रकाश डाला है। साथ ही इसमें देशप्रेम और आजादी के लिये बलिदानी भावना अपनाने की प्रेरणा दी है ।

(2) भाषा सरल, पात्रानुकूल और शैली भावात्मक है ।

प्रश्न 1. 'यह मेरी जन्म-भूमि है' एकांकी के आधार पर मिस होम्स का चरित्र-चित्रण कीजिए ।

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी की पात्र योजना के अनुसार मिस होम्स इसकी नायिका हैं यह अंग्रेज अधिकारी कर्नल होम्स की पुत्री है । इसके चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(1) **देशभक्ति की भावना**—मिस होम्स अंग्रेज अधिकारी की पुत्री हैं लेकिन भारत को अपना देश मानती है क्योंकि उसका जन्म भारतवर्ष में हुआ है। वह अंग्रेजों की शोषणकारी नीति को दोषी बताती है । वह भारत को किसी भी तरह आजाद देखना चाहती है ।

वह कहती है—"मैंने हिन्दुस्तान का अन्न खाया है, क्या मेरा उसके लिये कोई फर्ज नहीं ।" वह देशभक्ति की भावना का परिचय देते हुए मनोहर से कहती है कि—"मैं अंग्रेज घर में पैदा हुई हूँ क्या इसलिए मैं हिन्दुस्तानी नहीं हूँ ?·····जो जिस देश में रहता है वह उसी राष्ट्र का अंग है ।" देश के खातिर उसे प्राणों का मोह नहीं वह जुलूस के आगे चलकर मशीनगन के सामने खड़ी हो जाती है ।

(2) **मानवतावादी**—प्रस्तुत एकांकी में मिस होम्स को मानवीय संवेदना से युक्त बताया है। उसकी भारतीयों के प्रति पूरी संवेदना तथा सहानुभूति है। वह बार-बार अपने पिता से न्याय का आचरण करने की प्रार्थना करती है। वह कहती है—"मैं इस राष्ट्र का अंग हूँ। इस के सुख-दुःख मेरे सुख-दुःख हैं, इसकी जिन्दगी और मौत मेरी जिन्दगी और मौत हैं·······। इसके अलावा इन्सानियत का भी तकाजा है कि हम इन्साफ करना सीखें। मिस होम्स के इन कथनों से स्पष्ट होता है कि वह प्रबल मानवतावादी है ।

(3) **स्पष्टवादी**—प्रस्तुत एकांकी के प्रारम्भिक संवादों में मिस होम्स की निर्भीकता और स्पष्टवादिता के दर्शन होते हैं। वह कर्नल होम्स की नीतियों का विरोध करती हुई कहती है—"हमने इस देश के उद्योग-धन्धे छीन लिये, तालीम ने लोगों की धन्धा करने की आदत छुड़ा दी वे नौकरियों के लिये दर-दर भटकते हैं, अब हम उन्हें जी चाहें जैसा नाच नचा सकते हैं ।" वह कहती है हमें मुगलों के इतिहास से कुछ सबक लेना चाहिये। अंग्रेजों को भारत का शोषण बन्द कर देना चाहिये। इस तरह के स्पष्ट कथनों से कर्नल होम्स उसके सम्मुख निरुत्तर हो जाता है। मिस होम्स, मनोहर और वली मौहम्मद के साथ स्पष्टवादिता का परिचय देती है। उसके चरित्र की यह अन्यतम विशेषता है ।

(4) **शोषण की विरोधी**—वह अंग्रेजों को शोषक मानती है और आजादी की लड़ाई में शामिल होकर अपनी जन्मभूमि को शोषण से मुक्त कराना चाहती है। वह अंग्रेजों की शोषणकारी नीति का विरोध करती है अंग्रेज कच्चे माल को अपने देश में पहुँचाते हैं तथा वहाँ से तैयार माल भारत में लाते हैं। इस तरह भारतीयों का दोनों तरफ से शोषण हो रहा है वह अपने पिता से कहती है—"हमें मुगलों के इतिहास से कुछ सीखना चाहिये। वे यहाँ हिन्दुस्तानी बनकर रहे। यहाँ की दौलत उठाकर तुर्कीस्तान नहीं ले गये, उन्होंने यहाँ भारतीयों को अपने बराबर का दर्जा दिया।·······हमें इतना लालच क्यों हो

कि उसके लिए हमें चालीस करोड़ लोगों को दाने-दाने के लिये मोहताज बनाना पड़े ?"

(5) **गाँधीवादी संवेदना से युक्त**—प्रस्तुत एकांकी में मिस होम्स प्रारम्भ से लेकर अन्त तक गाँधीवादी विचारधारा की मानवीय संवेदना से मण्डित दिखायी देती है। वह अपने पिता की नीतियों का विरोध करने के लिए जुलूस में शामिल होती है। देश को गुमामी की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए त्याग का मार्ग अपनाती है। वह गाँधीवादी विचारधारा के अनुसार गरीब भारतीयों के जीवन स्तर को सुधारने का संकल्प लेती है।

(6) **त्याग व बलिदान की मूर्ति**—मिस होम्स अंग्रेजी अधिकारी की पुत्री होने के बावजूद वह उनकी नीतियों का विरोध करती है। त्याग भावना और देशप्रेम के कारण मिस होम्स कालेज में कार से नहीं जाती है। वह भारतीयों के दयनीय जीवन को देखकर स्वयं भी सुखमय जीवन को तिलांजली देना चाहती है। वह प्राणों की परवाह न करते हुए मशीनगन के सामने खड़ी होकर बलिदानी भावना का परिचय देती है। वह कहती है कि—"पहला निशान मुझ पर, दूसरा वली मुहम्मद पर और तीसरा मनोहर पर उसके बाद भी अगर अंग्रेज हकूमत की खून की प्यास न बुझे तो बाकी भीड़ पर गोलियाँ दागिये, आज माँ के तीन लाड़ले बच्चे एक राष्ट्र की नींव डालेंगे। अपनी हड्डियों और खून से माँ का यह मन्दिर बनायेंगे।"

(7) **कर्त्तव्यनिष्ठ**—मिस होम्स देश भक्ति से परिपूर्ण, त्याग और बलिदान की भावना से युक्त युवती हैं। उसे अपनी मातृभूमि पर गर्व है और अपने देश की आजादी के लिए वह अंग्रेज सत्ता का प्रबल बिरोध करती है। अपनी कर्त्तव्यनिष्ठा का परिचय देती हुई कहती है—"इस वक्त आप मेरे फादर नहीं हैं, आप सरकारी मशीन के पुर्जे हैं। मैं इस अभागे देश की पुत्री हूँ। मैं इस देश में पैदा हुई हूँ, इसका नमक मैंने खाया है। इसके लिए मेरा जो फर्ज है, वह मैं अदा कर रही हूँ।"

निष्कर्ष—संक्षेप में "यह मेरी जन्मभूमि है" एकांकी में मिस होम्स का चरित्र उत्कृष्ट देशभक्ति, त्याग, बलिदान, मानवता, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि गुणों से मण्डित है। एकांकीकार ने उसके चरित्र को उज्जवल और प्रेरणादायी चित्रित करने का सफल प्रयास किया है।

लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. मेरी जन्मभूमि एकांकी का मूल भाव क्या है ?

उत्तर—हरिकृष्ण प्रेमीजी के इस नाटक का मूल भाव देश-प्रेम और जन्म-भूमि के प्रति अनुराग है। मनोहर, वली मुहम्मद और मिस होम्स के माध्यम से इसकी स्थापना की गयी है।

प्रश्न 2. प्रस्तुत एकांकी का उद्देश्य क्या है ?

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी का उद्देश्य देश के प्रति प्रेम और जन्म-भूमि के प्रति देशवासियों में त्याग की भावना प्रेरित करना है।

प्रश्न 3. मनोहर के चरित्र की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—मनोहर के चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(1) देश-भक्ति की भावना
(2) बलिदान की भावना
(3) स्वातन्त्र्यप्रिय

(4) मानवीय संवेदना से युक्त

(5) आत्म गौरव से मण्डित

(6) श्रद्धाशील ।

प्रश्न 4. मेरी जन्म-भूमि एकांकी की संक्षिप्त समीक्षा कीजिए ।

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी में जन्म-भूमि के प्रति त्याग और उत्कृष्ट प्रेम की भावना व्यक्त की गयी वर्तमान परिस्थितियों में जब देश के प्रति समर्पित व्यक्तियों की आवश्यकता है प्रेमीजी का यह एकांकी जीवन्त सन्देश का संवाहक है । मिस होम्स जो अंग्रेज अधिकारी की पुत्री है और भारत में जन्मी है जन्म-भूमि के लिए देश पर बलिदान होने के लिए तत्पर है । एकांकी में पूर्णरूप से शैल्पिक विशेषताएँ हैं ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. शबाश भाई मनोहरलाल ! हमें प्राणों पर खेलकर शहर की गलियों को हिन्दू-मुसलमानों के खून से रंगे जाने से बचाना चाहिए प्रस्तुत कथन में मिस होम्स की कौन-सी भावना व्यक्त हुई है ?

(क) देश-प्रेम की

(ख) बलिदान की

(ग) जन्म भूमि व उस पर पले बढ़े हिन्दू-मुस्लिम भाइयों के प्रति प्रेम की

(घ) त्याग की ।

प्रश्न 2. मिस होम्स भारतवर्ष की मिट्टी से क्यों प्यार करती थी ?

क्योंकि—

(क) भारत उन्हें बहुत पसन्द था ।

(ख) यह देश उन्हें सुन्दर प्रतीत होता था ।

(ग) उनके पिता यहाँ अंग्रेज अधिकारी थे ।

(घ) क्योंकि हिन्दुस्तान पर उनके देशवासियों का राज्य था ।

(च) भारतवर्ष उनकी जन्म-भूमि थी ।

7 मैं भी मानव हूँ

"अब कलिंग में कौन बचा है जो शस्त्रों की झंकार सुनेगा। जो वृद्ध, बनिताएँ या बालक शेष हैं. वे न सुन सकते हैं, न बोल सकते हैं वे केवल अपलक दृष्टि से शून्य में ताकते रहते हैं। उनसे बातें करने पर वे कुछ इस प्रकार देखते हैं कि बोलने वाला स्वयं पानी-पानी हो जाता है। लेकिन सम्राट, अब भी वहाँ एक व्यक्ति शेष है, जो देखता भी है और बोलता है।"

प्रसंग—यह अवतरण विष्णु प्रभाकर के ऐतिहासिक एकांकी 'मैं भी मानव हूँ' से लिया गया है। कलिंग के युद्ध में भयंकर नरसंहार हुआ था, और वहाँ का राजकुमार बन्दी बनाया गया था। इसी को ध्यान में रखकर महामात्य राधागुप्त सम्राट से निवेदन करते हैं कि अब कलिंग में सब कुछ शान्त नहीं हो गया है।

व्याख्या—सम्राट अशोक महामात्य से युद्ध के विषय में पूछता है। यह सुनकर महामात्य राधागुप्त निवेदन करता है कि अब कलिंग में ऐसा कौन वीर है, जो शस्त्रों की खनखनाहट सुनेगा। अब पूरा कलिंग वीरों से विहीन हो गया है, किसी में आपसे युद्ध करने की क्षमता नहीं है। वहाँ केवल वृद्ध स्त्री व पुरुष तथा बालक शेष हैं। वे न सुन सकते हैं न बोल सकते हैं। वे वेदना से ग्रस्त होकर एकटक दृष्टि से आकाश की ओर देखते रहते हैं। महामात्य राधागुप्त अन्त में कहता है कि इतना होने पर भी कलिंग में एक व्यक्ति शेष है, जो आपका विरोध करने की क्षमता रखता है। वह अत्यन्त पराक्रमी और बलिदानी है। राधागुप्त के कथन का आरोप है कि जब तक कलिंग का राजकुमार का मुँह बन्द नहीं किया जायेगा तब तक कलिंग में आपके विरुद्ध आक्रोश गूँजता रहेगा।

विशेष—(1) एकांकीकार ने ऐतिहासिक कथानक के अनुसार कलिंग युद्ध में हुए नर संहार का मार्मिक चित्रण किया है।

(2) राजकुमार के शौर्य और पराक्रम का चित्रण संकेत रूप में किया गया है।

(3) भाषा शैली सरल, विषयानुकूल और प्रभावी है।

"हृदय की उदारता और विशालता ! जान पड़ता है कि कलिंग के उस भिक्षुक का प्रभाव तुम पर भी पड़ा है ? आखिर तुम नारी हो और नारी की अवरोधक शक्ति बड़ी दुर्बल होती है। लेकिन याद रखो, अशोक बौद्धों की दुर्बल नीति के बल पर भारत का सम्राट नहीं बना है।"

प्रसंग—कलिंग विजय में अशोक तलवार को शौर्य का प्रतीक मानता है। लेकिन संघमित्रा हृदय की विशालता को शौर्य मानती है।

व्याख्या—संघमित्रा के कथन का उपहास करता हुआ अशोक कहता है कि हृदय की उदारता और विशालता का नाम शौर्य नहीं है, शौर्य तो तलवार के पराक्रम में है। संघमित्रा ! जान पड़ता है कि तुम कलिंग के उस भिक्षु उपगुप्त से प्रभावित हो गई हो और उसके विचारों के प्रभाव से तुम शौर्य की यह परिभाषा कर रही हो। वह कहता है कि स्त्री स्वभाव से कमजोर तथा कोमल होती है और ऐसी बातों से वह जल्दी प्रभावित होती है।

लेकिन मैं बौद्धों की दुर्बल नीति के बल पर भारत का सम्राट नहीं बना हूँ अपितु मैं तलवार के बल पर, उद्दाम शौर्य के बल पर शत्रुओं का संहार करके भारत का अधिपति बना हूँ। मेरे हृदय की विशालता और उदारता से नहीं, अपितु तलवार के प्रहार से मेरा प्रभुत्व बढ़ा है। यही मेरे शौर्य का प्रतीक है।

विशेष—(1) मानव की हिंसक प्रवृति की ओर संकेत किया गया है।

(2) संघमित्रा में नारी की स्वाभाविक कोमलता का चित्रण करके मानवीय भावों का प्राधान्य व्यंजित हुआ है।

(3) भाषा शैली सरल, भावानुकूल, प्रवाहपूर्ण एवं विवेचनात्मक है।

"असम्भव नहीं अशोक ! वह पूरी तरह संभव हो चुका है। लाखों मनुष्यों का रक्त तुम्हारे पतन की घोषणा कर रहा है। लाखों घायलों की कराह में तुम्हारे पतन का स्वर गूँज रहा है। ललनाओं की सूनी माँगों में, माताओं की खाली गोदों में शिशुओं की निरीह शून्य दृष्टि में—सब जगह तुम्हारे पतन की कहानी अंकित है। कलिंग के उजड़े हुए ग्राम, वीरान प्रदेश, ये सब तुम्हारे पतन के साक्षी हैं। तुम जीतकर भी हार गये हो, अशोक। और कलिंग मिटकर भी अमर, हो गया है।

प्रसंग—अशोक कहता है कि कलिंग का पतन हो गया है, परन्तु राजकुमार कहता है कि सम्राट अशोक का ही पतन हुआ है, कलिंग का नहीं। अशोक अपना पतन असम्भव बतलाता है। इसी प्रसंग में राजकुमार कहता है कि—

व्याख्या—सम्राट अशोक ! तुम्हारा पतन असम्भव नहीं अपितु अब पूरी तरह संभव हो चुका है। कलिंग के युद्ध में तुमने भयंकर नरसंहार करके, लाखों मनुष्यों का खून बहाकर हिंसा और बर्बरता का परिचय दिया है। यह सब तुम्हारे पतन की घोषणा कर रहा है। वह कहता है कि जो गाँव और प्रदेश वीरान हुए हैं, वे सब तुम्हारे पतन के साक्षी हैं। कलिंग तुम्हारे आक्रमण से नष्ट हो गया, परन्तु वह मर मिट कर भी अमर हो गया है। लेकिन तुम अपने नृशंस आचरण के कारण मानवता के सामने जीत कर भी हार गये हो।

विशेष—(1) एकांकी कार ने यहाँ मानवतावादी विचारधारा का प्रतिपादन किया है। इसमें अशोक की क्रूरता और राजकुमार की मानवता व्यक्त हुई है।

(2) भाषा पात्रानुकूल है। वाक्य छोटे-छोटे तथा भावों को व्यक्त करने में समर्थ है। शैली भावात्मक व प्रभावपूर्ण है।

प्रश्न—'मैं भी मानव हूँ' एकांकी के आधार पर सम्राट अशोक का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर—ऐतिहासिक कथावस्तु के अनुसार इस एकांकी में पात्रों का चरित्र विकास उचित दिखाया गया है। एकांकी में सम्राट अशोक महान् के जीवन की उस लघु घटना का जिक्र है जिसमें वह कलिंग युद्ध में हुए नरसंहार को देखकर उनका हृदय परिवर्तन हो गया था और तब से मानवता का पक्ष लेकर उन्होंने अपने शासन का विस्तार किया था। उनकी चारित्रिक विशेषतायें इस प्रकार हैं—

(1) **उद्विग्न तथा आत्मचिन्तक**—नाटक के प्रारम्भमें अशोक को उद्विग्न एवं चिन्तित दिखाया गया है। कलिंग—राजकुमार के न झुकने पर वह उद्विग्न है। नरसंहार तथा कलिंग पर विजय पाने के बाद, राजकुमार को बन्दी बना लेने के बाद भी वह उसे झुका नहीं सका है। यहीं से उसे महसूस हुआ कि कितना खून-खराबा हो गया लेकिन वह राजकुमार को नहीं झुका सका। इसलिये वह उद्विग्न है।

(2) **ओजस्वी व्यक्तित्व**—एकांकी में सम्राट अशोक को ओजस्वी एवं भव्य व्यक्तित्व वाला चित्रित किया गया है। अशोक के विशाल वक्षस्थल, आजानुबाहु, प्रशस्त ललाट,

बड़े-बड़े नेत्र और भव्य वेशभूषा से ओजस्वी व्यक्तित्व की सशक्त अभिव्यक्ति होती है। महामात्य तथा कलिंग राजकुमार के साथ संवादों में अशोक की भव्यता दिखायी देती है।

(3) **शक्ति और शौर्य का प्रतीक**—प्रस्तुत एकांकी में अशोक को शक्ति पर विश्वास करने वाला बनाया गया है। वह संघमित्रा से कहता है "अशोक शक्ति में विश्वास रखता है। दया और करुणा को वह साम्राज्य का शत्रु मानता है।" इस प्रकार अशोक शौर्य का उपासक है और उसी के आधार पर वह शत्रुओं का विद्रोह शान्त करता है।

(4) **वीरता का उपासक**—सम्राट अशोक वीर एवं साहसी है। वह बल-पराक्रम का सम्मान करता है। वीरता का उपासक होने से कलिंग-राजकुमार की बातों से बहुत प्रभावित होता है। वह कहता है—"कुमार की प्रशंसा तो मैंने भी की थी। वह है भी अनुपम वीर! उस दिन आखेट में उसका हस्तलाघव देखा था। अब इस महानाश में उसका अदम्य साहस देखा। मैं चाहता तो उसी क्षण उसका सिर काट लेता, लेकिन साहसी मनुष्य के सामने मौत भी काम करना भूल जाती है। उसका साहस अंगद के पैर के समान मेरे सामने डटा रहा।" इस प्रकार वह स्वयं वीर होकर भी वीरता का सम्मान करता है।

(5) **विवेकशील**—अशोक क्रूरकर्मी एवं युद्ध प्रिय होकर भी विवेकशील है। अशोक संघमित्रा और कलिंग के कथनों पर विचार करता है। वह सोचता है कि "क्यों इतने आदमी मरते हैं? क्यों इतना रक्त बहता है? पहले अशोक तलवार को शौर्य प्रतीक मानता था परन्तु बाद में कहता है—"तलवार में शौर्य नहीं होता।" इस प्रकार उद्दीप्त अभिमान वाले सम्राट अशोक में विवेकशीलता भी दिखाई देती है।

(6) **स्नेहशील**—युद्ध क्षेत्र में शत्रुओं को दण्डित करने वाले अशोक के हृदय में स्नेह की तरल धारा भी बहती है। वह अपनी बहिन संघमित्रा से कहता है—"तुम कलिंग के युवराज से प्रेम करती हो, परन्तु युवराज मेरा शत्रु है और तुम मेरी बहिन।" उसके हृदय में मानवीय प्रेम और उदात्त भावों का संचार होता रहता है।

(7) **मानवतावादी**—एकांकी में हृदय परिवर्तन की घटना के द्वारा उसके मानवतावादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति हुई है। वह साधारण मनुष्य की तरह जीवन बिताना चाहता है। जब बौद्ध भिक्षु उपगुप्त आ जाते हैं तब वह काफी बदल जाता है। उसका मानवीय और आदर्श होने लगता है। वह कहता है—"आप कलिंग के राजकुमार की बात कर रहे हैं भन्ते। वह मृत्यु और जीवन से परे है। मैं उन्हें दण्ड देने का साहस नहीं कर सकता वे स्वतंत्र हैं............जो कुछ आप सुन रहे हैं वह ठीक है, परन्तु ऐसा क्यों हो रहा है, यह मैं स्वयं नहीं जानता। रह-रह कर कलिंग कुमार की बातें मुझे याद आ रहीं हैं। रह रह कर रणभूमि का चित्र मेरे नयनों में उभर आता है। चीत्कार का संगीत मेरे कानों में गूँज उठता है। मैं अब गीदड़ बनकर श्मशान में खोपड़ी नहीं ठुकराना चाहता। मैं भी मानव बनकर मानव को जीतना चाहता हूँ। कलिंग कुमार को बताना चाहता हूँ कि "मैं भी मानव हूँ"।

निष्कर्ष—समग्र विवेचन के पश्चात कहा जा सकता है कि अशोक के चरित्र का स्वाभाविक विकास हुआ है। वह क्रूरता से सदाशयता, कठोरता से कोमलता, अमानवीयता से मानवता और सम्राटत्व से मानवत्व की ओर अग्रसर हुआ है। उसने यह प्रमाणित कर दिया है कि वह क्रूर शासक मात्र न होकर मानव ही है।

लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. मैं मानव हूँ नाटक की मौलिकता स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—मैं मानव हूँ एकांकी की कथावस्तु न केवल ऐतिहासिक है अपितु मौलिकता का गुण भी लिए हुए है। यह कथावस्तु एकांकीकार की कल्पनाशीलता और मानवतावादी

भावनाओं के कारण आकर्षक बन गयी है। अशोक का हृदय परिवर्तन विष्णु प्रभाकर के आदर्शवादी चिन्तन से प्रेरित है और उसमें मानवीय जीवन दृष्टि विकसित होते हुए दिखाई है। यह मौलिकता कथावस्तु में तो विद्यमान है ही संवादों, नाटक की प्रस्तुति शैली शिल्प में भी दिखाई देती है।

प्रश्न 2. मैं मानव हूँ एकांकी यथार्थ की भूमि पर आदर्श की प्रस्तुति है समीक्षा कीजिए।

उत्तर—विष्णु प्रभाकर ने जितने भी एकांकी लिखे हैं उन सभी में वे यथार्थ की जमीन पर आदर्श को अंकुरित करते हुए दिखाई देते हैं। प्रस्तुत एकांकी भी उसी श्रृंखला की एक कड़ी है। यह एकांकी प्रभाकर जी की प्रतिभा और प्रस्तुति का शीर्षस्थ रूप है। "मैं मानव हूँ अशोक के हृदय परिवर्तन की घटना पर आधारित एकांकी है। इसमें यथार्थ-वादी भूमि पर आदर्शवादी मूल्यों की स्थापना की गई है।"

प्रश्न 3. 'मैं मानव हूँ' एकांकी की विशेषताएँ संक्षेप में बतलाइए।

उत्तर—मैं मानव हूँ एकांकी की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(1) श्रेष्ठ कथानक (इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय)
(2) ऐतिहासिक आधार पर आधारित
(3) मौलिकता
(4) सम्भावनाओं से युक्त कथानक
(5) आदर्श चरित्रों से युक्त पात्र
(6) मानवतावादी विचारधारा
(7) प्रभावशाली कथोपकथन
(8) गतिशील कथानक
(9) पात्रों के चरित्रोद्घाटन की क्षमता युक्त संवाद
(10) परिष्कृत भाषा शैली
(11) मानवता के कल्याण हेतु शान्ति प्रेम और करुणा का सन्देश
(12) मानवता की दानवता पर विजय दिखाना एकांकी का मूल प्रतिपाद्य है
(13) संवाद छोटे-छोटे व स्वाभाविक
(14) भाषा देशकाल के अनुसार संस्कृतनिष्ठ।

प्रश्न 4. संघमित्रा का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर—संघमित्रा के चरित्र की निम्न विशेषताएँ हैं—

(1) पुरुषोचित वीरत्वमयी
(2) निश्छल प्रेमिका
(3) विवेक की प्रतिमूर्ति
(4) मानवतावादी
(5) सरल, स्नेही तथा समादर्शशील
(6) स्पष्ट वक्ता एवं वाकपटु।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. प्रस्तुत एकांकी किस कोटि के एकांकियों में आता है?

(क) पौराणिक
(ख) ऐतिहासिक

(ग) काल्पनिक

(घ) सामाजिक।

प्रश्न 2. कलिंग कुमार का निर्णय करते समय आपके शौर्य की भी परीक्षा होने वाली है। संघमित्रा के इस कथन से कुमार की किस भावना का पता चलता है ?

(क) शत्रुता का

(ख) विरोध

(ग) कुमार के शौर्य के प्रति श्रद्धा और उसके प्रति अनुराग की

(घ) भ्रातृत्व

(च) प्रेम की।

प्रश्न 3. कुमार अशोक को चण्डा शोक क्यों कहता है ?

(क) शत्रुता के कारण

(ख) उसके शौर्य की प्रशंसा में

(ग) विरोधी होने के कारण

(घ) कलिंग युद्ध में नरसंहार करने कारण

(च) ईर्ष्या के कारण।

प्रश्न 4. सम्राट अशोक बन्दी कुमार का सिर कटवा अपनी कलिंग विजय पूरी करना क्यों नहीं चाहता ?

(क) उसकी वीरता के भय से

(ख) कुमार से हार मान लेता है

(ग) अपने हृदय परिवर्तन के कारण

(घ) वह उससे युद्ध करना नहीं चाहता

(च) संघमित्रा के कारण।

उत्तरमाला

1. (ख) 2. (ग) 3. (घ) 4. (ग)।

8 बसन्त ऋतु का नाटक

1. इसलिए हमारे समाज में यह ब्याह-शादी मनुष्य से मनुष्य के रिश्ते से नहीं होती हमारे यहाँ शादियाँ होती हैं नौकरी के रिश्ते से, पद और भौतिक ख्यालों से। ब्याह हमारे यहाँ एक महज कर्मकाण्ड है, एक परम्परा का पालन, यह जीवन अनुभूति जीवन संगीत नहीं।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश डा० लक्ष्मीनरायण लाल के एकांकी 'बसन्त ऋतु का नाटक, से लिया गया है।

प्रस्तुत एकांकी में वर्तमान मध्यम वर्गीय परिवारों की विडम्बनापूर्ण स्थितियों, आडम्बरपूर्ण जीवन एवं खोखले व्यवहार पर तीखा प्रहार किया गया है। साथ ही इसमें विवाह और दहेज प्रथा की समस्याओं को उभारा गया है। प्रस्तुत कथन इस एकांकी के पात्र धर्मेन्द्र का है। धर्मेन्द्र और लड़की के पिता में आपस में बात चल रही है। धर्मेन्द्र का कथन है—

व्याख्या—वह कहता है कि हमारे समाज में शादी ब्याह के रिश्ते पद और आय से होते हैं, युवक का युवती से नहीं, अभिप्राय यह है कि हमारे समाज में युवक युवतियों के विवाह मानवीय दृष्टिकोण से नहीं होते। शादी-विवाह के मामले में मनुष्य का रिश्ता अब अपना कोई महत्व नहीं रखता। अब तो शादियाँ नौकरी व भौतिक समृद्धि के आधार पर होती हैं। कोई व्यक्ति कितना ही गुणवान् क्यों न हो, पर यदि उसकी भौतिक स्थिति अच्छी न हो या वह किसी पद पर न हो तो उसके विवाह में निश्चय ही बाधाएँ उत्पन्न हो जायेंगी। जिसके पास मकान हो अच्छे भौतिक साधन उपलब्ध हों तो उसका विवाह सरलता से होगा। फिर जाति-पाँति की बात भी गौण हो जाती है। वस्तुतः विवाह हमारे समाज में केवल एक परम्परा का पालन मात्र है, एक महज कर्मकाण्ड है। छलावा है, हमें पता नहीं कैसे हम यह स्वीकार कर लेते हैं। वस्तुतः युवक-युवती के मध्य विवाह को लेकर जिन मधुर सम्बन्धों की पहले से ही आवश्यकता होती है, उसका बिल्कुल ध्यान नहीं रखा जाता। हमारे समाज में विवाह सम्बन्ध जीवन की अनुभूति और जीवन के संगीत के रूप में नहीं चलता। उसमें सहजता और आत्मीयता नहीं होती, केवल उनकी कल्पनाओं का निर्वाह मात्र होता है।

विशेष--आधुनिक समाज की दहेज प्रथा जैसी विषमता पर तीखा व्यंग्य आधुनिक युग के मानवीय सम्बन्धों के बीच दिखावा व बनावटीपन के ऊपर तीखा व्यंग्य है।

2. ठीक ही किया आपने पर बहुत विलम्ब से। काश, आपने यह निर्णय उस समय कर लिया होता जबकि मैंने स्वयं वासन्ती के विवाह के लिए आपको अपना विनम्र निवेदन किया था पर तब मैं एक साधारण व्यक्ति था—एक मनुष्य मात्र। तब आपकी निगाह में मेरी कोई इज्जत नहीं थी। मैं अपदार्थ था और आज मैं संयोग से डिप्टी कलेक्टर हो गया तो सहसा एकदम से मूल्यवान हो गया गोआ मैं आदमी नहीं शेयर मार्केट का भाव हूँ।

सन्दर्भ सहित प्रसंग—सन्दर्भ पूर्ववत्।

यह नाटक के नायक धर्मेन्द्र का कथन है वासन्ती के पिता ने जब धर्मेन्द्र छोटी नौकरी पर था, वासन्ती से विवाह का प्रस्ताव ठुकरा दिया था परन्तु जब वह डिप्टी कलेक्टर बन गया तब वह धर्मेन्द्र से वासन्ती का विवाह करने को सहर्ष तैयार हो गये। इसी बात पर धर्मेन्द्र लड़की के पिता से कहता है।

व्याख्या—धर्मेन्द्र कहता है कि आपने ठीक ही किया लेकिन यह निर्णय आपको पहले ही कर लेना चाहिए था, अब बहुत देर हो चुकी है। वह कहता है कि एक दिन जब मैंने विनम्र शब्दों में आपसे वासन्ती से विवाह करने की प्रार्थना की थी तब आपने मेरे अनुरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया था, क्योंकि उस समय आपकी दृष्टि में मेरी कोई इज्जत नहीं थी, मैं मनुष्य मात्र था, तब में स्वीकार न किया जाने वाला अपदार्थ अर्थात् मैं आपके लिए महत्वहीन था। लेकिन आज जबकि डिप्टी कलेक्टर बन गया हूँ तो आपका दृष्टिकोण मेरे प्रति सहसा बिलकुल बदल गया है। अब मैं आपके लिए मूल्यवान हो गया हूँ। आपने मुझे शेयर मार्केट का शेयर समझ लिया है, जिसका भाव रोज चढ़ता है और रोज उतरता है। आपकी मूल्यांकन दृष्टि धन्य है, आपकी दृष्टि में मानवता और मानवीय भावनाओं

का कोई मूल्य नहीं है। आपके समाज में केवल औपचारिकता और भौतिकवादिता की प्रधानता है। अतः अच्छा होता आप यह निर्णय पहले ही ले लेते, लेकिन आपने ऐसा नहीं किया।

विशेष—एकांकीकार की वाणी व्यंग्यात्मक है। आज के युग में भौतिकवादिता की प्रधानता है मानवता का कोई मूल्य नहीं है। सहज स्वाभाविक भाषा में व्यंग्य का अद्भुत समावेश है।

प्रश्न 1. 'वसन्त ऋतु का नाटक' एकांकी में निहित सामाजिक मनोवैज्ञानिक व्यंग्य को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—लक्ष्मीनारायण लाल का एकांकी और नाटकों के क्षेत्र में बहुत बड़ा योगदान है। इनके एकांकियों में सामाजिक समस्याओं, दहेज प्रथा, श्रमिकों की समस्या जीवन की सामान्य सुविधाओं के असामान्य वितरण और मूल्यहीनता के अनेक चित्र दिखाई देते हैं। प्रस्तुत एकांकी भी सामाजिक चिन्तन पर आधारित एकांकी है।

प्रस्तुत एकांकी में लेखक ने वर्तमान मध्यम वर्गीय परिवारों की विडम्बनापूर्ण स्थितियों का चित्रण करते हुए बुद्धिजीवी और तथाकथित शिक्षित वर्ग के आडम्बरपूर्ण जीवन और खोखले व्यवहार पर व्यंग्य किया है प्रस्तुत एकांकी में सामाजिक सम्बन्धों की टकराहट का मार्मिक वर्णन किया है। एकांकीकार ने सामाजिक और मनोवैज्ञानिक व्यंग्य किया है। उसे निम्न बन्दुओं के द्वारा स्पष्ट किया गया है।

1. **निजी सम्बन्धों के अन्तर्निहित स्वार्थ पर व्यंग्य**—प्रस्तुत एकांकी में युवक और युवती के पिता तथा युवक के पिता आदि व्यवहार के द्वारा एकांकीकार ने ये स्पष्ट करने की चेष्टा की है। वर्तमान समय में निजी सम्बन्धों निहित स्वार्थपरता के कारण निजी सम्बन्ध समाप्त होते जा रहे हैं। पुत्र अपने पिता की विचारधारा के विरुद्ध आचरण करता है। इसी प्रकार बासन्ती के पिता धर्मेन्द्र को निम्न वर्गीय मानकर वसन्ती से मिलने नहीं देते हैं। उन्हें अपने सम्मान की चिन्ता अधिक वासन्ती की हार्दिक भावना की जरा भी परवाह नहीं है। इस तरह इस एकांकी में पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के आचरण और विचारधारा में पर्याप्त अन्तर बतलाया गया है। उन्होंने वर्तमान समाज में बढ़ रहे निजी सम्बन्धों की टकराहट पर तीखा व्यंग्य किया है।

2. **धनिक वर्ग की मानसिकता पर व्यंग्य**—प्रस्तुत एकांकी के कथानक के अनुसार शुक्लजी के पुत्र धर्मेन्द्र के विवाह सम्बन्ध की बात जज साहब राजकुमार बाजपेयी की पुत्री बासन्ती के साथ चलती है वाजपेयी जी बुद्धिजीवी शिक्षित वर्ग के प्रतिनिधि हैं। अच्छी नौकरी होने से वे धन सम्पन्न भी हैं। वे चाहते थे, कि उनकी बेटी का रिश्ता किसी अच्छे पद पर काम करने वाले युवक से हो। स्वयं को सम्पन्न मानने से उनकी बेटी का सम्बन्ध तय नहीं हो पाता। वे धर्मेन्द्र से अपनी पुत्री का विवाह करने से मना कर देते हैं, क्योंकि रेलवे में छोटी नौकरी पर लगा हुआ था, परन्तु संयोग से डिप्टी कलेक्टर बन जाता है। तो वाजपेयी जी उससे अपनी बेटी का विवाह करने के लिए ही न केवल तैयार ही होते हैं अपितु उसकी खुशामद करने में भी कोई कमी नहीं रखते। वे उसे मुँह माँगा दहेज भी देना स्वीकार कर लेते हैं। अतः इस प्रकार एकांकीकार ने धनिक वर्ग की मानसिकता पर व्यंग्य किया है।

शोषण प्रवृति पर व्यंग्य—वर्तमान समाज दहेज प्रथा और कन्या के विवाह के कारण शोषण प्रवृत्ति से ग्रस्त दिखाई देता है। प्रायः यही देखने में आता है कि जो युवक पढ़-लिख कर ऊँची नौकरी प्राप्त कर लेता है। वह मुँह माँगा दहेज पाने का अधिकारी हो जाता है। प्रस्तुत एकांकी में इसी तरह के घटनाक्रम का चित्रण किया गया है। जब

धर्मेन्द्र के पिता की वासन्ती के पिता से विवाह की बात होती है। तब धर्मेन्द्र का पिता स्पष्ट रूप में कहता है "जो कुछ देना हो वह इसी समय कह दो।" बासन्ती का पिता उनकी हर माँग स्वीकार कर लेता है।

हमारे समाज में दहेज प्रथा को लेकर कन्या तथा उसके माता पिता का जितना शोषण होता है उनकी मानवीय भावनाओं का शोषण होता है। एकांकीकार ने उस पर भी व्यग्य किया है।

सामाजिक जीवन के ढाँचे पर—एकांकीकार ने आधुनिक समाज के ढाँचे पर व्यंग्य किया है। समाज में विवाह सम्बन्धों में आयी अराजकता, दहेज प्रथा आदि पर व्यंग्य किया गया है। हमारे समाज में प्रत्येक कानून की अनुपालना, अवहेलना हो रही है। सब ओर मनमाना आचरण। एकांकीकार ने समाज की इसी स्थिति पर व्यंग्य किया है।

निष्कर्षत: लक्ष्मीनारायण लाल का प्रस्तुत एकांकी सामाजिक जीवन की समस्याओं पर आधारित है। इस एकांकी में उन्होंने विभिन्न पात्रों और घटनाक्रमों के माध्यम से हमारे सामाजिक मनोवैज्ञानिक जीवन की तमाम परिस्थितियों पर तीखा व्यंग्य है।

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. 'बसन्त ऋतु का नाटक' एकांकी के नायक धर्मेन्द्र के चरित्र की विवेचना कीजिए।

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी का नायक धर्मेन्द्र वर्तमान युवा पीढ़ी का प्रतिनिधि पात्र है। एकांकीकार ने उसका चरित्र प्रस्तुत एकांकी में पूर्ण स्वाभाविकता के साथ उभारा है। उसके चरित्र में निम्नांकित विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं—

(1) स्पष्टवादी
(2) परम्परा का विरोधी
(3) नयी पीढ़ी का प्रतिनिधि
(4) पवित्र भावनाओं का समर्थक
(5) स्वाभिमानी
(6) खुश मिजाज
(7) यथार्थवादी।

प्रश्न 2. 'बसन्त ऋतु का नाटक' एकांकी का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—प्रस्तुत एकांकी में मध्यम वर्गीय बुद्धिजीवी और तथाकथित शिक्षित वर्ग के आडम्बर से पूर्ण जीवन और खोखले व्यवहार का चित्रण किया है तथा उस पर तीखा व्यंग्य प्रहार किया है। पीढ़ियों के अन्तराल से वर्तमान समाज में सम्बन्धों की टकराहट को उभारते हुए डा० लाल ने दहेज प्रथा कन्या की वेचारणी, माता-पिता के परम्पराबद्ध संकीर्ण सोच को एकांकी में विचारोत्तेजक रूप में चित्रित किया है।

लेखक का उद्देश्य यही बतलाता है कि हमारे समाज में दहेज प्रथा एक कलंक है। उनका उद्देश्य सामाजिक जीवन की सभी बुराइयों को दूर करने की प्रेरणा देना रहा है। यद्यपि यह एकांकी नवीन रूप में उपस्थित किया गया है तथापि उसमें मानवीय संवेदना का स्वर मुखर है। इसमें वर्तमान समाज को नवीन चिन्तन से युक्त होने का सन्देश दिया है।

सन्देश्ता
नाओं

प्रश्न 3. विकासक्रम की दृष्टि से हिन्दी एकांकी के इतिहास को कितने भागों में बांटा गया है ?

उत्तर—विकासक्रम की दृष्टि से हिन्दी एकांकी साहित्य को **प्रमुख पाँच** कालों में विभाजित किया गया है—

(1) भारतेन्दु युग
(2) द्विवेदी युग
(3) प्रसाद युग
(4) प्रसादोत्तर युग
(5) आधुनिक या स्वातन्त्र्योत्तर युग ।

प्रश्न 4. डा० नरेन्द्र के अनुसार किए गए एकांकी के भेदों का उल्लेख कीजिए ।

उत्तर—डा० नरेन्द्र ने एकांकी के भेद इस प्रकार बतलाए हैं—

(1) सुनिश्चित तकनीक वाला एकांकी
(2) संभाषण
(3) मोनोड्रामा
(4) फेंटेंसी
(5) फीचर
(6) झलकी
(7) रेडियो रूपक या रेडियो एकांकी
(8) प्रहसन ।

प्रश्न 5. समकालीन एकांकी की कुछ प्रवृत्ति विशेषताएँ बताइए ।

उत्तर—(1) इस युग में हिन्दी एकांकी दैनिक जीवन के निकट आया है । वर्तमान युग में जीवन की विविध समस्याएँ, टूटते सम्बन्ध, सामाजिक विशेषताएँ आर्थिक विषमताएँ एवं नर नारी सम्बन्धों के परिवर्तन आदि को इस काल के एकांकियों में जीवन्त ढंग से प्रस्तुत किया गया है ।

(2) सूक्ष्म मनोविश्लेषणात्मक यथार्थवाद का आग्रह इस काल के एकांकी में अधिक है । दमित वासनाओं की भी उन्मुक्त अभिव्यक्ति इस काल के एकांकीकारों ने की है ।

(3) सिनेमा और पाश्चात्य नाट्य दृष्टि का प्रभूत प्रभाव समकालीन एकांकियों में रंगमंचीय विधान पर दृष्टिगत होता है ।

(4) भाषा संवाद एवं पात्र योजना अत्यन्त स्वाभाविक हुयी है । फलस्वरूप एकांकी सुपाठ्य रंजक और रस की दृष्टि से विशेष समर्थ बने हैं ।

(5) फैन्टेसी, गीतिनाट्य, ध्वनि नाट्य एकांकी समकालीन एकांकी की नवीनतम शैलियाँ हैं ।

है।

सीनियर हायर सैकण्डरी,
विशेष हिन्दी

नमूने का प्रश्न पत्र

समय : 3 घंटे   पूर्णांक : 100

भाग 'अ'

समय : ½ घण्टा   पूर्णांक : 30

1. "खिनहिं पीत, खिन होइ मुख सेता ।
खिनहिं चेत, खिन होइ अचेता ॥"
जायसी की उपर्युक्त पंक्तियों में कौनसा मनोभाव व्यक्त हो रहा है ?-
(क) व्याकुलता   (ख) अधीरता
(ग) व्यग्रता   (घ) जड़ता
( ) 1

2. "राम लखन सिय पद सिरु नाई ।
फिरेउ बनिक जिमिक मूर गंवाई ॥"
'केवट-प्रसंग' में से उद्धृत उपर्युक्त पंक्तियों में सुमन्त्र के मन का कौन-सा भाव व्यक्त हुआ है ?
(क) निराशा   (ख) दीनता
(ग) हताशा   (घ) विवशता   ( ) 1

3. "हरिया जाने रुखड़ा, जो पानी का नेह ।"
उपर्युक्त पंक्ति में 'हरिया रुखड़ा' किस मानवीय गुण का द्योतक है ?
(क) परदुःखकातरता   (ख) संवेदनशीलता
(ग) गुणग्राहकता   (घ) सज्जनता   ( ) 1

4. "पिव मेरा मैं पीव की रे,
तू पिव कहे सकूण ।"
उपर्युक्त पंक्ति में विरहिणी का कौनसा मनोभाव व्यक्त हुआ है ?
(क) क्षोभ   (ख) आक्रोश
(ग) व्यथा   (घ) खीज   ( ) 1

5. "अब मैं निरपेक्ष नहीं हूँ ।" प्रकाश का यह कथन उसके किस मनोभाव का सूचक है ?
(क) पश्चाताप   (ख) प्रायश्चित
(ग) ग्लानि   (घ) दुःख   ( ) 1

6. "मेरे महाराणा का नमक मेरे रक्त से भी महान् है।" पन्ना के इस कथन में कौन-सी भावना निहित है ?

(क) स्वाभिमान (ख) स्वामिभक्ति

(ग) गर्व (घ) शौर्य ( ) 1

7. "दूलह श्री रघुनाथ बने, दुलही सिय सुन्दर मन्दिर माहीं-गावति गीत सबै मिलि सुन्दर, वेद, जुवा जुरि विप्र पढ़ाहीं।" उपर्युक्त पंक्तियों में छन्द है:—

(क) हरिगीतिका (ख) कुण्डलिया

(ग) सवैया (घ) चौपाई ( ) 1

8. जहां समानता के कारण उपमेय को उपमान समझ लिया जाए, वहां कौन-सा अलंकार होगा ?

(क) सन्देह (ख) भ्रान्तिमान्

ग) उपमा (घ) रूपक ( ) 1

(निम्नलिखित प्रश्नों में से प्रत्येक का उत्तर लगभग 20 शब्दों में दीजिये। प्रत्येक प्रश्न के लिए 2 अंक निर्धारित हैं।)

9. " बाँबी कूटे बावरे, साँप न मारा जाय।
मूरख! बाँबी ना डसै, सर्प सबन को खाय॥ "
उपर्युक्त दोहे में 'बाँबी' और 'सर्प' और शब्दों के प्रतीकार्थ स्पष्ट कीजिए।

....

....

10. " आप न काहू काम के, डार पात फल मूल।
औरन को रोकत फिरैं, रहिमन पेड बबूल॥ "
उपर्युक्त दोहे में रहीम ने बबूल की उपमा देकर मानव की किस वृत्ति की ओर इंगित किया है ?

....

....

11. " पढ़ाई के नाम पर कमर टेढ़ी किए दे रहे हैं। यह पढ़ाई का बस्ता है या कुली का बोझ ? " मां के इस कथन द्वारा वर्तमान शिक्षा पद्धति के किस दोष की ओर संकेत किया गया है ?

....

....

12. प्रकाश की दृष्टि में 'फास्ट' और 'व्रत' में क्या अन्तर है ?

13. " तुम सबमें कोई भीतरी लगाव नहीं है " सब बाहर-बाहर... ....हरदम बाहर........माँ का यह कथन किस जीवन-पद्धति की ओर इंगित कर रहा है ?

14. पन्ना एवं बनवीर द्वारा किए गए दीपदान का अन्तर स्पष्ट कीजिए।

15. " कविता का सम्बन्ध ब्रह्म से नहीं, मनुष्य के जीवन से है। "
इस पंक्ति में निहित भाव को स्पष्ट कीजिए।

16. "तुम जीत कर भी हार गए हो, अशोक" कलिंग के राजकुमार द्वारा प्रस्तुत इस कथन के मर्म को स्पष्ट कीजिए।

17. आदिकाल के दो प्रमुख कवियों और उनकी एक-एक कृति का नामोल्लेख कीजिए।

18. सूरदास के काव्य की दो प्रमुख विशेषताएं बताइए।

19. ' तुलसीदास के काव्य की प्रमुख विशेषता है उनकी समन्वय भावना '। इस कथन की पुष्टि में किन्हीं दो समन्वय क्षेत्रों का उल्लेख कीजिए।

भाग 'ब'

समय : $2\frac{1}{2}$ घण्टे

पूर्णांक : 70

1. सप्रसंग व्याख्या कीजिए:—

झीनी झीनी बीनी चदरिया ।
काहे कै ताना काहे कै भरनी कौन तार से बीनी चदरिया ।
इंगला पिंगला ताना भरनी सुषमन तार से बीनी चदरिया ।
आठ कमल दल चरखा डोलै पांच तत्त गुन तीन चदरिया ।
सांई को सियत मास दस लागे ठोक ठोक कै बीनी चदरिया ।
सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी, ओढि कै मैली कीनी चदरिया ।
दास कबीर जतन से ओढ़ी ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया ।

अथवा

जब भा चेत उठा बैरागा । बाउर जानौं सोइ उठि जागा ।।
आवत जग बालक जस रोआ । उठा रोइ 'हा ज्ञान सो खोआ' ।।
हौं तो अहा अमरपुर जहां । इहां मरनपुर आए ऊं कहां ।।
केह उपकार मरन कर कीन्हा । सकति हंकारि जीउ हरि लीन्हा ।।
सोवत रहा जहां सुख साखा । कस न तहां सोवत विधि राखा ।।
अब जिउ उहां, इहां तन सूना । कब लगि रहै परान विहूना ।।
जो जिउ घटहि काल के हाथा । घट न नीक पै जीउ निसाथा ।।

8

2. सप्रसंग व्याख्या कीजिए:—

बाहर केवल चीजें·······सामान····· पदार्थ हैं········ । बाहर कोई सुख नहीं है । सुख का स्रोत अगर बाहर है दूसरों का दिया हुआ-बताया हुआ-वह सुख हो ही नहीं सकता । सुख तो अपना ही है । अपना कमाया हुआ । अपने से आप पाया हुआ-अपने से, अपने घर-परिवार से, अपनी जड़ से-अपने स्रोत से ।

अथवा

मनुष्य अपने अहंकार में जमकर पत्थर न हो जाए, इससे बचने के लिए अपनी कठोरता को पिघलाता रहता है-भाव से, आंसुओं से, संगीत से और सेवा से । परमपूज्य के चरणों में नतसिर होकर

अपने अहंकार का शमन करना यही ठाकुरजी की पूजा है। हम भाव बने रहें, पदार्थ न हो जाएँ, यही मेरी मां का भजन है।

8

3. सप्रसंग व्याख्या कीजिए:—

मेरा जिन्दगी का एटीट्यूड बिल्कुल मुखालिफ है। तुम अपने सोशलिज्म-प्रोशलिज्म के जोश में शायद यह समझ बैठे हो कि जिन्दगी का गहरे-से-गहरा मतलब तुम्हारे लिए साफ हो गया, जैसे कोई बड़ा सरकस-घोड़ा तुम्हारे काबू में आ गया, पर जिन्दगी अगर इस तरह लटकों और फारमूलों में बांधी जा सकती तो आज तक कब की खत्म हो जाती।

अथवा

एक तरह का पागलपन, मन की रंगीनी, झूठा प्रेम, झूठी पीड़ा। मन को पंख लग जाते हैं। ऐसे लोग आकाश में उड़ते हैं, धरती की धूल से उनकी भेंट नहीं होती। इसी धूल से उनका शरीर बना है, यह सत्य भी वे भूल जाते हैं। वे अपनी पत्नियों से आंख चुराते हैं, उनके निकट बैठने का साहस उन्हें नहीं होता, और कविता में अनन्त प्रेम का राग अलापते हैं।

8

4 "ढोला मारु रा दूहा' काव्य में नारी हृदय की अत्यन्त मार्मिक व्यञ्जना मिलती है।" स्पष्ट कीजिए।

(उत्तर सीमा 60 शब्द) 3

5. पठित काव्यांशों के आधार पर तुलसीदास के काव्य-सौन्दर्य को उद्घाटित कीजिए। (उत्तर सीमा 100 शब्द)

5

6. माँ एवं नीलम के चरित्र की तुलना निम्नलिखित दो बिन्दुओं के आधार पर कीजिए-

(क) स्वभाव (ख) जीवन के प्रति दृष्टिकोण

(उत्तर सीमा 80 शब्द)

4

7. माँ यदि अन्त तक जीवित रहती तो कथा में क्या मोड़ आता? स्पष्ट कीजिए।

(उत्तर सीमा 100 शब्द)

5

8. जोंक की विशेषताएँ बताते हुए उन्हें बनवारी के चरित्र पर घटित कीजिए ।

(उत्तर सीमा 80 शब्द)

4

9. मिस होम्स ने अंग्रेज कौम की जिन विशेषताओं का उल्लेख किया है, यदि अंग्रेज शासक उनका पालन करते तो हमारे देश की स्थिति में क्या अन्तर आता ?

(उत्तर सीमा 100 शब्द)

5

10. 'कुण्डलिया' और 'छप्पय' छन्दों का अन्तर स्पष्ट कीजिए ।

3

11. दृष्टान्त अलंकार का लक्षण सोदाहरण स्पष्ट कीजिए ।

3

12. सन्त काव्य की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ।

(उत्तर सीमा 150 शब्द)

7

13. किन्हीं दो पर टिप्पणियां लिखिए ।

(i) आदिकाल का नामकरण
(ii) सूफी काव्य की विशेषताएँ
(iii) सगुण भक्ति काव्य की प्रवृत्तियाँ

(उत्तर सीमा 150 शब्द)

7

उत्तर तालिका एवं अंक योजना

भाग 'अ'

प्रश्न सं.	1	2	3	4	5	6	7	8
उत्तर	क	ग	ख	घ	क	ख	ग	ख
अंक	1	1	1	1	1	1	1	1

क्र. सं.	संभावित उत्तर		अंक
9.	बाँबी देह, एवं सर्प मनो-विकारों के प्रतीक हैं।	1 ज्ञान 1 अभि.	2
10.	मानव की उस नकारात्मक वृत्ति की ओर संकेत है जो दूसरों की उन्नति के मार्ग में अवरोधक बनती हैं।	1 अर्थग्र. 1 अभि.	2
11.	कोरा किताबी ज्ञान।	1 ज्ञान. 1 अभि.	2
12.	'फास्ट' माने 'डायटिंग' (केवल भूखा रहना) एवं व्रत का अर्थ भूख, प्यास, लालच, भय आदि वृत्तियों से ऊपर उठना।	1 ज्ञान 1 अभि.	2
13.	संवेदनशीलता एवं आत्मीय भावों से रहित, बाह्य आडम्बर-युक्त यान्त्रिक जीवन पद्धति।	1 ज्ञान 1 अभि.	2
14.	पन्ना का दीपदान-स्वामिभक्ति के लिए अपने पुत्र के प्राणों की आहुति बनवीर का दीपदान-अपने मार्ग के कंटक उदयसिंह के धोखे में चँदन का वध	1 ज्ञान 1 अभि.	2
15.	कविता वायवी न होकर जीवन के सत्य को उद्घाटित करने वाली हो जिसमें मानव प्रेम और पुरुषार्थ को महत्व दिया गया हो	1 ज्ञान 1 अभि.	2
16.	मानव संहार और ध्वंस द्वारा धरती को जीतना वास्तविक जीत नहीं है। आत्मा को जीतना ही वास्तविक जीत है।	1 ज्ञान 1अभि.	2

17. (i) चन्द बरदाई-पृथ्वीराज रासो
(ii) नरपति नाल्ह-बीसलदेव रासो — 1 ज्ञान
(iii) विद्यापति-पदावली कीर्तिलता आदि — 1 अभि. — 2
में से कोई दो स्वीकार्य

18. (i) बालसुलभ चेष्टाओं का सूक्ष्म और सजीव वर्णन
(ii) संयोग और वियोग शृंगार का सरस मार्मिक चित्रण
(iii) वाग् वैदग्ध्य और सहृदयता — 1 ज्ञान
(iv) निर्गुण पर सगुण की एवं योग पर प्रेम की — 1 अभि. — 2
विजय आदि विशेषताओं से मिलती-जुलती
कोई दो स्वीकार्य

19. (i) ज्ञान और भक्ति (ii) निर्गुण और सगुण
(iii) लोक और शास्त्र (iv) विभिन्न भाषाओं — 1 ज्ञान
काव्य रूपों एवं साहित्यिक शैलियां आदि — 1 अभि. — 2
में से कोई दो स्वीकार्य।

भाग 'ब'

1. व्याख्या में संदर्भ, भाव-आशय ग्रहण, विश्लेषण — 4 अर्थ
एवं सटीक अभिव्यक्ति अपेक्षित है। — 4 अभि. — 8

2. ,, — 4 अर्थ
4 अभि. — 8

3. — 4 अर्थ
4 अभि. — 8

4. प्रेम का सात्विक एवं सरस रूप, ऋतुओं
की सरसता के संदर्भ में मार्मिक विरह- — 2 ज्ञान
वर्णन। संदेश-प्रेषण में मारवणी के — 1 अभि. — 3
हृदय की व्यथा।

5. रचना-कौशल, भाव-व्यञ्जना, सहृदयता मार्मिक
स्थलों की पहचान, प्रसंगानुकूल — 3 ज्ञान
भाषा, छन्द-वैविध्य, अलंकार-सौन्दर्य, — 2 अभि. — 5
आत्मनिवेदन आदि स्वीकार्य।

6. स्वभाव-

मां- आत्मीयता, त्याग,प्रेम, समर्पण, परिश्रमी, सेवाभावी आदि ।

नीलम-स्वार्थी, घमण्डी, जिद्दी, चापलूस एवं दिखावे की प्रवृत्ति ।

जीवन के प्रति दृष्टिकोण

मां-ईश्वर एवं धर्म के प्रति आस्था, भारतीयता से लगाव

नीलम-भौतिकवादी पाश्चात्य सभ्यता के प्रति आकर्षण, प्राचीन गौरव एवं संस्कृति को अवमानना आदि — 2 ज्ञान, 2अभि. — 4

7. प्रकाश की दिल्ली पोस्टिंग, पारिवारिक विघटन, माँ के प्रति प्रेम और श्रद्धा में कमी, अवमानना, पति-पत्नी में तनाव, सम्बन्ध -विच्छेद की संभावना जैसी कल्पनाएँ स्कीकायँ । — 3 मौ., 2अभि, — 5

8. जोंक की विशेषताएँ-चिपकना एवं खून चूसना,इन दोनों प्रवृत्तियों की बनवारी के चरित्र पर घटित करना । — 2 ज्ञान, 2अभि. — 4

9. देश शीघ्र स्वतन्त्र होता, गरीबी का उन्मूलन, कुटीर-उद्योगों में वृद्धि,देश का धन सुरक्षित रहता,साम्प्रदायिक विद्वेष समाप्त हो जाता, स्वाभिमान के साथ जीने का भाव आ जाता आदि बिन्दु स्वीकार्य । — 3 मौ., 2अभि. — 5

10. कुण्डलिया-दोहा और रोला का मेल ।
दोहे के अन्तिम चरण की रोला के प्रथम चरण में आवृति । दोहे का प्रथम शब्द और रोला का अन्तिम शब्द एक ही होता है। — 2 ज्ञान, 1अभि. — 3

छप्पय—रोला और उल्लाला का मेल ।

दृष्टान्त—

11. जहां दो कथनों में बिब-प्रतिबिंब भाव हो अर्थात् जहाँ एक बात कहकर फिर उस से मिलती-जुलती बात कही जाती हो । कोई भी सही उदाहरण स्वीकार्य — 2ज्ञान, 1अभि — 3

12 (i) जाति-पांति, कर्मकाण्ड, बाह्य आडम्बर का विरोध,
(ii) हिन्दू मुस्लिम एकता, विभिन्न धर्मों का सामञ्जस्य, निर्गुण-निराकार ईश्वर की उपासना । — 4 ज्ञान, 3अभि. — 7

Kamla Barkhtia

(iii) सहज, सरल, चलती फिरती जन भाषा का प्रयोग, गुरु को महत्त्व, अनुभूति की गहनता आदि विशेषताएँ स्वीकार्य ।

13. I आदि काल का नामकरण-

आदिकाल वीरगाथाकाल, सिद्धसामन्त युग, चारणकाल आदि नामों पर विचार

II सूफीकाव्य की विशेषताए:-

1. मुसलमान कवियों द्वारा हिन्दू कथाओं को आधार बनाकर भारतीय परिवेश में भारतीय काव्य-पद्धति से अवधी भाषा में प्रबन्ध काव्यों की रचना ।
2. ईश्वर की नायिका एवं भक्त की पुरूष (जोगी) रूप में कल्पना ।
3. कथानक रूढ़ियों एवं अलौकिक तत्त्वों का व्यापक प्रयोग
4. प्रकृति-चित्रण एव रहस्यात्मकता
5. कथा पर यथाप्रसंग सूफी दर्शन का प्रभाव ।
6. भारतीय लोकजीवन का सरस चित्रण ।

III सगुण भक्ति काव्य की प्रवृत्तियां-

(i) ईश्वर की सगुण-साकार रूप में उपासना,

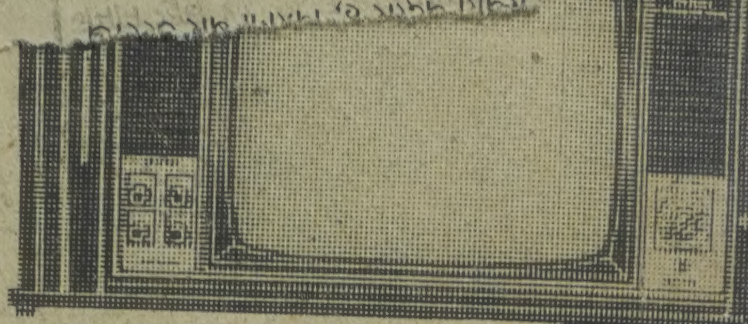
(ii) राम रूप में शक्ति, शील और सौन्दर्य की अभिव्यज्जना

(iii) कृष्ण रूप में सौन्दर्य और लीला रूप का सरस गान ।

(iv) रामोपासना में दास भाव की प्रमुखता, कृष्णोपासना में सखा भाव की महत्ता ।

(v) काव्य के साथ संगीत एवं कीर्तन का मेल ।

(vi) ब्रज और अवधी भाषा का प्रयोग, प्रबन्ध-मुक्तक काव्यों की रचना, अलंकारों का स्वाभाविक एवं प्रभावी प्रयोग । 4 ज्ञान } 7
3 अभि. }



पूर्ण पाठ्यक्रम पर
आधारित सम्भावित
चुने प्रश्न
और
उनके उत्तर सहित

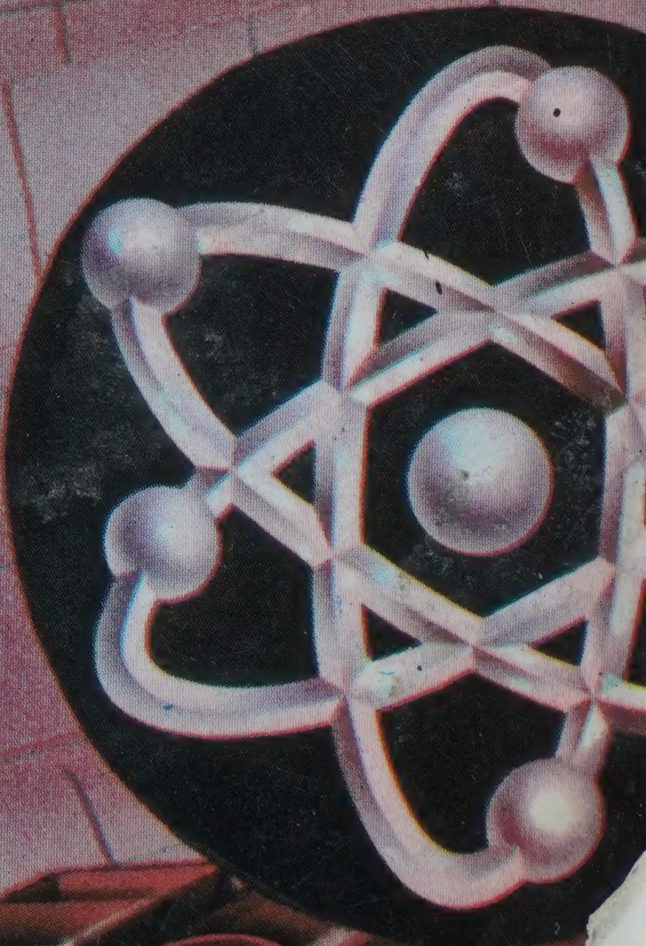




माध्यमिव
शिक्षा बोर्ड, राउ
की नवीन प
पद्धति पर आ

शिक्षा स
द्वारा
सम्पादि





मेहता बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स
जयपुर